श्रीरामकृष्णवचनामृत

(प्रथम भाग)

(श्री 'म')

अनुवादक—पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी, 'निराला'

(तृतीय संस्करण)

श्रीरामकृष्ण आश्रम
नागपुर, मध्यप्रदेश

सितम्बर १९५०]   [मूल्य ६ रु.

वक्तव्य

श्रीरामकृष्णवचनामृत के प्रथम भाग का यह तृतीय संस्करण है। भगवान् श्रीरामकृष्ण देव का अपने शिष्यों के साथ वार्तालाप तथा उनकी अमूल्य शिक्षाएँ उनके एक प्रख्यात गृहस्थ भक्त श्री महेन्द्रनाथ गुप्त ('म') द्वारा लिपिबद्ध कर ली गई थीं और वे बंगला भाषा में 'श्रीरामकृष्णकथामृत' नामक ग्रंथ के रूप में पाँच भागों में प्रकाशित हुई हैं। वे पाँचों भाग अब हिन्दी में अनुवादित कर लिये गये हैं और हमने वह सभी सामग्री तीन भागों में प्रकाशित की है। उन्हीं में से यह प्रथम भाग आपके हाथ में है। साथ ही यह ग्रंथ हमारे यहाँ से प्रकाशित भगवान् श्रीरामकृष्ण देव की विस्तृत जीवनी (श्रीरामकृष्णलीलामृत, भाग १ और भाग २) के लिये परिपूरक के सदृश है।

श्रीरामकृष्ण का जीवन नितान्त आध्यात्मिक था। ईश्वरीय भाव उनके लिये ऐसा ही स्वाभाविक था जैसा किसी प्राणी के लिये श्वास लेना। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण मनुष्य-मात्र के लिये आदेशप्रद कहा जा सकता है। उनके उपदेश विशेष रूप से अध्यात्म-गर्भित हैं तथा सार्वलौकिक होते हुए मानव जीवन पर अपना प्रभाव डालने में अद्वितीय हैं।

श्रीरामकृष्णकथामृत के हिन्दी अनुवाद का श्रेय हिन्दी संसार के लब्धप्रतिष्ठ लेखक तथा विख्यात छायावादी कवि श्री पं० सूर्यकान्तजी त्रिपाठी 'निराला' को है। इस महत्वपूर्ण कार्य के लिये हम श्री 'निरालाजी' के विशेष आभारी हैं। बंगला भाषा का पूर्ण ज्ञान रखने के कारण श्री 'निरालाजी' ने अनुवाद में केन्द्रीय भाव तथा शैली को ज्यों का

त्यों रखा है और साथ ही साथ साहित्यिक दृष्टि से भी उसे बहुत ऊँचा बनाया है ।

हमें विश्वास है, यह पुस्तक सबों का हित करने में सफल होगी ।

नागपुर,
जन्माष्टमी, १-९-१९५० } प्रकाशक

भगवान् श्रीरामकृष्ण देव

की

संक्षिप्त जीवनी

हम यह देखते हैं कि श्रीरामचन्द्र तथा भगवान् बुद्ध को छोड़कर बहुधा अन्य सभी अवतारी महापुरुषों का जन्म संकटग्रस्त परिस्थितियों में ही हुआ है, और यह कहा जा सकता है कि भगवान् श्रीरामकृष्ण भी किसी विशेष प्रकार के सुखद वातावरण में इस संसार में अवतरित नहीं हुए।

श्रीरामकृष्ण का जन्म हुगली प्रान्त के कामारपुकुर गाँव में एक श्रेष्ठ ब्राह्मण परिवार में शके १७५७ फाल्गुन मास की शुक्लपक्ष द्वितीया तदनुसार बुधवार ता० १७ फरवरी १८३६ ई० को हुआ। कामारपुकुर गाँव बर्दवान से लगभग २४-२५ मील दक्षिण तथा जहानाबाद (आरामबाग) से लगभग आठ मील पश्चिम में है।

श्रीरामकृष्ण के पिता श्री क्षुदिराम चट्टोपाध्याय परम संतोषी, सत्यनिष्ठ एवं त्यागी पुरुष थे और इनकी माता श्री चन्द्रामणि देवी सरलता तथा दयालुता की मूर्ति थीं। यह आदर्श दम्पति पहले देरे नामक गाँव में रहते थे परन्तु वहाँ के अन्यायी जमींदार की कुछ ज़बरदस्तियों के कारण इन्हें वह गाँव छोड़कर क़रीब तीन मील की दूरी पर इसी कामारपुकुर गाँव में आ बसना पड़ा।

बचपन में श्रीरामकृष्ण का नाम गदाधर था। अन्य बालकों की भाँति वे भी पाठशाला भेजे गये, परन्तु एक ईश्वरी अवतार एवं संसार के पथ-प्रदर्शक को उस अ, आ, इ, ई की पाठशाला में चैन कहाँ! बस जी उचटने लगा, और मन लगने लगा घर में स्थापित आनन्दकन्द सच्चिदानन्द

भगवान् श्री रामजी की मूर्ति में—स्वयं वे फूल तोड़ लाते और इच्छानुसार मनमानी उनकी पूजा करते।

कहते हैं कि अवतारी पुरुषों में कितने ही ऐसे गुण छिपे रहते हैं कि उनका अनुमान करना कठिन होता है। श्री गदाधर की स्मरण-शक्ति विशेष तीव्र थी। साथ ही उन्हें गाने की भी रुचि थी और विशेषतः भक्तिपूर्ण गानों के प्रति।

साधु-संन्यासियों के जत्थों के दर्शन तो मानो इनकी जीवनी में संजीवनी का कार्य करते थे। अपने घर के पास लाहा की अतिथि शाला में जहाँ बहुधा संन्यासी उतरा करते थे, इनका काफी समय जाता था। मोहल्ले के बालक, वृद्ध, सभी ने न जाने इनमें कौनसा दैवो गुण परखा था कि वे सब इनसे बड़े प्रसन्न रहते थे। रामायण, महाभारत, गीता आदि के श्लोक ये केवल बड़ी भक्ति से सुनते ही नहीं थे, वरन् उनमें से बहुत से उन्हें सहजरूप कंठस्थ भी हो जाया करते थे।

यह दैवी बालक अपनी करतूतें शुरू से ही दिखाते रहा और कह नहीं सकते कि उसके बालकपन से ही कितनों ने उसे ताड़ा होगा।

छिपे हुए दैवी गुणों का विकास पहले पहल उस बार हुआ जब यह बालक अपने गाँव के समीपवर्ती अनुड़ गाँव को जा रहा था। एकाएक इस बालक को एक विचित्र प्रकार की ज्योति का दर्शन हुआ और वह बाह्य-ज्ञानशून्य हो गया। कहना न होगा कि मायाग्रस्त सांसारिकों ने जाना कि गर्मी के कारण वह मूर्छा थी, परन्तु वास्तव में वह थी भाव-समाधि। अपने पिता की मृत्यु के बाद श्रीरामकृष्ण अपने ज्येष्ठ भ्राता के साथ, जो एक बड़े विद्वान् पुरुष थे, कलकत्ता आए। उस समय वे लगभग १७-

१८ वर्ष के थे। कलकत्ते में उन्होंने एक दो स्थानों पर पूजन का कार्य किया। इसी अवसर पर रानी रासमणि ने कलकत्ते से लगभग पाँच मील पर दक्षिणेश्वर में एक मंदिर बनवाया और श्रीकाली देवी की स्थापना की। ता० ३१ मई १८५५ को इसी मंदिर में श्रीरामकृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता श्रीरामकुमारजी काली-मंदिर के पुजारी-पद पर नियुक्त हुए, परन्तु यह कार्य-भार शीघ्र ही श्रीरामकृष्ण पर आ पड़ा। श्रीरामकृष्ण उक्त मंदिर में पूजा करते थे, परन्तु अन्य साधारण पुजारियों की भाँति वे कोरी पूजा नहीं करते थे, परन्तु पूजा करते समय ऐसे मग्न हो जाते थे कि उस प्रकार की अलौकिक मग्नता 'देखा सुना कबहुं नहीं कोई'—और यह अक्षरशः सत्य भी क्यों न हो? ईश्वर ही ईश्वर की पूजा कर रहे थे! उस भाव का वर्णन कौन कर सकता है जिससे श्रीरामकृष्ण प्रेरित हो, ध्याना-वस्थित हो श्रीकाली देवी पर फूल चढ़ाते थे। आँखों में अश्रुधारा बह रही है, तन मन की सुध नहीं, हाथ काँप रहे हैं, हृदय उल्लास से भरा है, मुख से शब्द नहीं निकलते हैं, पैर भूमि पर स्थिर नहीं रहते हैं और घंटी आरती आदि तो सब किनारे ही पड़ी रही—श्री कालीजी पर पुष्प चढ़ा रहे हैं और थोड़ी ही देर में उन्हें ही उन्हें देखते हैं—स्वयं में भी उन्हीं को देख रहे हैं और कंपित कर से अपने ही ऊपर फूल चढ़ाने लगते हैं, कहते हैं—माँ-माँ-मैं-मैं-तुम...और ध्यानमग्न हो समाधिस्थ हो जाते हैं। देखनेवाले समझते हैं कुछ का कुछ, परन्तु ईश्वर मुस्कराते हैं, बड़े ध्यान से सब देखते हैं और विचारते होंगे कि यह रामकृष्ण हूँ तो मैं ही!

उनके हृदय की व्याकुलता की पराकाष्ठा उस दिन हो गई जब व्यथित होकर माँ के दर्शन के लिये एक दिन मंदिर में लटकती हुई तलवार उन्होंने उठा ली और ज्योंही उससे वे अपना शरीरान्त करना चाहते थे

कि उन्हें जगन्माता का अपूर्व अद्भुत दर्शन हुआ और देहभाव भूलकर वे बेसुध हो ज़मीन पर गिर पड़े। तदुपरान्त बाहर क्या हुआ और वह दिन तथा उसके बाद का दिन कैसे व्यतीत हुआ, यह उन्हें कुछ भी नहीं मालूम पड़ा। अन्तःकरण में केवल एक प्रकार के अननुभूत आनन्द का प्रवाह बहने लगा।

बेचारा मायाग्रस्त पुरुष यह सब कैसे समझ सकता है? उसके लिये तो दिव्य चक्षु की आवश्यकता होती है। बस श्रीरामकृष्ण के घर के लोग समझ गये कि इनके मस्तिष्क में कुछ फेरफार हो गया है और विचार करने लगे उसके उपचार का। किसी ने सलाह दी कि इनका विवाह कर दिया जाय तो शायद मानसिक विकार (!) दूर हो जाय। विवाह का प्रबंध होने लगा और कामारपुकुर से दो कोस पर जयरामवाटी ग्राम में रहने वाले श्रीरामचन्द्र मुखोपाध्याय की कन्या श्रीशारदामणि से इनका विवाह करा दिया गया।

परन्तु इस बालिका के दक्षिणेश्वर में आने से भी श्रीरामकृष्ण के जीवन में कोई अन्तर नहीं हुआ और श्रीरामकृष्ण ने उस बालिका में प्रत्यक्ष देखा उन्हीं श्रीकाली देवीजी को। एक सांसारिक बंधन सम्मुख आया और वह था पति का कर्तव्य। बालिका को बुलाकर शान्ति से पूछा कि यदि वह उन्हें सांसारिक जीवन की ओर खींचना चाहती है तो वे तैयार हैं। परन्तु उस बालिका ने तुरन्त उत्तर दिया, "मेरी यह बिलकुल इच्छा नहीं कि आप सांसारिक जीवन व्यतीत करें, पर हाँ आपसे मेरी यह प्रार्थना अवश्य है कि आप मुझे अपने ही पास रहने दें, अपनी सेवा करने दें तथा योग्य मार्ग बतलावें।"

कहा जा सकता है कि उस बालिका ने एक आदर्श अर्धांगिनी का धर्म पूर्ण रूप से निबाहा। अपने सर्वस्व पति को ईश्वर मानकर उनके सुख में अपना सुख देखा और उनके आदर्श जीवन की साथिन बनकर उनकी सहायता करने लगी। श्रीरामकृष्ण को तो श्री शारदा देवी और श्री काली देवी एक ही प्रतीत होने लगी और इस भाव की चरम सीमा उस दिन हुई जब उन्होंने श्रीशारदा देवी का साक्षात् श्री जगदंबा ज्ञान मे षोडशोपचार पूजन किया। पूजा विधि पूर्ण होते ही श्री शारदा देवी को समाधि लग गई। अर्ध-बाह्य दशा में मंत्रोच्चार करते करते श्रीरामकृष्ण भी समाधि-मग्न हो गये। देवी और उसके पुजारी दोनों ही एकरूप हो गये। कैसा उच्च भाव है—अनेकता में एकता झलकने लगी!

हीरे का परखनेवाला जौहरी निकल ही आता है। रानी रासमणि के जामाता श्री मथुरबाबू ने यह भाव कुछ ताड़ लिया और श्रीरामकृष्ण को परख कर शीघ्र ही उन्होंने उनकी सेवाशुश्रुषा का उचित प्रबंध कर दिया। इतना ही नहीं, बल्कि पुजारीपद पर एक दूसरे ब्राह्मण को नियुक्त कर उन्हें अपने भाव में मग्न रहने का पूरा पूरा अवकाश दे दिया। साथ ही श्रीरामकृष्ण के भाञ्जे श्री हृदय को उनकी सेवा आदि का कार्य सौंप दिया।

फिर श्रीरामकृष्ण ने विशेष पूजा नहीं की। दिन रात 'माँ काली' 'मा काली' ही पुकारा करते थे; कभी जड़वत् हो मूर्ति की ओर देखते, कभी हँसते, कभी बालकों की तरह फूट फूट कर रोते और कभी कभी तो इतने व्याकुल हो जाते कि भूमि पर लोटते पोटते अपना मुँह तक रगड़ डालते थे।

इसके बाद श्रीरामकृष्ण ने भिन्न भिन्न साधनाएँ कीं और कई

प्रकार के दर्शन प्राप्त कर लिये। काली-मंदिर में एक बड़े वेदान्ती श्री तोतापुरीजी पधारे थे। वे वहाँ लगभग ग्यारह महीने रहे और उन्होंने श्रीरामकृष्ण से वेदान्त-साधना कराई। श्री तोतापुरीजी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जिस निर्विकल्प समाधि को प्राप्त करने के लिये उन्हें चालीस वर्ष तक सतत प्रयत्न करना पड़ा था, उसे श्रीरामकृष्ण ने तीन ही दिन में सिद्ध कर डाला। इसके कुछ समय पूर्व ही वहाँ एक ब्राह्मणी पधारी थीं। उन्होंने भी श्रीरामकृष्ण से अनेक प्रकार की तंत्रोक्त साधनाएँ कराई थीं।

श्री वैष्णवचरण जो एक वैष्णव पण्डित थे, श्रीरामकृष्ण के पास बहुधा आया करते थे। वे उन्हें एक बार चैतन्य सभा में ले गये। श्रीरामकृष्ण वहाँ समाधिस्थ हो गये और श्री चैतन्य देव के ही आसन पर जा विराजे। वैष्णवचरण ने मथुरबाबू से कहा, यह उन्माद साधारण नहीं, वरन् दैवी है। श्रीचैतन्य की भाँति श्रीरामकृष्ण की भी कभी 'अंतर्दशा,' कभी 'अर्धबाह्य' और कभी 'बाह्य दशा' हो जाया करती थी। वे कहते थे कि अखण्ड सच्चिदानन्द परब्रह्म और माँ सब एक ही हैं।

कामिनी-कांचन से उन्हें आदर्श विरक्ति थी। अपने भक्तगणों को, जो सैकड़ों की संख्या में उनके पास आते थे, वे कहा करते थे कि ये दोनों चीज़ें ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग में विशेष रूप से विरोधक हैं। बुरे आचरण वाली स्त्री में भी वे माता का साक्षात् स्वरूप देखते थे और उसी भाव से आदर देते थे। कांचन से तो उन्हें इतनी विरक्ति हो गई थी कि यदि वे पैसे या रुपये को छू लेते तो उनकी उंगलियाँ ही टेढ़ी मेढ़ी होने लगती थीं। कभी कभी वे गिन्नियों और मिट्टी को एक साथ अंजुली में लेकर गंगाजी के किनारे बैठ जाते थे और 'मिट्टी पैसा, पैसा मिट्टी' कहते हुए

दोनों चीज़ों को मलते मलते श्री गंगाजी की धार में बहा देते थे।

माता चन्द्रामणि को श्रीरामकृष्ण जगज्जननी का स्वरूप मानते थे। अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री रामकुमार के स्वर्ग-लाभ के बाद श्रीरामकृष्ण उन्हें अपने ही पास रखते थे और उनकी पूजा करते थे।

मथुरबाबू तथा उनकी स्त्री जगदंबा दासी के साथ वे एक बार काशी, प्रयाग तथा वृंदावन भी गए थे। उस समय हृदय महाशय भी साथ में थे। काशी में उन्होंने मणिकर्णिका में समाधिस्थ होकर भगवान् शंकर के दर्शन किए और मौनव्रत धारी त्रैलंग स्वामी से भेंट की। मथुरा में तो उन्होंने साक्षात् भगवान् आनंदकंद, सच्चिदानंद, अंतर्यामी श्रीकृष्ण के दर्शन किए। कैसी उच्च भाव दशा रही होगी!

'सेस महेस गनेस,
सुरेस जाहि निरंतर गावें,
जाहि अनादि अनन्त अखण्ड
अछेद अभेद सुवेद बतावें।'

—श्रीरसखानि

उन्हीं भगवान् श्रीकृष्ण को उन्होंने यमुना पार करते हुए गौओं को गोधूलि समय वापस आते देखा और ध्रुव घाट पर से वसुदेव की गोद में भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन किए।

श्रीरामकृष्ण तो कभी कभी समाधिस्थ हो कह पड़ते थे, 'जो राम थे और जो कृष्ण थे वही अब रामकृष्ण होकर आया है।'

सन् १८७९—८० में श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त उनके पास

आने लगे थे। उस समय उनकी उन्माद अवस्था प्रायः चली सी गई थी और अब शान्त, सदानन्द और समाधि की अवस्था थी। बहुधा वे समाधिस्थ रहते थे और समाधि भंग होने पर भाव-राज्य में विचरण किया करते थे।

शिष्यों में उनके मुख्य शिष्य नरेन्द्र (बाद में स्वामी विवेकानन्द) थे। जब से श्री नरेन्द्र उनके पास आने लगे थे तभी से उन्हें नरेन्द्र के प्रति एक विशेष प्रेम हो गया था और वे कहते थे कि नरेन्द्र साधारण जीव नहीं है। कभी कभी तो नरेन्द्र के न आने से उन्हें व्याकुलता होती थी; क्योंकि वे यह अवश्य जानते रहे होंगे कि उनका कार्य भविष्य में मुख्यतः नरेन्द्र द्वारा ही संचालित होगा। अन्य भक्तगण राखाल, भवनाथ, बलराम, मास्टर महाशय आदि थे। ये भक्तगण १८८२ के लगभग आये और इसके उपरान्त दो तीन वर्ष तक अनेक अन्य भक्त भी आये। इन सब भक्तों ने श्रीरामकृष्ण तथा उनके कार्य के लिये अपना जीवन अर्पित कर दिया।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, डॉ. महेन्द्रलाल सरकार, बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, अमेरिका के कुक साहब, पं. पद्मलोचन तथा आर्य समाज के प्रवर्तक श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने भी आपके दर्शन किये थे।

ब्राह्म समाज के अनेक लोग आपके पास आया जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण केशवचन्द्र सेन के ब्राह्म मंदिर को भी गये थे।

श्रीरामकृष्ण ने अन्य धर्मों की भी साधनाएँ कीं। उन्होंने कुछ दिनों तक इस्लाम धर्म का पालन किया और ‘ अल्लाह ’ मंत्र का जप करते करते उन्होंने उस धर्म का अन्तिम ध्येय प्राप्त कर लिया। इसी प्रकार उसके उपरान्त उन्होंने ईसाई धर्म की साधना की और ईसामसीह के

दर्शन किये। जिन दिनों वे जिस धर्म की साधना में लगे रहते थे, उन दिनों उसी धर्म के अनुसार रहते, खाते, पीते, बैठते, उठते तथा बातचीत करते थे। इन सब साधनाओं से उन्होंने यह दिखा दिया कि सब धर्म अन्त में एक ही ध्येय को पहुँचते हैं और उनमें आपस में विरोध-भाव रखना मूर्खता है। ऐसा महान् कार्य करने वाले ईश्वरी अवतार श्रीरामकृष्ण ही थे।

इस प्रकार ईश्वरप्राप्ति के लिये कामिनी-कांचन का सर्वथा त्याग तथा भिन्न भिन्न धर्मों में एकता की दृष्टि रखना इन्होंने अपने सभी भक्तों को सिखाया और उनसे उनका अभ्यास कराया। वे सारे भक्तगण आगे चलकर भारतवर्ष के अतिरिक्त अमेरिका आदि अन्यदेशों में भी गये और वहाँ उन्होंने श्रीरामकृष्ण के उपदेशों का प्रचार किया।

१६ अगस्त सन् १८८६ के प्रातःकाल पाँच बजे गले के रोग से पीड़ित हो श्रीरामकृष्ण ने महासमाधि ले ली; परन्तु महासमाधि में गया केवल उनका पांचभौतिक शरीर। उनके उपदेश आज संसार भर में श्रीरामकृष्ण मिशन के द्वारा कोने कोने में गूँज रहे हैं और उनसे असंख्य जनों का कल्याण हो रहा है।

विद्याभास्कर शुक्ल

अनुक्रमणिका

भगवान् श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्णवचनामृत

परिच्छेद १

प्रथम दर्शन

(१८८२ ई० मार्च)

(१)

तव कथामृतं तप्तजीवनं, कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंगलं श्रीमदाततं, भुवि गृणन्ति ये भूरिदा जनाः ॥

श्रीमद्भागवत, गोपीगीता, रासपंचाध्याय ।

श्रीगंगाजी के पूर्व तट पर कलकत्ते से कोई छः मील दूर दक्षिणेश्वर में श्रीकाली जी का मंदिर है। यहीं परमहंस श्रीरामकृष्ण देव रहते हैं। मास्टर सन्ध्या समय पहले पहल उनके दर्शन करने गये। उन्होंने देखा, श्रीरामकृष्ण देव के कमरे में लोग चुपचाप बैठे उनका वचनामृत पान कर रहे हैं।

कर्मत्याग कब होता है।

श्रीरामकृष्ण कहते हैं—"जब श्रीभगवान् का नाम एक ही बार जपने से रोमांच होता है—आँसुओं की धारा बहती है तब निश्चय समझो कि सन्ध्यादि कर्मों की समाप्ति हो जाती है—तब कर्मत्याग का अधिकार

पैदा हो जाता है—कर्म आप ही आप छूट जाते हैं।" आपने फिर कहा—"सन्ध्यावन्दन का लय गायत्री में होता है और गायत्री का ओंकार में।"

श्रीपरमहंस देव के कमरे में धूप की सुगन्ध भर रही थी। मास्टर अँग्रेजी पढ़े लिखे आदमी हैं। सहसा घर में घुस न सकते थे। द्वार पर वृन्दा (कहारिन) खड़ी थी। मास्टर ने पूछा—"साधु महाराज क्या इस समय घर के भीतर हैं?"

उसने कहा, 'हाँ, वे भीतर हैं।'

मास्टर—ये यहाँ कब से हैं?

वृन्दा—ये? बहुत दिनों से हैं।

मास्टर—अच्छा, तो पुस्तकें खूब पढ़ते होंगे?

वृन्दा—पुस्तकें? उनके मुँह में सब कुछ है।

श्रीरामकृष्ण पुस्तकें नहीं पढ़ते, यह सुनकर मास्टर को और भी आश्चर्य हुआ।

मास्टर—अब तो ये शायद सन्ध्या करेंगे?—क्या हम भीतर जा सकते हैं? एक बार खबर दे दो न?

वृन्दा—तुम लोग जाते क्यों नहीं?—जाओ, भीतर बैठो।

मास्टर अपने मित्र के साथ भीतर गये। देखा, श्रीरामकृष्ण अकेले तखत पर बैठे हैं। चारों ओर के द्वार बन्द हैं। मास्टर ने हाथ जोड़कर

प्रणाम किया और आज्ञा पाकर बैठ गये। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, कहाँ रहते हो, क्या करते हो, बराहनगर क्यों आये इत्यादि। मास्टर ने कुल परिचय दिया। श्रीरामकृष्ण का मन बीच बीच में दूसरी ओर खिंच रहा था। मास्टर को पीछे से मालूम हुआ कि इसीको 'भाव' कहते हैं।

मास्टर—आप तो अब सन्ध्या करेंगे, हम अब चलें।

श्रीरामकृष्ण (भावस्थ)—नहीं,—सन्ध्या—ऐसा कुछ नहीं।

मास्टर ने प्रणाम किया और चलना चाहा।

श्रीरामकृष्ण—फिर आना।

(२)

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

गृहस्थ तथा पिता का कर्तव्य।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—क्यों जी, तुम्हारा घर कहाँ है?

मास्टर—जी कलकत्ते में।

श्रीरामकृष्ण—यहाँ कहाँ आये हो?

मास्टर—यहाँ बराहनगर में बड़ी दीदी के घर आया हूँ,—ईशान कविराज के यहाँ।

श्रीरामकृष्ण—ओ-ईशान के यहाँ?

केशवचन्द्र सेन।

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, केशव अब कैसा है—बहुत बीमार था।

मास्टर—जी हाँ, मैंने भी सुना था कि बीमार हैं, पर अब शायद अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण—मैंने तो केशव के लिए माँ के निकट नारियल और चीनी की पूजा मानी थी। रात को जब नींद उचट जाती थी, तब माँ के पास रोता था और कहता,—'माँ, केशव की बीमारी अच्छी कर दे। केशव अगर न रहा तो मैं कलकत्ते जाकर बातचीत किससे करूँगा?' इसीसे तो नारियल चीनी मानी थी।

"क्यों जी, क्या कोई कुक साहब आया है? सुना, वह लेक्चर (व्याख्यान) देता है। मुझे केशव जहाज़ पर चढ़ाकर ले गया था। कुक साहब भी साथ था।

मास्टर—जी हाँ, ऐसा ही कुछ मैंने भी सुना था। परन्तु मैंने उनका लेक्चर नहीं सुना। उनके विषय में ज्यादा कुछ मैं नहीं जानता।

श्रीरामकृष्ण—प्रताप का भाई आया था। कई दिन यहाँ रहा। काम काज कुछ है नहीं। कहता है, यहाँ मैं रहूँगा। सुनते हैं, जोरू-जाता सबको ससुराल भेज दिया है। कच्चे-बच्चे कई हैं, मैंने खूब डाँटा। भला देखो तो, लड़के-बाले हुए हैं, उनकी देख-रेख—उनका पालपोष तुम न करोगे तो क्या कोई गाँववाला करेगा? बहुत डाँटा और काम-काज खोज लेने को कहा, तब यहाँ से गया।

(३)

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

मास्टर का तिरस्कार तथा उनका अहंकार चूर्ण करना।

श्रीरामकृष्ण—क्या तुम्हारा विवाह हो गया है ?

मास्टर—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण (चौंककर)—अरे रामलाल, अरे अपना विवाह तो इसने कर डाला।

रामलाल श्रीरामकृष्ण के भतीजे और काली जी के पुजारी हैं।

मास्टर घोर अपराधी जैसे सिर नीचा किये चुपचाप बैठे रहे। सोचने लगे, विवाह करना क्या इतना बड़ा अपराध है ?

श्रीरामकृष्ण ने फिर पूछा—क्या तुम्हारे लड़के-बच्चे भी हैं ?

मास्टर का कलेजा काँप उठा। डरते हुए बोले—जी हाँ, लड़के बच्चे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा—अरे लड़के भी हो गये !

मास्टर का अहंकार चूर्ण होने लगा। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण सस्नेह कहने लगे—देखो, तुम्हारे लक्षण अच्छे थे, यह सब मैं किसी को देखते ही जान लेता हूँ। अच्छा, तुम्हारी स्त्री कैसी है ? विद्या-शक्ति है या अविद्या-शक्ति ?

मास्टर—जी अच्छी है, पर अज्ञान है।

श्रीरामकृष्ण—और तुम ज्ञानी हो ?

मास्टर नहीं जानते, किसे ज्ञान कहते हैं और किसे अज्ञान। अभी तो उनकी धारणा यही है कि कोई लिख-पढ़ ले तो मानो ज्ञानी हो

गया। उनका यह भ्रम दूर तब हुआ जब उन्होंने सुना कि ईश्वर को जान लेना ज्ञान है और न जानना अज्ञान। श्रीरामकृष्ण की इस बात से कि 'तुम ज्ञानी हो' मास्टर के अहंकार पर फिर धक्का लगा।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम्हारा विश्वास 'साकार' पर है या 'निराकार' पर?

मास्टर मन ही मन सोचने लगे, "यदि साकार पर विश्वास हो तो क्या निराकार पर भी विश्वास हो सकता है? ईश्वर निराकार है—यदि ऐसा विश्वास हो तो ईश्वर साकार है ऐसा भी विश्वास कभी हो सकता है? ये दोनों विरोधी भाव किस प्रकार सत्य हो सकते हैं? सफेद दूध क्या कभी काला हो सकता है?"

मास्टर—निराकार मुझे अधिक पसन्द है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छी बात है। किसी एक पर विश्वास रखने से काम हो जायगा। निराकार पर विश्वास करते हो, अच्छा है। पर यह न कहना कि यही सत्य है, और सब झूठ। यह समझना कि निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है। जिस पर तुम्हारा विश्वास हो उसी को पकड़े रहो।

दोनों सत्य हैं, यह सुनकर मास्टर चकित हो गये। यह बात उनके किताबी ज्ञान में तो थी ही नहीं! उनका अहंकार फिर चूर्ण हुआ, पर अभी कुछ रह गया था; इसलिए फिर वे तर्क करने को आगे बढ़े।

मास्टर—अच्छा, वे साकार हैं, यह विश्वास मानो हुआ, पर मिट्टी की या पत्थर की मूर्ति तो वे हैं नहीं।

श्रीरामकृष्ण—पत्थर की मूर्ति वे क्यों होने लगे ? पत्थर या मिट्टी नहीं, **चिन्मयी मूर्ति** ।

चिन्मयी मूर्ति, यह बात मास्टर न समझ सके । उन्होंने कहा—अच्छा जो मिट्टी की मूर्ति पूजते हैं, उन्हें समझना भी तो चाहिए कि मिट्टी की मूर्ति ईश्वर नहीं है और मूर्ति के सामने ईश्वर की ही पूजा करना ठीक है किन्तु मूर्ति की नहीं !

श्रीरामकृष्ण (विरक्त होकर)—तुम्हारे कलकत्ते के आदमियों में यही तो एक धुन है,—सिर्फ लेक्चर देना और दूसरों को समझाना ! अपने को कौन समझाये, इसका ठिकाना नहीं । अजी समझानेवाले तुम हो कौन ? जिनका संसार है वे समझाएँगे । जिन्होंने सृष्टि रची है, सूर्य-चन्द्र-मनुष्य-जीव-जन्तु बनाये हैं, जीव-जन्तुओं के भोजन के उपाय सोचे हैं, उनका पालन करने के लिए माता-पिता बनाये हैं, माता-पिता में स्नेह का संचार किया है—वे समझाएँगे । इतने उपाय तो उन्होंने किये और यह उपाय वे न करेंगे ? अगर समझाने की ज़रूरत होगी तो वे समझाएँगे, क्योंकि वे अन्तर्यामी हैं । यदि मिट्टी की मूर्ति पूजने में कोई भूल होगी तो क्या वे नहीं जानते कि पूजा उन्हींकी हो रही है ? वे उसी पूजा से सन्तुष्ट होते हैं । इसके लिए तुम्हारा सिर क्यों धमक रहा है ? तुम वह चेष्टा करो जिससे तुम्हें ज्ञान हो—भक्ति हो ।

अब शायद मास्टर का अहंकार बिलकुल चूर्ण हो गया ।

श्रीरामकृष्ण—तुम मिट्टी की मूर्ति की पूजा की बात कहते थे । यदि मूर्ति मिट्टी ही की हो तो भी उस पूजा की ज़रूरत है । देखो, सब प्रकार की पूजाओं की योजना ईश्वर ने ही की है । जिनका यह संसार है उन्होंने

यह सब किया है। जो जैसा अधिकारी है उसके लिए वैसा ही अनुष्ठान ईश्वर ने किया है। लड़के को जो भोजन रुचता है और जो उसे सह्य है, वही भोजन उसके लिए माँ पकाती है, समझे ?

मास्टर—जी हाँ।

(४)

संसारार्णवघोरे यः कर्णधारस्वरूपकः।
नमोऽस्तु रामकृष्णाय तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

भक्ति का उपाय।

मास्टर—(विनीत भाव से) ईश्वर में मन किस तरह लगे ?

श्रीरामकृष्ण—सर्वदा ईश्वर का नाम-गुण-गान करना चाहिए, सत्सङ्ग करना चाहिए—बीच-बीच में भक्तों और साधुओं से मिलना चाहिए। संसार में दिन-रात विषय के भीतर पड़े रहने से मन ईश्वर में नहीं लगता। कभी कभी निर्जन स्थान में ईश्वर की चिन्ता करना बहुत ज़रूरी है। प्रथम अवस्था में बिना निर्जन के ईश्वर में मन लगाना कठिन है।

"पौधे को चारों ओर से रूँधना पड़ता है, नहीं तो बकरी चर लेगी।

"ध्यान करना चाहिए मन में, कोने में और बन में। और सर्वदा सत्-असत् विचार करना चाहिए। ईश्वर ही सत् अथवा नित्य हैं, और सब असत् अनित्य। इस प्रकार विचार करने से मन से अनित्य वस्तुओं का त्याग हो जाता है।"

मास्टर (विनीत भाव से)—संसार में किस तरह रहना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—सब काम करना चाहिए परन्तु मन ईश्वर में रखना चाहिए।

"माता-पिता, स्त्री-पुत्र आदि सबकी सेवा करते हुए इस ज्ञान को दृढ़ रखना चाहिए कि ये हमारे कोई नहीं हैं।

"किसी धनी के घर की दासी उसके घर का कुल काम करती है, उसके लड़के को खिलाती है—जब देखो तब भैया रे, भैया रे, करती रहती है, पर मन ही मन खूब जानती है कि मेरा यहाँ कुछ नहीं है।

"कछुआ रहता तो पानी में है, पर उसका मन रहता है किनारे पर जहाँ उसके अण्डे रखे हैं। संसार का काम करो पर मन रखो ईश्वर में।

"बिना भगवद्-भक्ति पाये यदि संसार में रहोगे तो दिनोंदिन उलझनों में फँसते जाओगे और यहाँ तक फँस जाओगे कि फिर पिण्ड छुड़ाना कठिन होगा। रोग, शोक, पाप और तापादि से अधीर हो जाओगे। विषय-चिन्तन जितना ही करोगे, बंधोगे भी उतना ही अधिक मज़बूत।

"हाथों में तेल लगाकर कटहल काटना चाहिए। नहीं तो हाथों में उसका दूध चिपक जाता है। भगवद्-भक्ति रूपी तेल हाथों में लगाकर संसार रूपी कटहल के लिए हाथ बढ़ाओ।

"यदि भक्ति पाने की इच्छा हो तो निर्जन में रहो। मक्खन खाने की इच्छा होती है, तो दही निर्जन में ही जमाया जाता है। हिलाने

डुलाने से दही नहीं जमता। इसके बाद निर्जन में ही सब काम छोड़कर दही मथा जाता है, तभी मक्खन निकलता है।

"देखो, निर्जन में ही ईश्वर का चिन्तन करने से यह मन भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का अधिकारी होता है। इस मन को यदि संसार में डाल रखोगे तो यह नीच हो जायगा। संसार में कामिनी-कांचन के सिवा और है ही क्या ?

"संसार जल है और मन मानो दूध। यदि पानी में डाल दोगे तो दूध पानी में मिल जायगा, पर उसी दूध का निर्जन में मक्खन बनाकर यदि पानी में छोड़ोगे तो मक्खन पानी में उतराता रहेगा। इसी प्रकार निर्जन में साधना द्वारा ज्ञान-भक्ति प्राप्त करके यदि संसार में रहोगे भी तो भी संसार से निर्लिप्त रहोगे।

"साथ ही साथ विचार भी खूब करना चाहिए। कामिनी और कांचन अनित्य हैं, ईश्वर ही नित्य हैं। रुपये से क्या मिलता है ? रोटी-दाल, कपड़े, रहने की जगह—बस यहीं तक। रुपये मे ईश्वर नहीं मिलते। तो रुपया जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकता। इसी को विचार कहते हैं—समझे ?"

मास्टर—जी हाँ, अभी-अभी मैंने प्रबोध चन्द्रोदय नाटक पढ़ा है। उसमें 'वस्तु-विचार' है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वस्तु-विचार। देखो, रुपये में ही क्या है और सुन्दरी की देह में भी क्या है।

"विचार करो, सुन्दरी की देह में केवल हाड़, मांस, चरबी, मल,

मूत्र—यही सब है । ईश्वर को छोड़ इन्हीं वस्तुओं में मनुष्य मन क्यों लगाता है ? क्यों वह ईश्वर को भूल जाता है ?"

ईश्वर-दर्शन के उपाय ।

मास्टर—क्या ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, हो सकते हैं । बीच-बीच में एकान्त वास, उनका नाम-गुण-गान और वस्तु-विचार करने से ईश्वर के दर्शन होते हैं ।

मास्टर—कैसी अवस्था हो तो ईश्वर के दर्शन हों ?

श्रीरामकृष्ण—खूब व्याकुल होकर रोने से उनके दर्शन होते हैं । स्त्री या लड़के के लिए लोग आँसुओं की धारा बहाते हैं, रुपये के लिए रोते हुए आँखें लाल कर लेते हैं, पर ईश्वर के लिए कोई कब रोता है ?

"व्याकुलता हुई कि मानो सुबह को आसमान पर ललाई छा गई । शीघ्र ही सूर्य भगवान् निकलते हैं, व्याकुलता के बाद ही भगवद्दर्शन होते हैं ।

"विषय पर विषयी की, पुत्र पर माता की और पति पर सती की यह तीन प्रकार की चाह एकत्रित होकर जब ईश्वर की ओर मुड़ती है तभी ईश्वर मिलते हैं ।

"बात यह है कि ईश्वर को प्यार करना चाहिए । विषय पर विषयी की, पुत्र पर माता की और पति पर सती की जो प्रीति है, उसे एकत्रित करने से जितनी प्रीति होती है, उतनी ही प्रीति से ईश्वर को बुलाने से उस प्रेम का महा आकर्षण ईश्वर को खींच लेता है ।

"व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। बिल्ली का बच्चा 'मिऊँ मिऊँ' करके माँ को पुकारता भर है। उसकी माँ जहाँ उसे रखती, वहीं वह रहता है। यदि उसे कष्ट होता है तो बस वह 'मिऊँ मिऊँ' करता है और कुछ नहीं जानता। माँ चाहे जहाँ रहे 'मिऊँ मिऊँ' सुनकर आ जाती है।"

(५)

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शिनः॥ गीता, ६–२९

नरेन्द्र, भवनाथ तथा मास्टर।

रविवार का दिन है। समय तीन–चार बजे के लगभग होगा। श्रीरामकृष्ण का कमरा भक्तों से ठसाठस भरा हुआ है। उन्नीस साल के एक लड़के से बड़े आनन्द के साथ श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं; लड़के का नाम है नरेन्द्र *। अभी ये कालेज में पढ़ते हैं और साधारण ब्राह्म-समाज में भी कभी कभी जाते हैं। इनकी आँखें पानीदार और बातें जोशीली हैं।

कुछ देर में मास्टर भी पहुँचे और एक ओर बैठ गये। उन्हें अनुमान से मालूम हुआ कि पहले से संसारियों की बातें चल रही हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्यों नरेन्द्र, भला तू क्या कहेगा? संसारी मनुष्य तो न जाने क्या-क्या कहते हैं। पर याद रहे कि हाथी जब जाता है, तब उसके पीछे पीछे कितने ही जानवर बेतरह चिल्लाते हैं, पर हाथी लौट कर देखता तक नहीं। तेरी कोई निन्दा करे तो तू क्या समझेगा?

नरेन्द्र—मैं तो यह समझूँगा कि कुत्ते भौंकते हैं।

* बाद में यही स्वामी विवेकानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—अरे नहीं, यहाँ तक नहीं। (सबका हास्य।) सर्वभूतों में परमात्मा का ही वास है। पर मेल मिलाप करना हो तो भले आदमियों से ही करना चाहिए, बुरे आदमियों से अलग ही रहना चाहिए। बाघ में भी परमात्मा का वास है, इसलिए क्या बाघ को भी गले से लगाना चाहिए ! (लोग हँस पड़े।) यदि कहो कि बाघ भी तो नारायण है इसलिए क्यों भागें ? इसका उत्तर यह है कि जो लोग कहते हैं कि भाग चलो, वे भी तो नारायण हैं, उनकी बात क्यों न मानो ?

"एक कहानी सुनो। किसी जंगल में एक महात्मा रहते थे। उनके कई शिष्य थे। एक दिन उन्होंने अपने शिष्यों को उपदेश दिया कि सर्वभूतों में नारायण का वास है, यह जानकर सभी को नमस्कार करो। एक दिन एक शिष्य हवन के लिए जंगल में लकड़ी लेने गया। उस समय जंगल में यह शोरगुल मचा था कि कोई कहीं हो तो भागो, पागल हाथी जा रहा है। सभी भाग गये, पर शिष्य न भागा। उसे तो यह विश्वास था कि हाथी भी नारायण है, इसलिए भागने का क्या काम ? वह खड़ा ही रहा। हाथी को नमस्कार किया और उसकी स्तुति करने लगा। इधर महावत के ऊँची आवाज़ लगाने पर भी कि भागो-भागो, उसने पैर न उठाये। पास पहुँचकर हाथी ने उसे सूँड़ से लपेटकर एक ओर फेंक दिया और अपना रास्ता लिया। शिष्य घायल हो गया, और बेहोश पड़ा रहा।

"यह खबर गुरु के कान तक पहुँची। वे अन्य शिष्यों को साथ लेकर वहाँ गये और उसे आश्रम में उठा लाये। वहाँ उसकी दवा-दारू की, तब वह होश में आया। कुछ देर बाद किसी ने उससे पूछा, हाथी को आते सुनकर तुम वहाँ से हट क्यों न गये ? उसने कहा कि गुरुजी ने

कह तो दिया था कि जीव-जन्तु आदि सब में परमात्मा का ही वास है, नारायण ही सब कुछ हुए हैं, इसीसे हाथी नारायण को आते देख मैं नहीं भागा। गुरुजी पास ही थे। उन्होंने कहा—बेटा, हाथी नारायण आ रहे थे, ठीक है; पर महावत नारायण ने तो तुम्हें मना किया था। यदि सभी नारायण हैं तो उस महावत की बात पर विश्वास क्यों न किया? महावत नारायण की भी बात मान लेनी चाहिये थी। (सब हँस पड़े।)

"शास्त्रों में है 'आपो नारायणः'—जल नारायण है। परन्तु किसी जल से देवता की सेवा होती है और किसी से लोग आचमन करते हैं, कपड़े धोते हैं और बर्तन माँजते हैं; किन्तु वह जल न पीते हैं, न ठाकुर जी की सेवा में ही लगाते हैं। इसी प्रकार साधु-असाधु, भक्त-अभक्त सभी के हृदय में नारायण का वास है; किन्तु असाधुओं, अभक्तों से व्यवहार या अधिक हेल-मेल नहीं चल सकता। किसीसे सिर्फ मुँह की बातचीत भर कर लेनी चाहिए और किसीसे वह भी नहीं। ऐसे आदमियों से अलग ही रहना चाहिए।"

दुष्ट लोग तथा तमोगुण।

एक भक्त — महाराज, यदि दुष्ट जन अनिष्ट करने पर उतारू हों या कर डालें तो क्या चुपचाप बैठे रहना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण — दुष्ट जनों के बीच रहने से उनसे अपना जी बचाने के लिए कुछ तमोगुण दिखाना चाहिए; परन्तु कोई अनर्थ कर सकता है, यह सोचकर उलटा उसीका अनर्थ न करना चाहिए।

"किसी जंगल में कुछ चरवाहे गौएं चराते थे। वहाँ एक बड़ा विषधर सर्प रहता था। उसके डर से लोग बड़ी सावधानी से आया जाया

करते थे। किसी दिन एक ब्रह्मचारीजी उसी रास्ते से आ रहे थे। चरवाहे दौड़ते हुए उनके पास आये और उनसे कहा—महाराज, इस रास्ते से न जाइये; यहाँ एक साँप रहता है, बड़ा विषधर है। ब्रह्मचारीजी ने कहा तो क्या हुआ, बेटा, मुझे कोई डर नहीं, मैं मन्त्र जानता हूँ। यह कहकर ब्रह्मचारीजी उसी ओर चले गये। डर के मारे चरवाहे उनके साथ न गये। इधर साँप फन उठाये झपटता चला आ रहा था, परन्तु पास पहुँचने के पहले ही ब्रह्मचारीजी ने मन्त्र पढ़ा। साँप आकर उनके पैरों पर लोटने लगा। ब्रह्मचारीजी ने कहा—तू भला हिंसा क्यों करता है? ले, मैं तुझे मन्त्र देता हूँ। इस मन्त्र को जपेगा तो तेरी ईश्वर पर भक्ति होगी, तुझे ईश्वर के दर्शन होंगे; फिर यह हिंसावृत्ति न रह जायगी। यह कहकर ब्रह्मचारीजी ने साँप को मन्त्र दिया। मन्त्र पाकर साँप ने गुरु को प्रणाम किया, और पूछा—भगवान्, मैं क्या साधना करूँ? गुरु ने कहा—इस मन्त्र को जप और हिंसा छोड़ दे। चलते समय ब्रह्मचारीजी फिर आने का वचन दे गये।

"इस प्रकार कुछ दिन बीत गये। चरवाहों ने देखा कि साँप अब काटता नहीं, ढेला मारने पर भी गुस्सा नहीं होता, केंचुए की तरह हो गया है। एक दिन चरवाहों ने उसके पास जाकर पूँछ पकड़कर उसे घुमाया और वहीं पटक दिया। साँप के मुँह से खून बह चला, वह बेहोश पड़ा रहा; हिल डुल तक न सकता था। चरवाहों ने सोचा कि साँप मर गया और यह सोचकर वहाँ से वे चले गये।

"जब बहुत रात बीती तब साँप होश में आया और धीरे धीरे अपने बिल के भीतर गया। देह चूर-चूर हो गई थी, हिलने तक की शक्ति नहीं रह गई थी। बहुत दिनों के बाद जब चोट कुछ अच्छी हुई तब भोजन की खोज में बाहर निकला। जब से मारा गया तब से सिर्फ

रात को ही बाहर निकलता था। हिंसा करता ही न था। सिर्फ़ घास-फूस, फल-फूल खाकर रह जाता था।

"साल भर बाद ब्रह्मचारीजी फिर आये। आते ही साँप की खोज करने लगे। चरवाहों ने कहा, वह तो मर गया है, पर ब्रह्मचारीजी को इस बात पर विश्वास न आया। वे जानते थे कि जो मन्त्र वे दे गये हैं, वह जब तक सिद्ध न होगा तब तक उसकी देह छूट नहीं सकती। ढूँढ़ते हुए उसी ओर वे अपने दिये हुए नाम से साँप को पुकारने लगे। बिल से गुरुदेव की आवाज़ सुनकर साँप निकल आया और बड़े भक्ति-भाव से प्रणाम किया। ब्रह्मचारीजी ने पूछा, 'क्यों, कैसा है'? उसने कहा, 'जी अच्छा हूँ।' ब्रह्मचारीजी—'तो तू इतना दुबला क्यों हो गया?' साँप ने कहा—'महाराज, जब से आप आज्ञा दे गये, तब से मैं हिंसा नहीं करता; फल-फूल, घास-पात खाकर पेट भर लेता हूँ; इसीलिए शायद दुबला हो गया हूँ।' सतोगुण बढ़ जाने के कारण किसी पर वह क्रोध न कर सकता था। इसी से मार की बात भी वह भूल गया था। ब्रह्मचारीजी ने कहा, 'सिर्फ न खाने ही से किसी की यह दशा नहीं होती, कोई दूसरा कारण अवश्य होगा, तू अच्छी तरह सोच तो।' साँप को चरवाहों की मार याद आ गई। उसने कहा—'हाँ महाराज, अब याद आई, चरवाहों ने एक दिन मुझे पटक-पटक कर मारा था, उन अज्ञानियों को तो मेरे मन की अवस्था मालूम थी नहीं। वे क्या जानें कि मैंने हिंसा करना छोड़ दिया है?' ब्रह्मचारीजी बोले—'राम राम, तू ऐसा मूर्ख है? अपनी रक्षा करना भी तू नहीं जानता? मैंने तो तुझे काटने ही को मना किया था, पर फुफकारने से तुझे कब रोका था? फुफकार मारकर उन्हें भय क्यों नहीं दिखाया?'

"इस तरह दुष्टों के पास फुफकार मारना चाहिए, भय दिखाना चाहिए, जिससे कि वे कोई अनिष्ट न कर बैठें; पर उनमें विष न डालना चाहिए, उनका अनिष्ट न करना चाहिए।

क्या सब आदमी बराबर हैं?

श्रीरामकृष्ण—परमात्मा की सृष्टि में नाना प्रकार के जीव-जन्तु और पेड़-पौधे हैं। पशुओं में अच्छे हैं और बुरे भी। उनमें बाघ जैसा हिंस्र जन्तु भी है। पेड़ों में अमृत जैसे फल लगें ऐसे भी पेड़ हैं और विष जैसे फल हों ऐसे भी हैं। इसी प्रकार मनुष्यों में भी भले-बुरे और साधु-असाधु हैं। उनमें संसारी जीव भी हैं और भक्त भी।

"जीव चार प्रकार के होते हैं: बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य।

"नारदादि नित्य जीव हैं। ऐसे जीव औरों के हित के लिए, उन्हें शिक्षा देने के लिए संसार में रहते हैं।

"बद्ध जीव विषय में फँसा रहता है। वह ईश्वर को भूल जाता है, भगवच्चिन्ता वह कभी नहीं करता। मुमुक्षु जीव वह है जो मुक्ति की इच्छा रखता है। मुमुक्षुओं में से कोई-कोई मुक्त हो जाते हैं, कोई-कोई नहीं हो सकते।

"मुक्त जीव संसार के कामिनी-कांचन में नहीं फँसते, जैसे साधु-महात्मा। इनके मन में विषय-बुद्धि नहीं रहती। ये सदा ईश्वर के ही पादपद्मों की चिन्ता करते हैं।

" जब जाल तालाब में फेंका जाता है, तब जो दो-चार होशियार मछलियाँ होती हैं, वे जाल में नहीं आतीं। यह नित्य जीवों की उपमा है; किन्तु अनेक मछलियाँ जाल में फँस जाती हैं। इनमें से कुछ निकल भागने की भी चेष्टा करती हैं। यह मुमुक्षुओं की उपमा है, परन्तु सब मछलियाँ नहीं भाग सकतीं। केवल दो-चार उछल-उछलकर जाल से बाहर हो जाती हैं। तब मछुआ कहता है, अरे एक बड़ी मछली बह गई, किन्तु जो जाल में पड़ी हैं, उनमें से अधिकांश मछलियाँ निकल नहीं सकतीं। वे भागने की चेष्टा भी नहीं करतीं, जाल को मुँह में फाँसकर मिट्टी के नीचे सिर घुसेड़कर चुपचाप पड़ी रहती हैं और सोचती हैं, अब कोई भय की बात नहीं, बड़े आनन्द में हैं। पर वे नहीं जानतीं कि मछुआ घसीटकर उन्हें बाँध पर ले जायगा। यह बद्ध जीवों की उपमा है।

" बद्ध जीव संसार के कामिनी-कांचन में फँसे हैं। उनके हाथ-पैर बँधे हैं; किन्तु फिर भी वे सोचते हैं कि संसार में कामिनी-कांचन में ही सुख है और यहाँ हम निर्भय हैं। वे नहीं जानते, इन्हीं में उनकी मृत्यु होगी। बद्ध जीव जब मरता है, तब उसकी स्त्री कहती है, 'तुम तो चले, पर मेरे लिए क्या कर गये?' माया भी ऐसी होती है कि बद्ध जीव पड़ा तो है मृत्युशय्या पर, पर चिराग में ज्यादा बत्ती जलती हुई देखकर कहता है, तेल बहुत जल रहा है, बत्ती कम करो!

" बद्ध जीव ईश्वर का स्मरण नहीं करता। यदि अवकाश मिला तो या तो गप करता है या फालतू काम करता है। पूछने पर कहता है, क्या करूँ, चुपचाप बैठ नहीं सकता, इसी से घेरा बाँध रहा हूँ। कभी ताश ही खेलकर समय काटता है।"

(६)

यो मामजमनादिञ्च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।
असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥–गीता, १० । ३

उपाय—विश्वास ।

एक भक्त—महाराज, इस प्रकार के संसारी जीवों के लिए क्या कोई उपाय नहीं है ?

श्रीरामकृष्ण—उपाय अवश्य है । कभी-कभी साधुओं का संग करना चाहिए और कभी-कभी निर्जन स्थान में ईश्वर का स्मरण और विचार । परमात्मा से भक्ति और विश्वास की प्रार्थना करनी चाहिए ।

"विश्वास हुआ कि सफलता मिली । विश्वास से बढ़कर और कुछ नहीं है ।

" विश्वास मे कितना बल है, यह तो तुमने सुना है न ? पुराणों में लिखा है कि रामचन्द्र को, जो साक्षात् पूर्णब्रह्म नारायण हैं, लङ्का जाने के लिए सेतु बाँधना पड़ा था, परन्तु हनुमान रामनाम के विश्वास ही से कूदकर समुद्र के पार चले गये, उन्होंने सेतु की परवाह नहीं की ।

" किसी को समुद्र के पार जाना था । बिभीषण ने एक पत्ते पर रामनाम लिखकर उसके कपड़े के खूंट में बाँधकर कहा कि तुम्हें अब कोई भय नहीं, विश्वास करके पानी के ऊपर से चले जाओ, किन्तु यदि तुम्हें अविश्वास हुआ तो तुम डूब जाओगे । वह मनुष्य बड़े मजे में समुद्र के ऊपर से चला जा रहा था । उसी

समय उसकी यह इच्छा हुई कि गांठ को खोलकर देखूँ तो इसमें क्या बाँधा है। गांठ खोलकर उसने देखा तो एक पत्ते पर रामनाम लिखा था। ज्यों ही उसने सोचा कि अरे इसमें तो सिर्फ रामनाम लिखा है— अविश्वास हुआ कि वह डूब गया।

"जिसका ईश्वर पर विश्वास है, वह यदि महापातक करे—गो-ब्राह्मण-स्त्री-हत्या भी करे—तो भी इस विश्वास के बल से वह बड़े-बड़े पापों से मुक्त हो सकता है। वह यदि कहे कि ऐसा काम कभी न करूँगा तो उसे फिर किसी बात का भय नहीं।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने इस मर्म का बंगला गीत गाया—

दुर्गा दुर्गा अगर जपूं मैं जब मेरे निकलेंगे प्राण।
देखूँ कैसे नहीं तारती हो तुम करुणा की खान॥
गो-ब्राह्मण की हत्या करके, करके भी मदिरा का पान।
ज़रा नहीं परवाह पापों की, लूँगा निश्चय पद निर्वाण॥

नरेन्द्र की बात चली। श्रीरामकृष्ण भक्तों से कहने लगे—"इस लड़के को यहाँ एक प्रकार देखते हो। चुलबुला लड़का जब बाप के पास बैठता है, तब चुपचाप बैठा रहता है और जब चाँदनी पर खेलता है, तब उसकी और ही मूर्ति हो जाती है। ये लड़के नित्यसिद्ध हैं। ये कभी संसार में नहीं बँधते। थोड़ी ही उम्र में इन्हें चैतन्य होता है और ये ईश्वर की ओर चले जाते हैं। ये संसार में जीवों को शिक्षा देने के लिए आते हैं। संसार की कोई वस्तु इन्हें अच्छी नहीं लगती; कामिनी-कांचन में ये कभी नहीं पड़ते।

"वेदों में 'होमा' पक्षी की कथा है। यह चिड़िया आकाश में बहुत ऊँचे पर रहती है। वहीं यह अण्डे देती है। अण्डा देते ही वह गिरने लगता

है; परन्तु इतने ऊँचे से वह गिरता है कि गिरते गिरते बीच ही में फूट जाता है। तब बच्चा गिरने लगता है। गिरते ही गिरते उसकी आँखें खुलती और पंख निकल आते हैं। आँखें खुलने से जब वह बच्चा देखता है कि मैं गिर रहा हूँ और मिट्टी में गिरकर चूर-चूर हो जाऊँगा, तब वह एकदम अपनी माँ की ओर फिर ऊँचे चढ़ जाता है।"

नरेन्द्र उठ गए। सभा में केदार, प्राणकृष्ण, मास्टर आदि और भी कई सज्जन थे।

श्रीरामकृष्ण—देखो, नरेन्द्र गाने में, बजाने में, पढ़ने-लिखने में—सब विषयों में अच्छा है। उस दिन केदार के साथ उसने तर्क किया था। केदार की बातों को खटाखट काटता गया। (श्रीरामकृष्ण और सब लोग हँस पड़े।) (मास्टर से) अंग्रेजी में क्या कोई तर्क की किताब है?

मास्टर—जी हाँ है, अंग्रेजी में इसको न्यायशास्त्र (Logic) कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, कैसा है कुछ सुनाओ तो?

मास्टर अब मुश्किल में पड़े। आखिर कहने लगे—एक बात यह है कि साधारण सिद्धान्त से विशेष सिद्धान्त पर पहुँचना; जैसे, सब मनुष्य मरेंगे, पण्डित भी मनुष्य हैं, इसलिए वे भी मरेंगे।

"और एक बात यह है कि विशेष दृष्टान्त या घटना को देखकर साधारण सिद्धान्त पर पहुँचना। जैसे, यह कौआ काला है, वह कौआ काला है और जितने कौए दीख पड़ते हैं, वे भी काले हैं, इसलिए सब कौए काले हैं।

"किन्तु उस प्रकार के सिद्धान्त से भूल भी हो सकती है; क्योंकि सम्भव है ढूंढ़-तलाश करने से किसी देश में सफेद कौआ मिल जाय। एक और दृष्टान्त—जहाँ वृष्टि है, वहाँ मेघ भी हैं, अतएव यह साधारण सिद्धान्त हुआ कि मेघ से वृष्टि होती है। और भी एक दृष्टान्त—इस मनुष्य के बत्तीस दाँत हैं, उस मनुष्य के बत्तीस दाँत हैं, और जिस मनुष्य को देखते हैं, उसी के बत्तीस दाँत हैं, अतएव सब मनुष्यों के बत्तीस दाँत हैं।

"ऐसी ही साधारण सिद्धान्तों की बातें अंग्रेजी के न्यायशास्त्र में हैं।"

श्रीरामकृष्ण ने इन बातों को सुन भर लिया। फिर वे अन्यमनस्क हो गये। इसलिए यह प्रसंग और आगे न बढ़ा।

(७)

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि॥ गीता, २। ५३

समाधि में।

सभा भङ्ग हुई। भक्त सब इधर उधर घूमने लगे। मास्टर भी पञ्चवटी आदि स्थानों में घूम रहे थे। समय पाँच के लगभग होगा। कुछ देर बाद वे श्रीरामकृष्ण के कमरे में आये और देखा उसके उत्तर ओर छोटे बरामदे में विचित्र घटना हो रही है।

श्रीरामकृष्ण स्थिर भाव से खड़े हैं और नरेन्द्र गा रहे हैं। दो-चार भक्त भी खड़े हैं। मास्टर आकर गाना सुनने लगे। श्रीरामकृष्ण की देह

निस्पन्द हो गई और नेत्र निर्निमेष। पूछने पर एक भक्त ने कहा, यह 'समाधि' है। मास्टर ने ऐसा न कभी देखा था, न सुना था। वे सोचने लगे, भगवच्चिन्तन करते हुए मनुष्यों का बाह्यज्ञान क्या यहाँ तक चला जाता है? न जाने कितनी भक्ति और विश्वास हो तो मनुष्यों की यह अवस्था होती है। नरेन्द्र जो गीत गा रहे थे, उसका भाव यह है—

"ऐ मन, तू चिद्घन हरि का चिन्तन कर। उसकी मोहनमूर्ति की कैसी अनुपम छटा है, जो भक्तों का मन हर लेती है। वह रूप नये नये वर्णों से मनोहर है, कोटि चन्द्रमाओं को लजाने वाला है,—उसकी छटा क्या है मानो बिजली चमकती है। उसे देख आनन्द से जी भर जाता है।"

गीत के इस चरण को गाते समय श्रीरामकृष्ण चौंकने लगे। देह पुलकायमान हुई। आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगे। बीच बीच में मानो कुछ देखकर मुसकराते हैं। कोटि चन्द्रमाओं को लजानेवाले उस अनुपम रूप का वे अवश्य दर्शन करते होंगे। क्या यही ईश्वर-दर्शन है? कितने साधन, कितनी तपस्या, कितनी भक्ति और विश्वास से ईश्वर का ऐसा दर्शन होता है?

फिर गाना होने लगा।

"हृदय-रूपी कमलासन पर उनके चरणों का भजन कर, शान्त मन और प्रेमभरे नेत्रों से उस अपूर्व मनोहर दृश्य को देख ले।"

फिर वही जगत् को मोहनेवाली मुसकराहट! शरीर वैसा ही निश्चल हो गया। आँखें बन्द सी हो गईं—मानो कुछ अलौकिक रूप देख रहे हैं, और देखकर आनन्द से भरपूर हो रहे हैं।

अब गीत समाप्त हुआ। नरेन्द्र ने गाया—

"चिदानन्द-रस में—प्रेमानन्द-रस में—परम भक्ति से चिरदिन के लिए मग्न हो जा।"

समाधि और प्रेमानन्द की इस अद्भुत छवि को हृदय में रखते हुए मास्टर घर लौटने लगे। बीच बीच में दिल को मतवाला करनेवाला वह मधुर गीत याद आता रहा।

(८)

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते॥—गीता, ६।२२

नरेन्द्र, भवनाथ आदि के संग आनन्द।

उसके दूसरे दिन भी छुट्टी थी। दिन के तीन बजे मास्टर फिर आये। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में बैठे हैं। फर्श पर चटाई बिछी है। नरेन्द्र, भवनाथ और भी दो एक लोग बैठे हैं। सभी अभी लड़के हैं, उम्र उन्नीस बीस के लगभग होगी। प्रफुल्लमुख श्रीरामकृष्ण तखत पर बैठे हुए लड़कों से सानन्द वार्तालाप कर रहे हैं।

मास्टर को घर में घुसते देख श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए कहा, "यह देखो, फिर आया।" सब हँसने लगे। मास्टर ने भूमिष्ठ प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। पहले वे खड़े-खड़े हाथ जोड़कर प्रणाम करते थे—जैसा अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग करते हैं। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्रादि भक्तों से कहने लगे, "देखो, एक मोर को किसी ने चार बजे अफीम

खिला दी। दूसरे दिन से वह अफीमची मोर ठीक चार बजे आ जाता था! यह भी अपने वक्त पर आया है।" सब लोग हँसने लगे।

मास्टर सोचने लगे, ये ठीक ही तो कहते हैं। घर जाता हूँ, पर मन दिन रात यहीं बना रहता है। कब जाऊँ, इसी विचार में रहता हूँ। इधर श्रीरामकृष्ण लड़कों से हँसी-मजाक करने लगे। मालूम होता था कि वे सब मानो एक ही उम्र के हैं। हँसी की लहरें उठने लगीं।

मास्टर यह अद्भुत चरित्र देखते हुए सोचते हैं कि पिछले दिन क्या इन्हीं को समाधि और अपूर्व आनन्द में मग्न देखा था? क्या ये वही मनुष्य हैं, जो आज प्राकृत मनुष्य जैसा व्यवहार कर रहे हैं? क्या इन्हींने मुझे उपदेश देने के लिए धिक्कारा था? इन्हींने मुझे 'तुम ज्ञानी हो' कहा था? इन्हींने साकार और निराकार दोनों सत्य हैं, कहा था? इन्हींने मुझे कहा था कि ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य? इन्हींने मुझे संसार में दासी की भाँति रहने का उपदेश दिया था?

श्रीरामकृष्ण आनन्द कर रहे हैं और बीच बीच में मास्टर को देख रहे हैं। मास्टर को सविस्मय बैठे हुए देखकर उन्होंने रामलाल से कहा—इसकी उम्र कुछ ज्यादा हो गई है न, इसीसे कुछ गम्भीर है। ये सब हँस रहे हैं; पर यह चुपचाप बैठा है।

बात ही बात में परम भक्त हनुमान जी की बात चली। हनुमान जी का एक चित्र श्रीरामकृष्ण के कमरे में दीवाल पर टंगा था। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "देखो तो, हनुमान जी का भाव कैसा है! धन, मान, शरीर-सुख कुछ भी नहीं चाहते, केवल भगवान् को चाहते हैं। जब स्फटिक-स्तम्भ के भीतर से ब्रह्मास्त्र निकालकर भगे, तब मन्दोदरी नाना प्रकार

के फल लेकर लोभ दिखाने लगी। उसने सोचा कि फल के लोभ से उतरकर शायद ये ब्रह्मास्त्र फेंक दें; पर हनुमान जी इस भुलावे में कब पड़ने लगे ? उन्होंने कहा—मुझे फलों का अभाव नहीं है। मुझे जो फल मिला है, उससे मेरा जन्म सफल हो गया है। मेरे हृदय में मोक्षफल का वृक्ष श्रीरामचन्द्र जी हैं। श्रीराम-कल्पतरु के नीचे बैठा रहता हूँ: जब जिस फल की इच्छा होती है, वही फल खाता हूँ। फल के बारे में कहता हूँ कि तेरा फल मैं नहीं चाहता हूँ। तू मुझे फल न दिखा, मैं इसका प्रतिफल दे जाऊँगा।" इसी भाव का एक गीत श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं। फिर वही समाधिः देह निश्चल, नेत्र स्थिर। बैठे हैं जैसी मूर्ति फोटोग्राफ में देखने को मिलती है।

बड़ी देर बाद अवस्था का परिवर्तन हो रहा है। देह शिथिल हो गई, मुख सहास्य हो गया, इन्द्रियाँ फिर अपना अपना काम करने लगीं। नेत्रों से आनन्दाश्रु बहाते हुए श्रीरामकृष्ण 'राम राम' उच्चारण कर रहे हैं।

मास्टर सोचने लगे, क्या यही महापुरुष लड़कों के साथ दिल्लगी कर रहे थे ?—तब तो यह जान पड़ता था कि मानो पाँच वर्ष के बालक हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ होकर फिर प्राकृत मनुष्यों जैसा व्यवहार कर रहे हैं। मास्टर और नरेन्द्र से कहने लगे कि तुम दोनों अंग्रेजी में बातचीत करो, मैं सुनूँगा।

यह सुनकर मास्टर और नरेन्द्र हँस रहे हैं; दोनों में परस्पर कुछ देर तक बंगला में बातचीत हुई। श्रीरामकृष्ण के सामने मास्टर का विचार करना सम्भव न था; क्योंकि विचार का तो घर उन्होंने बन्द कर दिया है। अतएव मास्टर अब तर्क कैसे कर सकते हैं। श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा, पर मास्टर के मुँह से अंग्रेजी तर्क न निकला।

(९)

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं, त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता, सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे॥

—गीता, ११।१८

अन्तरंग भक्तों के संग में। 'हम कौन हैं?'

पाँच बजे हैं। भक्त लोग अपने अपने घर चले गये। सिर्फ मास्टर और नरेन्द्र रह गये। नरेन्द्र मुँह हाथ धोने को गए। मास्टर भी बगीचे में इधर-उधर घूमते रहे। थोड़ी देर बाद कोठी की बगल से 'हँस तालाब' की ओर आते हुए उन्होंने देखा कि तालाब की दक्षिण तरफवाली सीढ़ी के चबूतरे पर श्रीरामकृष्ण खड़े हैं और नरेन्द्र भी हाथ में गडुआ लिए खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, "देख, और ज़रा ज्यादा आया जाया करना—तू ने हाल ही से आना शुरू किया है न? पहली जान-पहचान के बाद सभी लोग कुछ ज्यादा आया जाया करते हैं, जैसे नया पति। (नरेन्द्र और मास्टर हँसे।) क्यों, आएगा नहीं?" नरेन्द्र ब्राह्म-समाजी लड़के हैं, हँसते हुए कहा, "हाँ, कोशिश करूँगा।"

फिर सभी कोठी की राह से श्रीरामकृष्ण के कमरे को आने लगे। कोठी के पास परमहंस देव ने मास्टर से कहा, "देखो, किसान बाजार से बैल खरीदते हैं। वे जानते हैं कि कौन सा बैल अच्छा है और कौन सा बुरा। वे पूँछ के नीचे हाथ लगाकर परखते हैं। कोई कोई बैल पूँछ पर हाथ लगाने से लेट जाते हैं—वे ऐसे बैल नहीं खरीदते। पर जो बैल पूँछ पर हाथ रखते ही बड़ी तेज़ी से कूद पड़ता है, उसी बैल को वे चुन लेते हैं। नरेन्द्र इसी बैल की जाति है। भीतर खूब तेज है।" यह कह-

कर श्रीरामकृष्ण मुसकराने लगे। "फिर कोई कोई ऐसे होते हैं कि मानो उनमें जान ही नहीं है—न ज़ोर है, न दृढ़ता।"

सन्ध्या हुई। श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन करने लगे। उन्होंने मास्टर से कहा, "तुम जाकर नरेन्द्र से बातचीत करो, और फिर मुझे बताना कि वह कैसा लड़का है।"

आरती हो चुकी। मास्टर ने बड़ी देर में नरेन्द्र को चाँदनी के पश्चिम तरफ पाया। आपस में बातचीत होने लगी। नरेन्द्र ने कहा कि मैं साधारण ब्राह्मसमाजी हूँ, कालेज में पढ़ता हूँ, इत्यादि।

रात हो गई। अब मास्टर घर जायँगे, पर जाने को जी नहीं चाहता; इसीलिए नरेन्द्र से बिदा होकर वे फिर श्रीरामकृष्ण को ढूंढ़ने लगे। उनका गीत सुनकर मास्टर मुग्ध हो गए हैं। जी चाहता है कि फिर उनके श्रीमुख से गीत सुनें। ढूंढ़ते हुए देखा कि काली माता के मन्दिर के सामने जो नाट्य-मण्डप है, उसी में श्रीरामकृष्ण अकेले टहल रहे हैं। मन्दिर में माता के दोनों तरफ दोपक जल रहे थे। विस्तृत नाट्य-मण्डप में एक लालटेन जल रही थी। रोशनी धीमी थी। प्रकाश अंधेरे का मिश्रण सा दीख पड़ता था।

मास्टर श्रीरामकृष्ण का गीत सुनकर मुग्ध हो गए हैं, साँप जैसे मन्त्रमुग्ध हो जाता है। अब बड़े संकोच से उन्होंने परमहंस देव से पूछा, "क्या आज फिर गाना होगा?" श्रीरामकृष्ण ने ज़रा सोचकर कहा, "नहीं आज अब न होगा।" यह कहते ही मानो उन्हें फिर याद आई और उन्होंने कहा, "हाँ, एक काम करना। मैं कलकत्ते में बलराम के घर जाऊँगा, तुम भी आना, वहाँ गाना होगा।"

मास्टर—आपकी जैसी आज्ञा ।

श्रीरामकृष्ण—तुम जानते हो बलराम बसु को ?

मास्टर—जी नहीं ।

श्रीरामकृष्ण—बलराम बसु—बोसपाड़ा में उनका घर है ।

मास्टर—जी मैं पूछ लूँगा ।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के साथ टहलते हुए)—अच्छा, तुमसे एक बात पूछता हूँ—मुझे तुम क्या समझते हो ?

मास्टर चुप रहे । श्रीरामकृष्ण ने फिर से पूछा, "तुम्हें क्या मालूम होता है ? मुझे कै आने तक ज्ञान हुआ है ?"

मास्टर—'आने' की बात तो मैं नहीं जानता पर ऐसा ज्ञान, या प्रेमभक्ति, या विश्वास, या वैराग्य, या उदार भाव मैंने और कहीं कभी नहीं देखा ।

श्रीरामकृष्ण हँसने लगे ।

इस बातचीत के बाद मास्टर प्रणाम करके विदा हुए । फाटक तक जाकर फिर कुछ याद आई, उल्टे पाँव लौटकर फिर परमहंसदेव के पास नाट्य-मण्डप में हाज़िर हुए ।

उस धीमी रोशनी में श्रीरामकृष्ण अकेले टहल रहे थे—निःसङ्ग—जैसे सिंह वन में अकेला अपनी मौज में फिरता रहता है । आत्माराम—और किसी की अपेक्षा नहीं !

विस्मित होकर मास्टर उस महापुरुष को देखने लगे ।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—क्यों जी, फिर क्यों लौटे ?

मास्टर—जी, वे अमीर आदमी होंगे—शायद मुझे भीतर न जाने दें—इसीलिए सोच रहा हूँ कि वहाँ न जाऊँगा, यहीं आकर आपसे मिलूँगा।

श्रीरामकृष्ण—नहीं जी,—तुम मेरा नाम लेना। कहना कि मैं उनके पास जाऊँगा; बस, कोई भी तुम्हें मेरे पास ले आएगा।

"जैसी आपकी आज्ञा"—कहकर मास्टर ने फिर प्रणाम किया और वहाँ से बिदा हुए।

(१०)

श्रीरामकृष्ण का प्रेमानन्द में नृत्य।—'प्रेम की सुरा'।

रात के करीब ९ बजे का समय होगा—होली के सात दिन बाद। राम, मनोमोहन, राखाल, नृत्यगोपाल आदि भक्तगण उन्हें घेरकर खड़े हैं। सभी लोग हरिनाम का संकीर्तन करते करते तन्मय हो गए हैं। कुछ भक्तों की भावावस्था हुई है। भावावस्था में नृत्यगोपाल का वक्षःस्थल लाल हो गया है। सब के बैठने पर मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने देखा राखाल सो रहा है, भावमग्न बाह्यज्ञान-विहीन। वे उनकी छाती पर हाथ रखकर कह रहे हैं—'शान्त हो, शान्त हो।' राखाल की यह दूसरी बार भावावस्था थी। वे कलकत्ते में अपने पिता के साथ रहते हैं, बीच बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आ जाते हैं। इसके पूर्व उन्होंने श्यामपुकुर में विद्यासागर महाशय के स्कूल में कुछ दिन अध्ययन किया था।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से दक्षिणेश्वर में कहा था, 'मैं कलकत्ते में बलराम के घर जाऊँगा, तुम भी आना।' इसीलिए वे उनका दर्शन करने

आए हैं। चैत्र कृष्ण सप्तमी, शनिवार, ११ मार्च १८८२ ई.। श्रीयुत बलराम श्रीरामकृष्ण को निमंत्रण देकर लाए हैं।

अब भक्तगण बरामदे में बैठे प्रसाद पा रहे हैं। दासवत् बलराम खड़े हैं। देखने से समझा नहीं जाता कि वे इस मकान के मालिक हैं।

मास्टर इधर कुछ दिनों से आने लगे हैं। उनका अभी तक भक्तों के साथ परिचय नहीं हुआ है। केवल दक्षिणेश्वर में नरेन्द्र के साथ परिचय हुआ था।

कुछ दिनों बाद श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में शिव मन्दिर की सीढ़ी पर भावाविष्ट होकर बैठे हैं। दिन के चार पाँच बजे का समय होगा। मास्टर भी पास ही बैठे हैं।

थोड़ी देर पहले श्रीरामकृष्ण उनके कमरे के फर्श पर जो बिस्तर बिछाया गया है, उस पर विश्राम कर रहे थे। अभी उनकी सेवा के लिए सदैव उनके पास कोई नहीं रहता था। हृदय के चले जाने के बाद से उनको कष्ट हो रहा है। कलकत्ते से मास्टर के आने पर वे उनके साथ बात करते करते श्री राधाकान्त जी के मन्दिर के सामने वाले शिव मन्दिर की सीढ़ी पर आकर बैठे। मन्दिर देखते ही वे एकाएक भावाविष्ट हो गए हैं।

वे जगन्माता क साथ बातचीत कर रहे हैं, कह रहे हैं, "माँ, सभी कहते हैं, मेरी घड़ी ठीक चल रही है। ईसाई, हिन्दू, मुसलमान सभी कहते हैं मेरा धर्म ठीक है, परन्तु माँ, किसी की भी तो घड़ी ठीक

नहीं चल रही है। तुम्हें ठीक ठीक कौन समझ सकेगा, परन्तु व्याकुल होकर पुकारने पर, तुम्हारी कृपा होने पर सभी पंथों से तुम्हारे पास पहुँचा जा सकता है। माँ, ईसाई लोग गिर्जाघरों में तुम्हें कैसे पुकारते हैं, एक बार दिखा देना। परन्तु माँ, भीतर जाने पर लोग क्या कहेंगे? यदि कुछ गड़बड़ हो जाय तो? फिर लोग कालीघर में यदि न जाने दें तो फिर गिर्जाघर के दरवाजे के पास से दिखा देना।"

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटी खाट पर बैठे हैं। आनन्दमयी मूर्ति हैं। सहास्य वदन। श्रीयुत कालीकृष्ण के साथ मास्टर आ पहुँचे।

कालीकृष्ण जानते न थे कि उनके मित्र उन्हें कहाँ ला रहे हैं। मित्र ने कहा था, कलार की दूकान पर जाओगे तो मेरे साथ आओ। वहाँ पर एक मटकी भर शराब है। मास्टर ने अपने मित्र से जो कुछ कहा था, प्रणाम करने के बाद श्रीरामकृष्ण को सब कह सुनाया। वे भी हँसने लगे।

वे बोले, 'भजनानन्द, ब्रह्मानन्द, यह आनन्द ही सुरा है, प्रेम की सुरा। मानवजीवन का उद्देश्य है ईश्वर में प्रेम, ईश्वर से प्यार करना। भक्ति ही सार है। ज्ञान-विचार करके ईश्वर को जानना बहुत ही कठिन है।' यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाना गाने लगे जिसका आशय इस प्रकार है :—

"कौन जाने काली कैसी है? षड्दर्शन उन्हें देख नहीं सकते। इच्छामयी वे अपनी इच्छा के अनुसार घट घट में विराजमान हैं। यह

विराट ब्रह्माण्ड रूपी भाण्ड जो काली के उदर में है उसे कैसा समझते हो ? शिवजी ने काली का मर्म जैसा समझा वैसा दूसरा कौन जानता है ? योगी सदा सहस्रार, मूलाधार में मनन करते हैं। काली पद्म-वन में हँस के साथ हँसी के रूप में रमण करती हैं। 'प्रसाद' कहता है, लोग हँसते हैं। मेरा मन समझता है, पर प्राण नहीं समझता—वामन होकर चन्द्रमा पकड़ना चाहता है।"

श्रीरामकृष्ण फिर कहते हैं, 'ईश्वर से प्यार करना यही जीवन का उद्देश्य है। जिस प्रकार वृन्दावन में गोपगोपीगण, राखालगण श्रीकृष्ण से प्यार करते थे। जब श्रीकृष्ण मथुरा चले गए, राखालगण उनके विरह में रो रोकर घूमते थे।' इतना कहकर वे ऊपर की ओर ताकते हुए गाना गाने लगे:—

"एक नए राखाल को देख आया जो नए पेड़ की टहनी पकड़े नए बच्चे को गोदी में लिए कह रहा है, 'कहाँ हो रे भाई कन्हैया !' फिर 'क' कह कर ही रह जाता है, पूरा कन्हैया मुँह से नहीं निकलता। कहता, 'कहाँ हो रे भाई' और आँखों से आँसू की धाराएँ निकल रही हैं।"

श्रीरामकृष्ण का प्रेमभरा गाना सुनकर मास्टर की आँखों में आँसू भर आए।

परिच्छेद २

श्रीरामकृष्ण और श्री केशव सेन

श्रीरामकृष्ण कप्तान के घर होकर श्रीयुत केशव सेन के 'कमलकुटीर' नामक मकान पर आए हैं। साथ हैं राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, मास्टर आदि अनेक भक्त लोग। सब दुमंजले के हॉल मे बैठे हैं। श्री प्रताप मजुमदार, श्री त्रैलोक्य आदि ब्राह्मभक्त भी उपस्थित हैं।

श्रीरामकृष्ण केशव को बहुत प्यार करते थे। जिन दिनों बेलघर के बगीचे में वे शिष्यों के साथ साधन-भजन कर रहे थे अर्थात् १८७५ ई० के माघोत्सव के बाद कुछ दिनों के अन्दर ही। तब एक दिन श्रीरामकृष्ण ने बगीचे में जाकर उनके साथ साक्षात्कार किया था। साथ था उनका भाञ्जा हृदयराम। बेलघर के इस बगीचे में उनसे कहा था 'तुम्हारी दुम झड़ गई है' अर्थात् तुम सब कुछ छोड़कर संसार के बाहर भी रह सकते हो और फिर संसार में भी रह सकते हो। जिस प्रकार मेंढक के बच्चे की दुम झड़ जाने पर वह पानी में भी रह सकता है और फिर जमीन पर भी। इसके बाद दक्षिणेश्वर में, कमलकुटीर में, ब्राह्म समाज आदि स्थानों में अनेक बार श्रीरामकृष्ण ने वार्तालाप के बहाने उन्हें उपदेश दिया था। अनेक पंथों से तथा अनेक धर्मों द्वारा ईश्वर-प्राप्ति हो सकती है। बीच बीच में निर्जन में साधन-भजन करके भक्तिलाभ करते हुए संसार में रहा जा सकता है। जनक आदि ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके संसार में रहे थे। व्याकुल होकर उन्हें पुकारना पड़ता है तब वे दर्शन देते हैं। तुम लोग जो कुछ करते हो, निराकार का साधन, वह बहुत अच्छा है। ब्रह्मज्ञान होने पर ठीक अनुभव करोगे कि ईश्वर सत्य है

और सब अनित्य; ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है। सनातन हिन्दू धर्म में साकार निराकार दोनों ही माने गए हैं। अनेक भावों से ईश्वर की पूजा होती है। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर। रोशनचौकी बाजा में एक आदमी केवल पोंऽऽ धरके बजाता रहता है, परन्तु उसकी बाँसुरी में सात छेद रहते हैं। और दूसरा व्यक्ति जिसकी बाँसुरी में सात छेद हैं, वह अनेक राग-रागिनियाँ बजाता है।

"तुम लोग साकार को नहीं मानते इसमें कोई हानि नहीं; निराकार में निष्ठा रहने से भी हो सकता है। परन्तु साकारवादियों के केवल प्रेम के आकर्षण को लेना। माँ कहकर उन्हें पुकारने से भक्तिप्रेम और भी बढ़ जायगा। कभी दास्य, कभी सख्य, कभी वात्सल्य, कभी मधुर भाव। 'कोई अपना नहीं है, उन्हें प्यार करता हूँ' यह बहुत अच्छा भाव है। इसका नाम है निष्काम भक्ति। रुपया-पैसा, मान-इज्जत कुछ भी नहीं चाहता हूँ, चाहता हूँ केवल तुम्हारे चरण-कमलों में भक्ति। वेद, पुराण, तंत्र में एक ईश्वर की ही बात है और उनकी लीला की बात। ज्ञानभक्ति दोनों ही हैं। संसार में दासी की तरह रहो। दासी सब काम करती है, पर उसका मन रहता है अपने घर में। मालिक के बच्चों को पालती पोसती है; कहती है 'मेरा हरि, मेरा राम।' परन्तु खूब जानती है, लड़का उसका नहीं है। तुम लोग जो निर्जन में साधना करते हो यह बहुत अच्छा है। उनकी कृपा होगी। जनक राजा ने निर्जन में कितनी साधना की थी! साधना करने पर ही तो संसार में निर्लिप्त होना सम्भव है।

"तुम लोग भाषण देते हो, सभी के उपकार के लिए; परन्तु ईश्वर को प्राप्त करने के बाद तथा उनके दर्शन प्राप्त कर चुकने के बाद ही

भाषण देने से उपकार होता है। उनका आदेश न पाकर दूसरों को शिक्षा देने से उपकार नहीं होता। ईश्वर को प्राप्त किए बिना उनका आदेश नहीं मिलता। ईश्वर के प्राप्त होने का लक्षण है। मनुष्य बालक की तरह, जड़ की तरह, उन्माद वाले की तरह, पिशाच की तरह हो जाता है; जैसे शुक देव आदि। चैतन्य देव कभी बालक की तरह, कभी उन्मत्त की तरह नृत्य करते थे। हँसते थे, रोते थे, नाचते थे, गाते थे। पुरी धाम में जब थे तब बहुधा जड़ समाधि में रहते थे।"

श्री केशव की हिन्दू धर्म पर उत्तरोत्तर अधिकाधिक श्रद्धा।

इस प्रकार अनेक स्थानों में श्रीरामकृष्ण ने वार्तालाप के सिलसिले में श्री केशवचन्द्र सेन को अनेक प्रकार के उपदेश दिये थे। बेलघर के बगीचे में प्रथम दर्शन के बाद केशव ने २८ मार्च १८७५ ई. के रविवार वाले 'मिरर' समाचार पत्र में लिखा था¶ :—

¶ We met not long ago Paramhansa of Dakshineswar, and were charmed by the depth, penetration and simplicity of his spirit. The never ceasing metaphors and analogies in which he indulged are most of them as apt as they are beautiful. The characteristics of his mind are the very opposite to those of Pandit Dayananda Saraswati, the former being so gentle, tender and contemplative as the latter is sturdy, masculine and polemical.

—Indian Mirror, 28th March 1875.

Hinduism must have in it a deep source of beauty, truth and goodness to inspire such men as these.

—Sunday Mirror, 28th March 1875.

"हमने थोड़े दिन हुए दक्षिणेश्वर के परमहंस श्रीरामकृष्ण का बेलघर के बगीचे में दर्शन किया है। उनकी गम्भीरता, अन्तर्दृष्टि, बाल-स्वभाव देख हम मुग्ध हुए हैं। वे शान्तस्वभाव तथा कोमल प्रकृति के हैं और देखने से ऐसे लगते हैं मानो सदा योग में रहते हैं। इस समय हमारा ऐसा अनुमान हो रहा है कि हिन्दू धर्म के गम्भीरतम स्थलों का अनुसन्धान करने पर कितनी सुन्दरता, सत्यता तथा साधुता देखने को मिल सकती है! यदि ऐसा न होता तो परमहंस की तरह ईश्वरी भाव/में भावित योगी पुरुष देखने में कैसे आते?" १८७६ के जनवरी में फिर माघोत्सव आया। उन्होंने टाऊन हॉल में भाषण दिया। विषय था—ब्राह्म धर्म और हमारा अनुभव (Our Faith and Experiences)। इसमें भी उन्होंने हिन्दू धर्म की सुन्दरता के सम्बन्ध में अनेक बातें कही थीं। *

---

* "If the ancient Vedic Aryan is gratefully honoured today for having taught us the deep truth of the Nirakara or the bodiless spirit, the same loyal homage is due to the later Puranic Hindu for having taught us religious feelings in all their breadth and depth.

"In the days of the Vedas and the Vedanta, India was Communion (Yoga). In the days of the Puranas India was Emotion (Bhakti). The highest and the best feelings of Religion have been cultivated under the guardianship of specific Divinities."

—Lecture delivered in January 1876—

'Our Faith and Experiences.'

श्रीरामकृष्ण उन पर जैसा स्नेह रखते थे, केशव की भी उनके प्रति वैसी ही भक्ति थी। प्रायः प्रतिवर्ष ब्राह्मोत्सव के समय तथा अन्य समय भी केशव दक्षिणेश्वर में जाते थे और उन्हें कमलकुटीर में लाते थे। कभी कभी अकेले कमलकुटीर के एक मंजले पर उपासनागृह में उन्हें, परम अन्तरंग मानते हुए भक्ति के साथ ले जाते तथा एकान्त में ईश्वर की पूजा और आनंद करते थे।

१८७९ ई० के भाद्रोत्सव के समय केशव श्रीरामकृष्ण को फिर निमंत्रण देकर बेलघर के तपोवन में ले गए थे—१५ सितम्बर सोमवार और फिर २१ सितम्बर को कमलकुटीर के उत्सव में सम्मिलित होने के लिए ले गए। इस समय श्रीरामकृष्ण के समाधिस्थ होने पर ब्राह्म भक्तों के साथ उनका फोटो लिया गया। श्रीरामकृष्ण खड़े खड़े समाधिस्थ थे। हृदय उन्हें पकड़कर खड़ा था। २२ अक्टूबर को महाष्टमी—नवमी के दिन केशव ने दक्षिणेश्वर में जाकर उनका दर्शन किया।

२९ अक्टूबर १८७९ बुधवार को शरत् पूर्णिमा के दिन के एक बजे के समय केशव फिर भक्तों के साथ दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने गए थे। स्टीमर के साथ सजी सजाई एक बड़ी नौका, छः नौकाएँ, दो छोटी नाव और करीब ८० भक्तगण थे; साथ में झण्डा, फूल-पत्ते, खोल-करताल, भेरी भी थे। हृदय अभ्यर्थना करके केशव को स्टीमर से उतार लाया—गाना गाते गाते। गाने का मर्म इस प्रकार है—'सुरधुनी के तट पर कौन हरि का नाम लेता है, सम्भवतः प्रेम देनेवाले निताई आए हैं।' ब्राह्मभक्तगण भी पंचवटी से कीर्तन करते करते उनके साथ आने लगे, 'सच्चिदानन्द विग्रह रूपानन्द घन।' उनके बीच में थे श्रीरामकृष्ण—बीच बीच में समाधिमग्न हो रहे थे। इस दिन सन्ध्या के

बाद बाँधा घाट में पूर्णचन्द्र के प्रकाश में केशव ने उपासना की थी। उपासना के बाद श्रीरामकृष्ण कहने लगे, "तुम सब बोलो, 'ब्रह्म-आत्मा-भगवान,' 'ब्रह्म-माया-जीव-जगत्,' 'भागवत-भक्त-भगवान्।'" केशव आदि ब्राह्मभक्तगण उस चन्द्र-किरण में भागीरथी के तट पर एक स्वर से श्रीरामकृष्ण के साथ साथ उन सब मंत्रों का भक्ति के साथ उच्चारण करने लगे। श्रीरामकृष्ण फिर जब बोले, 'बोलो, गुरु-कृष्ण-वैष्णव,' तो केशव ने आनन्द से हँसते हँसते कहा, "महाराज, इस समय उतनी दूर नहीं। यदि हम 'गुरु-कृष्ण वैष्णव' कहें तो लोग हमें कट्टरपन्थी कहेंगे!" श्रीरामकृष्ण भी हँसने लगे और बोले, "अच्छा, तुम (ब्राह्म) लोग जहाँ तक कह सको उतना ही कहो।"

कुछ दिनों बाद १३ नवम्बर १८७९ को श्रीकाली जी की पूजा के बाद राम, मनोमोहन, गोपाल मित्र ने दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया।

१८८० ई० में एक दिन ग्रीष्मकाल में राम और मनोमोहन कमल-कुटीर में केशव के साथ साक्षात्कार करने आए थे। उनकी यह जानने की प्रबल इच्छा हुई कि केशव बाबू की श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में क्या राय है। उन्होंने केशव बाबू से जब यह प्रश्न किया तो उन्होंने उत्तर दिया, "दक्षिणेश्वर के परमहंस साधारण व्यक्ति नहीं हैं, इस समय पृथ्वी भर में इतना महान् व्यक्ति दूसरा कोई नहीं है। वे इतने सुन्दर, इतने असाधारण व्यक्ति हैं कि उन्हें बड़ी सावधानी के साथ रखना चाहिए। देखभाल न करने पर उनका शरीर अधिक टिक नहीं सकेगा। इस प्रकार की सुन्दर मूल्यवान वस्तु को काँच की अलमारी में रखना चाहिए।"

इसके कुछ दिनों बाद १८८१ के माघोत्सव के समय पर जनवरी के महीने में केशव श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर में गए थे, उस समय वहाँ पर राम, मनोमोहन, जयगोपाल सेन आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित थे।

१५ जुलाई १८८१ को केशव फिर श्रीरामकृष्ण को दक्षिणेश्वर से स्टीमर में ले गए। १८८१ ई० के नवम्बर मास में मनोमोहन के मकान पर जिस समय श्रीरामकृष्ण का शुभागमन तथा उत्सव हुआ था उस समय भी आमंत्रित होकर केशव उत्सव में सम्मिलित हुए थे। श्री त्रैलोक्य आदि ने गान गाया था।

१८८१ ई० के दिसम्बर मास में श्रीरामकृष्ण आमंत्रित होकर राजेन्द्र मित्र के मकान पर गए थे। श्री केशव भी गए थे। यह मकान ठंठनिया के बेचु चैटर्जी स्ट्रीट में है। राजेन्द्र थे राम तथा मनोमोहन के मौसा। राम, मनोमोहन, ब्राह्मभक्त राजमोहन व राजेन्द्र ने केशव को समाचार देकर निमंत्रित किया था।

केशव को जिस समय समाचार दिया गया उस समय वे भाई अघोरनाथ के शोक में अशौच अवस्था में थे। प्रचारक भाई अघोर ने ८ दिसम्बर बृहस्पतिवार को लखनऊ शहर में देहत्याग किया था। सभी ने अनुमान किया कि केशव न आ सकेंगे। समाचार पाकर केशव बोले, "यह कैसे? परमहंस महाशय आएँगे और मैं न जाऊँ? अवश्य जाऊँगा। अशौच हूँ इसलिए मैं अलग स्थान पर बैठकर खाऊँगा।"

मनोमोहन की माता परम भक्तिमती स्वर्गीया श्यामासुन्दरी देवी ने श्रीरामकृष्ण को भोजन परोसा था। राम भोजन के समय पर खड़े

थे। जिस दिन राजेन्द्र के घर पर श्रीरामकृष्ण ने शुभागमन किया उस दिन तीसरे पहर सुरेन्द्र ने उन्हें चीना बाजार में ले जाकर उनका फोटो उतरवाया था। श्रीरामकृष्ण खड़े खड़े समाधिमग्न थे।

उत्सव के दिन महेन्द्र गोस्वामी ने भागवत की कथा की।

जनवरी १८८२ ई०— माघोत्सव के उपलक्ष्य में, शिमुलिया ब्राह्म समाज के उत्सव में ज्ञान चौधरी के मकान पर श्रीरामकृष्ण और केशव आमंत्रित होकर उपस्थित थे। आंगन में कीर्तन हुआ। इसी स्थान में श्रीरामकृष्ण ने पहले पहल नरेन्द्र का गाना सुना और उन्हें दक्षिणेश्वर आने के लिए कहा। २३ फरवरी १८८२ ई०, बृहस्पतिवार। केशव ने दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण का फिर से दर्शन किया। उनके साथ थे अमेरिकन पादरी जोसेफ कुक तथा मिस् पिगट। ब्राह्मभक्तों के साथ केशव ने श्रीरामकृष्ण को स्टीमर पर बैठाया। कुक साहब ने श्रीरामकृष्ण की समाधि-स्थिति देखी थी। इस घटना के तीन दिन के अन्दर मास्टर ने दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया।

दो मास बाद—अप्रैल मास में—श्रीरामकृष्ण कमलकुटीर में केशव को देखने आए। उसीका थोड़ासा विवरण निम्न लिखित परिच्छेद में दिया गया है।

श्रीरामकृष्ण का केशव के प्रति स्नेह। जगन्माता के पास नारियल शक्कर की मन्नत।

आज कमलकुटीर के उसी बैठक-घर में श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हैं। २ अप्रैल १८८२, रविवार, दिन के पाँच बजे का समय। केशव भीतर के कमरे में थे। उन्हें समाचार दिया गया। कमीज़ पहनकर

और चद्दर ओढ़कर उन्होंने आकर प्रणाम किया। उनके भक्त मित्र कालीनाथ बसु रुग्ण हैं, वे उन्हें देखने जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आये हैं, इसलिए केशव नहीं जा सके। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "तुम्हें बहुत काम रहता है, फिर अखबार में भी लिखना पड़ता है, वहाँ दक्षिणेश्वर जाने का अवसर नहीं रहता। इसलिए मैं ही तुम्हें देखने आगया हूँ। तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है, यह जानकर नारियल-शक्कर की मन्नत मानी थी। माँ से कहा, माँ, यदि केशव को कुछ हो जाय तो फिर कलकत्ता जाकर किसके साथ बात करूँगा?"

श्री प्रताप आदि ब्राह्मभक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं। पास ही मास्टर को बैठे देख वे केशव से कहते हैं, "वे वहाँ पर (दक्षिणेश्वर में) क्यों नहीं जाते हैं, पूछो तो। इतना ये कहते हैं कि स्त्री-बच्चों पर मन नहीं है। एक मास से कुछ अधिक समय हुआ, मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास आया जाया करते हैं। बाद में जाने में कुछ दिनों का विलम्ब हुआ। इसीलिए श्रीरामकृष्ण इस प्रकार कह रहे हैं। उन्होंने कह दिया था, 'आने में देरी होने पर मुझे पत्र देना।'

ब्राह्मभक्तगण श्री सामाध्यायी को दिखाकर श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं, "आप विद्वान हैं। वेद शास्त्रादि का आपने अच्छा अध्ययन किया है।" श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—"हाँ, इनकी आँखों में से इनका भीतरी भाग दिखाई दे रहा है। ठीक जैसे खिड़की की काँच में से घर के भीतर की चीज़ें दिखाई देती हैं।"

श्री त्रैलोक्य गाना गा रहे हैं। गाना हो रहा है इतने में ही सन्ध्या का दिया जलाया गया। गाना सुनते-सुनते श्रीरामकृष्ण एकाएक

खड़े हो गए, और 'माँ' का नाम लेते-लेते समाधिमग्न हो गये। कुछ स्वस्थ होकर स्वयं ही नृत्य करते-करते गाना गाने लगे जिसका आशय इस प्रकार है:—

"मैं सुरापान नहीं करता, जय काली कहता हुआ सुधा का पान करता हूँ। वह सुधा मुझे इतना मतवाला बना देती है कि लोग मुझे नशाखोर कहते हैं। गुरुजी का दिया हुआ गुड़ लेकर उसमें प्रवृत्ति का मसाला मिलाकर ज्ञानरूपी कलार उससे शराब बनाता है और मेरा मतवाला मन उसे मूलमंत्र रूपी बोतल में से पीता है। पीने के पहले 'तारा' कहकर मैं उसे शुद्ध कर लेता हूँ। 'रामप्रसाद कहता है कि ऐसी शराब पीने पर धर्म-अर्थादि चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है।"

श्री केशव को श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्ण नेत्रों से देख रहे हैं, मानो अपने निजी हैं। और मानो भयभीत हो रहे हैं कि कहीं केशव किसी दूसरे के अर्थात् संसार के न बन जायँ। उनकी ओर ताकते हुए श्रीराम-कृष्ण ने फिर गाना प्रारम्भ किया, जिसका भावार्थ इस प्रकार का है—

"बात करने से भी डरती हूँ, न करने से भी डरती हूँ। हे राधे, मन म सन्देह होता है कि कहीं तुम जैसी निधि को गवाँ न बैठूँ। हम तुम्हें वह रहस्य बतलाती हैं जिससे हम विपत्ति से पार हो गई हैं और जो लोगों को भी विपत्ति से पार कर देता है। अब तुम्हारी जैसी इच्छा।" अर्थात् सब कुछ छोड़ भगवान् को पुकारो, वे ही सत्य हैं और सब अनित्य। उन्हें प्राप्त किए बिना कुछ भी न होगा—यही महामंत्र है।

फिर बैठकर भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं।

उनके लिए जलपान की तैयारी हो रही है। हॉल के एक कोने में एक ब्राह्मभक्त पियानो बजा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नवदन बालक की तरह पियानो के पास खड़े होकर देख रहे हैं। थोड़ी देर बाद उन्हें अन्तःपुर में ले जाया गया,—वहाँ वे जलपान करेंगे और महिलाएँ प्रणाम करेंगी।

श्रीरामकृष्ण का जलपान समाप्त हुआ। अब वे गाड़ी में बैठे। ब्राह्मभक्तगण सभी गाड़ी के पास खड़े हैं। कमलकुटीर से गाड़ी दक्षिणेश्वर की ओर चली।

परिच्छेद ३

प्राणकृष्ण के मकान पर श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ते में शुभागमन किया है। श्रीयुत प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय के श्यामपुकुरवाले मकान के दुमज़ले पर बैठक-घर में भक्तों के साथ बैठे हैं। अभी अभी भक्तों के साथ बैठकर प्रसाद पा चुके हैं। आज ९ अप्रैल, रविवार १८८२ ई०, चैत्र शुक्ला चतुर्दशी है। इस समय दिन के १-२ बजे होंगे। कप्तान उसी मुहल्ले में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है कि इस मकान पर विश्राम करने के बाद कप्तान के घर होकर उनसे मिलकर कमलकुटीर नामक मकान में श्री केशव सेन को देखने जायँ। प्राणकृष्ण बैठक-घर में बैठे हैं। राम, मनोमोहन, केदार, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र (सुरेन्द्र के भाई), राखाल, बलराम, मास्टर आदि भक्तगण उपस्थित हैं।

मुहल्ले के भद्र सज्जन तथा अन्य दूसरे निमंत्रित व्यक्ति भी आए हैं। श्रीरामकृष्ण क्या कहते हैं—यह सुनने के लिए सभी उत्सुक होकर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "ईश्वर और उनका ऐश्वर्य। यह जगत् उनका ऐश्वर्य है। परन्तु ऐश्वर्य देखकर ही सब लोग भूल जाते हैं, जिनका ऐश्वर्य है उनकी खोज नहीं करते। कामिनी-कांचन का भोग करने सभी जाते हैं। परन्तु उसमें दुःख और अशान्ति ही अधिक है। संसार मानो विशालाक्षी नदी की भँवर है। नाव का भँवर में पड़ने पर फिर उसका बचना कठिन है। गुखरू काँटे की तरह एक छूटता है तो दूसरा जकड़ जाता है।

गोरख धन्धे में एक बार घुसने पर निकलना कठिन है। मनुष्य मानो जल सा जाता है।

एक भक्त—महाराज, तो उपाय?

उपाय—साधुसंग और प्रार्थना।

श्रीरामकृष्ण—उपाय–साधुसंग और प्रार्थना। वैद्य के पास गए बिना रोग ठीक नहीं होता। साधुसंग एक ही दिन करने से कुछ नहीं होता। सदा ही आवश्यक है। रोग लगा ही है। फिर वैद्य के पास बिना रहे हुए नाड़ी ज्ञान नहीं होता। साथ साथ घूमना पड़ता है, तब समझ में आता है कि कौन कफ की नाड़ी है और कौन पित्त की नाड़ी।

भक्त—साधुसंग से क्या उपकार होता है?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर पर अनुराग होता है। उनसे प्रेम होता है। व्याकुलता न आने से कुछ भी नहीं होता। साधुसंग करते करते ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होता है—जिस प्रकार घर में कोई अस्वस्थ होने पर मन सदा ही चिन्तित रहता है और यदि किसी की नौकरी छूट जाती है तो वह जिस प्रकार आफिस-आफिस घूमता रहता है, व्याकुल होता रहता है, उसी प्रकार यदि किसी आफिस में उसे जवाब मिलता है कि कोई काम नहीं है तो फिर दूसरे दिन आकर पूछता है, क्या आज कोई जगह खाली हुई!

"एक और उपाय है—व्याकुल होकर प्रार्थना करना। ईश्वर अपने हैं, उनसे कहना होता है, तुम कैसे हो, दर्शन दो—दर्शन देना ही होगा–तुमने मुझे पैदा क्यों किया? सिक्खों ने कहा था, ईश्वर दयामय हैं। मैंने उनसे कहा था, दयामय क्यों कहूँ? उन्होंने

हमें पैदा किया है जिससे हमारा मंगल हो, यदि वे ऐसा करें तो इसमें आश्चर्य क्या है ? माँ-बाप बच्चों का पालन करेंगे ही, इसमें फिर दया की क्या बात है ? यह तो करना ही होगा, इसीलिये उन पर जबरदस्ती करके उनसे प्रार्थना स्वीकार करानी होगी। वह हमारी माँ, और हमारे बाप जो हैं। लड़का यदि खाना पीना छोड़ दे तो माँ बाप उसके बालिग (major) होने के तीन वर्ष पहले ही उसका हिस्सा उसे दे देते हैं। फिर जब लड़का पैसा माँगता है और बार बार कहता है, 'माँ, तेरे पैरों पड़ता हूँ मुझे दो पैसे दे दे' तो माँ हैरान होकर उसकी व्याकुलता देख पैसा फेंक ही देती है।

"साधुसंग करने पर एक और उपकार होता है,—सत् और असत् का विचार। सत् नित्य पदार्थ अर्थात् ईश्वर, असत् अर्थात् अनित्य। असत् पथ पर मन जाते ही विचार करना पड़ता है। हाथी जब दूसरों के केले के पेड़ खाने के लिये सूंड़ बढ़ाता है तो उसी समय महावत उसे अंकुश मारता है।

पड़ोसी—महाराज, पापबुद्धि क्यों होती है ?

श्रीरामकृष्ण—उनके जगत् में सभी प्रकार हैं। साधु लोग भी उन्होंने बनाए हैं, दुष्ट लोगों को भी उन्होंने ही बनाया है, सद्बुद्धि भी वे देते हैं और असद् बुद्धि भी।

पड़ोसी—तो क्या पाप करने पर हमारी कोई जिम्मेदारी नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर का नियम है कि पाप करने पर उसका फल भोगना पड़ेगा। मिर्च खाने पर क्या कड़आ न लगेगा ? सेजो बाबू ने अपनी जवानी में बहुत कुछ किया था, इसीलिए मरते समय उन्हें अनेक प्रकार के रोग हुए। कम उम्र में इतना ज्ञान नहीं रहता। कालीबाड़ी में भोजन

पकाने के लिए अनेक सूँदी नामक लकड़ी रहती है, वह गीली लकड़ी पहले पहल अच्छी जलती रहती है। उस समय मालूम भी नहीं होता कि इसके अन्दर जल है। लकड़ी का जलना समाप्त होते समय सारा जल पीछे की ओर आ जाता है और फँच-फौंच करके चूल्हे की आग बुझा देता है। इसीलिए काम, क्रोध, लोभ—इन सब से सावधान रहना चाहिए। देखो न हनुमान ने क्रोध में लंका जला दी थी। अन्त में ख्याल आया, अशोकवन में सीता है। तब सटपटाने लगे कि कहीं सीताजी का कुछ न हो जाय।

पड़ोसी—तो ईश्वर ने दुष्ट लोगों को बनाया ही क्यों?

श्रीरामकृष्ण—उनकी इच्छा, उनकी लीला। उनकी माया में विद्या भी है, अविद्या भी। अन्धकार की भी आवश्यकता है। अन्धकार रहने पर प्रकाश की महिमा और भी अधिक प्रकट होती है। काम, क्रोध, लोभादि खराब चीज़ तो अवश्य हैं, परन्तु उन्होंने ये दिये क्यों? दिये महान् व्यक्तियों को तैयार करने के लिये, मनुष्य इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने से महान् होता है।

"जितेन्द्रिय क्या नहीं कर सकता? उनकी कृपा से उसे ईश्वर प्राप्ति तक हो सकती है। फिर दूसरी ओर देखो, काम से उनकी सृष्टि की लीला चल रही है। दुष्ट लोगों की भी आवश्यकता है। एक गांव के लोग बहुत उद्दण्ड हो गये थे। उस समय वहाँ गोलक चौधरी को भेज दिया गया। उसके नाम से लोग काँपने लगे—इतना कठोर शासन था उसका। अतएव अच्छे बुरे सभी तरह के लोग चाहिए। सीता जी बोलीं, 'राम, अयोध्या में यदि सभी सुन्दर महल होते तो कैसा अच्छा होता। मैं देख रहा हूँ अनेक मकान टूट गए हैं, कुछ पुराने हो गए हैं।'

श्रीराम बोले, 'सीता, यदि सभी मकान सुन्दर हों तो मिस्त्री लोग क्या करेंगे? (सभी हँस पड़े)। ईश्वर ने सभी प्रकार के पदार्थ बनाए हैं— अच्छे पेड़, विषैले पेड़ और व्यर्थ के पौधे भी। जानवरों में भले-बुरे सभी हैं—बाघ, शेर, साँप,—सभी हैं।

संसार में भी ईश्वरप्राप्ति होती है। सभी की मुक्ति होगी।

पड़ोसी—महाराज, संसार में रहकर क्या भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण—अवश्य किया जा सकता है। परन्तु जैसा कहा, साधुसंग और सदा प्रार्थना करनी पड़ती है। उनके पास रोना चाहिये। मन का सभी मैल धुल जाने पर उनका दर्शन होता है। मन मानो मिट्टी से लिपटी हुई एक लोहे की सुई है—ईश्वर हैं चुम्बक। मिट्टी रहते चुम्बक के साथ संयोग नहीं होता। रोते रोते सुई की मिट्टी धुल जाती है। सुई की मिट्टी अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, पापबुद्धि, विषयबुद्धि आदि। मिट्टी धुल जाने पर सुई को चुम्बक खींच लेगा अर्थात् ईश्वरदर्शन होगा। चित्तशुद्धि होने पर ही उनकी प्राप्ति होती है। ज्वर चढ़ा है, देह में काफी पानी का माद्दा मौजूद है, इसमें क्वीनीन से क्या काम होगा?

"संसार में ईश्वर लाभ होगा क्यों नहीं? वही साधुसंग, रो रोकर प्रार्थना, बीच बीच में निर्जनवास; चारों ओर कटघरा लगाए बिना रास्ते के पौधों को गाय-बकरियाँ खा जाती हैं।"

पड़ोसी—तो फिर जो लोग संसार में हैं उनकी भी मुक्ति होगी?

श्रीरामकृष्ण—सभी की मुक्ति होगी। परन्तु गुरु के उपदेश के अनुसार चलना पड़ता है, टेढ़े रास्ते से जाने पर फिर सीधे रास्ते

पर आने में कष्ट होगा। मुक्ति बहुत देर में होती है। शायद इस जन्म में न भी हो। फिर सम्भव है अनेक जन्मों के पश्चात् हो। जनक आदि ने संसार में भी कर्म किया था। ईश्वर को सिर पर रखकर काम करते थे। नाचने वाली जिस प्रकार सिर पर बर्तन रखकर नाचती है, और पश्चिम की औरतों को नहीं देखा, सिर पर जल का घड़ा लेकर हँस हँस कर बातें करती हुई जाती हैं?

पड़ोसी—आपने गुरूपदेश के बारे में बताया पर गुरु कैसे प्राप्त करूँ?

श्रीरामकृष्ण—हर एक गुरु नहीं हो सकता। लकड़ी का गोला पानी में स्वयं भी बहता हुआ चला जाता है और अनेक जीव-जन्तु भी उस पर चढ़ कर जा सकते हैं। पर मामूली लकड़ी पर चढ़ने से लकड़ी भी डूब जाती है और जो चढ़ता है वह भी डूब जाता है। इसलिए ईश्वर युग युग में लोक-शिक्षा के लिए गुरु-रूप में स्वयं अवतीर्ण होते हैं। सच्चिदानन्द ही गुरु हैं।

"ज्ञान किसे कहते हैं; और मैं कौन हूँ? 'ईश्वर ही कर्ता है और सब अकर्ता' इसी का नाम ज्ञान है। मैं अकर्ता, उनके हाथ का यंत्र हूँ। इसीलिये मैं कहता हूँ, माँ, तुम यंत्री हो, मैं यंत्र हूँ; तुम घर-वाली हो, मैं घर हूँ; मैं गाड़ी हूँ, तुम इंजीनियर हो। जैसा चलाती हो वैसा चलता हूँ, जैसा कराती हो वैसा करता हूँ, जैसा बुलवाती हो, वैसा बोलता हूँ; नाहं, नाहं, तू है तू है।"

परिच्छेद ४

श्रीरामकृष्ण तथा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

(१)

आज शनिवार है, श्रावण कृष्णाषष्ठी, ५ अगस्त १८८२ ई० । दिन के चार बजे होंगे ।

श्रीरामकृष्ण किराये की गाड़ी पर कलकत्ते के रास्ते बादुड़बागान की तरफ आ रहे हैं । भवनाथ, हाजरा और मास्टर साथ में हैं । आप पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के घर जायँगे ।

श्रीरामकृष्ण की जन्मभूमि जिला हुगली के अन्तर्गत कामारपुकुर गांव है, जो पण्डित विद्यासागर की जन्मभूमि वीरसिंह गांव के पास है । परमहंस देव बाल्यकाल से ही विद्यासागर की दया की चर्चा सुनते आये हैं । दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में आप प्रायः उनके पाण्डित्य और दया की बातें सुना करते हैं । यह सुनकर कि मास्टर विद्यासागर के स्कूल में पढ़ाते हैं, आपने उनसे पूछा, " क्या मुझे विद्यासागर के पास ले चलोगे ? मुझे उन्हें देखने की बड़ी इच्छा होती है । " मास्टर ने जब विद्यासागर से यह बात कही तो उन्होंने हर्ष के साथ किसी शनिवार को चार बजे उन्हें साथ लाने को कहा । केवल यही पूछा—कैसे परमहंस हैं ? क्या वे गेरुए कपड़े पहनते हैं ? मास्टर ने कहा—जी नहीं, वे एक अद्भुत पुरुष हैं; लाल किनारेदार धोती पहनते हैं, जामा पहनते हैं, पॉलिश किये हुए स्लीपर पहनते हैं, रानी रासमणि के काली-

मन्दिर की एक कोठरी में रहते हैं, जिसमें एक तखत है और उस पर बिस्तर और मच्छरदानी, उसी बिस्तर पर लेटते हैं। कोई बाहरी भेष तो नहीं है, पर सिवाय ईश्वर के और कुछ नहीं जानते, अहर्निश उसी की चिन्ता किया करते हैं।

गाड़ी दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर से चलकर श्यामबाजार होते हुए अब अमहर्स्ट स्ट्रीट में आई है। भक्त लोग कह रहे हैं कि अब बादुड़-बागान के पास आई है। श्रीरामकृष्ण बालक की भाँति आनन्द से बातचीत करते हुए आ रहे हैं। अमहर्स्ट स्ट्रीट में आकर एकाएक उनका भावान्तर हुआ—मानो ईश्वरावेश होना चाहता है।

गाड़ी स्वर्गीय राममोहन राय के बाग की बगल से आ रही है। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण का भावान्तर नहीं देखा, झट कह दिया—यह राममोहन राय का बाग है। श्रीरामकृष्ण नाराज़ हुए, कहा,—अब ये बातें अच्छी नहीं लगतीं। आप भावाविष्ट हो रहे हैं।

विद्यासागर के मकान के सामने गाड़ी खड़ी हुई। मकान दो मञ्ज़िला है, साहबी ढङ्ग से सजा हुआ है। परमहंस देव गाड़ी से उतरे। मास्टर राह बताते हुए आपको मकान के भीतर ले जा रहे हैं। आंगन में फूलों के पेड़ हैं, उनके बीच में से जाते हुए श्रीरामकृष्ण बालक की तरह बटन में हाथ लगाकर मास्टर से पूछ रहे हैं, "जामे के बटन खुले हुए हैं—इसमें कुछ हानि तो न होगी ?" बदन पर एक सूती जामा है और लाल किनारे की धोती पहने हुए हैं, जिसका एक छोर कन्धे पर पड़ा हुआ है। पैरों में स्लीपर है। मास्टर ने कहा—आप इस सब के लिए चिन्ता न कीजिये, आपकी कहीं कुछ त्रुटि न होगी। आपको

बटन नहीं लगाना पड़ेगा। समझाने पर लड़का जैसे शान्त हो जाता है, आप भी वैसे ही शान्त हो गये। जीने से चढ़कर सब के पहले कमरे में (जो उत्तर की तरफ था) श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ गये। कमरे की उत्तर तरफ विद्यासागर दक्षिण को मुँह किये बैठे हैं। सामने एक चौकोर लम्बी चिकनी मेज़ है। इसी के पूर्व एक बेंच है। मेज के दक्षिण तथा पश्चिम तरफ कई कुर्सियाँ हैं। विद्यासागर दो एक मित्रों से बातचीत कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण के प्रवेश करते ही विद्यासागर ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। श्रीरामकृष्ण मेज़ के पूर्व की ओर खड़े हैं—बाँया हाथ मेज़ पर है; पीछे वह बेंच है। विद्यासागर को पूर्व-परिचित की भाँति एकटक देखते हैं और भावावेश में हँसते हैं।

विद्यासागर की उम्र ६३ के लगभग होगी। श्रीरामकृष्ण से वे १६–१७ वर्ष बड़े होंगे। मोटी धोती पहने हुए हैं, पैरों में स्लीपर, और बदन में एक हाथ-कटा फलालैन का कुर्ता। सिर का निचला हिस्सा चारों तरफ उड़ियों की तरह मुंडा हुआ है। बोलने के समय उज्ज्वल दाँत नजर आते हैं—वे सबके सब नकली हैं। सिर खूब बड़ा है, ललाट ऊँचा है और क़द कुछ छोटा, ब्राह्मण हैं, इसीलिए गले में जनेऊ है।

विद्यासागर के गुणों का अन्त नहीं। विद्यानुराग, सब जीवों पर दया, स्वाधीनप्रियता, मातृभक्ति तथा मानसिक बल आदि बहुत से गुण उनमें कूट-कूट कर भरे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो रहे हैं और थोड़ी देर के लिए उसी दशा में खड़े हैं। भाव संभालने के लिए बीच बीच में कहते हैं कि पानी

पिऊँगा। इस बीच में घर के लड़के और आत्मीय बन्धु भी आकर खड़े हो गये।

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर बेंच पर बैठते हैं। एक १७-१८ वर्ष का लड़का उस पर बैठा है—विद्यासागर के पास सहायता माँगने आया है। परमहंसदेव भावाविष्ट हैं—ऋषि की अन्तर्दृष्टि लड़के के मनोभाव सब ताड़ गई। आप कुछ सरककर बैठे और भावावेश में कहा, "माँ, इस लड़के की संसार में बड़ी आसक्ति है, और तुम्हारे अविद्या के संसार पर! यह अविद्या का लड़का है।"

जो ब्रह्मविद्या के लिए व्याकुल नहीं है, केवल अर्थकरी विद्या का उपार्जन करना उसके लिए व्यर्थ है—कदाचित् आप यही कह रहे हैं।

विद्यासागर ने व्यग्र होकर किसी से पानी लाने को कहा और मास्टर से पूछा, " कुछ मिठाई लाऊँ, क्या ये खायँगे ?" मास्टर ने कहा—जी हाँ, ले आइये। विद्यासागर जल्दी भीतर से कुछ मिठाइयाँ लाये और कहा कि ये बर्दवान से आई हैं। श्रीरामकृष्ण को कुछ खाने को दी गई; हाजरा और भवनाथ ने भी कुछ पाई। जब मास्टर की पारी आई तो विद्यासागर ने कहा—वह तो घर ही का लड़का है उसके लिए चिन्ता नहीं। श्रीरामकृष्ण एक भक्त लड़के के बारे में विद्यासागर से कह रहे हैं, जो सामने ही बैठा था। आपने कहा, " यह लड़का बड़ा अच्छा है, और इसके भीतर सार है, जैसे फल्गु नद; ऊपर तो रेत है, पर थोड़ा खोदने से ही भीतर पानी बहता दिखाई देता है।"

मिठाई पा चुकने के बाद आप हँसते हुए विद्यासागर से बातचीत कर रहे हैं। घर दर्शकों से भर गया है, कोई बैठा है, कोई खड़ा

श्रीरामकृष्ण—आज सागर से आ मिला। इतने दिन खाई, सोता और अधिक से अधिक हुआ तो नदी देखी, पर अब सागर देख रहा हूँ। (सब हँसते हैं।)

विद्यासागर—तो थोड़ा खारा पानी लेते जाइये। (हास्य)

श्रीरामकृष्ण—नहीं जी, खारा पानी क्यों? तुम तो अविद्या के सागर नहीं, विद्या के सागर हो! (सब हँसे।) तुम क्षीर-समुद्र हो! (सब हँसे।)

विद्यासागर—आप सब कुछ कह सकते हैं।

सात्विक कर्म। दया और सिद्ध पुरुष।

विद्यासागर चुप रहे। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे—

"तुम्हारा कर्म सात्विक कर्म है। यह सत्व का रजः है। सत्वगुण से दया होती है। दया से जो कर्म किया जाता है, वह है तो राजसिक कर्म सही, पर यह रजोगुण सत का रजोगुण है, इसमें दोष नहीं है। शुकदेव आदि ने लोकशिक्षा के लिए दया रखी थी—ईश्वर के विषय की शिक्षा देने के लिए। तुम विद्यादान और अन्नदान कर रहे हो—यह भी अच्छा है। निष्काम रीति से कर सको तो इससे ईश्वर-लाभ होगा। कोई करता है नाम के लिए, कोई पुण्य के लिए—उनका कर्म निष्काम नहीं।

"फिर सिद्ध तो तुम हो ही।"

विद्यासागर—महाराज, यह कैसे?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)— आलू परवल सिद्ध होने से (पक जाने से) नरम हो जाता है— सो तुम भी बहुत नर्म हो। तुम्हारी ऐसी दया ! (हास्य)

विद्यासागर (सहास्य)—पीसा उरद तो सिद्ध होने पर सख्त हो जाता है। (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण—तुम वैसे क्यों होने लगे ? खाली पण्डित कैसे हैं—मानो एक पके फल का अंश जो अन्त तक कठिन ही रह जाता है। वे न इधर के हैं न उधर के। गीध खूब ऊँचा चढ़ता है, पर उसकी नजर हड़वार पर ही रहती है। जो खाली पण्डित हैं, वे सुनने के ही हैं, पर उनकी कामिनी-कांचन पर आसक्ति होती है—गीध की तरह वे सड़ी लाशें ढूंढ़ते हैं। आसक्ति का घर अविद्या के संसार में है। दया, भक्ति, वैराग्य—ये विद्या के ऐश्वर्य हैं।

विद्यासागर चुपचाप सुन रहे हैं। सभी टकटकी बाँधे इस आनन्दमय पुरुष को देख रहे हैं, उनका वचनामृत पान कर रहे हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण, ज्ञानयोग अथवा वेदान्त-विचार।

विद्यासागर बड़े विद्वान हैं। जब वे संस्कृत कॉलेज में पढ़ते थे तब अपनी श्रेणी के सबसे अच्छे छात्र थे। हर एक परीक्षा में प्रथम होते और स्वर्णपदक आदि अथवा छात्रवृत्तियाँ पाते थे। होते होते वे संस्कृत कॉलेज के अध्यक्ष तक हुये थे।

विद्यासागर किसी को धर्मशिक्षा नहीं देते थे। वे दर्शनादि ग्रन्थ पढ़ चुके थे। मास्टर ने एक दिन उनसे पूछा, " आपको हिन्दू दर्शन कैसे लगते हैं? " उन्होंने जवाब दिया, " मुझे यही मालूम होता है कि वे जो चीज़ समझाने गये उसे समझा न सके। " वे हिन्दुओं की भाँति श्राद्धादि सब धर्मानुष्ठान करते थे, गले में जनेऊ धारण करते थे, अपनी भाषा में जो पत्र लिखते थे, उनमें सबसे पहले "श्री श्रीहरिः शरणम्" लिखते थे।

मास्टर ने और एक दिन उनको ईश्वर के विषय में यह कहते सुना, "ईश्वर को कोई जान तो सकता नहीं। फिर करना क्या चाहिए? मेरी समझ में, हम लोगों को ऐसा होना चाहिए कि यदि सब कोई वैसे हों तो यह पृथ्वी स्वर्ग बन जाय। हर एक को ऐसी चेष्टा करनी चाहिए कि जिससे जगत् का भला हो। "

विद्या और अविद्या की चर्चा करते हुए श्रीरामकृष्ण ब्रह्मज्ञान की बात उठा रहे हैं। विद्यासागर बड़े पण्डित हैं—शायद षड्दर्शन पढ़कर उन्होंने देखा है कि ईश्वर के विषय में कुछ भी जानना सम्भव नहीं।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर ब्रह्मविद्या और अविद्या दोनों के परे हैं, वह मायातीत हैं।

" इस जगत् में विद्यामाया और अविद्यामाया दोनों हैं, ज्ञान-भक्ति भी हैं, और साथ ही कामिनीकांचन भी हैं, सत् भी है और असत् भी, भला भी है और बुरा भी, परन्तु ब्रह्म निर्लिप्त है। भला-बुरा जीवों के लिए है, सत् असत् जीवों के लिए है। इससे ब्रह्म को कुछ हानि नहीं होती।

"जैसे, दीप के सामने कोई भागवत पढ़ रहा है और कोई जाल रच रहा है, पर दीप निर्लिप्त है।

"सूर्य शिष्ट पर भी प्रकाश डालता है और दुष्ट पर भी।

"यदि कहो कि दुःख, पाप, अशान्ति ये सब फिर क्या हैं,—तो जवाब उसका यह है कि वे सब जीवों के लिए हैं, ब्रह्म निर्लिप्त है। साँप में विष है ; औरों को डसने से वे मर जाते हैं, पर साँप को उससे कोई हानि नहीं होती।

ब्रह्म अनिर्वचनीय है, 'अव्यपदेश्यम्'।

"ब्रह्म क्या है सो मुँह से नहीं कहा जा सकता। सभी चीज़ें जूठी हो गई हैं; वेद, पुराण, तंत्र, षड्दर्शन सब जूठे हो गये हैं। मुँह से पढ़े गये हैं, मुँह से उच्चारित हुए हैं—इसीसे जूठे हो गये। पर केवल एक वस्तु जूठी नहीं हुई है—वह वस्तु ब्रह्म है। ब्रह्म क्या है यह आज तक कोई मुँह से नहीं कह सका।"

विद्यासागर (मित्रों से)—वाह ! यह तो बड़ी सुन्दर बात हुई ! आज मैंने एक नई बात सीखी।

श्रीरामकृष्ण—एक पिता के दो लड़के थे। ब्रह्मविद्या सीखने के लिए पिता ने लड़कों को आचार्य को सौंपा। कई वर्ष बाद वे गुरुगृह से लौटे, आकर पिता को प्रणाम किया। पिता की इच्छा हुई कि देखें इन्हें कैसा ब्रह्मज्ञान हुआ। बड़े बेटे से उन्होंने पूछा, 'बेटा, तुमने तो सब कुछ पढ़ा है, अब बताओ ब्रह्म कैसा है।' बड़ा लड़का वेदों से बहुत से

श्लोकों को आवृत्ति करते हुये ब्रह्म का स्वरूप समझाने लगा । पिता चुप रहे । जब उन्होंने छोटे लड़के से पूछा तो वह सिर झुकाये चुप रहा, मुँह से बात न निकली; तब पिता ने प्रसन्न होकर छोटे लड़के से कहा, 'बेटा तुम्हीं ने कुछ समझा है । ब्रह्म क्या है यह मुँह से नहीं कहा जा सकता ।'

"मनुष्य सोचता है कि हम ईश्वर को जान गये । एक चींटी चीनी के पहाड़ को गई थी । एक दाना खाकर उसका पेट भर गया, एक दूसरा दाना मुँह में लिये अपने डेरे को जाने लगी, जाते समय सोच रही है कि अबकी बार आकर समूचे पहाड़ को ले जाऊँगी । क्षुद्र जीव यही सब सोचते हैं—वे नहीं जानते कि ब्रह्म वाक्य-मन के अतीत है ।

"कोई हो—वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, ईश्वर को जान थोड़े ही सकता है ! शुकदेव आदि मानो बड़े चींटे हैं—चीनी के आठ दस दाने मुँह में लेलें—और क्या ?

"वेद-पुराणों में जो ब्रह्म के विषय में कहा गया है, वह किस ढंग का कथन है सो सुनो । एक आदमी के समुद्र देखकर लौटने पर यदि कोई उससे पूछे कि समुद्र कैसा देखा, तो वह जैसे मुँह बाये कहता है—आह ! क्या देखा ! कैसी लहरें ! कैसी आवाज़ ! बस् ब्रह्म का वर्णन भी वैसा ही है । वेदों में लिखा है—वह आनन्दस्वरूप है—सच्चिदानन्द । शुकदेव आदि ने यह ब्रह्मसागर किनारे पर खड़े होकर देखा और छुआ था । किसी के मतानुसार वे इस सागर में उतरे नहीं । इस सागर में उतरने से फिर कोई लौट नहीं सकता ।

"समाधिस्थ होने से ब्रह्मज्ञान होता है—ब्रह्म-दर्शन होता है—उस दशा में विचार बिलकुल बन्द हो जाता है, आदमी चुप हो जाता है। ब्रह्म कैसी वस्तु है, यह मुँह से बताने की सामर्थ्य नहीं रहती।

"एक नमक का पुतला समुद्र नापने गया! (सब हँसे।) पानी कितना गहरा है, उसकी खबर देना चाहा! पर खबर देना उसे नसीब न हुआ। वह पानी में उतरा कि गल गया! बस फिर खबर कौन दे?"

किसी ने प्रश्न किया, "क्या समाधिस्थ पुरुष जिनको ब्रह्मज्ञान हुआ है वे फिर बोलते नहीं?"

श्रीरामकृष्ण (विद्यासागर आदि से)—लोकशिक्षा के लिए शंकराचार्य ने विद्या का 'अहं' रखा था। ब्रह्म-दर्शन होने से मनुष्य चुप हो जाता है। जब तक दर्शन न हो, तभी तक विचार होता है। घी जब तक पक न जाय, तभी तक आवाज़ करता है। पके घी से कोई शब्द नहीं निकलता, पर जब पके घी में कच्ची पूरी छोड़ी जाती है, तो फिर एक बार वैसा ही शब्द निकलता है। जब कच्ची पूरी को पका डाला, तब वह फिर चुप हो जाता है। वैसे ही समाधिस्थ पुरुष लोकशिक्षण के लिए फिर नीचे उतरता है. फिर बोलता है।

'जब तक मधुमक्खी फूल पर नहीं बैठती, तब तक भनभनाती रहती है। फूल पर बैठकर मधु पीना शुरू करने के बाद वह चुप हो जाती है। हाँ, मधुपान के उपरान्त मस्त होकर फिर कभी कभी भनभनाती है।

"तालाब में घड़ा भरते समय भक् भक् आवाज़ होती है। घड़ा भर जाने के बाद फिर आवाज़ नहीं होती। (सब हँसे।) हाँ, यदि एक घड़े से पानी दूसरे में डाला जाय, तो फिर शब्द होता है। (हास्य)

(३)

ज्ञान एवं विज्ञान; अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद तथा द्वैतवाद का समन्वय ।

श्रीरामकृष्ण—ऋषियों को ब्रह्मज्ञान हुआ था—विषय-बुद्धि का लेश मात्र रहते यह ब्रह्मज्ञान नहीं होता । ऋषि लोग कितना परिश्रम करते थे ! सबेरे आश्रम से चले जाते थे । दिन भर अकेले ध्यान-चिन्ता करते और रात को आश्रम में लौटकर कुछ फलमूल खाते थे । देखना, सुनना, छूना इन सब विषयों से मन को अलग रखते थे; तब कहीं उन्हें ब्रह्म का बोध होता था ।

"कलियुग में लोगों के प्राण अन्न पर निर्भर हैं, देहात्मबुद्धि जाती नहीं । इस दशा में 'सोऽहम्'—मैं ब्रह्म हूँ—कहना अच्छा नहीं । सभी काम किये जाते हैं, फिर 'मैं ही ब्रह्म हूँ', यह कहना ठीक नहीं । जो विषय का त्याग नहीं कर सकते, जिनका अहंभाव किसी तरह जाता नहीं, उनके लिए 'मैं दास हूँ' 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान अच्छा है । भक्तिपथ में रहने से भी ईश्वर का लाभ होता है ।

"ज्ञानी 'नेति नेति'—ब्रह्म यह नहीं, वह नहीं, अर्थात् कोई भी ससीम वस्तु नहीं—यह विचार करके सब विषयबुद्धि छोड़े तब ब्रह्म को जान सकता है । जैसे कोई ज़ीने की एक एक सीढ़ी पार करते हुए छत पर पहुँच सकता है; पर विज्ञानी—जिसने विशेष रूप से ईश्वर से मेल-मिलाप किया है—और भी कुछ दर्शन करता है; वह देखता है कि जिन चीज़ों से छत बनी है—उन ईंटों, चूने, सुर्खी से ज़ीना भी बना

है। 'नेति नेति' करके जिस ब्रह्मवस्तु का ज्ञान होता है, वही जीव और जगत् होती है। विज्ञानी देखता है कि जो निर्गुण है वही सगुण भी है।

"छत पर बहुत देर तक लोग ठहर नहीं सकते; फिर उतर आते हैं। जिन्होंने समाधिस्थ होकर ब्रह्मदर्शन किया है, वे भी नीचे उतरकर देखते हैं कि वही जीव जगत् हुआ है। सा, रे, ग, म, प, ध, नि। 'नि' में—चरमभूमि में—बहुत देर तक रहा नहीं जाता। 'अहं' नहीं मिटता; तब मनुष्य देखता है कि ब्रह्म ही 'मैं', जीव, जगत्—सब कुछ हुआ है। इसी का नाम **विज्ञान** है।

"ज्ञानी की राह भी राह है, ज्ञान-भक्ति की राह भी राह है, फिर भक्ति की भी राह एक राह है। ज्ञानयोग भी सत्य है, और भक्तिपथ भी सत्य है; सभी रास्ते से ईश्वर के समीप जाया जा सकता है। ईश्वर जब तक जीवों में "मैं" यह बोध रखता है, तब तक भक्तिपथ ही सरल है।

"विज्ञानी देखता है कि ब्रह्म अटल, निष्क्रिय, सुमेरुवत् है। यह संसार उसके सत्व, रजः और तमः—इन तीन गुणों से बना है, पर वह निर्लिप्त है।

विज्ञानी देखता है कि जो ब्रह्म है वही भगवान् है,—जो गुणातीत है वही षड़ैश्वर्यपूर्ण भगवान है। ये जीव और जगत्, मन और बुद्धि, भक्ति, वैराग्य और ज्ञान—सब उसके ऐश्वर्य हैं। (सहास्य) जिस बाबू के घरद्वार नहीं है—या तो बिक गया—वह बाबू कैसा! (सब हँसे।) ईश्वर षड़ैश्वर्यपूर्ण है। यदि उसके ऐश्वर्य न होता तो कौन उसकी परवाह करता! (सब हँसे।)

शक्तिविशेष।

"देखो न, यह जगत् कैसा विचित्र है! कितने प्रकार की वस्तुएँ—चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र—कितने प्रकार के जीव इसमें हैं! बड़ा-छोटा, अच्छा-बुरा; किसी में शक्ति अधिक है, किसी में कम।

विद्यासागर—क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?

श्रीरामकृष्ण—वह विभु के रूप में सब प्राणियों में है—चींटियों तक में है। पर शक्ति का तारतम्य होता है; नहीं तो क्यों कोई दस आदमियों को हरा देता है, और कोई एक ही आदमी से भागता है? और ऐसा न हो तो भला तुम्हें ही सब कोई क्यों मानते हैं? क्या तुम्हारे दो सींगें निकली हैं! (हास्य।) औरों की अपेक्षा तुममें अधिक दया है—विद्या है, इसीलिए तुमको लोग मानते हैं और देखने आते हैं। क्या तुम यह बात नहीं मानते हो?

विद्यासागर मुसकराते हैं।

श्रीरामकृष्ण—केवल पण्डिताई में कुछ नहीं है। लोग किताबें इसलिए पढ़ते हैं कि वे ईश्वरलाभ में सहायता करेंगी—उनसे ईश्वर का पता लगेगा। एक साधु की पोथी में क्या है—किसी ने पूछा। साधु ने उसे खोल कर दिखाया। हर एक पन्ने में 'ॐ राम' लिखा था और कुछ नहीं।

'गीता का अर्थ क्या है? उसे दस बार कहने से जो होता है वही। दस बार 'गीता' 'गीता' कहने से 'त्यागी' 'त्यागी' निकल

आता है। गीता यह शिक्षा दे रही है कि—हे जीव, तू सब छोड़कर ईश्वर-लाभ की चेष्टा कर। कोई साधु हो चाहे गृहस्थ, मन से सारी आसक्ति दूर करनी चाहिए।

"जब चैतन्यदेव दक्षिण में तीर्थ-भ्रमण कर रहे थे तो उन्होंने देखा कि एक आदमी गीता पढ़ रहा है। एक दूसरा आदमी थोड़ी दूर बैठे, उसे सुन रहा है और सुनकर रो रहा है—आँखों से आँसू बह रहे हैं। चैतन्यदेव ने पूछा—क्या तुम यह सब समझ रहे हो? उसने कहा—प्रभु, इन श्लोकों का अर्थ तो मैं नहीं समझता हूँ। उन्होंने पूछा—तो रोते क्यों हो? भक्त ने जवाब दिया—मैं देखता हूँ कि अर्जुन का रथ है और उसके सामने भगवान और अर्जुन बातचीत कर रहे हैं। बस यही देखकर मैं रो रहा हूँ।"

(४)

भक्तियोग का रहस्य।

श्रीरामकृष्ण—विज्ञानी क्यों भक्ति लिए रहते हैं? इसका उत्तर यह है कि 'मैं' नहीं दूर होता। समाधि-अवस्था में दूर तो होता है, परन्तु फिर आजाता है। साधारण जीवों का 'अहम्' नहीं जाता। पीपल का पेड़ काट डालो फिर उसके दूसरे दिन अंकुर निकल आता है। (सब हँसे।)

ज्ञानलाभ के बाद भी, न जाने कहाँ से 'मैं' फिर आ जाता है। स्वप्न में तुमने बाघ देखा; इसके बाद जागे, तो भी तुम्हारी छाती धड़कती है। जीवों को जो दुःख होता है, 'मैं' से ही होता है।

बैल 'हम्बा' (हम) 'हम्बा' (हम) बोलता है, इसी से तो इतनी यातना मिलती है। हल में जोता जाता है, वर्षा और धूप सहनी पड़ती है और फिर कसाई लोग काटते हैं, चमड़े से जूते बनते हैं, ढोल बनता है,—तब खूब पिटता है। (हास्य)

"फिर भी निस्तार नहीं। अन्त में आँतों से ताँत बनती और उसे धुनिया अपने धनुहे में लगाता है। तब वह 'मैं' नहीं कहती, तब कहती है 'तूं–ऊं' 'तूं–ऊं' (अर्थात् तुम, तुम)। जब 'तुम' 'तुम' कहती है तब निस्तार होता है। हे ईश्वर! मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो, मैं सन्तान हूँ, तुम माँ हो।

"राम ने पूछा, हनुमान, तुम मुझे किस भाव से देखते हो? हनुमान् ने कहा, राम! जब मुझे 'मैं' का बोध रहता है, तब देखता हूँ, तुम पूर्ण हो, मैं अंश हूँ, तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ; और राम! जब तत्वज्ञान होता है तब देखता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो और मैं ही 'तुम' हूँ।

"सेव्य–सेवक भाव ही अच्छा है। 'मैं' जब कि हटने का हो नहीं तो बना रहने दो साले को 'दास मैं'।

"मैं और मेरा—ये दोनों अज्ञान हैं। यह भाव कि मेरा घर है, मेरे रुपये हैं, मेरी विद्या है, मेरा यह सब ऐश्वर्य है—अज्ञान से पैदा होता है और यह भाव ज्ञान से कि—हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और ये सब तुम्हारी चीजें हैं—घर-परिवार, लड़के-बच्चे, स्वजनवर्ग, बन्धु-बान्धव—ये सब तुम्हारी वस्तुएँ हैं।

"मृत्यु को सर्वदा स्मरण रखना चाहिए। मरने के बाद कुछ भी न रह जायगा। यहाँ कुछ कर्म करने के लिए ही आना हुआ है जैसे

कि देहात में घर है, परन्तु काम करने के लिए कलकत्ता आया जाता है। धनी मनुष्यों के बगीचे का कर्मचारी, यदि कोई दर्शक बगीचा देखने को आता है तो कहता है — यह बगीचा हमारा है, यह तालाब हमारा है, परन्तु किसी कसूर पर जब वह नौकरी से अलग कर दिया जाता है, तब आम की लकड़ी के बने हुए सन्दूक को ले जाने का भी उसे अधिकार नहीं रह जाता, सन्दूक दरवान के हाथ भेज दिया जाता है। (हास्य)

"भगवान दो बातों पर हँसते हैं। एक तो जब वैद्य रोगी की माँ से कहता है—माँ, क्या भय है? मैं तुम्हारे लड़के को अच्छा कर दूँगा। उस समय भगवान यह सोचकर हँसते हैं कि मैं मार रहा हूँ और यह कहता है, मैं बचाऊँगा! वैद्य सोचता है—मैं कर्ता हूँ। ईश्वर कर्ता है—यह वह भूल गया है। दूसरा अवसर वह होता है जब दो भाई रस्सी लेकर जमीन नापते हैं और कहते हैं—इधर की मेरी है, उधर की तुम्हारी; तब ईश्वर और एक बार हँसते हैं, यह सोचकर हँसते हैं कि जगत्-ब्रह्माण्ड मेरा है, पर ये कहते हैं, यह जगह मेरी है और वह तुम्हारी।

उपाय—विश्वास और भक्ति।

श्रीरामकृष्ण—उन्हें क्या कोई विचार द्वारा जान सकता है? दास होकर—शरणागत होकर उन्हें पुकारो।

(विद्यासागर के प्रति, हँसते हुए) "अच्छा, तुम्हारा भाव क्या है?"

विद्यासागर मुसकरा रहे हैं। कहते हैं अच्छा यह बात आपसे किसी दिन निर्जन में कहूँगा। (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—उन्हें पाण्डित्य द्वारा विचार करके कोई जान नहीं सकता।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम से मतवाले होकर गाने लगे। सङ्गीत का मर्म यह है—

"'कौन जानता है कि काली कैसी है ? षड्दर्शनों ने उसका दर्शन नहीं पाया। मूलाधार और सहस्रार में योगी लोग सदा उसका ध्यान करते हैं। वह पद्मवन में हंस के साथ हंसी जैसे रमण करती है। वह आत्माराम की आत्मा है, प्रणव का प्रमाण है। वह इच्छामयी अपनी इच्छा के अनुसार घट-घट में विराजमान है। माता के जिस उदर में यह ब्रह्माण्ड समाया हुआ है, समझो कि वह कितना बड़ा हो सकता है। काली का माहात्म्य महाकाल ही जानते हैं। वैसा और कोई नहीं समझ सकता। प्रसाद कहता है कि मुझे तैरकर सिन्धु पार करते देख लोग मेरे इस प्रयत्न पर हँसते हैं। यह मेरा मन समझ रहा है, परन्तु फिर भी जी नहीं मानता, बामन होकर चन्द्रमा की ओर हाथ बढ़ाता है।"

"सुना ?—'माता के जिस उदर में ब्रह्माण्ड समाया हुआ है,' कहते हैं 'समझो कि वह कितना बड़ा है' और यह भी कहा है कि षड्दर्शनों ने उसका दर्शन नहीं पाया। पाण्डित्य द्वारा उसे प्राप्त करना असम्भव है।

"विश्वास और भक्ति चाहिए। विश्वास कितना बलवान् है, सुनो। किसी मनुष्य को लंका से समुद्र के पार जाना था। बिभीषण ने कहा—इस वस्तु को कपड़े के छोर में बाँधलो तो बिना किसी बाधा

के पार हो जाओगे, जल के ऊपर से चले जा सकोगे; परन्तु खोलकर न देखना, खोलकर देखोगे तो डूब जाओगे। वह मनुष्य आनंदपूर्वक समुद्र के ऊपर से चला जा रहा था, विश्वास की ऐसी शक्ति है। कुछ रास्ता पार कर वह सोचने लगा कि बिभीषण ने ऐसा क्या बाँध दिया, जिसके बल से मैं पानी के ऊपर से चला जा रहा हूँ। यह सोचकर उसने गाँठ खोली और देखा तो एक पत्ते पर केवल 'राम नाम' लिखा था! तब वह मन ही मन कहने लगा—अरे, बस यही है; ज्योंही यह सोचा कि डूब गया!

"यह कहावत प्रसिद्ध है कि राम नाम पर हनुमान का इतना विश्वास था कि विश्वास ही के बल से वे समुद्र लाँघ गये, परन्तु स्वयं राम को सेतु बाँधना पड़ा था।

"यदि उन पर विश्वास हो तो चाहे पाप करे और चाहे महापातक ही करे, किन्तु किसी से भय नहीं होता।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण भक्त के भावों से मस्त होकर विश्वास का माहात्म्य गा रहे हैं:—

"श्रीदुर्गा जपते हुए प्राण अगर निकलें ये,—
"दीन को तुम तारती हो अथवा नहीं, देखेंगे।"

(५)

जीवन का उद्देश्य—ईश्वरप्रेम।

"विश्वास और भक्ति। भक्ति से वे सहज ही में मिलते हैं। वे भाव के विषय हैं।"

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण ने फिर गाना आरंभ किया। भाव यह है:—

"मन तू अंधेरे घर में पागल-जैसा उसकी खोज क्यों कर रहा है! वह तो भाव का विषय है। बिना भाव के, अभाव द्वारा क्या कोई उसे पकड़ सकता है! पहले अपनी शक्ति द्वाराकाम-क्रोधादि को अपने वश में करो। उसका दर्शन न तो षड्-दर्शनों ने पाया, न निगमागम-तंत्रों ने। वह भक्ति-रस का रसिक है, सदा आनन्दपूर्वक हृदय में विराजमान है। उस भक्तिभाव को पाने के लिए बड़े बड़े योगी युग-युगान्तर से योग कर रहे हैं। जब भाव का उदय होता है, तब भक्त को वह, लोहे को चुम्बक जैसे, अपनी ओर खींच लेता है। प्रसाद कहता है कि मैं मातृभाव से जिसकी खोज कर रहा हूँ, उसके तत्व का भण्डा क्या मुझे चौराहे पर फोड़ना होगा! मन, इशारे ही से समझ लो।"

गाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये, हाथों की अंजलि बँधी गई—देह उन्नत और स्थिर,—नेत्र स्पन्दहीन हो गये। पश्चिम की ओर मुँह किये उसी बेंच पर पैर लटकाये बैठे रहे। सभी लोग गर्दन ऊँची करके यह अद्भुत अवस्था देखने लगे। पण्डित विद्यासागर भी चुपचाप एकटक देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। लम्बी साँस छोड़कर फिर हँसते हुए बातें कर रहे हैं—भाव भक्ति, इसके माने उन्हें प्यार करना, जो ब्रह्म है, उन्हीं को माँ कहकर पुकारते हैं।

"प्रसाद कहता है कि 'मैं मातृभाव से जिसकी खोज कर रहा

हूँ उसके तत्व का भण्डा क्या मुझे चौराहे पर फोड़ना होगा ? मन, इशारे ही से समझ लो ।'

"रामप्रसाद मन को इशारे ही से समझने के लिए उपदेश करते हैं । यह समझने को कहा है कि वेदों ने जिन्हें ब्रह्म कहा है उन्हीं को मैं माँ कहकर पुकारता हूँ । जो निर्गुण हैं वे ही सगुण हैं; जो ब्रह्म हैं वे ही शक्ति हैं । जब यह बोध होता है कि वे निष्क्रिय हैं, तब उन्हें ब्रह्म कहता हूँ और जब यह सोचता हूँ कि वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करते हैं, तब उन्हें आद्या शक्ति काली कहता हूँ ।

"ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं, जैसे कि अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति । अग्नि कहते ही दाहिका शक्ति का ज्ञान होता है और दाहिका शक्ति कहने से अग्नि का ज्ञान । एक को मानिए तो दूसरा भी साथ ही मान लिया जाता है ।

"उन्हीं को भक्तजन माँ कहकर पुकारते हैं । माँ बड़े प्यार की वस्तु है न । ईश्वर को प्यार करने ही से वे प्राप्त होते हैं ; भाव, भक्ति, प्रीति और विश्वास चाहिए । एक गाना और सुनोः—

"चिन्तन करने से भाव का उदय होता है । जैसा भाव होगा लाभ भी वैसा ही होगा, मूल है प्रत्यय । काली के चरण-सुधा-सागर में यदि चित्त डूब जाय तो पूजा-होम,याग-यज्ञ—कुछ भी आवश्यक नहीं ।

"चित्त को उन पर लगाना चाहिए, उन्हें प्यार करना चाहिए । वे सुधासागर हैं, अमृतसिन्धु हैं; इसमें डूबने से मनुष्य मरता नहीं, अमर हो जाता है । किसीकिसी का यह विचार है कि ईश्वर को ज्यादा

पुकारने से मस्तिष्क बिगड़ जाता है, पर बात ऐसी नहीं। यह तो सुधासमुद्र है, अमृतसिन्धु है। वेदों में जिसे अमृत कहा है उसमें डूब जाने से कोई मरता नहीं, अमर हो जाता है।

"पूजा, होम, याग, यज्ञ—ये कुछ नहीं हैं। यदि ईश्वर पर प्रीति पैदा हो जाय तो इन कर्मों की अधिक आवश्यकता नहीं। जब तक हवा नहीं मिलती, तभी तक पंखे को ज़रूरत होती है। यदि दक्खिनी हवा आपही आने लगे तो पंखा रख देना पड़ता है। फिर पंखे का क्या काम ?

"तुम जो काम कर रहे हो, ये सब अच्छे कर्म हैं। यदि 'मैं कर्ता हूँ—इस भाव को छोड़कर निष्काम भाव से कर्म कर सको तो और भी अच्छा है। यह कर्म करते करते ईश्वर पर भक्ति और प्रीति होगी। इस प्रकार निष्काम कर्म करते जाओ तो ईश्वर-लाभ भी होगा।

"उन पर जितनी ही भक्ति-प्रीति होगी, उतने ही तुम्हारे कर्म घटते जायँगे। गृहस्थ की बहू जब गर्भिणी होती है, तब उसकी सास उसका काम कम कर देती है; दस महीने पूरे होने पर बिलकुल काम छूने नहीं देती। उसे डर रहता है कि कहीं बच्चे को कोई हानि न पहुँचे, सन्तान-प्रसव में कोई विपत्ति न हो। (हास्य) । तुम जो काम कर रहे हो, उससे तुम्हारा ही उपकार है। निष्काम भाव से कर्म कर सकोगे तो चित्त की शुद्धि होगी, ईश्वर पर तुम्हारा प्रेम होते ही तुम उन्हें प्राप्त कर लोगे। संसार का उपकार मनुष्य नहीं करता, वे ही करते हैं जिन्होंने चन्द्र-सूर्य की सृष्टि की, माता-पिता को स्नेह दिया, सत्पुरुषों में दया का सञ्चार किया और साधु-भक्तों को भक्ति दी। जो मनुष्य कामनाशून्य होकर कर्म करेगा वह अपना ही हित करेगा।

'भीतर सुवर्ण है, अभी तक तुम्हें पता नहीं मिला। ऊपर कुछ मिट्टी पड़ी है। यदि एक बार पता चल जाय तो अन्य काम घट जायँगे। गृहस्थ की बहू के लड़का होने से वह लड़के ही को लिये रहती है, उसी को उठाती बैठाती है। फिर उसकी सास उसे घर के काम में हाथ नहीं लगाने देती। (सब हँसे)

"और भी, 'आगे बढ़ो।' लकड़हारा लकड़ी काटने गया था; ब्रह्मचारी ने कहा—आगे बढ़ जाओ। उसने आगे बढ़कर देखा तो चन्दन के पेड़ थे! फिर कुछ दिन बाद उसने सोचा कि ब्रह्मचारी ने बढ़ जाने को कहा था, सिर्फ चन्दन के पेड़ तक तो जाने को कहा नहीं। आगे चलकर देखा तो चाँदी की खान थी। फिर कुछ दिन बीतने पर और आगे बढ़ा और देखा तो सोने की खान मिली। फिर लगातार हीरे की—मणिओं की। वह सब लेकर वह मालामाल हो गया।

"निष्काम कर्म कर सकने से ईश्वर पर प्रेम होता है। क्रमशः उसकी कृपा से उसे लोग पाते भी हैं। ईश्वर के दर्शन होते हैं, उनसे बातचीत होती है जैसे कि मैं तुमसे वार्तालाप कर रहा हूँ।" (सब निःशब्द हैं।)

(६)

प्रेमयुक्त वार्तालाप।

सब की जबान बन्द है। लोग चुपचाप बैठे ये बातें सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की जीभ पर मानो साक्षात् वाग्वादिनी बैठी हुई जीवों के हित के लिए विद्यासागर से बातें कर रही हैं। रात हो रही है—९ बजने को है। श्रीरामकृष्ण अब चलनेवाले हैं।

श्रीरामकृष्ण (विद्यासागर से, सहास्य)—यह जो कहा, कहना अत्युक्ति है, आप सब जानते हैं, किन्तु अभी आपको इसकी खबर नहीं। (सब हँसे।) वरुण के भण्डार में कितने ही रत्न पड़े हैं, परन्तु वरुण महाराज को कोई खबर नहीं।

विद्यासागर (हँसते हुए)—यह आप कह सकते हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हाँ जी, अनेक बाबू नौकरों तक के नाम नहीं जानते ! (सब हँसते हैं।) घर में कहाँ कौनसी कीमती चीज़ पड़ी है, वे नहीं जानते।

वार्तालाप सुनकर लोग आनन्दित हो रहे हैं। श्रीरामकृष्ण विद्यासागर से फिर प्रसंग उठाते हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसमुख)—एक बार बगीचा देखने जाइये, रासमणि का बगीचा। बड़ी अच्छी जगह है।

विद्यासागर—जरूर जाऊँगा। आप आये और मैं न जाऊँगा !

श्रीरामकृष्ण—मेरे पास ! राम राम !

विद्यासागर—यह क्या ! ऐसी बात आपने क्यों कही ? मुझे समझाइये।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हमलोग छोटी-छोटी किश्तियाँ हैं (सब हँसते हैं) जो खाई, नाले और बड़ी बड़ी नदियों में भी जा सकती हैं, परन्तु आप हैं जहाज; कौन जानता है, जाते समय रेती में लग जाय !

विद्यासागर प्रफुल्लमुख किन्तु चुपचाप बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण हँसते हैं।

श्रीरामकृष्ण—पर हाँ, इस समय जहाज़ भी जा सकता है।

विद्यासागर (हँसते हुए)—हाँ, ठीक है, यह वर्षाकाल है। (लोग हँसे।)

श्रीरामकृष्ण उठे। भक्तजन भी उठे। विद्यासागर आत्मीयों के साथ खड़े हैं, श्रीरामकृष्ण को गाड़ी पर चढ़ाने जाएंगे।

श्रीरामकृष्ण अब भी खड़े हैं। करजाप कर रहे हैं। जपते हुए भाव के आवेश में आ गये, मानो विद्यासागर के आत्मिक हित के लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हों।

भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण उतर रहे हैं। एक भक्त का हाथ पकड़े हुए हैं। विद्यासागर स्वजन बन्धुओं के साथ आगे आगे जा रहे हैं, हाथ में बत्ती लिये रास्ता दिखाते हुए। सावन की कृष्णपक्ष की षष्टी है, अभी चन्द्रोदय नहीं हुआ है। अंधेरे से ढकी हुई उद्यान-भूमि को बत्ती के मन्द प्रकाश के सहारे किसी तरह पार कर लोग फाटक की ओर आ रहे हैं।

भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण फाटक के पास ज्योंही पहुँचे कि एक सुन्दर दृश्य पर दृष्टि पड़ी। परम भक्त बलराम बाबू साफा बाँधे खड़े थे। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण—बलराम ! तुम हो ! इतनी रात को !

बलराम (हँसकर)—मैं बड़ी देर का आया हूँ।

श्रीरामकृष्ण—भीतर क्यों नहीं गये ?

बलराम—जी, लोग आपका वार्तालाप सुन रहे थे, बीच में पहुँचकर क्यों शान्ति भंग करूँ, यह सोचकर नहीं गया। (यह कहकर बलराम हँसने लगे।)

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ गाड़ी पर बैठ गये।

विद्यासागर (मास्टर से मृदु स्वरों में)—गाड़ी का किराया क्या दे दूँ ?

मास्टर—जी नहीं, दे दिया गया है।

विद्यासागर और अन्यान्य लोगों ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

परिच्छेद ५

गृहस्थों के प्रति उपदेश

(१)

समाधि-तत्व एवं सर्वधर्मसमन्वय। हिन्दू, मुसलमान और ईसाई।

दक्षिणेश्वर के मन्दिर में श्रीरामकृष्ण केदार आदि भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। आज रविवार, अमावस्या, १३ अगस्त १८८२ ई. है, समय दिन के पाँच बजे का होगा।

श्री केदार चॅटर्जी का मकान हाली शहर में है। वे सरकारी अकाउन्टैन्ट का काम करते थे। बहुत दिन ढाका में रहे, उस समय श्री विजय गोस्वामी उनके साथ सदा श्रीरामकृष्ण के विषय में वार्तालाप करते थे। ईश्वर की बात सुनते ही उनकी आँखों में आँसू भर आते थे। वे पहले ब्राह्मसमाज में थे।

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिणवाले बरामदे में भक्तों के साथ बैठे हैं। राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर आदि अनेक भक्त उपस्थित हैं। केदार ने आज उत्सव किया है, सारा दिन आनन्द से बीत रहा है। राम ने एक गायक बुलाया है। उन्होंने गाना गाया। गान के समय श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न होकर कमरे में छोटी खटिया पर बैठे हैं। मास्टर तथा अन्य भक्तगण उनके पैरों के पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण वार्तालाप करते करते समाधि-तत्व समझा रहे हैं। कह रहे हैं, "सच्चिदानन्द की प्राप्ति होने पर समाधि होती है। उस समय

कर्म का त्याग हो जाता है। मैं गायक का नाम ले रहा हूँ, ऐसे समय यदि वे आकर उपस्थित होते हैं तो फिर उनका नाम लेने की क्या आवश्यकता? मधुमक्खी गुनगुन करती है कब तक? जब तक फूल पर नहीं बैठती। कर्म का त्याग करने से साधक का न बनेगा; पूजा, जप, ध्यान, सन्ध्या, कवच, तीर्थ आदि सभी करना होगा। ईश्वरप्राप्ति के बाद यदि कोई विचार करना है तो वह वैसा ही है जैसा मधुमक्खी मधु का पान करती हुई अस्फुट स्वर से गुनगुनाती रहे।"

गायक ने अच्छा गाना गाया था। श्रीरामकृष्ण प्रसन्न हो गये। उससे कह रहे हैं, "जिस मनुष्य में एक बड़ा गुण है, जैसे संगीत विद्या, उसमें ईश्वर की शक्ति विशेष रूप से वर्तमान है।

गायक—महाराज, किस उपाय से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण—भक्ति ही सार है। ईश्वर तो सर्व भूतों में विराजमान है। तो फिर भक्त किसे कहूँ—जिसका मन सदा ईश्वर में है। अहंकार, अभिमान रहने पर कुछ नहीं होता। 'मैं' रूपी ढेरी में ईश्वर की कृपा रूपी जल नहीं ठहरता; लुढ़क जाता है। मैं यंत्र हूँ।

(केदार आदि भक्तों के प्रति) "सब पथों से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। सभी धर्म सत्य हैं। छत पर उठने से मतलब है, सो तुम पक्की सीढ़ी से भी उठ सकते हो, लकड़ी की सीढ़ी से भी उठ सकते हो, बाँस की सीढ़ी से भी उठ सकते हो और रस्सी के सहारे भी उठ सकते हो और फिर एक गांठदार बाँस के ज़रिये भी उठ सकते हो।

"यदि कहो, दूसरों के धर्म में अनेक भूल, कुसंस्कार हैं, तो मैं कहता हूँ, हैं तो रहें, भूल सभी धर्मों में है। सभी समझते हैं, मेरी घड़ी

ठीक चल रही है। व्याकुलता होने से ही यह हुआ। उनसे प्रेम, आकर्षण रहना चाहिये। वह अन्तर्यामी जो हैं। वे अन्तर की व्याकुलता, आकर्षण को देख सकते हैं। मानो एक मनुष्य के कुछ बच्चे हैं। उनमें से दो जो बड़े हैं वे 'बाबा' या 'पापा' इन शब्दों को स्पष्ट रूप से कहकर उन्हें पुकारते हैं। और जो बहुत छोटे हैं वे बहुत हुआ तो 'बा' या 'पा' कहकर पुकारते हैं। जो लोग सिर्फ 'बा' या 'पा' कह सकते हैं, क्या पिता उनसे असन्तुष्ट होंगे? पिता जानते हैं कि वे उन्हें ही बुला रहे हैं, परन्तु वे अच्छी तरह उच्चारण नहीं कर सकते। पिता की दृष्टि में सभी बच्चे बराबर हैं।

"फिर भक्तगण उन्हें ही अनेक नामों से पुकार रहे हैं। एक ही व्यक्ति को बुला रहे हैं। एक तालाब के चार घाट हैं। हिन्दू लोग एक घाट में जल पी रहे हैं—और कहते हैं जल। मुसलमान लोग दूसरे घाट में पी रहे हैं—कहते हैं पानी। अंग्रेज लोग तीसरे घाट में पी रहे हैं और कह रहे हैं वाटर (Water)। और कुछ लोग चौथे घाट में पी रहे हैं और कहते हैं अकुआ (Aqua)। एक ईश्वर उनके अनेक नाम हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ विराजमान हैं। दिन बृहस्पतिवार है, सावन शुक्ल दशमी, २४ अगस्त १८८२ ई०।

आजकल श्रीरामकृष्ण के पास हाजरा महाशय, रामलाल, राखाल आदि रहते हैं। श्रीयुत रामलाल श्रीरामकृष्ण के भतीजे हैं; काली-मन्दिर में पूजा करते हैं। मास्टर ने आकर देखा, उत्तरपूर्व के लम्बे बारामदे में

श्रीरामकृष्ण हाजरा के पास खड़े हुए बातें कर रहे हैं। मास्टर ने भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण की चरणवन्दना की।

श्रीरामकृष्ण का मुख सहास्य है। मास्टर से कहने लगे—विद्यासागर से और भी दो एक बार मिलना चाहिए। चित्रकार पहले नक्शा खींच लेता है, फिर उस पर रङ्ग चढ़ाता रहता है। प्रतिमा पर पहले दो तीन बार मिट्टी चढ़ाई जाती है। फिर वह ढङ्ग से रंगी जाती है।—ईश्वर विद्यासागर का सब कुछ ठीक है, सिर्फ ऊपर कुछ मिट्टी पड़ी हुई है। कुछ अच्छे काम करता है; परन्तु हृदय में क्या है उसकी खबर नहीं। हृदय में सोना दबा पड़ा है। हृदय में ईश्वर हैं—यह समझने पर सब कुछ छोड़कर व्याकुल हो उसे पुकारने की इच्छा होती है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से खड़े-खड़े वार्तालाप कर रहे हैं, कभी बरामदे में टहल रहे हैं।

साधना और पुरस्कार।

श्रीरामकृष्ण—हृदय में क्या है, इसका ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ साधना आवश्यक है।

मास्टर—साधना क्या बराबर करते ही जाना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—नहीं, पहले कुछ कमर कसकर करनी चाहिए। फिर ज्यादा मेहनत नहीं उठानी पड़ती। जब तक तरङ्ग, आँधी, तूफान और नदी की मोड़ से नौका जाती है तभी तक मल्लाह को मजबूती से पतवार पकड़नी पड़ती है; उतने से पार हो जाने पर फिर नहीं। जब वह मोड़ से बाहर हो गया और अनुकूल हवा चली तब वह आराम से बैठा रहता है, पतवार में हाथ भर लगाये रहता है। फिर तो पाल टाँगने

का बन्दोबस्त करके आराम से चिलम भरता है। कामिनी और कांचन की आँधी–तूफान से निकल जाने पर शान्ति मिलती है।

"किसी किसी में योगियों के लक्षण दीखते हैं, परन्तु उन लोगों को भी सावधानी से रहना चाहिए। कामिनी और कांचन ही योग में विघ्न डालते हैं। योगभ्रष्ट होकर वह फिर संसार में आता है,—भोग की कुछ इच्छा रही होगी। इच्छा पूरी होने पर वह फिर ईश्वर की ओर जायगा—फिर वही योग की अवस्था होगी। 'सटका' कल जानते हो?"

मास्टर—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—उस देश में है। (श्रीरामकृष्ण अपनी जन्मभूमि को बहुधा 'वह देश' कहते थे)। बाँस को झुका देते हैं। उसमें बंसी और डोर लगी रहती है। काँटे में मछलियों के खाने का चारा बेध दिया जाता है। ज्योंही मछली उसे निगल जाती है, त्योंही वह बाँस झटके के साथ ऊपर उठ जाता है। जिस प्रकार उसका सिर ऊँचा था वैसा ही हो जाता है।

"तराजू में किसी ओर कुछ रख देने से नीचे की सुई और ऊपर की सुई बराबर नहीं रहतीं। नीचे की सुई मन है और ऊपर की सुई ईश्वर। नीचे की सुई का ऊपर से एक होना ही योग है।

"मन के स्थिर हुए बिना योग नहीं होता। संसार की हवा मन-रूपी दीपशिखा को सदा ही चञ्चल किया करती है। वह शिखा यदि जरा भी न हिले तो वह योग की अवस्था हो जाती है।

"कामिनी और कांचन योग के विघ्न हैं। वस्तुविचार करना चाहिए। स्त्रियों के शरीर में क्या है—रक्त, मांस, आँतें, कृमि, मूत्र, विष्ठा—यही सब। उस शरीर का प्यार ही क्या?

"त्याग के लिए मैं अपने में राजसी भाव भरता था। साध हुई थी कि जरी की पोशाक पहनूँगा—अंगूठी पहनूँगा—नैचे से फ़रशी में तम्बाकू पिऊँगा। जरी की पोशाक पहनी। ये लोग (रानी रासमणि के दामाद मथुर बाबू आदि को लक्ष्य करके कहते हैं) ले आये थे। कुछ देर बाद मन से कहा—यही शाल है और यही अंगूठी है। यही फ़रशी में तम्बाकू पीना है। सब फेंक दिया, तब से फिर मन नहीं चला।"

शाम हो रही है। घर से पूरब की ओर के बरामदे में घर के द्वार के पास ही, अकेले में श्रीरामकृष्ण मणि * से बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—योगियों का मन सदा ईश्वर में लगा रहता है—सदा आत्मस्थ रहता है। शून्य दृष्टि, देखते ही उनकी अवस्था सूचित हो जाती है। समझ में आ जाता है कि चिड़िया अंडे को से रही है। सारा मन अंडे ही की ओर है। ऊपरी दृष्टि तो नाममात्र की है। अच्छा, वह चित्र क्या मुझे दिखा सकते हो?

मणि—जो आज्ञा, चेष्टा करूँगा यदि कहीं मिल जाय।

[२]

निष्काम कर्म तथा विद्या का संसार।

शाम हो गई। कालीमन्दिर, राधाकान्त जी के मन्दिर और अन्यान्य कमरों में बत्तियाँ जला दी गईं। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए जगन्माता का स्मरण कर रहे हैं। तदनन्तर आप ईश्वर का

* मणि और मास्टर एक ही व्यक्ति हैं।

नाम जपने लगे। घर में धूनी दी गई है। एक ओर दीवट पर दिया जल रहा है। कुछ देर बाद शङ्ख घण्टा आदि बजने लगे। काली-मन्दिर में आरती होने लगी। तिथि शुक्ला दशमी है; चारों ओर चाँदनी छिटक रही है।

आरती हो जाने पर कुछ क्षण बाद श्रीरामकृष्ण मणि के साथ अकेले अनेक विषयों पर बातें करने लगे। मणि फर्श पर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण—कर्म निष्काम करना चाहिए। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जो कर्म करता है वे अच्छे कर्म हैं; वह निष्काम कर्म करने की चेष्टा करता है।

मणि—जी हाँ। अच्छा; जहाँ कर्म है वहाँ क्या ईश्वर मिलते हैं? राम और काम क्या एक ही साथ रहते हैं? हिन्दी में मैंने पढ़ा है कि—'जहाँ काम तहं राम नहिं, जहाँ राम नहीं काम।'

श्रीरामकृष्ण—कर्म सभी करते हैं। उनका नाम लेना, कर्म है—साँस लेना और छोड़ना भी कर्म है। क्या मजाल कि कोई कर्म छोड़ दे। इसलिए कर्म करना चाहिए, किन्तु फल ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए।

मणि—तो क्या ऐसी चेष्टा कि जा सकती है की जिससे अधिक धन मिले?

श्रीरामकृष्ण—हाँ की जा सकती है, किन्तु यदि विद्या का परिवार हो, तो। अधिक धन कमाने का प्रयत्न करो, परन्तु सदुपाय से।

उद्देश्य उपार्जन नहीं, ईश्वर की सेवा है। धन से यदि ईश्वर की सेवा होती है तो उस धन में दोष नहीं है।

मणि—घरवालों के प्रति कर्तव्य कब तक रहता है?

श्रीरामकृष्ण—उन्हें भोजन-वस्त्र का दुःख न हो। सन्तान जब स्वयं समर्थ होगी, तब उसके भार-ग्रहण की आवश्यकता नहीं। चिड़ियों के बच्चे जब खुद चुगने लगते हैं तब माँ के पास यदि खाने के लिए आते हैं तो माँ चोंच मारती है।

मणि—कर्म कब तक करना होगा?

श्रीरामकृष्ण—फल होने पर फूल नहीं रह जाता। ईश्वरलाभ हो जाने से कर्म नहीं करना पड़ता, मन भी नहीं लगता।

"ज्यादा शराब पी लेने से मतवाला होश नहीं संभाल सकता—दुअन्नी भर पीने से कामकाज कर सकता है। ईश्वर की ओर जितना ही बढ़ोगे उतना ही वे कर्म घटाते रहेंगे। डरो मत। गृहस्थ की बहू के जब लड़का होनेवाला होता है तब उसकी सास धीरे धीरे काम घटाती जाती है। दसवें महीने में काम छूने भी नहीं देती। लड़का होने पर वह उसी को लिए रहती है।

"जो कुछ कर्म हैं, जहाँ वे समाप्त हो गये कि चिन्ता दूर हो गई। गृहिणी घर का काम समाप्त करके जब कहीं बाहर निकलती है, तब जल्दी नहीं लौटती, बुलाने पर भी नहीं आती।"

मणि—अच्छा, ईश्वर-लाभ के क्या माने हैं? ईश्वर-दर्शन किसे कहते हैं और किस तरह होते हैं?

श्रीरामकृष्ण—वैष्णव कहते हैं कि ईश्वरमार्ग के पथिक चार प्रकार के होते हैं—प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्धों में सिद्ध। जो पहले ही पहल मार्ग पर आया है वह प्रवर्तक है। जो भजन-पूजन, जप-ध्यान, नाम-गुणकीर्तनादि करता है वह साधक है। जिसे ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव मात्र हुआ है वह सिद्ध है। उसकी वेदान्त में एक उपमा है,—वह यह कि अन्धेरे घर में बाबू जी सो रहे हैं। कोई टटोलकर उन्हें खोज रहा है। कोच पर हाथ जाता है, तो वह मन ही मन कह उठता है यह नहीं है; झरोखा छू जाता है तो भी कह उठता है—यह नहीं है; दरवाज़े में हाथ लगा तो यह भी नहीं है,—नेति नेति नेति। अन्त में जब बाबू जी की देह पर हाथ लगा तो कहा—यह—बाबू जी यह हैं;—अर्थात् अस्ति का बोध हुआ। बाबू जी को प्राप्त तो किया किन्तु भली भाँति जान पहचान नहीं हुई।

"एक दर्जे के और लोग हैं, जो सिद्धों में सिद्ध कहलाते हैं। बाबू जी के साथ यदि विशेष वार्तालाप हो तो वह एक और ही अवस्था है, यदि ईश्वर के साथ प्रेम भक्ति द्वारा विशेष परिचय हो जाय तो दूसरी ही अवस्था हो जाती है। जो सिद्ध है उसने ईश्वर को पाया तो है, किन्तु जो सिद्धों में सिद्ध है उसका ईश्वर के साथ विशेष परिचय हो गया है।

"परन्तु उनको प्राप्त करने की इच्छा हो तो एक न एक भाव का सहारा लेना पड़ता है, जैसे—शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य या मधुर।

"शान्त भाव ऋषियों का था। उनमें भोग की कोई वासना न थी, ईश्वरनिष्ठा थी जैसी पति पर स्त्री की होती है। वह यह समझती है कि मेरे पति कन्दर्प हैं।

" दास्य—जैसे हनुमान का रामकाज करते समय, सिंहतुल्य। स्त्रियों का भी दास्य भाव होता है,—पति की हृदय खोलकर सेवा करती हैं। माता में भी यह भाव कुछकुछ रहता है,—यशोदा में था।

" सख्य—मित्रभाव। आओ, पास बैठो। सुदामा आदि श्रीकृष्ण को कभी जूठे फल खिलाते थे, कभी कन्धे पर चढ़ते थे।

" वात्सल्य—जैसे यशोदा का। स्त्रियों में भी कुछ कुछ होता है, स्वामी को खिलाते समय मानो जी काढ़कर रख देती है। लड़का जब भरपेट भोजन कर लेता है, तभी माँ को सन्तोष होता है। यशोदा कृष्ण को खिलाने के लिए मक्खन हाथ में लिए घूमती फिरती थीं।

" मधुर—जैसे श्री राधिका का। स्त्रियों का भी मधुर भाव है। इस भाव में शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य सब भाव हैं। "

मणि—क्या ईश्वर के दर्शन इन्हीं नेत्रों से होते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—चर्मचक्षु से उन्हें कोई नहीं देख सकता। साधना करते करते शरीर प्रेम का हो जाता है। आँखें प्रेम की, कान प्रेम के। उन्हीं आँखों से वे देख पड़ते हैं, उन्हीं कानों से उनकी वाणी सुन पड़ती है। और प्रेम का लिङ्ग और योनि भी होती है।

यह सुनकर मणि खिलखिलाकर हँस पड़े। श्रीरामकृष्ण ज़रा भी नाराज न होकर फिर कहने लगे।

श्रीरामकृष्ण—इस प्रेम के शरीर में आत्मा के साथ रमण होता है।

" ईश्वर को बिना खूब प्यार किये दर्शन नहीं होते। खूब प्यार करने से चारों ओर ईश्वर ही ईश्वर दीखते हैं। जिसे पीलिया हो जाता है उसे चारों ओर पीला ही पीला दिखाई पड़ता है।

" तब ' मैं वही हूँ ' यह बोध भी हो जाता है। मतवाले का नशा जब खूब चढ़ जाता है तब वह कहता है, ' मैं ही काली हूँ। '

गोपियाँ प्रेमोन्मत्त होकर कहने लगीं—मैं ही कृष्ण हूँ। "

" दिन रात उन्हीं की चिन्ता करने से चारों ओर वे ही दीख पड़ते हैं। जैसे थोड़ी देर दीपशिखा की ओर ताकते रहो, तो फिर चारों ओर सब कुछ शिखामय ही दिखाई देता है। "

मणि सोचते हैं कि वह शिखा तो सत्य शिखा है नहीं।

अन्तर्यामी श्रीरामकृष्ण कहने लगे—चैतन्य की चिन्ता करने से कोई अचेत नहीं हो जाता। शिवनाथ ने कहा था, ईश्वर की बार-बार चिन्ता करने से लोग पागल हो जाते हैं। मैंने उससे कहा, चैतन्य की चिन्ता करने से क्या कभी कोई चैतन्यहीन होता है ?

मणि—जी, समझा। यह तो किसी अनित्य विषय की चिन्ता है नहीं, जो नित्य और चेतन हैं उनमें मन लगाने से मनुष्य अचेतन क्यों होने लगा ?

श्रीरामकृष्ण (प्रसन्न होकर)—यह उनकी कृपा है। बिना उनकी कृपा के सन्देह भंजन नहीं होता।

" आत्मदर्शन के बिना सन्देह दूर नहीं होता।

" उनकी कृपा होने पर फिर कोई भय की बात नहीं रह जाती। पुत्र यदि पिता का हाथ पकड़कर चले तो गिर भी सकता है, परन्तु

यदि पिता पुत्र का हाथ पकड़े तो फिर गिरने का कोई भय नहीं। वे यदि कृपा करके संशय दूर कर दें और दर्शन दें तो फिर कोई दुःख नहीं, परन्तु उन्हें पाने के लिए खूब व्याकुल होकर पुकारना चाहिए—साधना करनी चाहिए—तब उनकी कृपा होती है। पुत्र को दौड़ते हाँफते देखकर माता को दया आ जाती है। माँ छिपी थी। सामने प्रकट हो जाती है।"

मणि सोच रहे हैं, ईश्वर दौड़ धूप क्यों कराते हैं। श्रीरामकृष्ण तुरन्त कहने लगे—उनकी इच्छा कि कुछ देर दौड़ धूप हो तो आनन्द मिले। लीला से उन्होंने इस संसार की रचना की है। इसी का नाम महामाया है। अतएव उस शक्तिरूपिणी महामाया की शरण लेनी पड़ती है। माया के पाशों ने बाँध लिया है, फाँस काटने पर ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं।

आद्या शक्ति महामाया तथा साधना।

श्रीरामकृष्ण—कोई ईश्वर की कृपा प्राप्त करना चाहे तो उसे पहले आद्या शक्तिरूपिणी महामाया को प्रसन्न करना चाहिए। वे संसार को मुग्ध करके सृष्टि, स्थिति और प्रलय कर रही हैं। उन्होंने सबको अज्ञानी बना डाला है। वे जब द्वार से हट जायँगी तभी जीव भीतर जा सकता है। बाहर पड़े रहने से केवल बाहरी वस्तुएँ देखने को मिलती हैं, नित्य सच्चिदानन्द पुरुष नहीं मिलते। इसीलिए पुराणों में है—सप्तशती में, मधु कैटभ का वध करते समय ब्रह्मादि देवता महामाया की स्तुति कर रहे हैं। *

---

* ब्रह्मोवाच। त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारस्वरात्मिका।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता॥
इत्यादि। सप्तशती, मधुकैटभ वध।

"संसार का मूल आधार शक्ति ही है। उस आद्या शक्ति के भीतर विद्या और अविद्या दोनों हैं—अविद्या मोहमुग्ध करती है। अविद्या वह है जिससे कामिनी और कांचन उत्पन्न हुए हैं, वह मुग्ध करती है; और विद्या वह है जिससे भक्ति, दया, ज्ञान और प्रेम की उत्पत्ति हुई है; वह ईश्वर-मार्ग पर ले जाती है।

"उस अविद्या को प्रसन्न करना होगा। इसीलिए शक्ति की पूजा-पद्धति हुई।

"उन्हें प्रसन्न करने के लिए नाना भावों से पूजन किया जाता है। जैसे दासी भाव, वीर भाव, सन्तान भाव। वीर भाव अर्थात् उन्हें रमण द्वारा प्रसन्न करना।

" शक्ति-साधना। सब बड़ी विकट साधनाएँ थीं, दिल्लगी नहीं।

"मैं माँ के दासी भाव से और सखी भाव से दो वर्ष तक रहा। परन्तु मेरा सन्तान भाव है। स्त्रियों के स्तनों को मातृस्तन समझता हूँ।

" लड़कियाँ शक्ति की एक एक मूर्ति हैं। पश्चिम में विवाह के समय वर के हाथ में छुरी रहती है, बङ्गाल में सरौता—अर्थात् उस शक्तिरूपिणी कन्या की सहायता से वर मायापाश काट सकेगा। यह वीर भाव है। मैंने वीर भाव से पूजा नहीं की। मेरा सन्तान भाव था।

" कन्या शक्तिस्वरूपा है। विवाह के समय तुमने नहीं देखा—बर अहमक की तरह पीछे बैठा रहता है; परन्तु कन्या निःशङ्क रहती है।

"ईश्वर-लाभ करने पर उनके बाहरी ऐश्वर्य—संसार के ऐश्वर्य को भक्त भूल जाता है। उन्हें देखने से उनके ऐश्वर्य की बात याद नहीं आती। दर्शनानन्द में मग्न हो जाने पर भक्त का हिसाब किताब नहीं रह जाता। नरेन्द्र को देखने पर 'तेरा नाम क्या है, तेरा घर कहाँ है' यह कुछ पूछने की ज़रूरत नहीं रहती। पूछने का अवसर ही कहाँ है? हनुमान से किसी ने पूछा—आज कौन सी तिथि है? हनुमान ने कहा, भाई, मैं दिन, तिथि, नक्षत्र— कुछ नहीं जानता, मैं केवल **श्रीराम** का स्मरण किया करता हूँ।"

परिच्छेद ६

श्रीरामकृष्ण की प्रथम प्रेमोन्माद कथा

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में।

आज श्रीरामकृष्ण बड़े आनन्द में हैं। दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में नरेन्द्र आये हैं। और भी कई अंतरङ्ग भक्त हैं। नरेन्द्र ने यहाँ आकर स्नान किया और प्रसाद पाया।

आज आश्विन की शुक्लाचतुर्थी है—१६ अक्टूबर १८८२, सोमवार। आगामी गुरुवार को श्री श्रीदुर्गा-पूजा होगी।

श्रीरामकृष्ण के पास राखाल, रामलाल और हाजरा हैं। नरेन्द्र के साथ एक दो और ब्राह्म लड़के आये हैं। आज मास्टर भी आये हैं।

नरेन्द्र ने श्रीरामकृष्ण के पास ही भोजन किया। भोजन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने अपने कमरे में बिस्तर लगा देने को कहा, जिस पर नरेन्द्र आदि भक्त—विशेषकर नरेन्द्र—आराम करेंगे। चटाई के ऊपर रजाई और तकिये लगाये गये हैं। श्रीरामकृष्ण भी बालक की भाँति नरेन्द्र के पास बिस्तर पर आ बैठे। भक्तों से, विशेषकर नरेन्द्र से, और उन्हीं की ओर मुँह करके, हँसते हुए बड़े आनन्द से बातचीत कर रहे हैं। अपनी अवस्था और अपने चरित्र का बातों बातों में वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र आदि भक्तों से)—मेरी इस अवस्था के बाद मुझे केवल ईश्वरी बातें सुनने की व्याकुलता होती थी। कहाँ भागवत, कहाँ अध्यात्म रामायण, कहाँ महाभारत—यही सब ढूँढ़ता फिरता था। आरियादह के कृष्णकिशोर के पास अध्यात्म रामायण सुनने जाया करता था।

"कृष्णकिशोर का कैसा विश्वास है! वह वृन्दावन गया था। वहाँ एक दिन उसे प्यास लगी। कुएँ के पास जाकर उसने देखा—कि एक आदमी खड़ा है। पूछने पर उसने जवाब दिया, 'मैं नीच जाति का हूँ और आप ब्राह्मण हैं; मैं कैसे आप को पानी पिला दूँ?' कृष्णकिशोर ने कहा, 'तू कह 'शिव'। 'शिव शिव' कहने से ही तू शुद्ध हो जायगा।' उसने 'शिव, शिव' कहकर पानी उठा दिया। वैसा निष्ठावान् ब्राह्मण होकर भी उसने वही जल पिया। कैसा विश्वास है!

"आरियादह के घाट पर एक साधु आया था। हमने सोचा कि एक दिन देखने जायँगे। काली-मन्दिर में मैंने हलधारी से कहा, 'कृष्णकिशोर और हम साधु दर्शन को जायेंगे। तुम चलोगे?' हलधारी ने कहा, 'एक मिट्टी का पिंजरा देखने जाने से क्या होगा?' हलधारी गीता और वेदान्त पढ़ता है न! इसीसे उसने साधु-शरीर को 'मिट्टी का पिंजरा' बताया! मैंने जाकर कृष्णकिशोर से वह बात कही तो वह बड़े क्रोध में आ गया। उन्होंने कहा, 'क्या! हलधारी ने ऐसी बात कही है? जो ईश्वर-चिन्ता करता है, राम-चिन्ता करता है और जिसने उसी उद्देश से सर्वत्याग किया है, तो क्या उसका शरीर मिट्टी का पिंजरा ठहरा? हलधारी नहीं जानता कि भक्त का शरीर चिन्मय होता है!' उसे इतना क्रोध आ

गया था कि, काली-मन्दिर में फूल तोड़ने आया करता था, पर हलधारी से भेंट होने पर मुँह फेर लेता था। उससे बोलता तक न था।

"उसने मुझसे कहा था, 'तुमने जनेऊ क्यों फेंक दिया?' मैंने कहा, जब मुझे यह अवस्था हुई तब आश्विन की आँधी की तरह एक भाव आकर वह सब कुछ न जाने कहाँ उड़ा ले गया, कुछ पता ही न चला! पहले की एक भी निशानी न रही। होश नहीं थे। जब कपड़ा ही खिसक जाता था, तो जनेऊ कैसे रहे? मैंने कहा, 'एक बार तुम्हें भी उन्माद हो जाय तो तुम समझो!'

"फिर हुआ भी वैसा! उसे उन्माद हो गया। तब वह केवल 'ॐ ॐ' कहा करता और एक कोठरी में चुपचाप बैठा रहता था। यह समझकर कि वह पागल हो गया है, लोगों ने वैद्य बुलाया। नाटागढ़ का राम कविराज आया, कृष्णकिशोर ने उससे कहा, 'मेरी बीमारी तो अच्छी कर दो, पर देखो मेरे ॐकार को मत छुड़ाना!' (सब हँसे)

"एक दिन मैंने जाकर देखा कि वह बैठा सोच रहा है। पूछा 'क्या हुआ है?' उसने कहा, 'टैक्सवाले आये थे—इसीलिए सोच में पड़ा हूँ। उन्होंने कहा है रुपया न देने से घर का माल बेच लेंगे।' मैंने कहा, 'तो सोचकर क्या होगा? अगर मूरत उठा ले जायँ तो लेजाने दो। अगर बाँधकर ही ले जायँ तो तुम्हें थोड़े ही ले जा सकेंगे। तुम तो 'ख' (आकाश) हो!' (नरेन्द्र आदि हँसे।) कृष्णकिशोर कहा करता था, कि मैं आकाशवत् हूँ। वह अध्यात्म रामायण पढ़ता था न! बीच बीच में उसे 'तुम ख हो' कहकर दिल्लगी करता था। सो हँसते हुए मैंने कहा, 'तुम ख हो; टैक्स तुम्हें तो खींचकर नहीं ले जा सकेगा।'

"उन्माद की दशा में मैं लोगों से सच सच बातें—सब बातें कह देता था। किसी की परवाह न करता था। अमीरों को देखकर मुझे डर नहीं लगता था।

"यदु मल्लिक के बाग में यतीन्द्र आया था। मैं भी वहीं था। मैंने उससे पूछा, 'कर्तव्य क्या है? क्या ईश्वर की चिन्ता करना ही हमारा कर्तव्य नहीं है?' यतीन्द्र ने कहा, 'हम संसारी आदमी हैं। हमारे लिए मुक्ति कैसी! राजा युधिष्ठिर को भी नरकदर्शन करना पड़ा था! तब मुझे बड़ा क्रोध आया। मैंने कहा, 'तुम भला कैसे आदमी हो, युधिष्ठिर का सिर्फ नरक-दर्शन ही तुमने याद रक्खा है? युधिष्ठिर का सत्यवचन, क्षमा, धैर्य, विवेक, वैराग्य, ईश्वर की भक्ति—यह सब बिलकुल याद नहीं आता!' और भी बहुत कुछ कहने जाता था, पर हृदय ने मेरा मुँह दबा लिया। थोड़ी देर बाद यतीन्द्र यह कहकर कि मुझे ज़रा काम है, चला गया।

"बहुत दिनों बाद मैं कप्तान के साथ सौरीन्द्र ठाकुर के घर गया था। उसे देखकर मैंने कहा, 'तुम्हें राजा-वाजा कह नहीं सकूँगा, क्योंकि वह झूठ बात होगी।' उसने मुझसे थोड़ी बातचीत की। फिर मैंने देखा कि साहब लोग आने जाने लगे। वह रजोगुणी आदमी है, बहुत कामों में लगा रहता है। यतीन्द्र को खबर भेजी गई। उसने जवाब दिया, 'मेरे गले में दर्द हुआ है।'

"उस उन्माद की दशा में एक दूसरे दिन बराहनगर के घाट पर मैंने देखा कि जयमुकुर्जी जप कर रहा है, पर अनमना होकर। तब मैंने पास जाकर दो थप्पड़ लगा दिए।

"एक दिन रासमणि दक्षिणेश्वर में आईं। काली माता के मन्दिर में आईं। वह पूजा के समय आया करतीं और मुझसे एक दो गीत गाने को कहती थीं। मैं गीत गा रहा था, देखा कि वह अनमनी होकर फूल चुन रही हैं। बस, दो थप्पड़ जमा दिये। तब होश संभालकर हाथ बाँधे रहीं।

"हलधारी से मैंने कहा, 'भैया, यह कैसे स्वभाव हो गया! क्या उपाय करूँ?' तब माँ को पुकारते पुकारते वह स्वभाव दूर हुआ।

"उस अवस्था में ईश्वरीय प्रसंग के सिवा और कुछ अच्छा नहीं लगता था। वैषयिक चर्चा होते सुनकर मैं बैठा रोया करता था। जब मथुरबाबू मुझे अपने साथ तीर्थों को ले गये, तब थोड़े दिन हम काशी जी में राजा बाबू के मकान पर रहे। मथुरबाबू के साथ बैठकखाने में मैं बैठा था और राजा बाबू भी थे। मैंने देखा कि वे सांसारिक बातें कह रहे हैं। इतने रुपये का नुकसान हुआ है,—ऐसी-ऐसी बातें। मैं रोने लगा—कहा 'माँ, मुझे यह कहाँ लाई! मैं तो रासमणि के मन्दिर में कहीं अच्छा था। तीर्थ करने को आते हुए भी वे ही कामिनी-कांचन की बातें! पर वहाँ (दक्षिणेश्वर में) तो विषय-चर्चा सुननी नहीं पड़ती थी, होती ही न थी।"

श्रीरामकृष्ण ने भक्तों से, विशेषकर नरेन्द्र से, ज़रा आराम लेने के लिए कहा, और आप भी छोटे तखत पर थोड़ा आराम करने चले गये।

(२)

नरेन्द्र आदि के साथ कीर्तनानन्द। नरेन्द्र का प्रेमालिंगन।

तीसरा पहर हुआ है। नरेन्द्र गाना गा रहे हैं। राखाल, लाटू, मास्टर, नरेन्द्र के मित्र प्रिय, हाजरा आदि सब हैं।

नरेन्द्र ने कीर्तन गाया, मृदंग बजने लगा—

"ऐ मन, तू चिद्घन हरि का चिन्तन कर। उनकी मोहनमूर्ति की कैसी छटा है।" (पृष्ठ २३ देखिए)

नरेन्द्र ने फिर गाया—

(भावार्थ) "सत्य-शिव-सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर में शोभायमान है, जिसे नित्य देखकर हम उस रूप के समुद्र में डूब जायँगे। (वह दिन कब आयेगा ? हे प्रभु, मुझ दीन के भाग्य में यह कब होगा ?) हे नाथ, कब अनन्त ज्ञान के रूप में तुम हमारे हृदय में विराजोगे और हमारा चञ्चल मन निर्वाक् होकर तुम्हारी शरण लेगा; कब अविनाशी आनन्द के रूप में तुम हृदयाकाश में उदय होगे ? चन्द्रमा के उदय होने पर चकोर जैसे उल्लसित होता है, वैसे हम भी तुम्हारे प्रकट होने पर मस्त हो जाएँगे। तुम शान्त, शिव, अद्वितीय और राजराज हो। हे प्राणसखा, तुम्हारे चरणों में हम बिक जायँगे और अपने जीवन को सफल करेंगे। ऐसा अधिकार और ऐसा जीते जी स्वर्गभोग हमें और कहाँ मिलेगा ? तुम्हारा शुद्ध और अपापविद्ध रूप हम दर्शन करेंगे। जिस तरह प्रकाश को देखकर अंधेरा जल्द भाग जाता है, उसी तरह तुम्हारे प्रकट होने से पापरूपी अंधकार भाग जायगा। तुम ध्रुवतारा हो, हे दीनबन्धो, हमारे हृदय में ज्वलन्त विश्वास का संचार कर मन की आशाएँ पूरी कर दो। तुम्हें प्राप्त कर हम अहर्निश प्रेमानन्द में डूबे रहेंगे और अपने आपको भूल जायँगे। (वह दिन कब आएगा, प्रभो ?)"

"आनन्द से मधुर ब्रह्मनाम का उच्चारण करो। नाम से सुधा का सिन्धु उमड़ आएगा।—उसे लगातार पीते रहो। (आप पीते रहो और

दूसरों को पिलाते रहो ।) विषय-रूपी मृगजल में पड़कर यदि कभी हृदय शुष्क हो जाय तो नाम-गान करना । (प्रेम से हृदय सरस हो उठेगा ।) (देखना, वह महामन्त्र नहीं भूलना ।) (आफत के समय उसे दयालु पिता कहकर पुकारना ।) हुंकार से पाप का बन्धन तोड़ डालो । (जय ब्रह्म कह कर) आओ सब मिलकर ब्रह्मनाद में मस्त होवें और सब कामनाओं को मिटा दें । (प्रेमयोग के योगी बनकर ।)"

मृदंग और करताल के साथ कीर्तन हो रहा है । नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण को घेरकर कीर्तन कर रहे हैं । कभी गाते हैं—'प्रेमानन्द-रस में चिर दिन के लिए मग्न हो जा ।' फिर कभी गाते हैं—'सत्य–शिव–सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर में शोभायमान है ।' अन्त में नरेन्द्र ने स्वयं मृदंग उठा लिया है—और मतवाले होकर श्रीरामकृष्ण के साथ गा रहे हैं—'आनन्द से मधुर ब्रह्मनाम का उच्चारण करो ।'

कीर्तन समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को बार-बार छाती से लगाया और कहा—अहा, आज तुमने मुझे कैसा आनन्द दिया ।

आज श्रीरामकृष्ण के हृदय में प्रेम का स्रोत उमड़ रहा है । रात के आठ बजे होंगे, तो भी प्रेमोन्मत्त होकर बरामदे में अकेले टहल रहे हैं । उत्तर वाले लम्बे बरामदे में आए हैं और एक छोर से दूसरे छोर तक जल्दी जल्दी टहल रहे हैं । बीच बीच में जगन्माता के साथ कुछ बातचीत कर रहे हैं । एकाएक उन्मत्त की भाँति बोल उठे, "तू मेरा क्या बिगाड़ेगी ?"

क्या आप यही कर रहे हैं कि जगन्माता जिसे सहारा दे रही हैं, माया उसका क्या बिगाड़ सकती है ?

नरेन्द्र, प्रिय और मास्टर रात को रहेंगे। नरेन्द्र रहेंगे—बस, श्रीरामकृष्ण फूले नहीं समाते। रात का भोजन तैयार हुआ। श्री श्री माता जी नौबतखाने में हैं—आपने अपने भक्तों के लिए रोटी, दाल आदि बनाकर भेज दिया है। भक्त लोग बीच बीच रहा में करते हैं; सुरेन्द्र प्रतिमास कुछ खर्च देते हैं।

कमरे के दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में भोजन के चौके लगाए जा रहे हैं। पूर्व वाले दरवाजे के पास नरेन्द्र आदि बातचीत कर रहे हैं।

नरेन्द्र—आजकल के लड़कों को कैसा देख रहे हैं?

मास्टर—बुरे नहीं, पर धर्म के उपदेश कुछ नहीं पाते हैं।

नरेन्द्र—मैंने खुद जो देखा है उससे तो जान पड़ता है कि सब बिगड़ रहे हैं। चुरट पीना, ठट्ठेबाजी, टाटबाट, स्कूल से भागना—ये सब हरदम होते देखे जाते हैं, यहाँ तक कि खराब जगहों में भी जाया करते हैं।

मास्टर—हमने तो लड़कपन में ऐसा न देखा, न सुना।

नरेन्द्र—शायद आप उतना मिलते जुलते नहीं। मैंने यह भी देखा कि खराब औरतें उन्हें नाम से पुकारती हैं। कब उनसे मिले हैं, कौन जाने?

मास्टर—क्या ताज्जुब की बात!

नरेन्द्र—मैं जानता हूँ कि बहुतों का चरित्र बिगड़ गया है। स्कूल के संचालक और लड़कों के अभिभावक इस विषय पर ध्यान दें तो अच्छा हो।

इस तरह बातें हो रही थीं कि श्रीरामकृष्ण कोठरी के भीतर से उनके पास आये और हँसते हुए कहते हैं, "भला तुम्हारी क्या बातचीत हो रही है।" नरेन्द्र ने कहा, "उनसे स्कूल की चर्चा हो रही थी। लड़कों का चरित्र ठीक नहीं रहता।" श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर तक उन बातों को सुनकर मास्टर से गम्भीर भाव से कहते हैं, "ऐसी बातचीत अच्छी नहीं। ईश्वर की बातों को छोड़ दूसरी बातें अच्छी नहीं। तुम इनसे उम्र में बड़े हो, तुम सयाने हुए हो, तुम्हें ये सब बातें उठने देना उचित न था।"

उस समय नरेन्द्र की उम्र उन्नीस बीस रही होगी और मास्टर की सत्ताईस अट्ठाईस।

मास्टर लज्जित हुए, नरेन्द्र आदि भक्त चुप रहे।

श्रीरामकृष्ण खड़े होकर हँसते हुए नरेन्द्र आदि भक्तों को भोजन कराते हैं। आज उनको बड़ा आनन्द हुआ है।

भोजन के बाद नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में फ़र्श पर बैठे विश्राम कर रहे हैं और श्रीरामकृष्ण से बातें कर रहे हैं। आनन्द का मेला सा लग गया है। बातों बातों में श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कहते हैं— 'चिदाकाश में पूर्ण प्रेमचन्द्र का उदय हुआ' ज़रा इस गाने को तो गा।

नरेन्द्र ने गाना शुरू किया। साथ ही साथ अन्य भक्त मृदंग और करताल बजाने लगे। गीत का आशय इस प्रकार था—

"चिदाकाश में पूर्ण प्रेमचन्द्र का उदय हुआ। क्या ही आनन्द-पूर्ण प्रेमसिन्धु उमड़ आया! (जय दयामय, जय दयामय, जय दयामय!

चारों ओर भक्तरूपी ग्रह जगमगाते हैं। भक्तसखा भगवान् भक्तों के संग लीलारसमय हो रहे हैं। (जय दयामय !) स्वर्ग का द्वार खोल और आनन्द का तूफान उठा दे; नवविधान*रूपी वसन्त-समीर चल रहा है। उससे लीलारस और प्रेमगन्धवाले कितने ही फूल खिल जाते हैं जिनकी महक से योगीवृन्द योगानन्द में मतवाले हो जाते हैं। (जय दयामय !) संसार-हृद के जल पर नवविधान रूपी कमल में आनन्दमयी माँ विराजती है, और भावावेश से आकुल भक्त-रूपी भौंरें उसमें सुधापान कर रहे हैं। वह देखो माता का प्रसन्न वदन—जिसे देखकर चित्त फूल उठता है और जगत् मुग्ध हो जाता है। और देखो—माँ के पैरों तले साधुओं का समूह, वे मस्त होकर नाच गा रहे हैं। अहा, कैसी अनुपम रूप है—जिसे देखकर प्राण शीतल हो गये। 'प्रेमदास' सब के चरण पकड़कर कहता है कि भाई, मिलकर माँ की जय गाओ।"

कीर्तन करते करते श्रीरामकृष्ण नृत्य कर रहे हैं। भक्त भी उन्हें घेरकर नाच रहे हैं।

कीर्तन समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण उत्तर-पूर्व वाले बरामदे में टहल रहे हैं। श्रीयुत हाजरा उसी के उत्तर भाग में बैठे हैं; श्रीरामकृष्ण जाकर वहाँ बैठे। मास्टर भी वहीं बैठे हैं और हाजरा से बातचीत कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने एक भक्त से पूछा, " क्या तुम कोई स्वप्न भी देखते हो ?"

भक्त—एक अद्भुत स्वप्न मैंने देखा है—यह जगत् जलमय हो गया है। अनन्त जलराशि ! कई एक नावें तैर रही थीं, एकाएक

*बाबू केशव सेन द्वारा स्थापित ब्राह्मसमाज का नाम।

बाढ़ से डूब गई । मैं तथा कई आदमी एक जहाज़ पर चढ़े हैं कि इतने में उस अकूल समुद्र के ऊपर से चलते हुए एक ब्राह्मण दिखाई पड़े । मैंने पूछा, 'आप कैसे जा रहे हैं ।' ब्राह्मण ने ज़रा हँसकर कहा, 'यहाँ कोई तकलीफ़ नहीं है; जल के नीचे बराबर पुल है ।' मैंने पूछा, 'आप कहाँ जा रहे हैं ?' उन्होंने कहा, 'भवानीपुर जा रहा हूँ ।' मैंने कहा, 'ज़रा ठहर जाइए; मैं भी आपके साथ चलूँगा ।'

श्रीरामकृष्ण—यह सब सुनकर मुझे रोमांच हो रहा है ।

भक्त—ब्राह्मण ने कहा, 'मुझे अब फ़ुरसत नहीं है; तुम्हें उतरने में देर लगेगी । अब मैं चलता हूँ । यह रास्ता देख लो, तुम पीछे आना ।'

श्रीरामकृष्ण—मुझे रोमांच हो रहा है ! तुम जल्दी मंत्रदीक्षा लो ।

रात के ग्यारह बज गए हैं । नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण की कोठरी में फ़र्श पर बिस्तर लगाकर लेट गए ।

(३)

सन्तान-भाव अत्यन्त शुद्ध ।

नींद खुलने पर भक्तों में से कोई कोई देखते हैं कि सबेरा हुआ है । श्रीरामकृष्ण बालक की भाँति दिगम्बर हैं, और देव-देवियों के नाम उच्चारण करते हुए कमरे में टहल रहे हैं । आप कभी गंगादर्शन करते हैं, कभी देव-देवियों के चित्रों के पास जाकर प्रणाम करते हैं और कभी मधुर स्वर में नामकीर्तन करते हैं । कभी कहते हैं वेद, पुराण, तंत्र, गीता-गायत्री, भागवत, भक्त, भगवान् । गीता को लक्ष्य करके अनेक बार कहते हैं—

"त्यागी, त्यागी, त्यागी,त्यागी। फिर कभी— तुम्हीं ब्रह्म हो तुम्हीं शक्ति; तुम्हीं पुरुष हो तुम्हीं प्रकृति; तुम्हीं विराट हो तुम्हीं स्वराट (स्वतंत्र अद्वितीय सत्ता); तुम्हीं नित्य लीलामयी; तुम्हीं (सांख्य के) चौबीस तत्त्व हो।"

इधर कालीमन्दिर और राधाकान्त जी के मन्दिर में मंगलारती हो रही है और शङ्ख घंटे बज रहे हैं। भक्त उठकर देखते हैं कि मन्दिर की फुलवाड़ी में देव-देवियों की पूजा के लिए फूल तोड़े जा रहे हैं और प्रभाती रागों की लहरें फैल रही हैं तथा नौबत बज रही है।

नरेन्द्र आदि भक्त प्रातःक्रिया से छुट्टी पाकर श्रीरामकृष्ण के पास आए। श्रीरामकृष्ण सहस्यमुख हो उत्तरपूर्व वाले बरामदे की पश्चिम ओर खड़े हैं।

नरेन्द्र—मने देखा कि पंचवटी में कई नानकपन्थी साधु बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे कल आए थे। (नरेन्द्र से) तुम सब एक साथ चटाई पर बैठो, मैं देखूँ।

सब भक्तों के चटाई पर बैठने के बाद श्रीरामकृष्ण आनन्द से देखने और उनसे बातचीत करने लगे। नरेन्द्र ने साधना की बात उठाई।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र आदि से)—भक्ति ही सार वस्तु है। ईश्वर को प्यार करने से विवेक-वैराग्य आप ही आप आ जाते हैं।

नरेन्द्र—एक बात पूछूँ—क्या औरतों से मिलकर साधना करना तंत्रों में कहा गया है?

श्रीरामकृष्ण—वे सब अच्छे रास्ते नहीं; बड़े कठिन हैं, और उनसे पतन प्रायः हुआ करता है। तीन प्रकार की साधनाएँ हैं—वीर-भाव, दासी भाव और मातृ-भाव। मेरी मातृ-भाव की साधना है। दासी-भाव भी अच्छा है। वीर-भाव की साधना बड़ी कठिन है। सन्तान-भाव बड़ा शुद्ध भाव है।

नानकपन्थी साधुओं ने श्रीरामकृष्ण को 'नमो नारायण' कहकर अभिवादन किया। श्रीरामकृष्ण ने उनसे बैठने को कहा।

श्रीरामकृष्ण कहते हैं—"ईश्वर के लिए कुछ भी असम्भव नहीं। उनका यथार्थ स्वरूप कोई नहीं बता सकता। सभी सम्भव है। दो योगी थे, ईश्वर की साधना करते थे। नारद ऋषि जा रहे थे। उनका परिचय पाकर एक ने कहा 'तुम नारायण के पास से आते हो? वे क्या कर रहे हैं?' नारद जी ने कहा, 'मैं देख आया कि वे एक सुई के छेद में ऊँट-हाथी घुसाते हैं और फिर निकालते हैं।' उस पर एक ने कहा, 'इसमें आश्चर्य ही क्या है? उनके लिए सभी सम्भव है।' पर दूसरे ने कहा, 'भला ऐसा कभी हो सकता है? तुम वहाँ गये ही नहीं।'

दिन के नौ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में बैठे हैं। कोन्नगर से मनमोहन सपरिवार आये हैं। उन्होंने प्रणाम करके कहा, 'इन्हें कलकत्ते ले जा रहा हूँ!' कुशल प्रश्न पूछने के बाद श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'आज पहली तारीख है—अगर कलकत्ते जा रहे हो—क्या जाने कहीं कुछ खराबी न हो!' यह कहकर ज़रा हँसे और दूसरी बात कहने लगे।

नरेन्द्र और उनके मित्र स्नान करके आये। श्रीरामकृष्ण ने व्यग्र होकर नरेन्द्र से कहा, "जाओ, बट के नीचे जाकर ध्यान करो आसन दूँ?"

नरेन्द्र और उनके कई ब्राह्म मित्र पञ्चवटी के नीचे ध्यान कर रहे हैं। करीब साढ़े दस बजे होंगे। थोड़ी देर में श्रीरामकृष्ण वहाँ आये; मास्टर भी साथ हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं—

(ब्राह्म भक्तों से) "ध्यान करते समय ईश्वर में डूब जाना चाहिए, ऊपर ऊपर तैरने से क्या पानी के नीचेवाले लाल मिल सकते हैं?"

फिर आपने रामप्रसाद का एक गीत गाया जिसका आशय इस प्रकार है—"ऐ मन, काली कहकर हृदय-रूपी रत्नाकर के अथाह जल में डुबकी लगा। यदि दो ही चार डुबकियों में धन हाथ न लगा, तो भी रत्नाकर शून्य नहीं हो सकता। पूरा दम लेकर एक ऐसी डुबकी लगा कि तू कुल-कुण्डलिनी के पास पहुँच जाय। ऐ मन, ज्ञान-समुद्र के बीच शक्ति-रूपी मुक्ता पैदा होते हैं। यदि तू शिव जी की युक्ति के अनुसार भक्ति-पूर्वक ढूँढ़ेगा तो तू उन्हें पा सकेगा। उस समुद्र में काम आदि छः घड़ियाल हैं, जो खाने के लोभ से सदा ही घूमते रहते हैं। तो तू विवेक रूपी हल्दी बदन में चुपड़ ले—उसकी बू से वे तुझे छुयेंगे नहीं। कितने ही लाल और माणिक उस जल में पड़े हैं। रामप्रसाद का कहना है कि यदि तू कूद पड़ेगा तो तुझे वे सब के सब मिल जाएँगे।"

नरेन्द्र और उनके मित्र पञ्चवटी के चबूतरे से उतरे और श्रीरामकृष्ण के पास खड़े हुए। श्रीरामकृष्ण दक्षिण मुख होकर उनसे बातचीत करते करते अपने कमरे की तरफ आ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—गोता लगाने से तुम्हें घड़ियाल पकड़ सकते हैं, पर हल्दी चुपड़ने से वे नहीं छू सकते। हृदय रूपी रत्नाकर के अथाह जल में

काम आदि छः घड़ियाल रहते हैं, पर विवेक-वैराग्यरूपी हल्दी चुपड़ने से वे फिर तुम्हें नहीं छुयेंगे।

"केवल पण्डिताई या लेक्चर से क्या होगा यदि विवेक-वैराग्य न हुआ। ईश्वर सत्य है और सब कुछ अनित्य; वे ही वस्तु हैं, शेष सब अवस्तु,—इसी का नाम विवेक है।

"पहले हृदय-मन्दिर में उनकी प्रतिष्ठा करो। वक्तृता, लेक्चर आदि, जी चाहे तो उसके बाद करना। खाली 'ब्रह्म ब्रह्म' कहने से क्या होगा, यदि विवेक-वैराग्य न रहा? वह तो नाहक शङ्ख फूँकना हुआ!

"किसी गाँव में पद्मलोचन नाम का एक लड़का था। लोग उसे पदुआ कहकर पुकारते थे। उसी गाँव में एक जीर्ण मन्दिर था। अन्दर देवता का कोई विग्रह न था—मन्दिर की दीवारों पर पीपल और किस्म किस्म के पेड़ पौधे उग आए थे। मन्दिर के भीतर चमगादड़ अड्डा जमाए हुए थे। फर्श पर गर्द और चमगादड़ों की विष्ठा पड़ी रहती थी। मन्दिर में लोगों का समागम नहीं होता था।

"एक दिन सन्ध्या के थोड़ी देर बाद गाँववालों ने शङ्ख की आवाज़ सुनी। मन्दिर की तरफ से भों भों शङ्ख बज रहा है। गाँववालों ने सोचा कि किसी ने देवता-प्रतिष्ठा की होगी, और सन्ध्या के बाद आरती हो रही है। लड़के, बूढ़े, औरत, मर्द, सब दौड़ते हुए मन्दिर के सामने हाज़िर हुए—देवता के दर्शन करेंगे और आरती देखेंगे। उनमें से एक ने मन्दिर का दरवाज़ा धीरे धीरे खोला तो देखा कि पद्मलोचन एक बगल खड़ा होकर भों भों शङ्ख बजा रहा है। देवता की प्रतिष्ठा नहीं हुई—

मन्दिर में झाड़ू तक नहीं लगाया गया—चमगादड़ों की विष्ठा पड़ी हुई है। तब वह चिल्लाकर कहता है—

'तेरे मन्दिर में माधव कहाँ! पदुआ, तूने तो नाहक शङ्ख फूँककर हुल्लड़ मचा दिया है। उसमें ग्यारह चमगादड़ रातदिन गश्त लगा रहे हैं—'

"यदि हृदय मन्दिर में माधव-प्रतिष्ठा की इच्छा हो, यदि ईश्वर का लाभ करना चाहो तो, सिर्फ भों भों शङ्ख फूँकने से क्या होगा। पहले चित्तशुद्धि चाहिए। मन शुद्ध हुआ तो भगवान् उस पवित्र आसन पर आ विराजेंगे। चमगादड़ की विष्ठा रहने से माधव नहीं लाये जा सकते। ग्यारह चमगादड़ का अर्थ है ग्यारह इन्द्रियाँ—पाँच ज्ञान की इन्द्रियाँ, पाँच कर्म की इन्द्रियाँ और मन। पहले माधव की प्रतिष्ठा, बाद को इच्छा हो तो वक्तृता, लेक्चर आदि देना।

"पहले डुबकी लगाओ। गोता लगाकर लाल उठाओ, फिर दूसरे काम करो।

"कोई गोता लगाना नहीं चाहता! न साधन, न भजन, न विवेक-वैराग्य—दो चार शब्द सीख लिए, बस लगे लेक्चर देने! शिक्षा देना कठिन काम है। ईश्वर के दर्शनों के बाद यदि कोई उनका आदेश पावे, तो वह लोगों को शिक्षा दे सकता है।

बातें करते हुए श्रीरामकृष्ण उत्तर वाले बरामदे के पश्चिम भाग में आ खड़े हुए। मणि पास खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण बारम्बार कह रहे हैं, 'बिना विवेक-वैराग्य के भगवान् नहीं मिलेंगे।' मणि विवाह कर चुके

हैं, इसीलिए व्याकुल होकर सोच रहे हैं कि क्या उपाय होगा। उनकी उम्र अट्ठाईस वर्ष की है, कॉलेज में पढ़कर उन्होंने कुछ अंग्रेजी शिक्षा पाई है। वे सोच रहे हैं—क्या विवेक-वैराग्य का अर्थ कामिनी-कांचन का त्याग है?

मणि (श्रीरामकृष्ण से)— यदि स्त्री कहे कि आप मेरी देखभाल नहीं करते हैं, मैं आत्महत्या करूँगी, तो कैसा होगा?

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर स्वर से)—ऐसी स्त्री को त्यागना चाहिए, जो ईश्वर की राह में विघ्न डालती हो, चाहे वह आत्महत्या करे, चाहे और कुछ।

"जो स्त्री ईश्वर की राह में विघ्न डालती है, वह अविद्या स्त्री है।"

गहरी चिन्ता में डुबे हुए मणि दीवार से टेककर एक तरफ खड़े रहे। नरेन्द्र आदि भक्त भी थोड़ी देर निर्वाक् हो रहे।

श्रीरामकृष्ण उनसे ज़रा बातचीत कर रहे हैं; एकाएक मणि के पास आकर एकान्त में मृदु स्वर से कहते हैं, "लेकिन जिसकी ईश्वर पर सच्ची भक्ति है, उसके वश में सभी आ जाते हैं—राजा, बुरे आदमी, स्त्री—सब। यदि किसी की भक्ति सच्ची हो तो स्त्री भी क्रम से ईश्वर की राह पर जा सकती है। आप अच्छे हुए तो ईश्वर की इच्छा से वह भी अच्छी हो सकती है।"

मणि को चिन्ताग्नि पर पानी बरसा। वे अब तक सोच रहे थे— स्त्री आत्महत्या कर डाले तो करने दो, मैं क्या कर सकता हूँ?

मणि (श्रीरामकृष्ण से)—संसार में बड़ा डर रहता है।

श्रीरामकृष्ण (मणि और नरेन्द्र आदि से)—इसीसे तो चैतन्यदेव ने कहा था, 'सुनो भाई नित्यानन्द, संसारी जीवों के लिए कोई उपाय नहीं।'

(मणि से, एकान्त में) "यदि ईश्वर पर शुद्ध भक्ति न हुई तो कोई उपाय नहीं। यदि कोई ईश्वर का लाभ करके संसार में रहे तो उसे कुछ डर नहीं। यदि बीच बीच एकान्त में साधना करके कोई शुद्धा भक्ति प्राप्त कर सके तो संसार में रहते हुए भी उसे कोई डर नहीं। चैतन्यदेव के संसारी भक्त भी थे। वे तो कहने भर के लिए संसारी थे। वे अनासक्त होकर रहते थे।"

देव-देवियों की भोग-आरती हो चुकी, वैसे ही नौबत बजने लगी। अब उनके विश्राम का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण भोजन करने बैठे। नरेन्द्र आदि भक्त आज भी आपके पास प्रसाद पायेंगे।

परिच्छेद ७

भक्तों से वार्तालाप

(१)

श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त-नरेन्द्र आदि।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में विराजमान हैं। दिन के ९ बजे होंगे। अपनी छोटी खाट पर वे विश्राम कर रहे हैं। फर्श पर मणि बैठे हैं। उनसे श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं।

आज विजया दशमी, रविवार है; २२ अक्टूबर, १८८२। आज कल राखाल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। नरेन्द्र और भवनाथ कभी कभी आया करते हैं। श्रीरामकृष्ण के साथ उनके भतीजे रामलाल और हाजरा महाशय रहते हैं। राम, मनोमोहन, सुरेश, मास्टर और बलराम प्रायः हर हफ्ते श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाते हैं। बाबूराम अभी एक-दो ही बार दर्शन कर गए हैं।

श्रीरामकृष्ण—तुम्हारी पूजा की छुट्टी हो गई?

मणि—जी हाँ। मैं सप्तमी, अष्टमी और नवमी को प्रतिदिन केशव सेन के घर गया था।

श्रीरामकृष्ण—कहते क्या हो?

मणि—दुर्गापूजा की अच्छी व्याख्या सुनी।

श्रीरामकृष्ण—कैसी, कहो तो।

मणि—केशव सेन के घर में रोज सुबह को उपासना होती है;—दस ग्यारह बजे तक। उसी उपासना के समय उन्होंने दुर्गापूजा की व्याख्या की थी। उन्होंने कहा, यदि माता दुर्गा को कोई प्राप्त कर सके—यदि माता को कोई हृदय-मन्दिर में ला सके, तो लक्ष्मी, सरस्वती, कार्तिक, गणेश स्वयं आते हैं। लक्ष्मी अर्थात् ऐश्वर्य; सरस्वती—ज्ञान; कार्तिक—विक्रम; गणेश—सिद्धि; ये सब आप ही आप हो जाते हैं,—यदि माँ आ जायँ तो।

श्रीरामकृष्ण सारा वर्णन सुन गए। बीच बीच केशव की उपासना के सम्बन्ध में प्रश्न करने लगे। अन्त में कहा—"तुम यहाँ वहाँ न जाया करो, यहीं आना।

"जो अन्तरंग हैं वे केवल यहीं आयेंगे। नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल हमारे अन्तरंग भक्त हैं, सामान्य नहीं। तुम एक दिन इन्हें भोजन कराना। नरेन्द्र को तुम कैसा समझते हो?"

मणि—जी, बहुत अच्छा।

श्रीरामकृष्ण—देखो नरेन्द्र में कितने गुण हैं,—गाता है, बजाता है, विद्वान् है और जितेन्द्रिय है, कहता है—'विवाह न करूँगा;—बचपन से ही ईश्वर में मन है।

(मणि से) "आजकल तुम्हारे ईश्वर-स्मरण का क्या हाल है? मन साकार पर जाता है या निराकार पर?"

मणि—जी, अभी तो मन साकार पर नहीं जाता। और इधर निराकार में मन को स्थिर नहीं कर सकता।

श्रीरामकृष्ण—देखो, निराकार में तत्काल मन स्थिर नहीं होता। पहले पहल साकार तो अच्छा है।

मणि—मिट्टी की इन सब मूर्तियों की चिन्ता करना?

श्रीरामकृष्ण—नहीं नहीं, चिन्मयी मूर्ति की।

मणि—तो भी हाथ-पैर तो सोचने ही पड़ेंगे; परन्तु यह भी सोचता हूँ कि पहली अवस्था में किसी रूप की चिन्ता किये बिना मन स्थिर न होगा, यह आपने कह भी दिया है; अच्छा, वे तो अनेक रूप धारण कर सकते हैं; तो क्या अपनी माता के स्वरूप का ध्यान किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण—हाँ। वे (माँ) गुरु तथा ब्रह्ममयी हैं।

कुछ देर बाद मणि फिर श्रीरामकृष्ण से पूछने लगे।

मणि—अच्छा, निराकार में क्या दिखता है? क्या इसका वर्णन नहीं किया जा सकता?

श्रीरामकृष्ण (कुछ सोचकर)—वह कैसा है?—

यह कहकर श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर साकार और निराकार दर्शन में कैसा अनुभव होता है, इस सम्बन्ध की एक बात कह दी और फिर चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण—देखो, इसको ठीक ठीक समझने के लिए साधना चाहिए। यदि घर के भीतर के रत्न देखना चाहते हो और लेना चाहते हो, तो मेहनत करके कुञ्जी लाकर दरवाज़े का ताला खोलो और रत्न निकालो। नहीं तो घर में ताला लगा हुआ है और द्वार पर खड़े हुए सोच रहे हैं,—'लो, हमने दरवाज़ा खोला, सन्दूक का ताला तोड़ा—अब यह रत्न निकाल रहे हैं।' सिर्फ खड़े खड़े सोचने से काम न चलेगा। साधना करनी चाहिए।

(२)

ज्ञानी तथा अवतारवाद। श्रीवृन्दावन-दर्शन। कुटीचक।

श्रीरामकृष्ण—ज्ञानी निराकार की चिन्ता करते हैं। वे अवतार नहीं मानते। अर्जुन ने श्रीकृष्ण की स्तुति में कहा, तुम पूर्णब्रह्म हो। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि आओ, देखो,—हम पूर्णब्रह्म हैं या नहीं। यह कहकर श्रीकृष्ण अर्जुन को एक जगह ले गये और पूछा, तुम क्या देखते हो? अर्जुन बोले, मैं एक बड़ा पेड़ देख रहा हूँ जिसमें जामुन के से गुच्छे के गुच्छे फल लगे हैं। श्रीकृष्ण ने आज्ञा दी कि और भी पास आकर देखो;—वे काले फल नहीं, गुच्छे के गुच्छे अनगिनती कृष्ण फले हुए हैं—मुझ ऐसे। अर्थात् उस पूर्णब्रह्म रूपी वृक्ष से करोड़ों अवतार होते हैं और चले जाते हैं।

"कबीरदास का रुख निराकार की ओर था। श्रीकृष्ण की चर्चा होती तो कबीरदास कहते, उसे क्या भजूँ?—गोपियाँ तालियाँ पीटती थीं और वह बन्दर की तरह नाचता था। (हँसते हुए) मैं साकार-

वादियों के निकट साकार हूँ और निराकारवादियों के निकट निराकार।"

मणि (हँसकर)—जिनकी बात हो रही है वे (ईश्वर) जैसे अनन्त हैं आप भी वैसे ही अनन्त हैं!—आपका अन्त ही नहीं मिलता।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—वाह रे, तुम तो समझ गये! सुनो एकबार सब धर्म कर लेने चाहिए; सब मार्गों से आना चाहिए। खेलने की गोटी—सब घर बिना पार किये कहीं लाल होती है? गोटी जब लाल हो जाती है, तब कोई उसे नहीं छू पाता।

मणि — जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—योगी दो प्रकार के हैं—बहूदक और कुटीचक। जो साधु तीर्थों में घूम रहा है, जिसके मन को अभी तक शान्ति नहीं मिली, उसे बहूदक कहते हैं, और जिसने चारों ओर घूमकर मन को स्थिर कर लिया है—जिसे शान्ति मिल गई है—वह किसी एक जगह आसन जमा देता है, फिर नहीं हिलता। उसी एक ही जगह बैठे उसे आनन्द मिलता है। उसे तीर्थ जाने की कोई आवश्यकता नहीं। यदि वह तीर्थ जाय तो केवल उद्दीपना के लिए जाता है।

"मुझे एकबार सब धर्म करने पड़े थे,—हिन्दू, मुसलमान, क्रिस्तान,—इधर शाक्त, वैष्णव, वेदान्त, इन सब रास्तों से भी आना पड़ा है, ईश्वर वही एक है,—उन्हीं की ओर सब चल रहे हैं, भिन्न-भिन्न मार्गों से।

"तीर्थ करने गया तो कभी कभी बड़ी तकलीफ होती थी। काशी में मथुर बाबू (रानी रासमणि के तीसरे दामाद) आदि के साथ राजा बाबुओं की बैठक में गया। वहाँ देखा—सभी लोग विषयों की बातों में लगे हैं! रुपया, जमीन यही सब बातें। उनकी बातें सुनकर मैं रो पड़ा। माँ से कहा—माँ! तू मुझे कहाँ लाई? दक्षिणेश्वर में तो मैं बहुत अच्छा था। प्रयाग में देखा,—वही तालाब, वही दूब, वही पेड़ वही इमली के पत्ते!

"परन्तु तीर्थ में उद्दीपन अवश्य होता है। मथुर बाबू के साथ वृन्दावन गया। मथुर बाबू के घर की स्त्रियाँ भी थीं; हृदय (श्रीरामकृष्ण का भांजा) भी था। कालीयदमन घाट देखते ही उद्दीपना होती थी,—मैं विह्वल हो जाता था—हृदय मुझे यमुना के घाट में लड़के की तरह नहवाता था।

"सन्ध्या को यमुना के तट पर घूमने जाया करता था। यमुना के कछार से उस समय गायें चरकर लौटती थीं। देखते ही मुझे कृष्ण की उद्दीपना हुई, पागल की तरह दौड़ने लगा, यह कहते हुए—कहाँ कृष्ण, कृष्ण कहाँ?

"पालकी पर चढ़कर श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के रास्ते जा रहा हूँ, गोवर्द्धन देखने के लिए उतरा, गोवर्द्धन देखते ही बिलकुल विह्वल हो गया, दौड़कर गोवर्द्धन पर चढ़ गया; बाह्य ज्ञान जाता रहा। तब ब्रजवासी जाकर मुझे उतार लाए। श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के मार्ग का मैदान, पेड़-पौधे, हरिण और पक्षियों को देख विकल हो गया था; आंसुओं से कपड़े भीग गये थे। मन में यह आता था कि ऐ कृष्ण, यहाँ

सभी कुछ है, केवल तू ही नहीं दिखाई पड़ता। पालकी के भीतर बैठा था, परन्तु एक बात कहने की भी शक्ति नहीं थी, चुपचाप बैठा था। हृदय पालकी के पीछे आ रहा था। कहारों से उसने कह दिया था, खूब होशियार रहना।

"गङ्गामाई मेरी खूब देखभाल करती थी। उम्र बहुत थी। निधुवन के पास एक कुटी में अकेली रहती थी। मेरी अवस्था और भाव देखकर कहती थी, ये साक्षात् राधिका हैं—शरीर धारण करके आये हैं! मुझे दुलारी कहकर बुलाती थी। उसे पाते ही मैं खाना-पीना, घर लौटना सब भूल जाता था। कभी कभी हृदय वहीं भोजन ले जाकर मुझे खिला आता था। वह भी खाना पकाकर खिलाती थी।

"गङ्गामाई को भावावेश होता था। उसका भाव देखने के लिए लोगों की भीड़ जम जाती थी। भावावेश में एक दिन हृदय के कन्धे पर चढ़ी थी।

"गङ्गामाई के पास से देश लौटने की मेरी इच्छा न थी। वहाँ सब ठीक हो गया; मैं सिद्ध (भुँजिया) चावल का भात खाऊँगा, गङ्गामाई का बिस्तरा घर में एक ओर लगेगा, मेरा दूसरी ओर। सब ठीक हो गया। तब हृदय बोला, तुम्हें पेट की शिकायत है, कौन देखेगा? गङ्गामाई बोली—क्यों, मैं देखूँगी, मैं सेवा करूँगी। एक हाथ पकड़कर हृदय खींचने लगा और दूसरा हाथ पकड़कर गङ्गामाई। ऐसे समय माँ की याद आ गई! माँ अकेली काली मन्दिर के नौबतखाने में है। फिर न रहा गया, तब कहा—नहीं मुझे जाना होगा।

वृन्दावन का भाव बड़ा सुन्दर है। नये यात्री जाते हैं तो व्रज के लड़के कहा करते हैं, हरि बोलो—गठरी खोलो।"

दिन के ग्यारह बजे बाद श्रीरामकृष्ण ने काली का प्रसाद पाया। दोपहर को कुछ आराम करके धूप ढलने पर फिर भक्तों के साथ वार्तालाप करने लगे, बीच बीच में रह रहकर प्रणव-नाद या 'हा चैतन्य' उच्चारण कर रहे हैं।

कालीबाड़ी में सन्ध्या की आरती होने लगी। आज विजया दशमी है, श्रीरामकृष्ण कालीघर में आए हैं। माता को प्रणाम करके भक्तजन श्रीरामकृष्ण की पदधूलि ग्रहण करने लगे। रामलाल ने काली जी की आरती की है। श्रीरामकृष्ण रामलाल को बुलाने लगे—'कहाँ हो रामलाल!'

काली जी को 'विजया' निवेदित की गई है। श्रीरामकृष्ण उस प्रसाद को छूकर उसे देने के लिए ही रामलाल को बुला रहे हैं। अन्य भक्तों को भी कुछ कुछ देने को कह रहे हैं।

(३)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में बलराम आदि के साथ।

आज मङ्गलवार है, दिन का पिछला पहर, २४ अक्टूबर। तीन चार बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण मिठाई के ताक के पास खड़े हैं। बलराम और मास्टर कलकत्ते से एक ही गाड़ी पर चढ़कर आए हैं और प्रणाम कर रहे हैं। प्रणाम करके बैठने पर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कहने लगे, 'ताक पर से कुछ मिठाई लेने गया था, मिठाई पर हाथ रखा ही था कि एक छिपकली बोल उठी, तुरन्त हाथ हटा लिया!' (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण—यह सब मानना चाहिए। देखो न, राखाल बीमार पड़ गया; मेरे भी हाथों-पैरों में दर्द हो रहा है। क्या हुआ सुनो। सुबह को मैंने उठते ही राखाल आ रहा है, यह सोचकर अमुक का मुख देख लिया था। (सब हँसते हैं।) हाँ जी, लक्षण भी देखना चाहिए। उस दिन नरेन्द्र एक काने लड़के को लाया था,—उसका मित्र है, आँख बिलकुल कानी नहीं थी; जो हो, मैंने सोचा,—नरेन्द्र यह आफत का पुतला कहाँ से लाया!

"और एक आदमी आता है; मैं उसके हाथ की कोई चीज़ नहीं खा सकता। वह आफिस में काम करता है, बीस रुपया महीना पाता है और बीस रुपया न जाने कैसा झूठा बिल लिखकर पाता है। वह झूठ बोलता है, इसलिए आने पर उससे बहुत नहीं बोलता। कभी तो दो दो चार चार दिन आफिस जाता ही नहीं, यहीं पड़ा रहता है। किस मतलब से, जानते हो?—मतलब यह कि किसी से कह सुन दूँ तो दूसरी जगह नौकरी हो जाय।"

बलराम का वंश परम वैष्णवों का वंश है। बलराम के पिता वृद्ध हो गये हैं,—परम वैष्णव हैं। सिर पर शिखा है, गले में तुलसी की माला है, हाथ में सदा ही माला लिए जप करते रहते हैं। उड़ीसा में इनकी बहुत बड़ी ज़मींदारी है और कोठार, श्रीवृन्दावन तथा और भी कई जगह श्रीराधा-कृष्ण विग्रह की सेवा होती है और धर्मशाला भी है। बलराम अभी पहले पहल आने लगे हैं। श्रीरामकृष्ण बातों बातों में उन्हें उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—उस दिन अमुक आया था। सुना है, उस काली

कमबख्ती स्त्री का गुलाम है।—ईश्वर-दर्शन क्यों नहीं होते? क्योंकि बीच में कामिनी-कांचन की आड़ जो है।

"अच्छा कहो तो मेरी क्या अवस्था है। उस देश (अपनी जन्म-भूमि) को जा रहा था, वर्दवान से उतरकर,—बैलगाड़ी पर बैठा था—ऐसे समय ज़ोर की आँधी चली और पानी बरसने लगा। इधर न जाने कहाँ से गाड़ी के पीछे आदमी आ गये। मेरे साथी कहने लगे, ये डाकू हैं। तब मैं ईश्वर का नाम जपने लगा, परन्तु कभी तो राम राम जपता और कभी काली काली, कभी हनुमान हनुमान,—सब तरह से जपने लगा, कहो तो यह क्या है!"

(बलराम से)—"कामिनी-कांचन ही माया है। इसके भीतर अधिक दिन तक रहने से होश चला जाता है,—यह जान पड़ता है कि खूब मज़े में है। मेहतर विष्ठा का भार ढोता है। ढोते ढोते फिर घृणा नहीं होती। भगवन्नाम-गुण-कीर्तन का अभ्यास करने ही से भक्ति होती है। (मास्टर से) इसमें लजाना नहीं चाहिए। लज्जा, घृणा और भय-इन तीनों के रहते ईश्वर नहीं मिलते।

"उस देश में बड़ा अच्छा कीर्तन करते हैं,—खोल (पखावज) लेकर कीर्तन करते हैं। नकूड़ आचार्य का गाना बड़ा अच्छा है। वृन्दा-वन में तुम्हारे यहाँ की सेवा होती है?"

बलराम—जी हाँ, एक कुञ्ज है—श्याम सुन्दर की सेवा होती है।

श्रीरामकृष्ण—मैं वृन्दावन गया था। निधुवन बड़ा सुन्दर स्थान है।

परिच्छेद ८

श्री केशवचन्द्र सेन के साथ श्रीरामकृष्ण

(१)

समाधि में।

आज शरद् पूर्णिमा है। लक्ष्मीजी की पूजा है। शुक्रवार, २७ अक्टूबर, १८८२। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर के उसी पूर्व-परिचित मकान में बैठे हैं। विजय गोस्वामी और हरलाल से बातचीत कर रहे हैं। एक आदमी ने आकर कहा, केशव सेन जहाज़ पर चढ़कर घाट में आए हैं। केशव के शिष्यों ने प्रणाम करके कहा—'महाराज, जहाज़ आया है, आपको चलना होगा; चलिये, ज़रा घूम आइयेगा। केशव बाबू जहाज़ में हैं, हमें भेजा है।'

शाम के चार बज गए हैं। श्रीरामकृष्ण नाव पर होते हुए जहाज़ पर चढ़ रहे हैं। साथ विजय हैं। नाव पर चढ़ते ही बाह्यज्ञानरहित समाधिमग्न हो गये। मास्टर जहाज़ में खड़े खड़े यह समाधिचित्र देख रहे हैं। वे दिन के तीन बजे केशव के साथ जहाज़ पर चढ़कर कलकत्ते से आए हैं, बड़ी इच्छा है, श्रीरामकृष्ण और केशव का मिलन, उनका आनन्द और उनकी बातें सुनेंगे। केशव ने अपने साधुचरित्र और वक्तृता के बल से मास्टर जैसे अनेक वङ्गीय युवकों का मन हर लिया है। अनेकों ने उन्हें अपना परम आत्मीय जानकर अपने हृदय का प्यार समर्पित कर दिया है। केशव अंग्रेजी जानते हैं, अंग्रेजी दर्शन

और साहित्य जानते हैं। फिर बहुत बार देव-देवियों की पूजा को पौत्तलिकता भी कहा है। इस प्रकार के मनुष्य श्रीरामकृष्ण को भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं, और बीच बीच में दर्शन करने आते हैं। यह बात अवश्य विस्मयजनक है। उनके मन में मेल कहाँ और किस प्रकार हुआ, यह रहस्य भेद करने में मास्टर आदि अनेकों को कौतूहल हुआ है। श्रीरामकृष्ण निराकारवादी तो हैं, किन्तु साकारवादी भी हैं। ब्रह्म का स्मरण करते हैं। और फिर देव-देवियों के सामने पुष्प-चन्दन से पूजा और प्रेम से मत वाले होकर नृत्यगीत भी करते हैं। खाट और बिछौने पर बैठते हैं, लाल धारीदार धोती, कुर्ता, मोजा, जूता पहनते हैं; परन्तु संसार से स्वतन्त्र हैं। सारे भाव संन्यासियों के से हैं, इसीलिए लोग परमहंस कहते हैं। इधर केशव निराकारवादी हैं; स्त्रीपुत्रवाले गृही हैं, अंग्रेजी में व्याख्यान देते हैं; अखबार लिखते हैं। विषयकर्मों की देखरेख भी करते हैं।

केशव आदि ब्राह्मभक्त जहाज़ पर से मन्दिर की शोभा देख रहे हैं। जहाज़ की पूर्व ओर पास ही बँधा घाट और ठाकुर मन्दिर का चाँदनीमण्डप है। आरोहियों की बाईं ओर—चाँदनीमण्डप के उत्तर, बारह शिवमन्दिर में से छः मन्दिर हैं। दक्षिण ओर भी छः मन्दिर हैं। शरद् के नील आकाश के चित्रपट पर भवतारिणी के मन्दिर के शिरोभाग दीखते हैं। एक नौबतखाना बकुलतला के पास है और कालीमन्दिर के दक्षिण प्रान्त में एक और नौबतखाना है। दोनों नौबतखानों के बीच में बगीचे का रास्ता है जिसके दोनों ओर कतार के कतार फूलों के पेड़ लगे हैं। शरद्काल के आकाश की नीलिमा श्रीगङ्गा के वक्ष पर पड़कर अपूर्व शोभा दे रही है। बाहरी संसार में भी कोमल

भाव हैं और ब्राह्मभक्तों के हृदय में भी कोमल भाव हैं। ऊपर सुन्दर नील अनन्त आकाश है, सामने सुन्दर ठाकुरबाड़ी है, नीचे पवित्रसलिला गङ्गा हैं जिनके किनारे आर्यऋषियों ने परमात्मा का स्मरण-मनन किया है। फिर से एक महापुरुष आए हैं, जो साक्षात् सनातन धर्म हैं। इस प्रकार के दर्शन मनुष्यों को सर्वदा नहीं होते। समाधिमग्न ऐसे महापुरुष पर किसकी भक्ति नहीं होती, ऐसा कौन कठोर मनुष्य है जो द्रवीभूत न होगा?

(२)

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥

गीता, २-२२

समाधि में। आत्मा अविनश्वर। पवहारी बाबा।

नाव आकर जहाज़ से लगी। सभी श्रीरामकृष्ण को देखने के लिये उत्सुक हो रहे हैं। अच्छी भीड़ है। श्रीरामकृष्ण को निर्विघ्न उतारने के लिए केशव आदि व्यग्र हो रहे हैं। बड़ी मुश्किल से उन्हें होश में लाकर घर के भीतर ले गये। अभी तक भावस्थ हैं, एक भक्त का सहारा लेकर चल रहे हैं। सिर्फ पैर हिल रहे हैं। कैबिन घर में आपने प्रवेश किया। केशव आदि भक्तों ने प्रणाम किया किन्तु उन्हें होश नहीं। घर के भीतर एक मेज़ और कुछ कुर्सियाँ हैं। एक कुर्सी पर श्रीरामकृष्ण बैठाये गये, एक पर केशव बैठे। विजय बैठे। दूसरे भक्त फर्श पर बैठ गये। अनेक मनुष्यों को जगह नहीं मिली। वे सब बाहर से झाँक झाँककर देखने लगे। श्रीरामकृष्ण बैठे हुए फिर समाधिस्थ हो गये, सम्पूर्ण बेहोश रहे। सभी एक नज़र से देख रहे हैं।

केशव ने देखा कि घर के भीतर बहुत आदमी हैं और श्रीरामकृष्ण को तकलीफ हो रही है। विजय केशव को छोड़कर साधारण ब्राह्मसमाज में चले गये हैं और उनकी कन्या के विवाह आदि के विरुद्ध कितनी ही वक्तृताएँ दी हैं; इसलिए विजय को देखकर केशव कुछ अनमने हो गये। वे आसन छोड़कर उठे, घर के झरोखे खोल देने के लिए।

ब्राह्मभक्त टकटकी लगाए श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी, परन्तु अभी तक भाव पूरी मात्रा में वर्तमान है। श्रीरामकृष्ण आपही आप अस्फुट स्वरों में कहते हैं— 'माँ, मुझे यहाँ क्यों लाई? मैं क्या इन लोगों की घेरे के भीतर से रक्षा कर सकूँगा?'

श्रीरामकृष्ण शायद देख रहे हैं कि संसारी जीव घेरे के भीतर बन्द हैं, बाहर नहीं आ सकते, बाहर का उजेला भी नहीं देख पाते, सब के हाथ पैर सांसारिक कामों से बँधे हैं। केवल घर के भीतर की वस्तु उन्हें देखने को मिलती है। वे सोचते हैं कि जीवन का उद्देश्य केवल शरीर-सुख और विषय-कर्म—काम और कांचन—है। क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'माँ, मुझे यहाँ क्यों लाई? मैं क्या इन लोगों की घेरे के भीतर से रक्षा कर सकूँगा?'

धीरे धीरे श्रीरामकृष्ण को बाह्यज्ञान हुआ। गाज़ीपुर के नीलमाधव बाबू और एक ब्राह्मभक्त ने पवहारी बाबा की बात चलाई।

ब्राह्मभक्त—महाराज, इन लोगों ने पवहारी बाबा को देखा है। वे गाज़ीपुर में रहते हैं, आपकी तरह एक और हैं।

श्रीरामकृष्ण अभी तक बातचीत नहीं कर सकते हैं, सुनकर सिर्फ मुसकराए।

ब्राह्मभक्त (श्रीरामकृष्ण से)—महाराज, पवहारी बाबा ने अपने घर में आपका फोटोग्राफ रखा है ।

श्रीरामकृष्ण ज़रा हँसकर अपनी देह की ओर उंगली दिखाकर बोले—' यह खाँचा ! '

(३)

यत् सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते ।
एकं सांख्यञ्च योगञ्च यः पश्यति स पश्यति ।।गीता, ५।५

ज्ञानयोग, भक्तियोग तथा कर्मयोग का समन्वय ।

' तकिया और उसका गिलाफ । देही और देह । श्रीरामकृष्ण क्या कहते हैं कि देह नश्वर है, नहीं रहेगी । देह के भीतर जो देही है वह अविनाशी है, अतएव देह का फोटोग्राफ लेकर क्या होगा ? देह अनित्य वस्तु है, इसके आदर से क्या होगा ! बल्कि जो भगवान् अन्तर्यामी हैं, मनुष्य के हृदय में विराजमान हैं, उन्हीं की पूजा करनी चाहिए ।

श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हुए । वे कह रहे हैं,—" परन्तु एक बात है । भक्तों के हृदय में वे विशेष रूप से रहते हैं । जैसे कोई ज़मींदार अपनी ज़मींदारी में सभी जगह रह सकता है । परन्तु वे अमुक बैठक में प्रायः रहते हैं, यही लोग कहा करते हैं । भक्तों का हृदय भगवान का बैठकघर है ।

" जिन्हें ज्ञानी ब्रह्म कहते हैं, योगी उन्हीं को **आत्मा** कहते हैं और भक्त उन्हें **भगवान्** कहते हैं ।

"एक ही ब्राह्मण है। जब पूजा करता है, तब उसका नाम पुजारी है, जब भोजन पकाता है तब उसे रसोइया कहते हैं। जो ज्ञानी है, ज्ञानयोग जिसका अवलम्बन है, वह 'नेति नेति' विचार करता है, —ब्रह्म न यह है न वह, न जीव है, न जगत्। विचार करते करते जब मन स्थिर होता है, मन का नाश होता है, समाधि होती है, तब ब्रह्मज्ञान होता है। ब्रह्मज्ञानी की सत्य धारणा है कि ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या। नामरूप स्वप्नतुल्य है, ब्रह्म क्या है यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। वे व्यक्ति हैं (Personal God), यह भी नहीं कहा जा सकता।

"ज्ञानी उसी प्रकार कहते हैं जैसे वेदान्तवादी। परन्तु भक्तगण सभी अवस्थाओं को लेते हैं। वे जाग्रत अवस्था को भी सत्य कहते हैं; जगत् को स्वप्नवत् नहीं कहते। भक्त कहते हैं, यह संसार भगवान् का ऐश्वर्य है; आकाश, नक्षत्र, चन्द्र, सूर्य, पर्वत, समुद्र, जीवजन्तु आदि सभी भगवान् की सृष्टि है। भक्त की इच्छा चीनी खाने की है, चीनी होने की नहीं। (सब हँसते हैं।)

"भक्त का भाव कैसा है, जानते हो? तुम प्रभु हो, मैं तुम्हारा दास हूँ, तुम माता हो, मैं तुम्हारी सन्तान हूँ, और यह भी कि तुम मेरे पिता या माता हो, तुम पूर्ण हो, मैं तुम्हारा अंश हूँ, भक्त यह कहने की इच्छा नहीं करता कि मैं ब्रह्म हूँ।

"योगी भी परमात्मा के दर्शन करने की चेष्टा करता है। उद्देश्य जीवात्मा और परमात्मा का योग है। योगी विषयों से मन को खींच लेता है और परमात्मा में मन लगाने की चेष्टा करता है। इसीलिए

पहले पहल निर्जन में स्थिर आसन साधकर अनन्य मन से ध्यान-चिन्तन करता है।

"परन्तु वस्तु एक ही है। केवल नाम का भेद है। जो ब्रह्म हैं, वही आत्मा हैं, वही भगवान् हैं। ब्रह्मज्ञानियों के लिए ब्रह्म, योगियों के लिए परमात्मा और भक्तों के लिए भगवान्।"

४

त्वमेव सूक्ष्मा त्वं स्थूला व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी।
निराकारापि साकारा कस्त्वां वेदितुमर्हति॥

महानिर्वाणतंत्र, ४।१५

वेद तथा तंत्र का समन्वय: आद्या शक्ति का ऐश्वर्य।

इधर जहाज़ कलकत्ते की ओर जा रहा है, उधर कमरे के भीतर जो लोग श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर रहे हैं और उनकी अमृतमयी वाणी सुन रहे हैं, वे नहीं जानते कि जहाज़ चल रहा है या नहीं। भौंरा फूल पर बैठने पर फिर क्या भनभनाता है!

धीरे धीरे जहाज़ दक्षिणेश्वर छोड़कर देवालयों के चित्ताकर्षक दृश्यों के बाहर हो गया। चलते हुए जहाज़ से मथा हुआ गंगाजल फेनमय तरंगों से भर गया और उससे आवाज़ होने लगी। परन्तु यह आवाज भक्तों के कानों तक नहीं पहुँची। वे तो मुग्ध होकर देखते हैं केवल हँसमुख आनन्दमय प्रेमरञ्जित-नेत्रवाले एक अपूर्व योगी को, वे मुग्ध होकर देखते हैं सर्वत्यागी एक प्रेमी विरागी को, जो ईश्वर छोड़ और कुछ नहीं जानते। श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—वेदान्तवादी ब्रह्मज्ञानी कहते हैं, सृष्टि, स्थिति, प्रलय, जीव, जगत् यह सब शक्ति का खेल है। विचार करने पर यह सब स्वप्नवत् जान पड़ता है; ब्रह्म ही वस्तु है और सब अवस्तु; शक्ति भी स्वप्नवत् अवस्तु है।

"परन्तु चाहे लाख विचार करो, बिना समाधि में लीन हुए शक्ति के इलाके के बाहर जाने का सामर्थ्य नहीं। मैं ध्यान कर रहा हूँ,—मैं चिन्तन कर रहा हूँ,—यह सब शक्ति के इलाके के अन्दर है—शक्ति के ऐश्वर्य के भीतर है।

"इसलिए ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। एक को मानिये तो दूसरे को भी मानना पड़ता है। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। अग्नि को मानिये तो दाहिका शक्ति को भी मानना पड़ेगा। सूर्य को अलग करके उसकी किरणों की चिन्ता नहीं की जा सकती, न किरणों को छोड़कर कोई सूर्य को ही सोच सकता है।

"दूध कैसा है?—सफेद। दूध को छोड़कर दूध की धवलता नहीं सोची जा सकती और न बिना धवलता के दूध ही सोचा जा सकता है।

"इसीलिए ब्रह्म को छोड़कर न शक्ति को कोई सोच सकता है और न शक्ति को छोड़ ब्रह्म को। उसी प्रकार नित्य को छोड़कर न लीला को कोई सोच सकता है और न लीला को छोड़कर नित्य को।

"आद्या शक्ति लीलामयी है। वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करती हैं। उन्हीं का नाम काली है। काली ही ब्रह्म हैं, ब्रह्म ही काली हैं।

"एक ही वस्तु है। जब वे निष्क्रिय हैं, सृष्टि-स्थिति-प्रलय का कोई काम नहीं करते, यह बात जब सोचता हूँ तब उन्हें ब्रह्म कहता हूँ और जब वे ये सब काम करते हैं, तब उन्हें काली कहता हूँ—शक्ति कहता हूँ। एक ही व्यक्ति है, भेद सिर्फ नाम और रूप में है।

"जिस प्रकार जल, 'Water' और 'पानी'। एक तालाब में तीन चार घाट हैं। एक घाट में हिन्दू पानी पीते हैं,—वे 'जल' कहते हैं; एक घाट में मुसलमान पानी पीते हैं,—वे 'पानी' कहते हैं और एक घाट में अंग्रेज़ पानी पीते हैं,—वे 'Water' कहते हैं। तीनों एक हैं, भेद केवल नामों में है। उन्हें कोई 'अल्ला' कहता है, कोई 'God' कहता है, कोई 'ब्रह्म,' कोई 'काली,' कोई 'राम' हरि, ईसा, दुर्गा—आदि।"

केशव (सहास्य)—तो यह कहिये कि काली कितने भावों से लीला कर रही हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—वे अनेकानेक भावों से लीला कर रही हैं। वे ही महाकाली, नित्यकाली, स्मशानकाली, रक्षाकाली और श्यामाकाली हैं। महाकाली और नित्यकाली की बात तंत्रों में है। जब सृष्टि नहीं हुई थी, सूर्य-चन्द्र, ग्रह-पृथ्वी आदि नहीं थे,—घोर अन्धकार था, तब केवल माँ निराकार महाकाली महाकाल के साथ विराज रही थीं।

"श्यामाकाली का बहुत कुछ कोमल भाव है,—वराभय-दायिनी हैं। गृहस्थों के घर उन्हीं की पूजा होती है। जब अकाल, महामारी, भूकम्प, अनावृष्टि, अतिवृष्टि होती है, तब रक्षाकाली की पूजा की जाती

है। श्मशानकाली की संहारमूर्ति है, शव-शिवा-डाकिनी-योगिनियों के बीच, श्मशान में रहती हैं। रुधिरधारा, गले में मुण्डमाला, कटि में नर-हस्तों का कमरबन्द। जब संसार का नाश होता है, तब माँ सृष्टि के बीज इकट्ठे कर लेती हैं। घर की गृहिणी के पास जिस प्रकार एक हण्डी रहती है और उसमें तरह तरह की चीजें रखी रहती हैं। (केशव तथा और लोग हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हाँ जी, गृहिणियों के पास इस तरह की एक हण्डी रहती है। उसमें वे समुद्रफेन, नील का डला, खीरे, कोहड़े आदि के बीज छोटी छोटी गठरियों में बाँधकर रख देती हैं और ज़रूरत पड़ने पर निकालती हैं। माँ ब्रह्ममयी सृष्टिनाश के बाद इसी प्रकार सब बीज इकट्ठे कर लेती हैं। सृष्टि के बाद आद्याशक्ति संसार के भीतर ही रहती हैं। वे संसार प्रसव करती हैं; फिर संसार के भीतर रहती हैं। वेदों में 'ऊर्णनाभ' की बात है; मकड़ी और उसका जाला। मकड़ी अपने भीतर से जाला निकालती है और उसी के ऊपर रहती भी है। ईश्वर संसार के आधार और आधेय दोनों हैं।

"काली का रंग काला थोड़े ही है। दूर है, इसी से काला जान पड़ता है; समझ लेने पर काला नहीं रहता।

"आकाश दूर से नीला दिखाई पड़ता है। पास जाकर देखो तो कोई रंग नहीं। समुद्र का पानी दूर से नीला जान पड़ता है, पास जाकर चुल्लू में लेकर देखो, कोई रङ्ग नहीं।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम से मतवाले होकर गाने लगे—भाव यह है—मेरी माँ क्या काली है? दिगम्बरी का काला रूप हृदय-पद्म को प्रकाशपूर्ण करता है।

(५)

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥ गीता, ७।१३

यह संसार क्यों है ?

श्रीरामकृष्ण (केशव आदि से)—बन्धन और मुक्ति दोनों ही की कर्त्री वे हैं। उनकी माया से संसारी जीव काम-कांचन में बँधा है और फिर उनकी दया होते ही वह छूट जाता है। वे 'भवबन्धन की फाँस काटने वाली तारिणी' हैं। यह कहकर गन्धर्वकण्ठ से भक्त रामप्रसाद का गीत गाने लगे जिसका आशय यह है:—

"श्यामा माँ, संसार-रूपी बाजार के बीच तू पतंग उड़ा रही है। यह आशा-वायु के सहारे उड़ता है। इसमें माया की डोर लगी हुई है। विषयों के माँझे से यह कर्रा हो गई है। लाखों में से दो ही एक (पतंग) कटते हैं और तब तू हँसकर तालियाँ पीटती है"—इत्यादि।

"वे लीलामयी हैं। यह संसार उनकी लीला है। वे इच्छामयी, आनन्दमयी हैं, लाख आदमियों में कहीं एक को मुक्त करती हैं।"

ब्राह्मभक्त—महाराज, वे चाहें तो सभी को मुक्त कर सकती हैं, तो फिर क्यों हम लोगों को संसार में बाँध रखा है?

श्रीरामकृष्ण—उनकी इच्छा! उनकी इच्छा कि वे यह सब लेकर खेल करें। छुई-छुऔअल खेलने वाले सभी लड़के अगर ढाई को दौड़कर छू लें तो खेल ही बन्द हो जाय; और यदि सभी छू लें तो ढाई नाराज भी

होती है। खेल चलता है तो ढाई खुश रहती है। इसीलिए कहते हैं— लाखों में से दो ही एक कटते हैं और तब तू हँसकर तालियाँ पीटती है। (सब प्रसन्न होते हैं।)

"उन्होंने मन को आँखों के इशारे कह दिया है—'जा, संसार में विचर।' मन का क्या कसूर है? वे यदि फिर कृपा करके मन को फेर दें तो विषय-बुद्धि से छुटकारा मिले; तो फिर उनके पादपद्मों में मन लगे।"

श्रीरामकृष्ण संसारियों के भावों में अभिमान करके गाने लगे:—

(भावार्थ)

"मैं यह खेद करता हूँ कि तुम ऐसी माँ के रहते, मेरे जागते हुए भी, घर में चोरी हो! मन में होता है कि तुम्हारा नाम लूँ, परन्तु समय टल जाता है। मैंने समझा है, जाना है और मुझे आशय भी मिला है कि यह सब तुम्हारी ही चातुरी है। तुमने न कुछ दिया, न पाया; न लिया, न खाया; यह क्या मेरा ही कसूर है? यदि देतीं तो पातीं, लेतीं और खातीं, मैं भी तुम्हारा ही तुम्हें देता और खिलाता। यश, अपयश सुरस, कुरस, सभी रस तुम्हारे हैं। रसेश्वरी! रस में रहकर यह रसभङ्ग क्यों? प्रसाद कहता है—तुम्हीं ने मन को पैदा करते समय इशारा कर दिया है। तुम्हारी यह सृष्टि किसी की कुदृष्टि से जल गई है, पर हम उसे मीठी समझकर भटक रहे हैं।"

"उन्हीं की माया से भूलकर मनुष्य संसारी हुआ है। प्रसाद कहता है, तुम्हींने मन को पैदा करते समय इशारा कर दिया है।"

कर्मयोग संसार तथा निष्काम कर्म ।

ब्राह्मभक्त—महाराज, बिना सब त्याग किए क्या ईश्वर नहीं मिलते ?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—नहीं जी, तुम लोगों को सब कुछ क्यों त्याग करना होगा ? तुम लोग तो बड़े अच्छे हो, इधर भी हो और उधर भी, आधा खाँड़ और आधा शिरा ! (लोग हँसते हैं ।) बड़े आनन्द में हो । नक्स का खेल जानते हो ? मैं ज्यादा काटकर जल गया हूँ । तुम-लोग बड़े सयाने हो, कोई दस में हो, कोई छः में, कोई पाँच में । तुमने ज्यादा नहीं काटा, इसीलिए मेरी तरह जल नहीं गए । खेल चल रहा है । यह तो अच्छा है । (सब हँसे ।)

"सच कहता हूँ, तुम लोग गृहस्थी में हो, इसमें कोई दोष नहीं । बस, मन ईश्वर की ओर रखना चाहिए । नहीं तो न होगा । एक हाथ से काम करो और एक हाथ से ईश्वर को पकड़े रहो । काम खतम हो जाने पर दोनों हाथों से ईश्वर को पकड़ लेना ।

"सब कुछ मन पर निर्भर है । मन ही से बद्ध है और मन ही से मुक्त । मन पर जो रंग चढ़ाओगे उसी से वह रंग जायगा । जैसे रंगरेज के घर के कपड़े, लाल रंग से रंगो तो लाल; हरे से रंगो तो हरे; सब्ज से रंगो, सब्ज; जिस रंग से रंगो वही रंग चढ़ जायगा । देखो न, अगर कुछ अंग्रेज़ी पढ़ लो तो मुँह में अंग्रेजी शब्द ही आते हैं । फूट् फट् इट् मिट् । (सब हँसे ।) और पैरों में बूट जूता, सीटी बजाकर गाना—ये सब आ जाते हैं और पण्डित संस्कृत पढ़े तो श्लोक आवृत्ति करने लगता है ! मन को यदि कुसंग में

रखो तो वैसी ही बातचीत—वैसी ही चिन्ता हो जायगी। यदि भक्तों के साथ रखो तो ईश्वरचिन्तन, भगवत्प्रसङ्ग—ये सब होंगे।

"मन ही को लेकर सब कुछ है। एक ओर स्त्री है और एक ओर सन्तान। स्त्री को एक भाव से और सन्तान को दूसरे भाव से आदर करता है, किन्तु है एक ही मन।"

परिच्छेद ९

श्री शिवनाथ आदि ब्राह्म भक्तों के संग में

(१)

उत्सव मन्दिर ।

परमहंसदेव सींती का ब्राह्मसमाज देखने आये हैं। २८ अक्टूबर १८८२ ई०, शनिवार, आश्विन की कृष्णा द्वितीया है।

आज यहाँ ब्राह्मसमाज के छठे महीने का उत्सव होगा । इसीलिए भगवान् श्रीरामकृष्ण को निमंत्रण देकर बुलाया है। दिन के तीन-चार बजे का समय है, परमहंसदेव कई भक्तों के साथ गाडी पर चढ़कर दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर से श्रीयुत बेणीमाधव पाल के मनोहर बगीचे में पहुँचे हैं। इसी बगीचे में ब्राह्मसमाज का अधिवेशन हुआ करता है। ब्राह्मसमाज को वे बहुत प्यार करते हैं। ब्राह्मभक्त भी उन्हें बड़ी श्रद्धा-भक्ति से देखते हैं । अभी कल ही शुक्रवार के दिन, पिछले पहर आप, केशव सेन और उनके शिष्यों के साथ जहाज़ पर चढ़कर हवा-खोरी को निकले थे।

सींती पाइकपाड़ा के पास है। कलकत्ते से तीन मील उत्तर। स्थान निर्जन और मनोहर है; ईश्वरोपासना के लिए अत्यन्त उपयोगी है। बगीचे के मालिक साल में दो दफे उत्सव मनाते हैं। एक बार शरत्काल में और एक बार वसन्त में; इस महोत्सव में वे कलकत्ते और सींती के आसपास के ग्रामवासी भक्तों को निमंत्रण देते हैं। अतएव

आज कलकत्ते से शिवनाथ आदि भक्त आए हैं। इनमें से अनेक प्रातःकाल की उपासना में सम्मिलित हुए थे। वे सब सायंकालीन उपासना की प्रतीक्षा कर रहे हैं। विशेषतः उन लोगों ने सुना है कि अपराह्न में महापुरुष का आगमन होगा, अतएव इनकी आनन्द-मूर्ति देखेंगे,—इनका हृदय-मुग्धकारी वचनामृत पान करेंगे,—मधुर संकीर्तन सुनेंगे और देखेंगे भगवत्-प्रेममय देवदुर्लभ नृत्य।

शाम को बगीचे में आदमी ठसाठस भर गये हैं। कोई लतामण्डप की छाया में बेंच पर बैठा हुआ है, कोई सुन्दर तालाब के किनारे मित्रों के साथ घूम रहा है। कितने ही तो समाजगृह में पहले ही से मनमाने आसन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण के आने की बाट जोह रहे हैं। चारों ओर आनन्द उमड़ रहा है। शरद् के नील आकाश में भी आनन्द की छाया झलक रही है। बाग के फूलों से लदे हुए पेड़ों और लताओं से छनकर आती हुई हवा भक्तों के हृदय में आनन्द का एक झोंका लगा जाती है। सारी प्रकृति मानो मधुर स्वर से गा रही है—'आज हर्ष शीतल-समीर भरते भक्तों के उर में हैं विभु।' सभी उत्कण्ठित हो रहे हैं, ऐसे समय परमहंसदेव की गाड़ी आकर समाजगृह के सामने खड़ी हो गई।

सभी ने उठकर महापुरुष का स्वागत किया। वे आये हैं—सुनते ही लोगों ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया।

समाजगृह के प्रधान कमरे में वेदी बनाई गई है। वह जगह आदमियों से भर गई है। सामने दालान है; वहाँ परमहंसदेव बैठे हैं; वहाँ भी लोग जम गये हैं। दालान के दोनों ओर दो कमरे हैं—वहाँ भी लोग हैं,—सभी दरवाज़े पर खड़े हुए बड़े चाव से परमहंसदेव को देख रहे हैं।

दालान पर चढ़ने की सीढ़ियाँ बराबर दालान के एक छोर से दूसरे छोर तक हैं। इन सीढ़ियों पर भी अनेक लोग खड़े हैं। वहाँ से कुछ दूर पेड़ों और लतामण्डपों के नीचे रखी हुई बेंचों पर से लोग महापुरुष के दर्शन कर रहे हैं।

श्री परमहंसदेव ने हँसते हुए आसन ग्रहण किया। सबकी दृष्टि एक साथ उनकी आनन्दमूर्ति पर जा गिरी। जब तक रंगमंच पर खेल शुरू नहीं होता तब तक दर्शक-वृन्दों में से कोई तो हँसता है कोई विषयचर्चा छेड़ता है, कोई पान खाता है, कोई सिगरेट पीता है; परन्तु ड्रापसीन उठते ही सब लोग अनन्यचित्त होकर खेल देखने लगते हैं।

(२)

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते। गीता, १४। २६

भक्त-सम्भाषण। मनुष्य प्रकृति तथा तीन गुण।

हँसमुख श्रीरामकृष्ण शिवनाथ आदि भक्तों की ओर स्नेह की दृष्टि फेरते हुए कहते हैं,—क्या शिवनाथ! तुम भी आये हो? देखो तुम लोग भक्त हो, तुम लोगों को देखकर बड़ा आनन्द होता है। गंजेड़ी का स्वभाव होता है कि दूसरे गंजेड़ी को देखते ही वह खुश हो जाता है; कभी तो उसे गले भी लगा लेता है। (शिवनाथ तथा अन्य सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण—जिन्हें मैं देखता हूँ कि मन ईश्वर पर नहीं है,

उनसे कहता हूँ—'तुम कुछ देर वहाँ जाकर बैठो।' या कह देता हूँ, 'जाओ इमारतें देखो' (रानी रासमणि के मन्दिरों को लक्ष्य करके कहते हैं)। (सब हँसे।)

"कभी तो देखा है कि भक्तों के साथ डरपोक आदमी आए हैं। उनमें बड़ी विषयबुद्धि रहती है। ईश्वरी चर्चा नहीं सुहाती। भक्त तो बड़ी देर तक मुझसे ईश्वरी वार्तालाप करते हैं, पर वे लोग उधर बैठे नहीं रह सकते; तड़फड़ाते हैं। बार बार कानों में फिसफिसाते हुए कहते हैं, 'कब चलोगे—कब चलोगे।' उन्होंने अगर कहा, 'ठहरो भी, ज़रा देर बाद चलते हैं' तो इन लोगों ने रूठकर कहा, 'तो तुम बातचीत करो हम नाव पर चलकर बैठते हैं।' (सब हँसे।)

"संसारी मनुष्यों से यदि कहो कि सब छोड़छाड़कर ईश्वर के पादपद्मों में मन लगाओ तो वे कभी न सुनेंगे। यही कारण है कि **गौरांग और नित्यानन्द** दोनों भाइयों ने आपस में विचार करके यह व्यवस्था की—'मागुर माछेर झोल (मागुर मछली की रसदार तरकारी), युवती मेयेर कोल (युवती स्त्री का अंक), बोल हरि बोल।' प्रथम दोनों के लोभ से बहुत आदमी 'हरि बोल' में शामिल होते थे। फिर तो हरिनामामृत का कुछ स्वाद पाते ही वे समझ जाते थे कि 'मागुर माछेर झोल' और कुछ नहीं है,—ईश्वर प्रेम के जो आँसू उमड़ते हैं,—वही है; और युवती स्त्री है पृथ्वी—'युवती स्त्री का अंक' अर्थात् भगवत्-प्रेम के कारण धूलि में लोटपोट हो जाना।

"नित्यानन्द किसी तरह **हरिनाम** करा लेते थे। चैतन्यदेव ने कहा है, ईश्वर के नामों का बड़ा माहात्म्य है। फल जल्दी न मिलने

पर भी कभी न कभी अवश्य प्राप्त होगा। जैसे, कोई पक्के मकान की चार दीवार पर बीज रखा गया था; बहुत दिनों के बाद जब मकान गिर गया—मिट्टी में मिल गया तब भी, उस बीज से पेड़ पैदा हुआ और उसमें फल भी लगे।"

श्रीरामकृष्ण—जैसे संसारियों में सत्त्व, रज और तम—ये तीनों गुण हैं, वैसे भक्ति में भी सत्त्व, रज, और तम तीन गुण हैं।

"संसारियों का सत्त्वगुण कैसा होता है, जानते हो? घर यहाँ टूटा है, वहाँ टूटा है—मरम्मत नहीं कराते। ठाकुरजी के घर में कबूतरों की विष्ठा पड़ी है। आँगन में काई जम गई है; होश तक नहीं। सामान सब पुराना हो गया है; साफ करने की कोशिश नहीं करते। कपड़ा जो मिला वही सही। देखने में सीधे-सादे, दयालु, मिलनसार कभी किसी का बुरा नहीं चाहते।

"और फिर संसारियों के रजोगुण के भी लक्षण हैं। जेबघड़ी, चेन, उँगलियों में दो-तीन अँगूठियाँ, मकान की चीज़ें बड़ी साफ, दीवार पर क्वीन (सम्राट-पत्नी) की तस्वीर—राजपुत्र की तस्वीर—किसी बड़े आदमी की तस्वीर। मकान चूने से पुता हुआ—कहीं एक दाग तक नहीं। तरह तरह की अच्छी पोशाक। नौकरों के भी वर्दियाँ। आदि आदि।

"संसारियों के तमोगुण के लक्षण हैं—निद्रा, काम-क्रोध, अहंकार—यही सब।

"और भक्ति का भी सत्त्व है। जिस भक्त में सत्त्वगुण है वह

एकान्त में ध्यान करता है। कभी तो वह मसहरी के भीतर ध्यान करता है। लोग समझते हैं कि आप सो रहे हैं, शायद रात को आँख नहीं लगी, इसलिए आज उठने में देर हो रही है। इधर शरीर का ख्याल बस भूख मिटाने तक, सागपात पाने ही से चल गया। न भोजन में भरमार, न पोशाक में टीम-टाम और न घर में चीज़ों का जमाव। और फिर सतोगुणी भक्त कभी खुशामद करके धन नहीं कमाता।

"भक्ति का रज जिस भक्त को होता है वह तिलक लगाता है, रुद्राक्ष की माला पहनता है, जिसके बीच बीच सोने के दाने पड़े रहते हैं! (सब हँसते हैं।) जब पूजा करता है, तब पीताम्बर पहन लेता है!

(३)

क्लैब्यं मास्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥

गीता, २ । ३

नाम-माहात्म्य तथा पाप।

श्रीरामकृष्ण—जिसे भक्ति का तम होता है, उसका विश्वास अटूट है। इस प्रकार का भक्त हठपूर्वक ईश्वर से भिड़ जाता है, मानो डाका डालकर धन छीन लेना है। 'मारो, काटो, बाँधो!' इस तरह डाका डालने का भाव है।

श्रीरामकृष्ण ऊर्ध्वदृष्टि हैं, प्रेमरस से भरे मधुर कण्ठ से गा रहे हैं, भाव यह है:—'काली काली' जपते हुए यदि मेरे शरीर का अन्त

हो तो गया-गङ्गा-काशी-कांची-प्रभास आदि की परवाह कौन करता है ? हे काली, तुम्हारा भक्त पूजा सन्ध्यादि नहीं चाहता, सन्ध्या खुद उसकी खोज में फिरती है, पर पता नहीं लगा सकती। दया-व्रत-दानआदि पर उसका मन नहीं जाता। मदन के याग-यज्ञ ब्रह्ममयी के रक्तिम चरणों में होते हैं। काली के नाम का गुण कौन जान सकता है, जिसे देवादि-देव महादेव पाँचों मुख से गाते हैं ?

श्रीरामकृष्ण भावोन्मत्त हो मानो अग्निमंत्र से दीक्षित होकर गाने लगे। गीत का आशय यह है :—

"यदि मैं 'दुर्गा दुर्गा' जपता हुआ मरूँ तो अन्त में इस दीन को, हे शंकरी, देखूँगा तुम कैसे नहीं तारती हो।"

"क्या! मैंने उनका नाम लिया है—मुझे पाप! मैं उनकी सन्तान हूँ—उनके ऐश्वर्य का अधिकारी हूँ!" इस प्रकार की जिद चाहिए।

"तमोगुण को ईश्वर की ओर फेर देने से ईश्वरलाभ होता है। उनसे हठ करो; वे कोई दूसरे तो नहीं, अपने ही तो हैं।

"फिर देखो, यह तमोगुण दूसरों के हित पर लगाया जा सकता है। वैद्य तीन प्रकार के होते हैं;—उत्तम, मध्यम और अधम। जो वैद्य नाड़ी देखकर 'दवा खा लेना' कहकर चला जाता है, वह अधम वैद्य है। रोगी ने दवा खाई या नहीं, इसकी खबर वह नहीं लेता। जो वैद्य रोगी को दवा खाने के लिए बहुत तरह से समझाता बुझाता है—मीठी बातों से कहता है—'अजी दवा नहीं खाओगे तो अच्छे किस तरह होगे! भैया, खा लो, अच्छा मैं खुद खरल करके खिलाता हूँ,' वह मध्यम वैद्य है और

जो वैद्य रोगी को किसी तरह दवा न खाते हुए देखकर छाती पर चढ़ बैठ ज़बरदस्ती दवा खिलाता है, वह उत्तम वैद्य है। यह वैद्यों का तमोगुण है, इस गुण से रोगी का उपकार होता है, अपकार नहीं।

"वैद्यों के समान तीन प्रकार के आचार्य भी हैं। धर्मोपदेश देकर जो शिष्यों की फिर कोई खबर नहीं लेते वे आचार्य अधम हैं। जो शिष्यों के हित के लिए बार बार उन्हें समझाते हैं जिससे वे उपदेशों की धारणा कर सकें, बहुत विनय-प्रार्थना करते हैं—प्यार करते हैं, वे मध्यम आचार्य हैं। और जब शिष्यों को किसी तरह उपदेश न सुनते देख, कोई कोई आचार्य बलपूर्वक उन्हें राह पर लाते हैं, तो उन्हें उत्तम आचार्य समझना चाहिए।"

(४)

"**यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।**"—तैत्तिरीय उप०।

ब्रह्मस्वरूप अनिर्वचनीय है।

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा,—ईश्वर साकार हैं या निराकार?

श्रीरामकृष्ण—उनकी इति नहीं की जा सकती। वे निराकार हैं, फिर साकार भी हैं। भक्तों के लिए वे साकार हैं। जो ज्ञानी हैं—संसार को जिन्होंने स्वप्नवत् मान लिया है, उनके लिए वे निराकार हैं। भक्त का यह विश्वास है कि मैं एक पृथक् सत्ता हूँ तथा संसार एक पृथक् सत्ता; इसलिए भक्त के निकट ईश्वर 'व्यक्ति' (Personal God) के रूप में आते हैं। ज्ञानी—जैसे वेदान्तवादी—सिर्फ 'नेति नेति' विचार करता है। विचार करने पर उसे यह भासित होता है कि मैं मिथ्या हूँ,

संसार भी मिथ्या—स्वप्नवत् है। ज्ञानी ब्रह्म को बोधरूप देखता है; परन्तु वे क्या हैं, यह मुँह से नहीं कह सकता।

"वे किस तरह हैं, जानते हो? मानो सच्चिदानन्द समुद्र है जिसका ओर-छोर नहीं। भक्ति के हिम से जगह जगह जल बर्फ हो जाता है—बर्फ की तरह जम जाता है। अर्थात् भक्तों के पास वे व्यक्तभाव से कभी कभी साकाररूप धारण करते हैं। ज्ञान-सूर्य का उदय होने पर वह बर्फ गल जाती है, तब ईश्वर के व्यक्तित्व का बोध नहीं रह जाता—उनका रूप भी नहीं दिखाई देता। वे क्या हैं, मुँह से नहीं कहा जा सकता। कहे कौन! जो कहेंगे वही नहीं रह गये, उनको 'मैं' ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलता।

"विचार करते करते फिर 'मैं' नहीं रह जाता। जब तुम प्याज़ छिलते हो, तब पहले लाल छिलके निकलते हैं। फिर सफेद मोटे छिलके। इसी तरह लगातार उघड़ते जाओ तो भीतर ढूँढ़ने से कुछ नहीं मिलता।

"जहाँ अपना 'मैं' खोजे नहीं मिलता—और खोजे भी कौन? —वहाँ ब्रह्म के स्वरूप का बोध किस प्रकार होता है, यह कौन कहे! नमक का एक पुतला समुद्र की थाह लेने गया। समुद्र में ज्योंही उतरा कि गलकर पानी हो गया। फिर खबर कौन दे?

"पूर्ण ज्ञान का लक्षण यह है,—पूर्ण ज्ञान होने पर मनुष्य चुप हो जाता है। तब 'मैं' रूपी नमक का पुतला सच्चिदानन्द रूपी समुद्र में गलकर एक हो जाता है, फिर जरा भी भेदबुद्धि नहीं रह जाती।

"विचार करने का जब तक अन्त नहीं होता, तब तक लोग तर्क पर तुले रहते हैं। अन्त हुआ कि चुप हो गए। घड़ा भर जाने से,—घड़े का जल और तालाब का जल एक हो जाने से—फिर शब्द नहीं होता। जब तक घड़ा भर नहीं जाता, शब्द तभी तक होता है।

"पहले के लोग कहते थे, काले पानी में जहाज़ जाने से फिर लौट नहीं सकता।

"'मैं' मरा कि बला टली। (हास्य।) विचार चाहे लाख करो पर 'मैं' दूर नहीं होता। तुम्हारे और हमारे लिए 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान अच्छा है।

"भक्तों के लिए सगुण ब्रह्म हैं अर्थात् वे सगुण अर्थात् मनुष्य के रूप में दर्शन देते हैं। प्रार्थनाओं के सुननेवाले वही हैं। तुम लोग जो प्रार्थना करते हो वह उन्हीं से करते हो। तुम लोग न वेदान्तवादी हो, न ज्ञानी; तुम लोग भक्त हो। साकार रूप मानो चाहे न मानो इसमें कुछ हानि नहीं; केवल यह ज्ञान रहने ही से काम होगा कि ईश्वर एक वह व्यक्ति हैं जो प्रार्थनाओं को सुनते हैं,—सृजन, पालन और प्रलय करते हैं,—जिनमें अनन्त शक्ति है।

"भक्तिमार्ग से ही वे जल्दी मिलते हैं।"

(५)

भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप। गीता, ११। ४५

ईश्वर-दर्शन—साकार तथा निराकार ।

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा, " महाराज, ईश्वर को क्या कोई देख सकता है ? अगर देख सकता है तो हमें वे क्यों नहीं देखने को मिलते ?"

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे अवश्य देखने को मिलते हैं । साकार रूप देखने में आता है और फिर अरूप भी देख पड़ता है, परन्तु यह तुम्हें समझाऊँ किस तरह ?

ब्राह्मभक्त—हम उन्हें किस उपाय से देख सकते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—व्याकुल होकर उनके लिये रो सकते हो ? लड़के के लिए, स्त्री के लिए, धन के लिए लोग आँसुओं की झड़ी बाँध देते हैं, परन्तु ईश्वर के लिए कौन रोता है ? जब तक लड़का खिलौने पर भूला रहता है तब तक माँ रोटी पकाना आदि घर-गृहस्थी के कामों में लगी रहती है । जब लड़के को खिलौना नहीं सुहाता, उसे फेंक, गला फाड़कर रोने लगता है, तब माँ तवा उतारकर दौड़ आती है—बच्चे को गोद में उठा लेती है ।

ब्राह्मभक्त—महाराज, ईश्वर के स्वरूप पर इतने भिन्न भिन्न मत क्यों हैं ? कोई कहता है साकार और कोई कहता है निराकार । साकारवादियों से तो अनेक रूपों की चर्चा सुन पड़ती है । यह गोरखधन्धा क्यों रचा है ?

श्रीरामकृष्ण—जो भक्त जिस प्रकार देखता है वह वैसा ही समझता है । वास्तव में गोरखधन्धा कुछ भी नहीं । यदि उन्हें कोई

किसी तरह एकबार प्राप्त कर सके, तो वे सब समझा देते हैं। उस मुहल्ले में गये ही नहीं,—कुल खबर कैसे पाओगे?

"एक कहानी सुनो। एक आदमी शौच के लिये जंगल गया। उसने देखा कि पेड़ पर एक कीड़ा बैठा है। लौटकर उसने एक दूसरे से कहा—'देखो जी, उस पेड़ पर हमने एक लाल रंग का सुन्दर कीड़ा देखा है।' उस आदमी ने जवाब दिया—'जब मैं शौच के लिये गया था तब मैंने भी देखा; पर उसका रंग लाल तो नहीं है—वह तो हरा है!' तीसरे ने कहा—'नहीं जी नहीं, हमने भी देखा है, पीला है।' इसी प्रकार और भी कुछ लोग थे जिनमें से किसी ने कहा भूरा, किसी ने बैंगनी, किसी ने आसमानी आदि आदि। अन्त में लड़ाई ठन गई। तब उन लोगों ने पेड़ के नीचे जाकर देखा। वहाँ एक आदमी बैठा था, पूछने पर उसने कहा—'मैं इसी पेड़ के नीचे रहता हूँ। उस कीड़े को मैं खूब पहचानता हूँ। तुम लोगों ने जो कुछ कहा, सब सत्य है। वह कभी लाल, कभी हरा, कभी पीला, कभी आसमानी और न जाने कितने रंग बदलता है। बहुरुपिया है। और फिर कभी देखता हूँ, कोई रंग नहीं!'

"अर्थात् जो मनुष्य सर्वदा ईश्वरचिन्तन करता है, वही जान सकता है कि उनका स्वरूप क्या है। वही मनुष्य जानता है कि वे अनेकानेक रूपों में दर्शन देते हैं—अनेक भावों में देख पड़ते हैं—वे सगुण हैं और निर्गुण भी। जो पेड़ के नीचे रहता है, वही जानता है कि उस बहुरुपिया के कितने रंग हैं,—और कभी कभी तो कोई रंग भी नहीं रहता। दूसरे लोग केवल वादविवाद करके कष्ट उठाते हैं। कबीर कहते थे,—'निराकार मेरा पिता है और साकार मेरी माँ।'

"भक्त को जो स्वरूप प्यारा है, उसी रूप से वे दर्शन देते हैं— वे भक्तवत्सल हैं न। पुराण में कहा है कि वीरभक्त हनुमान के लिए उन्होंने रामरूप धारण किया था।

"वेदान्त-विचार के सामने नाम-रूप कुछ नहीं ठहरते। उस विचार का चरम सिद्धान्त यह है 'ब्रह्म सत्य और नामरूपों वाला संसार मिथ्या।' जब तक 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान रहता है, तभी तक ईश्वर का रूप दिखता है और तभी तक ईश्वर के सम्बन्ध में व्यक्ति (Person) का बोध रहना सम्भव है। विचार की दृष्टि से देखिये तो भक्त के 'मैं'—अभिमान ने भक्त को कुछ दूर कर रखा है। कालीरूप या श्यामरूप साढ़े तीन हाथ का इसलिए है कि वह दूर है। दूर ही के कारण सूर्य छोटा दिखता है। पास जाओ तो इतना बड़ा मालूम होगा कि उसकी धारणा ही न कर सकोगे। और फिर कालीरूप या श्यामरूप श्यामवर्ण क्यों है?—क्योंकि वह भी दूर है। सरोवर का जल दूर से हरा, नीला या काला दीख पड़ता है; नज़दीक जाकर हाथ में लेकर देखो, कोई रंग नहीं।

"इसलिए कहता हूँ, वेदान्त-दर्शन के विचार से ब्रह्म निर्गुण है। उनका स्वरूप क्या है, यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। परन्तु जब तक तुम स्वयं सत्य हो तब तक संसार भी सत्य है, ईश्वर के नाम-रूप भी सत्य हैं, ईश्वर को एक व्यक्ति समझना भी सत्य है।

"तुम्हारा मार्ग भक्तिमार्ग है। यह बड़ा अच्छा है, मार्ग सरल है। अनन्त ईश्वर समझ में थोड़े ही आ सकते हैं? और उन्हें समझने की ज़रूरत भी क्या? यह दुर्लभ मनुष्य-जन्म प्राप्त कर हमें वह करना चाहिए

जिससे उनके चरण-कमलों में भक्ति हो ।

"यदि लोटे भर पानी से हमारी प्यास बुझे तो तालाब में कितना पानी है, इसकी नापतौल करने की क्या ज़रूरत ? अगर अद्धे भर शराब से हम मस्त हो जायँ, तो कलवार की दूकान में कितने मन शराब है, इसकी जाँच पड़ताल करने का क्या काम, अनन्त का ज्ञान प्राप्त करने का क्या प्रयोजन ?"

(६)

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥ गीता, ३।१७

ईश्वरलाभ के लक्षण, सप्तभूमि तथा ब्रह्मज्ञान ।

'वेदों में ब्रह्मज्ञानी की अनेक प्रकार की अवस्थाओं का वर्णन है । ज्ञानमार्ग बड़ा कठिन मार्ग है । विषय-वासना—कामिनी-कांचन के प्रति आसक्ति—का लेशमात्र रहते ज्ञान नहीं होता । यह पथ कलिकाल में साधन करने योग्य नहीं ।

" इस विषय की वेदों में सप्तभूमि (Seven Planes) की कथा है । मन इन सात सोपानों पर विचरण किया करता है । जब वह संसार में रहता है, तब लिंग, गुदा और नाभि उसके निवासस्थल हैं । तब वह उन्नत दशा पर नहीं रहता—केवल कामिनी-कांचन में लगा रहता है । मन की चौथी भूमि है हृदय । तब चैतन्य का उदय होता है, और मनुष्य को चारों ओर ज्योति दिखलाई पड़ती है । तब वह मनुष्य ईश्वरी ज्योति

देखकर सविस्मय कह उठता है ' यह क्या, यह क्या है ! ' तब फिर नीचे (संसार की ओर) मन नहीं मुड़ता ।

" मन की पञ्चम भूमि है कण्ठ । जिसका मन कण्ठ तक पहुँचा है उसकी अविद्या—सम्पूर्ण अज्ञान दूर हो गया है । ईश्वरी प्रसंग के सिवा और कोई बात न वह सुनता है, न कहने को उसका जी चाहता है । यदि कोई व्यक्ति दूसरी चर्चा छेड़ता है तो वह वहाँ से उठ जाता है ।

" मन की छठी भूमि कपाल है । मन वहाँ जाने से दिन-रात ईश्वरी रूप के दर्शन होते हैं । उस समय भी कुछ 'मैं' रहता है । वह मनुष्य उस अनुपम रूप को देखकर मतवाले की तरह उसे छूने तथा गले लगाने को बढ़ता है, परन्तु पाता नहीं । जैसे लालटेन के भीतर बत्ती को जलते देखकर, मन में आता है कि छूना चाहें तो हम इसे छू सकते हैं, परन्तु काँच के आवरण से हम उसे छू नहीं पाते ।

" शिरोदेश सप्तम भूमि है । वहाँ मन जाने से समाधि होती है और ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म का प्रत्यक्ष दर्शन करता है, परन्तु उस अवस्था में शरीर अधिक दिन नहीं रहता । सदा बेहोश, कुछ खाया नहीं जाता, मुँह में दूध डालने से भी गिर जाता है । इस भूमि में रहने से इक्कीस दिन के भीतर मृत्यु होती है । यही ब्रह्मज्ञानियों की अवस्था है । तुम लोगों के लिए भक्तिपथ है । भक्तिपथ बड़ा अच्छा और सहज है ।

" मुझसे एक मनुष्य ने कहा था, महाराज, मुझे आप समाधि सिखा सकते हैं ? (सब हँसते हैं ।)

" समाधि होने पर सब कर्म छूट जाते हैं । पूजा-जपादि कर्म, विषय

कर्म, सब छूट जाते हैं। पहले पहल कामों की बड़ी रेलपेल होती है, परन्तु ईश्वर की ओर जितना ही बढ़ोगे, कामों का आडम्बर उतना ही घटता जायगा; यहाँ तक कि नामगुण-कीर्तन तक छूट जाता है। (शिवनाथ से) जब तक तुम सभा में नहीं आए तब तुम्हारे नाम-गुणों की बड़ी चर्चा चलती रही। ज्यों ही तुम आए कि वे सब बातें बन्द हो गईं। तब तुम्हारे दर्शन से ही आनन्द मिलने लगा। लोग कहने लगे, यह लो, शिवनाथ बाबू आ गए। फिर तुम्हारी और सब बातें बन्द हो जाती हैं।

"यही अवस्था होने पर गङ्गा में तर्पण करने के लिए जाकर मैंने देखा, उँगलियों के भीतर से पानी गिरा जा रहा है। तब हलधारी से रोते हुए पूछा, दादा, यह क्या हो गया! हलधारी बोला, इसे 'गलित-हस्त' कहते हैं; ईश्वरदर्शन के बाद तर्पणादि कर्म नहीं रह जाते।

"सङ्कीर्तन करते समय पहले कहते हैं, 'निताइ आमार माता हाथी!—निताई आमार माता हाथी!' भाव गहरा होने पर सिर्फ 'हाथी हाथी' कहते हैं। इसके बाद केवल 'हाथी' शब्द मुँह में लगा रहता है। अन्त को 'हा' कहते हुए भक्तों को भाव-समाधि होती है; तब वे जो अब तक कीर्तन कर रहे थे, चुप हो जाते हैं।

"जैसे ब्रह्मभोज में पहले खूब शोरगुल मचता है। जब सभी के आगे पत्तल पड़ जाती है, तब गुलगपाड़ा बहुत कुछ घट जाता है। केवल 'पूड़ी लाओ, पूड़ी लाओ' की आवाज होती रहती है। फिर जब लोग पूड़ी तरकारी खाना शुरू करते हैं, तब बारह आना शब्द घट जाता है। जब दही आया, तब सप् सप्! (सब हँसते हैं।)—शब्द मानो होता

ही नहीं। और भोजन के बाद निद्रा। तब सब चुप!

"इसीलिए कहा कि पहले पहल कामों की बड़ी रेल-पेल रहती है। ईश्वर के रास्ते पर जितना बढ़ोगे उतना ही कर्म घटते जायँगे। अन्त को कर्म छूट जाते हैं और समाधि होती है।

"गृहस्थ की बहू के गर्भवती होने पर उसकी सास काम घटा देती है। दसवें महीने में काम अक्सर नहीं करना पड़ता। लड़का होने पर उसका काम बिलकुल छूट जाता है। फिर वह सिर्फ लड़के की देखभाल में रहती है। घर गृहस्थी का काम सास, ननद, जेठानी यही सब करती हैं।

"समाधिस्थ होने के बाद प्रायः शरीर नहीं रहता। किसी किसी का शरीर लोक-शिक्षण के लिए रह जाता है,—जैसे नारदादिकों का और चैतन्य जैसे अवतार पुरुषों का भी शरीर रहता है। कुआँ खुद जाने पर कोई कोई झौआ कुदार फेंक देते हैं। कोई कोई रख लेते हैं,—सोचते हैं, शायद पड़ोस में किसी दूसरे को ज़रूरत पड़े। इसी प्रकार महापुरुष जीवों का दुःख देखकर विकल हो जाते हैं। ये स्वार्थपर नहीं होते कि अपने ही ज्ञान से मतलब रखें। स्वार्थपर लोगों की कथा तो जानते हो। कटो उँगली पर भी नहीं मूतते कि कहीं दूसरे का उपकार न हो जाय! (सब हँसे।) एक पैसे की बर्फी दूकान से ले आने को कहो तो उसमें से भी कुछ साफ कर जायेंगे! (सब हँसते हैं।)

"परन्तु शक्ति की विशेषता होती है। छोटा आधार (मनुष्य) लोक-शिक्षा देते डरता है। सड़ी लकड़ी खुद तो किसी तरह बह जाती है, परन्तु एक चिड़िया के बैठने से भी वह डूब जाती है। नारदादि 'बहादुरी' लकड़ी हैं। ऐसी लकड़ी खुद भी बहती है और कितने ही

मनुष्यों, मवेशियों, यहाँ तक कि हाथी को भी अपने ऊपर लेकर बह जाती है।"

(७)

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा, भयेन च प्रव्यथितं मनो मे।
तदेव मे दर्शय देव रूपं, प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥

गीता, ११।४५

ब्राह्मसमाज की प्रार्थनापद्धति। ईश्वर का ऐश्वर्य-वर्णन।

श्रीरामकृष्ण (शिवनाथ आदि से)—क्यों जी, तुमलोग इतना ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन क्यों करते हो? मैंने केशव सेन से यही कहा था। एक दिन केशव वहाँ (काली-मन्दिर) गया था। मैंने कहा, तुम लोग किस तरह लेक्चर देते हो, मैं सुनूँगा। गंगाघाट की चाँदनी में सभा हुई, और केशव बोलने लगा। खूब बोला। मुझे भाव हो गया था। बाद को केशव से मैंने कहा, तुम यह सब इतना क्यों बोलते हो।—हे ईश्वर, तुमने कैसे सुन्दर सुन्दर फूलों की रचना की, तुमने आकाश की सृष्टि की, तुमने नक्षत्र बनाए, तुमने समुद्र का सृजन किया,—यह सब। जो स्वयं ऐश्वर्य चाहते हैं, वे ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन करना अच्छा समझते हैं। जब राधाकान्त का जेवर चोरी गया था, तब बाबू (रानी रासमणि के जामाता) राधाकान्त के मन्दिर में जाकर ठाकुरजी से बोले, 'क्यों महाराज, तुम अपने जेवर की रक्षा न कर सके!' मैंने बाबू से कहा, यह तुम्हारी कैसी बुद्धि है! स्वयं लक्ष्मी जिनकी दासी हैं, चरणसेवा करती हैं, उनको ऐश्वर्य की क्या कमी है! यह जेवर तुम्हारे लिए ही अमोल वस्तु है, ईश्वर के लिए तो कंकड़-पत्थर है। राम राम! ऐसी बुद्धिहीनता

की बातें न किया करो। कौन बड़ा ऐश्वर्य तुम उन्हें दे सकते हो? इसीलिए कहता हूँ, जिसका मन जिस पर रम जाता है वह उसीको चाहता है; कहाँ वह रहता है, उसके कितनी कोठियाँ हैं, कितने बगीचे हैं, कितना धन है, परिवार में कौन कौन हैं, नौकर कितने हैं—इसकी खबर कौन लेता है? जब मैं नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) को देखता हूँ, तब सब कुछ भूल जाता हूँ। उसका घर कहाँ है, उसका बाप क्या करता है, उसके कितने भाई हैं, ये सब बातें कभी भूलकर भी नहीं पूछीं। ईश्वर के मधुर रस में डूब जाओ। उनकी सृष्टि अनन्त है, ऐश्वर्य अनन्त है, ज्यादा ढूंढ़-तलाश की क्या ज़रूरत?

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से गाने लगे। गीत इस आशय का है—"ऐ मन! तू रूप के समुद्र में डूब जा। तलातल पाताल खोजने पर तुझे प्रेमरत्न धन मिलेगा। खोज, जी लगाकर खोज। खोजने ही से तू हृदय में वृन्दावन देखेगा, तब वहाँ सदा ज्ञान की बत्ती जलेगी। भला ऐसा कौन है जो जमीन पर डोंगा चलाएगा? कबीर कहते हैं, तू सदा श्रीगुरु की चरणचिन्तना कर।

"दर्शन के बाद कभी कभी भक्त की साध होती है कि उनकी लीला देखें। श्रीरामचन्द्रजी जब राक्षसों को मारकर लङ्कापुरी में घुसे तब बुड्ढी निकषा भागी। तब लक्ष्मण बोले, हे राम, भला यह क्या है? यह निकषा इतनी बुड्ढी है, पुत्रशोक भी इसको थोड़ा नहीं हुआ, फिर भी इसे प्राणों का इतना भय है कि भाग रही है। श्रीरामचन्द्रजी ने निकषा को अभय देते हुए सामने लाकर कारण पूछा, वह बोली, इतने दिनों तक बची हूँ, इसीलिए तुम्हारी इतनी लीला देखी, यही कारण है कि और भी बचना चाहती

हूँ। न जाने और कितनी लीलाएँ देखूँ! (सब हँसते हैं।)

(शिवनाथ से) " तुम्हें देखने को जी चाहता है। शुद्धात्माओं को बिना देखे किसको लेकर रहूँगा? शुद्धात्माओं के पिछले जन्म का, जान पड़ता है, मित्र हूँ। "

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा, " महाराज, आप जन्मान्तर मानते हैं? "

श्रीरामकृष्ण—हाँ, मैंने सुना है कि जन्मान्तर होता है। ईश्वर का काम हम लोग अल्पबुद्धि से कैसे समझ सकते हैं? अनेकों ने कहा है, इसलिए अविश्वास नहीं कर सकते। भीष्मदेव देह छोड़ना चाहते हैं, शरों की शय्या पर लेटे हुए हैं; सब पाण्डव श्रीकृष्ण के साथ खड़े हैं। सब ने देखा, भीष्मदेव की आँखों से आँसू बह रहे हैं। अर्जुन श्रीकृष्ण से बोले, भाई, यह तो बड़े आश्चर्य की बात है कि पितामह—जो स्वयं भीष्मदेव ही हैं, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, ज्ञानी, आठों वसुओं में से एक हैं—वे भी देह छोड़ते समय माया में पड़े रो रहे हैं? यह भीष्मदेव से जब श्रीकृष्ण ने कहा तब वे बोले, कृष्ण, तुम खूब जानते हो कि मैं इसलिए नहीं रो रहा हूँ। जब सोचता हूँ कि स्वयं भगवान् पाण्डवों के सारथी हैं, फिर भी उनके दुःख और विपत्तियों का अन्त नहीं होता तब यही याद करके आँसू बहाता हूँ कि परमात्मा के कार्यों का कुछ भी भेद न पाया। "

समाजगृह में सन्ध्याकाल की उपासना शुरू हुई। रात के साढ़े आठ बजे का समय है। समाजगृह के एक ओर संकीर्तन हो रहा है। श्रीरामकृष्ण भगवत्प्रेम से मतवाले होकर नाच रहे हैं। भक्तगण खोल-करताल लेकर, उन्हें घेरकर नाच रहे हैं। भाव में भरे हुए सभी मानो ईश्वर-दर्शन

कर रहे हैं । हरिनाम-ध्वनि उत्तरोत्तर बढ़ने लगी ।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने जगन्माता को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया । प्रणाम करते हुए कह रहे हैं, ' भागवत भक्त भगवान, ज्ञानी के चरणों में प्रणाम है, साकारवादी भक्तों और निराकारवादी भक्तों के चरणों में प्रणाम है, पहले के ब्रह्मज्ञानियों के चरणों में और आजकल के ब्राह्मसमाज के ब्रह्मज्ञानियों के चरणों में प्रणाम है । "

वेणीमाधव ने रुचिकर अच्छे से अच्छे पकवान भक्तों को खिलाए । श्रीरामकृष्ण ने भी भक्तों के साथ आनन्दपूर्वक प्रसाद पाया ।

परिच्छेद १०

भक्तों के संग में

(१)

सर्कस में गृहस्थ तथा अन्य कर्मियों की कठिन समस्या और श्रीरामकृष्ण ।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी करके श्यामपुकुर विद्यासागर स्कूल के फाटक पर आ पहुँचे । दिन के तीन बजे का समय होगा । साथ में उन्होंने मास्टर को भी ले लिया । राखाल तथा अन्य दो एक भक्त गाड़ी में हैं । आज बुधवार, १५ नवम्बर, १८८२ ई० शुक्ल पंचमी है । गाड़ी चितपुर रास्ते से, किले के मैदान की ओर जा रही थी ।

श्रीरामकृष्ण आनन्दमय हैं । मतवाले की तरह गाड़ी से कभी इस ओर और कभी उस ओर मुख करके बालक की तरह देख रहे हैं और अपने आप ही बातचीत कर रहे हैं मानो पथिकों से बातें करते जाते हों । मास्टर से कह रहे हैं, " देखो सब लोगों को देखता हूँ, कैसे निम्न दृष्टि के हैं, पेट के लिए सब जा रहे हैं । ईश्वर की ओर दृष्टि नहीं है । "

श्रीरामकृष्ण आज किले के मैदान में विल्सन सर्कस देखने जा रहे हैं । मैदान में पहुँचकर टिकट खरीदी गई । आठ आने की अर्थात् अन्तिम श्रेणी की टिकट । भक्तगण श्रीरामकृष्ण को लेकर ऊँचे स्थान पर जाकर एक बेंच पर बैठे । श्रीरामकृष्ण आनन्द से कह रहे हैं, " वाह ! यहाँ से बहुत अच्छा दिखता है । "

सर्कस में तरह तरह के खेल काफी देर तक दिखाए गए। गोलाकार रास्ते पर घोड़ा दौड़ रहा है, घोड़े की पीठ पर एक पैर पर मेम खड़ी है। फिर बीच बीच में सामने बड़े बड़े लोहे के चक्र रखे हैं। चक्र के पास आकर घोड़ा जब उसके नीचे से दौड़ता है, तो मेम घोड़े की पीठ से कूदकर चक्र के बीच में से होकर फिर घोड़े की पीठ पर एक पैर से खड़ी हो जाती है! घोड़ा बार बार तेज़ी के साथ उस गोलाकार पथ पर दौड़ने लगा, मेम भी फिर उसी प्रकार पीठ पर खड़ी है!

सर्कस समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उतरकर मैदान में गाड़ी के पास आए। ठण्ड पड़ रही थी। हरे रंग का शाल ओढ़कर मैदान में खड़े खड़े बातचीत कर रहे हैं। पास ही भक्तगण खड़े हैं। एक भक्त के हाथ में मसाले (लौंग, इलायची आदि) का एक छोटासा बटुआ है। उसमें कुछ मसाला और विशेष रूप से कबाबचीनी है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं, "देखो, मेम कैसे एक पैर के सहारे घोड़े पर खड़ी है और घोड़ा तेजी से दौड़ रहा है। कितना कठिन काम है! अनेक दिनों तक अभ्यास किया है, तब तो ऐसा सीखा। ज़रा असावधान होते ही हाथ पैर टूट जाएँगे और मृत्यु भी हो सकती है। संसार करना इसी प्रकार कठिन है। बहुत साधन-भजन करने के बाद ईश्वर की कृपा से कोई कोई इसमें सफल हुए हैं। अधिकांश लोग असफल हो जाते हैं। संसार करने जाकर और भी बद्ध हो जाते हैं, और भी डूब जाते हैं। मृत्युयंत्रणा होती है। जनक आदि की तरह किसी किसी ने उग्र तपस्या के बल पर संसार किया था। इसलिए साधन-भजन की विशेष आवश्यकता है। नहीं तो संसार में ठीक नहीं रहा जा सकता।"

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। गाड़ी बाग बाज़ार के बसुपाड़ा में बलराम के मकान के दरवाज़े पर आ खड़ी हुई। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ दुमंज़ले पर बैठकघर में जा बैठे। सायंकाल—दिया जलाया गया है। श्रीरामकृष्ण सर्कस की बातें कर रहे हैं। अनेक भक्त एकत्रित हुए हैं। उनके साथ ईश्वर सम्बन्धी चर्चा हो रही है, मुख में दूसरी कोई भी बात नहीं है, केवल ईश्वर की बात।

जाति-भेद के सम्बन्ध में चर्चा चली।

श्रीरामकृष्ण बोले, एक उपाय से जाति-भेद उठ सकता है। वह उपाय है—**भक्ति**। भक्तों की जाति नहीं है। भक्ति होने से ही देह, मन, आत्मा सब शुद्ध हो जाते हैं। गौर, निताई हरिनाम गाने लगे और चाण्डाल तक सभी को गोदी में लेने लगे। भक्ति न रहने पर ब्राह्मण, ब्राह्मण नहीं है। भक्ति रहने पर चाण्डाल, चाण्डाल नहीं है। अस्पृश्य जाति भक्ति के होने पर शुद्ध, पवित्र हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण संसारबद्ध जीवों की बात कर रहे हैं। वे मानो रेशम के कीड़े हैं, चाहे तो काटकर निकल आ सकते हैं, परन्तु काफ़ी कोशिश से रेशम का घर बनाते हैं, छोड़कर आ नहीं सकते। इसीसे मरते हैं। फिर मानो जाल में फँसी हुई मछली। जिस रास्ते से गई है, उसी रास्ते से निकल सकती है, परन्तु जल की मीठी आवाज़ और दूसरी मछलियों के साथ खेलकूद,—इसी में भूलकर रह जाती है। बाहर निकलने की चेष्टा नहीं करती। बच्चों की अस्फुट बातें मानो जल-कल्लोल का मीठा शब्द है। मछली अर्थात् जीव, और परिवारवर्ग। परन्तु एक दौड़ से जो भाग जाते हैं उन्हें कहते हैं, मुक्त पुरुष।

श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं।

"महामाया की विचित्र माया है, जिसके प्रभाव से ब्रह्मा विष्णु भी अचैतन्य हैं; फिर जीव की क्या बात ! बिछे हुए जाल में मछली प्रवेश करती है, पर आने जाने का रास्ता रहते हुए भी फिर उसमें से भाग नहीं सकती।"

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, जीव मानो दाल है। चक्की में पड़े हैं, पिस जाएँगे, परन्तु जो थोड़े से दाल के दाने डण्डे को पकड़कर रहते हैं वे नहीं पिसते। इसलिए डण्डा अर्थात् ईश्वर की शरण में जाना चाहिए। उन्हें पुकारो, उनका नाम लो, तब मुक्ति होगी। नहीं तो काल-रूपी चक्की में पिस जाओगे।

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं।

"माँ, भवसागर में पड़कर शरीर-रूपी यह नौका डूब रही है। हे शंकरि, माया की आँधी और मोह का तूफान अधिकाधिक तेज़ हो रहा है। एक तो मनरूपी माझी अनाड़ी है, उस पर छः खेवैये गँवार हैं। आँधी में मझधार में आकर डूबा जा रहा हूँ। भक्ति का डांड़ टूट गया, श्रद्धा का पाल फट गया, नाव काबू से बाहर हो गई, अब मैं उपाय क्या करूँ ? और तो कोई उपाय नहीं दीखता, लाचार होकर, सोच समझकर, तरंग में तैरकर श्री दुर्गानाम रूपी 'भेले'* को पकड़ता हूँ।"

---

* पानी पर तैरने का एक साधन जो केले के पेड़ों से बनाया जाता है।

विश्वास बाबू बहुत देर से बैठे थे, अब उठकर चल गए। उनके पास काफी धन था, परन्तु चरित्र भ्रष्ट हो जाने से सारा धन उड़ गया। अब स्त्री, कन्या आदि किसी को नहीं देखते हैं। बलराम से उनकी बात उठाने पर श्रीरामकृष्ण बोले, "वह अभागा दरिद्री है। गृहस्थ का कर्तव्य है, ऋण है; देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण—फिर परिवार का ऋण है। सती स्त्री होने पर उसका पालन-पोषण, सन्तान जब तक वे योग्य नहीं बन जाते हैं, तब तक उनका पालन-पोषण करना पड़ता है।

"साधु ही केवल संचय नहीं करेगा। 'पंछी और दरवेश' संचय नहीं करते हैं। परन्तु माघ पक्षी का बच्चा होने पर वह संचय करती है। बच्चे के लिए मुख से उठाकर खाना ले जाती है।"

बलराम—अब विश्वास बाबू की साधु-संग करने की इच्छा है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—साधु का कमण्डल चार धाम घूमकर आता है, परन्तु वैसा ही कड़ुआ का कड़ुआ रहता है। मलय की हवा जिन पेड़ों को लगती है वे सब चन्दन हो जाते हैं, परन्तु सेमल, बड़ आदि चन्दन नहीं बनते! कोई कोई साधु-संग करते हैं गांजा पीने के लिए! (हँसी।) साधु लोग गांजा पीते हैं, इसीलिए उनके पास आकर बैठते हैं, गांजा तैयार कर देते हैं और प्रसाद पाते हैं! (सभी हँस पड़े।)

(२)

षड्भुज-दर्शन तथा श्री राजमोहन के मकान पर शुभागमन। नरेन्द्र।

श्रीरामकृष्ण ने जिस दिन किलेवाले मैदान में सर्कस देखा उसके दूसरे दिन फिर कलकत्ते में शुभागमन किया था। बृहस्पतिवार, १६

नवम्बर, १८८२ ई० कार्तिक शुक्ल षष्ठी । आते ही पहले पहल गरानहट्टा* में षड्भुज महाप्रभु का दर्शन किया । वैष्णव साधुओं का अखाड़ा,— महन्त हैं श्री गिरिधारी दास । षड्भुज महाप्रभु की सेवा बहुत दिनों से चल रही है । श्रीरामकृष्ण ने तीसरे पहर को दर्शन किया ।

सायंकाल के कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण शिमुलिया निवासी श्रीयुत राजमोहन के मकान पर गाड़ी करके आ पहुँचे । श्रीरामकृष्ण ने सुना है कि यहाँ पर नरेन्द्र आदि लड़के मिलकर ब्राह्मसमाज की उपासना करते हैं । इसीलिए वे देखने आए हैं । मास्टर तथा और भी दो एक भक्त साथ हैं । श्री राजमोहन पुराने ब्राह्मभक्त हैं ।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को देख आनन्दित हुए और बोले, "तुम लोगों की उपासना देखूँगा ।" नरेन्द्र गाना गाने लगे । श्री प्रिय आदि लड़कों में से कोई कोई उपस्थित थे ।

अब उपासना हो रही है । नवयुवकों में से एक व्यक्ति उपासना कर रहे हैं । वे प्रार्थना कर रहे हैं, "भगवन्, सब कुछ छोड़ तुममें मग्न हो जाऊँ ।" श्रीरामकृष्ण को देख सम्भवतः उनका उद्दीपन हुआ है । इसीलिए सर्वत्याग की बात कह रहे हैं! मास्टर, श्रीरामकृष्ण के बहुत ही निकट बैठे थे । उन्होंने ही केवल सुना, श्रीरामकृष्ण मृदु स्वर में कह रहे हैं, "सो तो हो चुका !"

श्री राजमोहन श्रीरामकृष्ण को जलपान के लिए मकान के भीतर ले जा रहे हैं ।

---

* वर्तमान निमतल्ला स्ट्रीट ।

(३)

श्री मनोमोहन तथा श्री सुरेन्द्र के मकान पर श्रीरामकृष्ण ।

दूसरे रविवार को (ता. १९-११-१८८२) श्री जगद्धात्री पूजा है। सुरेन्द्र ने निमंत्रण दिया है। वे भीतर बाहर हो रहे हैं—कब श्रीरामकृष्ण आते हैं। मास्टर को देख वे कह रहे हैं, "तुम आये हो, और वे कहाँ हैं?" इतने में ही श्रीरामकृष्ण की गाड़ी आ खड़ी हुई। पास ही श्री मनोमोहन का मकान है। श्रीरामकृष्ण पहले वहीं पर उतरे, वहाँ पर ज़रा विश्राम करके सुरेन्द्र के मकान पर आएँगे।

मनोमोहन के बैठकखाने में श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "जो असहाय, दीन, दरिद्र हैं उसकी भक्ति ईश्वर को प्यारी है, जिस प्रकार खली मिला हुआ चारा गाय को प्यारा है। दुर्योधन उतना धन, उतना ऐश्वर्य दिखाने लगा पर उसके घर पर भगवान् न गए। वे विदुर के घर गए। वे भक्तवत्सल हैं। जिस प्रकार गाय अपने बच्चे के पीछे-पीछे दौड़ती है, उसी प्रकार वे भी भक्तों के पीछे-पीछे दौड़ते हैं।"

श्रीरामकृष्ण गाने लगे। भावार्थ यह है—,

"उस भाव के लिए परम योगी युगयुगान्तर तक योग करते हैं, भाव का उदय होने पर वह ऐसे ही खींच लेते हैं जैसे लोहे को चुम्बक।"

"चैतन्य देव की आँखों से कृष्ण-नाम से आँसू गिरने लगते थे। ईश्वर ही वस्तु है, शेष सब अवस्तु। मनुष्य चाहे तो ईश्वर को प्राप्त कर सकता है; परन्तु वह कामिनी-कांचन का भोग करने में ही मस्त रहता है। सिर पर मणि रहते भी साँप मेंढक खाता रहता है।

"भक्ति ही सार है। ईश्वर का विचार करके भी उन्हें कौन जान सकेगा? मुझे भक्ति चाहिए। उनका अनन्त ऐश्वर्य है। उतना जानने की मुझे क्या आवश्यकता है? एक बोतल शराब से यदि नशा आ जाय तो फिर यह जानने की क्या आवश्यकता है कि कलार के दूकान में कितने मन शराब है। एक लोटा जल से मेरी तृष्णा शान्त हो सकती है। पृथ्वी में कितना जल है यह जानने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं।"

श्रीरामकृष्ण अब सुरेन्द्र के मकान पर आए हैं। आकर दुमंजले के बैठकघर में बैठे हैं। सुरेन्द्र के मझले भाई जज भी बैठे हैं। अनेक भक्त कमरे में इकट्ठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के भाई से कह रहे हैं, "आप जज हैं, बहुत अच्छी बात है। इतना जानिएगा सभी कुछ ईश्वर की शक्ति है। बड़ा पद उन्होंने ही दिया है तभी बना है। लोग समझते हैं, 'हम बड़े आदमी हैं।' छत पर का जल शेर के मुँह वाले परनाले से गिरता है। ऐसा लगता है, मानो शेर मुँह से पानी उगल रहा है। परन्तु देखो, कहाँ का जल है। कहाँ आकाश में बादल बना, उसका जल छत पर गिरा और उसके बाद लुढ़ककर परनाले में जा रहा है और फिर शेर के मुँह से होकर निकल रहा है।"

सुरेन्द्र के भाई—महाराज, ब्राह्मसमाज वाले स्त्री-स्वाधीनता की बात कहते हैं, और कहते हैं जाति-भेद उठा दो। यह सब आपको कैसा लगता है?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर से नया नया प्रेम होने पर वैसा हो सकता है। आँधी आने पर धूल उड़ती है, समझ में नहीं आता कि कौन आम का पेड़ है और कौन इमली का। आँधी शान्त होने पर फिर समझ में आता

है। नए प्रेम की आँधी शान्त होने पर धीरे धीरे समझ में आ जाता है कि ईश्वर ही श्रेयः नित्य पदार्थ है और सभी कुछ अनित्य है। साधु-संग और तपस्या न करने पर ठीक ठीक धारणा नहीं होती। पखावज का बोल मुँह में बोलने से क्या होगा? हाथ पर आना बहुत कठिन है। केवल लेक्चर देने से क्या होगा? तपस्या चाहिए, तब धारणा होगी।

"जाति-भेद? केवल एक उपाय से जाति-भेद उठ सकता है। वह है भक्ति। भक्त की जाति नहीं है। भक्ति से अछूत भी शुद्ध हो जाता है—भक्ति होने पर चाण्डाल फिर चाण्डाल नहीं रहता। चैतन्य देव ने चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक सभी को शरण दी थी।

"ब्राह्मगण हरिनाम करते हैं, बहुत अच्छी बात है। व्याकुल होकर पुकारने पर उनकी कृपा होगी, ईश्वर लाभ होगा।

"सभी पथों से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। एक ईश्वर को अनेक नामों से पुकारते हैं। जिस प्रकार एक घाट का जल हिन्दू लोग पीते हैं, कहते हैं जल; दूसरे घाट में ईसाई लोग पीते हैं, कहते हैं वाटर; और तीसरे घाट में मुसलमान पीते हैं, कहते हैं पानी।"

सुरेन्द्र के भाई—महाराज, थिओसफी कैसी लगती है?

श्रीरामकृष्ण—सुना है लोग कहते हैं कि उससे अलौकिक शक्ति प्राप्त होती है। देव मोडल नामक व्यक्ति के मकान पर देखा था कि एक आदमी पिशाचसिद्ध है। पिशाच कितनी ही चीजें ला देता था। अलौकिक शक्ति लेकर क्या करूँगा? क्या उससे ईश्वर-प्राप्ति होती है? यदि ईश्वर-प्राप्ति न हुई तो सभी मिथ्या है।

(४)

मणि मल्लिक के ब्राह्मोत्सव में श्रीरामकृष्ण ।

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ते में श्री मणिलाल मल्लिक के सिन्दुरिया पट्टी वाले मकान पर भक्तों के साथ शुभागमन किया है। वहाँ पर ब्राह्मसमाज का प्रति वर्ष उत्सव होता है। दिन के चार बजे का समय होगा। यहाँ पर आज ब्राह्म-समाज का वार्षिकोत्सव है। २६ नवम्बर १८८२ ई०। श्री विजयकृष्ण गोस्वामी तथा अनेक ब्राह्म भक्त और श्री प्रेमचन्द्र बड़ाल तथा गृहस्वामी के अन्य मित्रगण आए हैं। मास्टर आदि साथ हैं।

श्री मणिलाल ने भक्तों की सेवा के लिए अनेक प्रकार का आयोजन किया है। प्रल्हाद-चरित्र की कथा होगी, उसके बाद ब्राह्म-समाज की उपासना होगी। अन्त में भक्तगण प्रसाद पाएँगे।

श्री विजय अभी तक ब्राह्म समाज में ही हैं। वे आज की उपासना करेंगे, उन्होंने अभी तक गैरिक वस्त्र धारण नहीं किया है।

कथक महाशय प्रह्लाद-चरित्र की कथा कह रहे हैं। पिता हिरण्यकशिपु हरि की निन्दा करते हुए पुत्र प्रह्लाद को बार बार क्लेशित कर रहे हैं। प्रह्लाद हाथ जोड़कर हरि से प्रार्थना कर रहे हैं और कह रहे हैं, "हे हरि, पिता को सद्बुद्धि दो।" श्रीरामकृष्ण इस बात को सुनकर रो रहे हैं। श्री विजय आदि भक्तगण श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण की भावावस्था हो गई है।

कुछ देर बाद विजय आदि भक्तों से कह रहे हैं, "भक्ति ही सार है। उनके नामगुण का कीर्तन सदा करते करते भक्ति प्राप्त होती है। अहा, शिवनाथ की कैसी भक्ति है! मानो, रस में पड़ा हुआ रसगुल्ला।

"ऐसा समझना ठीक नहीं कि मेरा धर्म ही ठीक है तथा दूसरे सभी का धर्म असत्य है। सभी पथों से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। हृदय में व्याकुलता रहनी चाहिए। अनन्त पथ, अनन्त मत।

"देखो ईश्वर को देखा जा सकता है। वेद में कहा है, 'अवाङ्मनसोगोचरम्।' इसका अर्थ यह है कि वे विषयासक्त मन के अगोचर हैं। वैष्णवचरण कहा करता था, 'वे शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि द्वारा प्राप्त करने योग्य हैं।' * इसीलिए साधु-संग, प्रार्थना, गुरु का उपदेश,—यह सब आवश्यक है। तभी तो चित्तशुद्धि होती है—तब उनका दर्शन होता है। मैले जल में निर्मली डालने से वह साफ होता है, तब मुँह देखा जाता है। मैले आइने में भी मुँह नहीं देखा जा सकता।

"चित्तशुद्धि के बाद भक्ति प्राप्त करने पर, उनकी कृपा से उनका दर्शन होता है। दर्शन के बाद 'आदेश' पाने पर तब लोक-शिक्षा दी जा सकती है। पहले से ही लेक्चर देना ठीक नहीं है। एक गाने में कहा है—'मन अकेले बैठे क्या सोच रहे हो? क्या कभी प्रेम के बिना ईश्वर मिल सकता है?'

---

* मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।
बन्धाय विषयासंगि मोक्षे निर्विषयं स्मृतम्॥

—मैत्रायणी उपनिषद

"फिर कहा—'तेरे मन्दिर में माधव नहीं है।' शंख बजाकर तूने हल्ला मचा दिया, उसमें तो ग्यारह चमगादड़ सत-दिन रहते हैं।'

"पहले हृदय-मन्दिर को साफ़ करना होता है। ठाकुरजी की प्रतिमा को लाना होता है। पूजा की तैयारी करनी होती है। कोई तैयारी नहीं, भों-भों करके शंख बजाने से क्या होगा?"

अब श्री विजय गोस्वामी वेदी पर बैठे ब्राह्म-समाज की पद्धति के अनुसार उपासना कर रहे हैं। उपासना के बाद वे श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति)—अच्छा, तुम लोगों ने उतना पाप, पाप, क्यों कहा? सौ बार मैं पापी हूँ, मैं पापी हूँ, ऐसा कहने से वैसा ही हो जाता है। ऐसा विश्वास करना चाहिए कि उनका नाम लिया है—मेरा फिर पाप कैसा? वे हमारे बाप-माँ हैं। उनसे कहो कि पाप किया है अब कभी नहीं करूँगा और फिर उनका नाम लो। उनके नाम से सब मिलकर देह-मन को पवित्र करो—जिह्वा को पवित्र करो।

परिच्छेद ११

भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

बाबूराम आदि के साथ 'स्वाधीन इच्छा' के सम्बन्ध में वार्तालाप। श्री तोतापुरी का आत्महत्या का संकल्प।

श्रीरामकृष्ण तीसरे प्रहर के बाद दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे के पश्चिमवाले बरामदे में वार्तालाप कर रहे हैं। साथ बाबूराम, मास्टर, रामदयाल आदि हैं। दिसम्बर १८८२ ई०। बाबूराम, रामदयाल व मास्टर आज रात को यहीं रहेंगे। बड़े दिनों की छुट्टी हुई है। मास्टर कल भी रहेंगे। बाबूराम नए नए आए हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—'ईश्वर सब कुछ कर रहे हैं, यह ज्ञान होने पर तब तो जीवन्मुक्त होगा। केशव सेन शम्भु मल्लिक के साथ आया था। मैंने उससे कहा, वृक्ष के पत्ते तक ईश्वर की इच्छा के बिना नहीं हिलते। 'स्वाधीन इच्छा' कहाँ ? सभी ईश्वर के आधीन हैं। नंगा* उतने बड़े ज्ञानी थे जी, वे भी पानी में डूबने गये थे ! यहाँ पर ग्यारह महीने रहे। पेट की पीड़ा हुई, रोग की यंत्रणा से घबड़ाकर गंगा में डूबने गये थे। घाट के पास काफ़ी दूर तक जल कम था।

---

* श्री तोतापुरी नागा सम्प्रदाय के होने के कारण श्रीरामकृष्ण उन्हें 'नंगा' कहते थे।

जितना ही आगे बढ़ते हैं, घुटने भर से अधिक जल नहीं मिलता। तब उन्होंने समझा; समझकर लौट आये। एक बार अत्यन्त अधिक बीमारी के कारण मैं बहुत ही ज़िद्दी हो गया था। इसलिए गले में छुरी लगाने चला था। इसलिए कहता हूँ, माँ, मैं यँत्र हूँ, तुम यंत्री; मैं रथ हूँ, तुम रथी; जैसा चलाती हो वैसा ही चलता हूँ—जैसा कराती हो वैसा ही करता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण के कमरे के भीतर गाना हो रहा है। भक्तगण गाना गा रहे हैं, उसका भावार्थ इस प्रकार है:—

(१) "हे कमलापति, यदि तुम हृदय-रूपी वृन्दावन में निवास करो तो हे भक्तिप्रिय! मेरी भक्ति सती राधा बनेगी। मुक्ति की मेरी कामना गोप-नारी बनेगी। देह नन्द की नगरी बनेगी, और प्रीति माँ यशोदा बन जाएगी। हे जनार्दन, मेरे पापसमूह रूपी गोवर्धन को धारण करो, इस समय काम-आदि कंस के छः चरों को विनष्ट करो। कृपा की बंसरी बजाते हुए मेरे मनरूपी गाय को वशीभूत कर मेरे हृदयरूपी चरागाह में निवास करो। मेरी इस कामना की पूर्ति करो, यही प्रार्थना है, इस समय मेरे प्रेमरूपी यमुना के तट पर आशारूपी वट के नीचे कृपा करके प्रकट होकर निवास करो। यदि कहो कि गोपालों के प्रेम में बन्दी होकर ब्रजधाम में रहता हूँ, तो यह अज्ञानी 'दाशरथी' तुम्हारा गोपाल, तुम्हारा दास बनेगा।"

(२) "हे मेरे प्राणरूपी पिंजरे के पक्षी, गाओ न। ब्रह्मरूपी कल्पतरु पर वह पक्षी बैठता है। हे विभुगण, गाओ न (गाओ, गाओ)। और साथ ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूपी पके फलों को खाओ न।"

नन्दन बाग के श्रीनाथ मित्र अपने मित्रों के साथ आए हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखकर कहते हैं, "यह देखो, इनकी आँखों में से भीतर का सब कुछ दिखाई पड़ रहा है, खिड़की के काँच में से जिस प्रकार कमरे के भीतर की सभी चीज़ें देखी जाती हैं।" श्रीनाथ, यज्ञ-नाथ ये लोग नन्दन बाग के ब्राह्मपरिवार के हैं। इनके मकान पर प्रति-वर्ष ब्राह्म-समाज का उत्सव होता था। बाद में श्रीरामकृष्ण उत्सव देखने गए थे।

सायंकाल के बाद ठाकुरघर में आरती होने लगी। कमरे में छोटी खटिया पर बैठकर श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन कर रहे हैं। धीरे धीरे भाव-मग्न हो गए। भाव शान्त होने पर कहते हैं, माँ, उसे भी खींच लो। वह इतने दीन भाव से रहता है, तुम्हारे पास आना-जाना कर रहा है।

श्रीरामकृष्ण भाव में क्या बाबूराम की बात कह रहे हैं? बाबूराम, मास्टर, रामदयाल आदि बैठे हैं। रात के ८—९ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण समाधि-तत्व समझा रहे हैं। जड़ समाधि, चेतन समाधि, स्थित समाधि, उन्मना समाधि।

सुख-दुःख की बात चल रही है। ईश्वर ने इतना दुःख क्यों बनाया?

मास्टर—विद्यासागर प्रेमकोप से कहते हैं, "ईश्वर को पुकारने की और क्या आवश्यकता है? देखो, चंगेज़खां ने जिस समय लूटमार करना आरम्भ किया था उस समय उसने अनेक लोगों को बन्द कर दिया था। धीरे-धीरे करीब एक लाख कैदी इकट्ठे हो गए। तब सेनापतिओं ने आकर कहा, 'हुजूर, इन्हें खिलाएगा कौन? इन्हें साथ रखने पर हमारे लिए विपत्ति है। क्या किया जाय? छोडने पर भी विपत्ति है।'

उस समय चंगेज़खां ने कहा, 'तो फिर क्या किया जाय? उनका वध कर डालो।' इसलिए कचाकच काट डालने का आदेश हो गया। इस हत्याकाण्ड को तो ईश्वर ने देखा। कहाँ, ज़रा मना भी तो नहीं किया। वे तो सो रहे हैं। मुझे उनकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। मेरा तो कोई उपकार न हुआ!"

श्रीरामकृष्ण—क्या ईश्वर का काम समझा जाता है कि वे किस उद्देश से क्या करते हैं? वे सृष्टि, पालन, संहार सभी कर रहे हैं। वे क्यों संहार कर रहे हैं, हम क्या समझ सकते हैं? मैं कहता हूँ, माँ मुझे समझने की आवश्यकता भी नहीं है। बस् अपने चरण-कमल में भक्ति दो। मनुष्य-जीवन का उद्देश है, इसी भक्ति को प्राप्त करना। और माँ सब जानती हैं। बगीचे में आम खाने को आया हूँ, कितने पेड़, कितनी शाखाएँ, कितने करोड़ पत्ते हैं यह सब हिसाब करने से मुझे क्या मतलब! मैं आम खाता हूँ, पेड़ और पत्तों के हिसाब से मेरा क्या सम्बन्ध?

आज रात में बाबूराम, मास्टर और रामदयाल श्रीरामकृष्ण के कमरे में जमीन पर सोये।

आधी रात, दो तीन बजे का समय होगा, श्रीरामकृष्ण के कमरे में बत्ती बुझ गई है। वे स्वयं बिस्तर पर बैठे बीच-बीच में भक्तों के साथ बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि भक्तों के प्रति)—देखो, दया और माया ये दो पृथक् पृथक् चीज़ें हैं। माया का अर्थ है, आत्मियों के प्रति ममता-

जैसे बाप, माँ, भाई, बहिन, स्त्री, पुत्र इन पर प्रेम। दया का अर्थ है सब भूतों में प्रेम, समदृष्टि। किसी में यदि दया देखो, जैसे विद्यासागर में, तो उसे ईश्वर की दया जानो। दया से सर्व भूतों की सेवा होती है। माया भी ईश्वर की दया ही है। माया द्वारा वे आत्मियों की सेवा करा लेते हैं; परन्तु इसमें एक बात है। माया अज्ञानी बनाकर रखती है और बद्ध बनाती है, परन्तु दया से चित्तशुद्धि होती है और धीरे धीरे बन्धन-मुक्ति होती है। चित्तशुद्धि हुए बिना भगवान् का दर्शन नहीं होता। काम, क्रोध, लोभ इन सब पर विजय प्राप्त करने से उनकी कृपा होती है, उनका दर्शन होता है। तुम लोगों को बहुत ही गुप्त बातें बता रहा हूँ। काम पर विजय प्राप्त करने के लिए मैंने बहुत कुछ किया था। मेरी १०-११ वर्ष की उम्र में, जब मैं उस देश में था, उस समय वह स्थिति—समाधि की स्थिति—प्राप्त हुई थी। मैदान में से जाते-जाते जो कुछ देखा उससे मैं विह्वल हो पड़ा था। ईश्वर-दर्शन के कुछ लक्षण हैं। ज्योति देखने में आती है, आनन्द होता है, हृदय के बीच में गुर-गुर करके महावायु उठती है।

दूसरे दिन बाबूराम, रामदयाल घर लौट गए। मास्टर ने वह दिन और रात्रि श्रीरामकृष्ण के साथ बिताई। उस दिन उन्होंने ठाकुर मन्दिर में ही प्रसाद पाया।

(२)

दक्षिणेश्वर में मारवाड़ी भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण।

तीसरा पहर बीत गया है। मास्टर तथा दो-एक भक्त बैठे हैं। कुछ मारवाड़ी भक्तों ने आकर प्रणाम किया। वे कलकत्ते में व्यापार करते हैं।

उन्होंने श्रीरामकृष्ण से कहा, "आप हमें कुछ उपदेश कीजिए।" श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मारवाड़ी भक्तों के प्रति)—देखो, 'मैं और मेरा' दोनों अज्ञान है। 'हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और यह सब तुम्हारा है' इसका नाम ज्ञान है। और 'मेरा' क्योंकर कहोगे? बगीचे का मैनेजर कहता है, 'मेरा बगीचा,' परन्तु कोई अपराध करने पर मालिक उसे निकाल देता है। उस समय ऐसा साहस नहीं होता कि वह आम की लकड़ी का बना खाली खोखा भी बगीचे से बाहर ले जाय! काम, क्रोध आदि जाने के नहीं। ईश्वर की ओर उनका मुँह घुमा दो। कामना, लोभ करना हो तो ईश्वर को पाने के लिए कामना, लोभ करो। विचार करके उन्हें भगा दो। हाथी जब दूसरों का केले का पेड़ खाने जाता है, तो महावत उसे अंकुश मारता है।

"तुम लोग तो व्यापार करते हो। जानते हो कि धीरे-धीरे उन्नति करनी होती है। कोई पहले अण्डी पीसने की घानी खोलता है और फिर अधिक धन होने पर कपड़े की दूकान खोलता है। इसी प्रकार ईश्वर के पथ में आगे बढ़ना पड़ता है। बने तो बीच-बीच में कुछ दिन निर्जन में रहकर उन्हें अच्छी तरह से पुकारो।

"फिर भी जानते हो? समय न होने पर कुछ नहीं होता। किसी किसी का भोग-कर्म काफी बाकी रह जाता है। इसीलिए देरी होती है। फोड़ा कच्चा रहते चीरने पर हानि पहुँचाता है। पककर जब मुँह निकलता है, उस समय डॉक्टर चीरता है। लड़के ने कहा था, 'माँ अब मैं सोता हूँ। जब मुझे शौच लगे तो तुम जगा देना।' माँ ने कहा, 'बेटा,

शौच लगने पर तुम खुद ही उठ जाओगे ! मुझे उठाना न पड़ेगा ।" (सब हँसते हैं ।)

मारवाड़ी भक्तगण बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए मिठाई, फल आदि लाते हैं । परन्तु श्रीरामकृष्ण साधारणतः उन चीज़ों का सेवन नहीं करते । कहते हैं, वे लोग अनेक झूठी बातें कहकर धन कमाते हैं; इसलिए उपस्थित मारवाड़ियों को वार्तालाप के बहाने उपदेश दे रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—देखो, व्यापार करने में सत्य बात की टेक नहीं रहती । व्यापार में तेज़ी-मंदी होती रहती है । नानक की कहानी है, उन्होंने कहा, 'असाधु की चीज़ें खाने गया तो मैंने देखा कि वे सब खून से लथपथ हो गई हैं !'

"साधु को शुद्ध चीज़ देनी चाहिए । मिथ्या उपाय से प्राप्त की हुई चीज़ें नहीं देनी चाहिए । सत्य पथ द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है ।*

"सदा उनका नाम लेना चाहिए । काम के समय मन को उनके हवाले कर देना चाहिए । जिस प्रकार मेरी पीठ पर फोड़ा हुआ है, सभी काम कर रहा हूँ, परन्तु मन फोड़े में ही है । राम-नाम लेना अच्छा है, जो राम दशरथ का बेटा है, जिन्होंने जगत् की सृष्टि की है, जो सर्व भूतों में हैं और अत्यन्त निकट भी हैं, वे ही भीतर और बाहर हैं ।"

---

* सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा । सम्यक् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम् ।
—मुण्डकोपनिषद, ३।१।५

सत्यमेव जयते नानृतम् ।—मुण्डकोपनिषद, ३।१।६

" वही राम दशरथ का बेटा, वही राम घट घट में लेटा।
वही राम जगत् पसेरा, वही राम सब से न्यारा ॥"

(३)

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

गीता, २ । २०

श्री विजय गोस्वामी तथा अन्य ब्राह्मभक्तों के प्रति उपदेश।

दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी भगवान् श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आये हैं। उनके साथ तीन-चार ब्राह्मभक्त भी हैं। अगहन की शुक्ला चतुर्थी है। बृहस्पति, १४ दिसम्बर १८८२। परमहंसदेव के परम भक्त बलराम बाबू के साथ ये लोग कलकत्ते से नाव पर चढ़कर आये हैं। श्रीरामकृष्ण दोपहर को ज़रा विश्राम कर रहे हैं। उनके पास रविवार को भीड़ ज्यादा होती है। ये भक्त उनसे एकान्त में बातचीत करना चाहते हैं, इसलिए प्रायः दूसरे ही समय में आते हैं।

परमहंसदेव अपने तखत पर बैठे हुए हैं; विजय, बलराम, मास्टर और दूसरे भक्त उनकी ओर मुँह करके पश्चिमास्य बैठे हैं।

इस समय विजय साधारण ब्राह्मसमाज में आचार्य की नौकरी करते हैं; इसलिए अपनी इच्छा के अनुसार कुछ नहीं कह सकते। सर्वदा

नौकरी का ध्यान रखना पड़ता है। विजय का जन्म एक पवित्र और अत्यन्त उच्च कुल में हुआ है। भगवान् श्री चैतन्यदेव के एक प्रधान पार्षद, निराकार परब्रह्म की चिन्ता में लीन रहने वाले अद्वैत गोस्वामी विजय के पूर्वपुरुष हैं; अतएव पवित्र रक्त की धारा अब तक विजय की देह में प्रवाहित होती है। भगवत्प्रेम का अंकुर प्रकाशोन्मुख है, केवल समय की प्रतीक्षा कर रहा है। भगवान् श्रीरामकृष्ण की भगवत्प्रेम की अपूर्व अवस्था को वे मंत्रमुग्ध सर्प की तरह टकटकी लगाए देख रहे हैं। परमहंसदेव को नाचते हुए देखकर स्वयं भी नाचने लग जाते हैं।

विष्णु 'एड़ेदय' में रहता था। उसने गले में छुरा लगाकर आत्महत्या कर ली। आज उसीकी चर्चा हो रही है।

श्रीरामकृष्ण—देखो, इस लड़के ने आत्महत्या कर ली, जब से यह सुना, मन खराब हो रहा है। यहाँ आता था, स्कूल में पढ़ता था, कहता था—संसार अच्छा नहीं लगता। पश्चिम चला गया था, किसी आत्मीय के यहाँ कुछ दिन ठहरा था। वहाँ निर्जन वन में, मैदान में, पहाड़ में बैठा हुआ ध्यान करता था। उसने मुझसे कहा था, न जाने ईश्वर के कितने रूपों के दर्शन करता हूँ।

"जान पड़ता है, यह अन्तिम जन्म था। पूर्वजन्म में बहुत कुछ काम उसने कर डाला था। कुछ बाकी रह गया था, वह भी जान पड़ता है इस जन्म में पूरा हो गया।

"पूर्वजन्म का संस्कार मानना चाहिए। मैंने सुना है, एक मनुष्य शवसाधना कर रहा था। घने जंगल में भगवती की आराधना करता था। परन्तु वह अनेक प्रकार की विभीषिकाएँ देखने लगा। अन्त को उसे

बाघ पकड़ ले गया। वहीं एक और आदमी बाघ के भय से पास के एक पेड़ पर बैठा हुआ था। शव तथा पूजा की अनेक सामग्रियाँ इकट्ठी देखकर वह उतर पड़ा और आचमन करके शव के ऊपर बैठ गया। कुछ जप करते ही माँ प्रकट होकर बोली, मैं तुझ पर प्रसन्न हूँ—तू वर माँग। माता के पादपंकजों में प्रणत होकर वह बोला—'माँ, एक बात पूछता हूँ, तुम्हारा कार्य देखकर बड़ा आश्चर्य होता है। उस मनुष्य ने इतनी मेहनत की, इतना आयोजन किया, इतने दिनों से तुम्हारी साधना कर रहा था, उस पर तो तुम्हारी कृपा न हुई; प्रसन्न तुम मुझ पर हुई जो भजन-साधन-ज्ञान-भक्ति आदि कुछ नहीं जानता।' हँसकर भगवती बोलीं—'बेटा, तुम्हें जन्मान्तर की बात याद नहीं है। तुम जन्म-जन्म से मेरी तपस्या कर रहे हो। उसी साधना-बल से इस प्रकार सब कुछ तैयार पाया और तुम्हें मेरे दर्शन भी मिले। अब कहो, क्या वर चाहते हो!' "

एक भक्त बोल उठे, "आत्महत्या की बात सुनकर भय लगता है।"

श्रीरामकृष्ण—आत्महत्या करना महापाप है, घूम-फिरकर संसार में आना पड़ता है, और फिर वही संसार-दुःख भोगना पड़ता है।

"परन्तु यदि कोई ईश्वर-दर्शन के बाद शरीर त्याग दे, तो उसे आत्महत्या नहीं कहते। उस प्रकार के शरीर-त्याग में दोष नहीं है। ज्ञानलाभ के पश्चात् कोई कोई शरीर छोड़ देते हैं। जब मिट्टी के साँचे में सोने की मूर्ति ढल जाती है, तब मिट्टी का साँचा चाहे कोई रखे, चाहे तोड़ दे।

"कई वर्ष हो गये, बराहनगर से एक लड़का आता था, उम्र कोई बीस साल की होगी। नाम गोपाल सेन था। जब यहाँ आता था तब उसको इतना भाव हो जाता था कि हृदय (श्रीरामकृष्ण के भाञ्जे) को उसे पकड़ रखना पड़ता था कि कहीं गिरकर उसके हाथ पैर न टूट जायँ।

"उस लड़के ने एक दिन एकाएक मेरे पैरों पर हाथ रखकर कहा—'और मैं न आ सकूँगा—तो अब मैं चला!' कुछ दिन बाद सुना कि उसने देह छोड़ दी।"

(४)

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् ॥ गीता, ९। ३३

जीव के चार दर्जे। बद्ध जीव के लक्षण। कामिनी-कांचन।

श्रीरामकृष्ण—जीव चार दर्जे के कहे गये हैं—बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य। संसार की उपमा जाल से है और जीव की मछली से। ईश्वर (जिनकी माया यह संसार है) मछुआ हैं। जब मछुए के जाल में मछलियाँ पड़ती हैं, तब कुछ मछलियाँ जाल चीरकर भागने की कोशिश करती हैं। उन्हें मुमुक्षु जीव कहना चाहिए। जो भागने की चेष्टा करती हैं उनमें से सभी नहीं भाग सकतीं। दो-चार मछलियाँ ही धड़ाम से कूदकर भाग जाती हैं। तब लोग कहते हैं, वह बड़ी मछली निकल गई। ऐसे ही दो-चार मनुष्य मुक्त जीव हैं। कुछ मछलियाँ स्वभावतः ऐसी सावधानी से रहती हैं कि कभी जाल में आती ही नहीं। नारदादि नित्य जीव कभी संसार-जाल में नहीं फँसते। परन्तु प्रायः अधिकतैर मछलियाँ जाल में पड़ जाती हैं, उन्हें होश नहीं कि जाल में पड़ी हैं, अब मरना

होगा। जाल में पड़ते ही जाल सहित इधर से उधर जाती हैं, कभी कीच में देह छिपाना चाहती हैं। भागने की कोई चेष्टा नहीं, बल्कि कीच में और गड़ जाती हैं। यही बद्ध जीव हैं। बद्ध जीव संसार में—अर्थात् कामिनी-कांचन में फँसे हुए हैं; कलङ्कसागर में मग्न हैं, और सोचते हैं कि बड़ी मौज में हैं! जो मुमुक्षु या मुक्त हैं, संसार उन्हें कूप जान पड़ता है, अच्छा नहीं लगता; इसीलिए कोई कोई ज्ञानलाभ हो जाने पर शरीर छोड़ देते हैं, परन्तु इस तरह का शरीर-त्याग बड़ी दूर की बात है।

"बद्ध जीवों—संसारी जीवों को किसी तरह होश नहीं होता। कितना दुःख पाते हैं, कितना धोखा खाते हैं, कितनी विपदाएँ झेलते हैं, फिर भी बुद्धि ठिकाने नहीं होती।

"ऊँट कटीली घास को बहुत चाव से खाता है। परन्तु जितना ही खाता है उतना ही मुँह से धर धर खून गिरता है, फिर भी कटीली घास का खाना नहीं छोड़ता! संसारी मनुष्यों को इतना शोकताप मिलता है, किन्तु कुछ दिन बीते कि सब भूल गये। बच्चे की वही माँ जो मारे शोक के अधीर हो रही थी, कुछ दिन बीत जाने पर फिर बाल सँवारती, जूड़ा बाँधती और आभूषणों से सजती है। इसी तरह मनुष्य बेटी की ब्याह में कुल धन गँवा बैठता है, परन्तु हर साल बेटियों को पैदा करने में घाटा नहीं होने देता! मुक़दमेबाज़ी से घर में एक कौड़ी नहीं रह जाती तो भी मुक़दमा के लिए लोटा डोर टांगे फिरते हैं! जितने लड़के पैदा हुए हैं, अच्छा भोजन, अच्छे कपड़े, अच्छा घर, उन्हीं को नहीं मिलता, ऊपर से हर साल एक और पैदा होता है!

"कभी कभी तो 'साँप छछूंदर' वाली गति होती है। न निगल सके, न उगल सके; बद्ध जीव कभी समझ भी गया कि संसार में कुछ

है नहीं, सिर्फ गुठली चाटना है; तो भी वह उसे नहीं छोड़ सकता, ईश्वर की ओर मन नहीं ले जा सकता।

"केशव सेन के एक आत्मीय को देखा, उम्र कोई पचास साल की थी, पर ताश खेल रहा था! मानो ईश्वर का नाम लेने का समय नहीं आया!

"बद्ध जीव का एक और लक्षण है। यदि उसको संसार से हटाकर किसी अच्छी जगह पर ले जाओ, तो वह तड़प-तड़पकर मर जायगा। विष्ठा के कीट को विष्ठा ही में आनन्द मिलता है। उसी से वह हृष्टपुष्ट होता है। उस कीट को अगर अन्न की हण्डी में रख दो तो वह मर जायगा। (सब स्तब्ध)

(५)

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते॥ गीता, ६।३५

तीव्र वैराग्य तथा बद्ध जीव।

विजय—बद्ध जीवों के मन की कैसी अवस्था हो तो मुक्ति हो सकती है?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर की कृपा से तीव्र वैराग्य होने पर इस कामिनी-कांचन की आसक्ति से निस्तार हो सकता है। जानते हो तीव्र वैराग्य किसे कहते हैं? 'बनत बनत बनि जाई', 'चलो राम भजो,' यह सब मन्द वैराग्य है। जिसे तीव्र वैराग्य होता है उसके प्राण

भगवान् के लिए व्याकुल रहते हैं, जैसे अपनी कोख के बच्चे के लिए माँ व्याकुल रहती है। जिसको तीव्र वैराग्य होता है वह भगवान् को छोड़ और कुछ नहीं चाहता। संसार को वह कुआँ समझता है; उसे जान पड़ता है कि अब डूबा। आत्मीयों को वह काला नाग देखता है, उनके पास से उसकी भागने की इच्छा होती है और भागता भी है। 'घर का काम पूरा कर लें तब ईश्वर की चिन्ता करेंगे', यह उसके मन में आता ही नहीं, भीतर बड़ी ज़िद रहती है।

"तीव्र वैराग्य किसे कहते हैं, इसकी एक कहानी सुनो। किसी देश में एक बार वर्षा कम हुई। किसान नालियाँ काट-काटकर दूर से पानी लाते थे। एक किसान बड़ा हठी था। उसने एक दिन शपथ ली कि जब तक पानी न आने लगे, नहर से नाली का योग न हो जाय, तब तक बराबर नाली खोदूँगा। इधर नहाने का समय हुआ। उसकी स्त्री ने लड़की को उसे बुलाने भेजा। लड़की बोली, बप्पा, दोपहर हो गई, चलो तुमको माँ बुलाती हैं। उसने कहा, तू चल, हमें अभी काम है। दोपहर ढल गई, पर वह काम पर डटा रहा। नहाने का नाम न लिया। तब उसकी स्त्री खेत में जाकर बोली, 'नहाओगे कि नहीं? रोटियाँ ठंडी हो रही हैं। तुम तो हर काम में हठ करते हो। काम कल करना या भोजन के बाद करना।' गालियाँ देता हुआ कुदार उठाकर किसान स्त्री को मारने दौड़ा। बोला, तेरी बुद्धि मारी गई है क्या? देखती नहीं कि पानी नहीं बरसता; खेती का काम सब पड़ा है, अब की बार लड़के बच्चे क्या खायँगे? सबको भूखों मरना होगा। हमने यही ठान लिया है कि खेत में पहले पानी लाएँगे, नहाने-खाने की बात पीछे होगी। मामला टेढ़ा देखकर उसकी स्त्री वहाँ से लौट पड़ी। किसान ने दिन भर

जी-तोड़ मेहनत करके शाम के समय नहर के साथ नाली का योग कर दिया। फिर एक किनारे बैठकर देखने लगा, किस तरह नहर का पानी खेत में 'कलकल' स्वर से बहता हुआ आ रहा है, तब उसका मन शान्ति और आनन्द से भर गया। घर पहुँचकर उसने स्त्री को बुलाकर कहा, ले आ अब डोल और रस्सी। स्नान भोजन करके निश्चिन्त होकर फिर वह सुख से खर्राटे लेने लगा। ज़िद यह है और यही तीव्र वैराग्य की उपमा है।

"खेत में पानी लाने के लिए एक और किसान गया था। उसकी स्त्री जब गई और बोली,—धूप बहुत हो गई, चलो अब, इतना काम नहीं करते; तब वह चुपचाप कुदार एक ओर रखकर बोला—अच्छा, तू कहती है तो चल। (सब हँसते हैं।) वह किसान खेत में पानी न ला सका। यह मन्द वैराग्य की उपमा है।

"हठ बिना जैसे किसान खेत में पानी नहीं ला सकता, वैसे ही मनुष्य ईश्वरदर्शन नहीं कर सकता!"

(६)

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत् कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी॥

गीता, २।७०

कामिनी-कांचन के लिए दासत्व।

श्रीरामकृष्ण—पहले तुम इतना आते थे पर अब क्यों नहीं आते?

विजय—यहाँ आने की बड़ी इच्छा रहती है, परन्तु अब मैं

स्वाधीन नहीं हूँ, ब्राह्म-समाज में नौकरी करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—कामिनी-कांचन जीव को बाँध लेते हैं। जीव की स्वाधीनता चली जाती है। कामिनी ही से कांचन की आवश्यकता होती है जिसके लिए दूसरों की गुलामी की जाती है; फिर स्वाधीनता नहीं रहती, फिर तुम अपने मन का काम नहीं कर सकते।

"जयपुर में गोविन्द जी के पुजारी पहले पहल अपना विवाह नहीं करते थे। तब वे बड़े तेजस्वी थे। एक बार राजा के बुलाने पर भी वे नहीं गए और कहा—राजा ही को आने को कहो। फिर राजा और पञ्चों ने मिलकर उनका विवाह करा दिया, तब राजा से साक्षात् करने के लिए किसी को बुलाना नहीं पड़ा! वे खुद हाज़िर होते थे। कहते 'महाराज, आशीर्वाद देने आए हैं, यह निर्माल्य लाए हैं, धारण कीजिये।' आज घर उठाना है, आज लड़के का 'अन्नप्राशन' है, आज लड़के का पाठशाला जाने का शुभ मुहूर्त है, इन्हीं कारणों से आना पड़ता है।

"'बारह सौ 'भगत' और तेरह सौ 'भगतिन'—वाली कहावत तो जानते हो न? नित्यानन्द गोस्वामी के पुत्र वीरभद्र के तेरह सौ 'भगत' शिष्य थे। जब वे सिद्ध हो गए तब वीरभद्र डरे। वे सोचने लगे कि, ये सब के सब सिद्ध हो गए, लोगों को जो कह देंगे वही होगा; जिधर से निकलेंगे वहीं भय है, क्योंकि मनुष्य बिना जाने यदि कोई अपराध कर डालेंगे तो उनका अहित होगा। यह सोचकर वीरभद्र ने उन्हें बुलाकर कहा, तुम गंगातट से सन्ध्या-उपासना करके हमारे पास आओ। 'भगत' सब ऐसे तेजस्वी थे कि ध्यान करते ही करते समाधिमग्न हो गये। कब ज्वार का पानी सिर पर से बह गया, इसकी उन्हें खबर ही नहीं। भाटा हो गया, तथापि ध्यानभंग न हुआ। तेरह सौ भगतों में से

एक सौ समझ गये थे कि वीरभद्र क्या कहेंगे। आचार्य की बात को टालना नहीं चाहिए, अतएव वे तो खिसक गए, वीरभद्र से साक्षात् नहीं किया, रहे बारह सौ भगत, वे वीरभद्र के पास लौटकर आए। वीरभद्र बोले, ये तेरह सौ भगतिन तुम्हारी सेवा करेंगी, तुम लोग इनसे विवाह करो। शिष्यों ने कहा, जैसी आप की आज्ञा; परन्तु हममें से एक सौ न जाने कहाँ चले गये। उन बारह सौ भगतों के साथ एक-एक सेवादासी रहने लगी। फिर उनका वह तेज, वह तपस्या बल न रह गया। स्त्री के साथ रहने के कारण वह बल जाता रहा, क्योंकि उसके साथ स्वाधीनता नहीं रह जाती। (विजय से) तुम लोग स्वयं यह देखते हो; दूसरों का काम करते हुए क्या हो रहे हो। और देखो, इतने पासवाले कितने अंग्रेज़ी के पण्डित नौकरी करके सुबह-शाम मालिकों के बूट की ठोकरें खाते हैं। इसका कारण केवल 'कामिनी' है। विवाह करके यह हरीभरी दुनिया उजाड़ने की इच्छा नहीं होती। इसीलिए यह अपमान, दासता की यह इतनी मार !

"यदि एक बार उस प्रकार के तीव्र वैराग्य से भगवान् मिल जायँ तो फिर स्त्रियों के प्रति आसक्ति नहीं रह जाती। घर में रहने से भी स्त्री की लालसा नहीं होती, फिर उससे कोई भय नहीं रहता। यदि एक चुम्बक-पत्थर बड़ा हो और एक छोटा, तो लोहे को कौन खींच सकता है? बड़ा ही खींच सकता है। बड़ा चुम्बक-पत्थर ईश्वर है और कामिनी छोटा चुम्बक-पत्थर है। तो भला कामिनी क्या कर सकेगी?"

एक भक्त—महाराज, क्या स्त्रियों से घृणा करें?

श्रीरामकृष्ण—जिन्होंने ईश्वरलाभ कर लिया है, वे स्त्रियों को ऐसी दृष्टि से नहीं देखते, जिससे भय हो। वे यथार्थ देखते हैं कि स्त्रियों

में ब्रह्ममयी माता का अंश है; और उन्हें माता जानकर उनकी पूजा करते हैं। (विजय से) तुम कभी कभी आया करो, तुम्हें देखने की बड़ी इच्छा होती है।

(७)

ईश्वरादेश के पश्चात् आचार्य पद।

विजय—ब्राह्म-समाज का काम करना पड़ता है, इसलिए हर समय नहीं आ सकता। अवकाश मिलने पर आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण (विजय से)—देखो, आचार्य का काम बड़ा कठिन है। ईश्वर का प्रत्यक्ष आदेश पाये बिना लोक-शिक्षा नहीं दी जा सकती।

"यदि आदेश पाये बिना ही उपदेश दिया जाय तो लोग उस ओर ध्यान नहीं देते, उस उपदेश में कोई शक्ति नहीं रहती। पहले साधना करके या जिस तरह हो ईश्वर को प्राप्त करना चाहिए। उनकी आज्ञा मिलने पर फिर लेक्चर दिया जा सकता है! उस देश (श्रीरामकृष्ण अपनी जन्मभूमि को 'वह देश' कहते थे) में 'हलदारपुकुर' नाम का एक तालाब है। उनके बाँध पर लोग शौच के लिए जाते थे। जो लोग घाट पर आते थे, वे उन्हें खूब गालियाँ देते थे, खूब गुल-गपाड़ा मचाते थे, परन्तु गालियों से कोई काम न होता था। दूसरे दिन फिर वही हालत होती थी। अन्त को कंपनी के चपरासी नोटिस लटका गये कि शौच के लिए जाने की सख्त मनाही है; न मानने वाले को सज़ा दी जायगी। इस नोटिस के बाद फिर वहाँ कोई शौच के लिए नहीं जाता था।

"उनके आदेश के पश्चात् कहीं भी आचार्य हुआ जा सकता

है। जिसको उनका आदेश मिलता है, उसे उनकी शक्ति भी मिलती है; तब वह आचार्य का कठिन काम कर सकता है।

"एक बड़े ज़मींदार से उसकी एक प्रजा मुकदमा लड़ रही थी। तब लोग समझ गये कि उस प्रजा के पीछे कोई ज़ोरदार आदमी है; सम्भव है कि कोई बड़ा ज़मींदार ही उसकी ओर से मुकदमा चला रहा हो। मनुष्य साधारण जीव है, ईश्वर की शक्ति के बिना आचार्य जैसा कठिन काम वह नहीं कर सकता।"

विजय—महाराज, ब्राह्म-समाज में जो उपदेश दिये जाते हैं, क्या उनसे लोककल्याण नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण—मनुष्य में वह शक्ति कहाँ कि वह दूसरे को संसार-बन्धन से मुक्त कर सके? यह भुवनमोहिनी माया जिनकी है वही इस माया से मुक्त कर सकते हैं। सच्चिदानन्द गुरु को छोड़ और दूसरी गति नहीं है। जिसको ईश्वर-दर्शन नहीं हुआ, उनका आदेश नहीं मिला, जो ईश्वर की शक्ति से शक्तिशाली नहीं है, उसकी क्या मजाल जो जीवों का भवबन्धन-मोचन कर सके?

"मैं एक दिन पंचवटी के निकट झाऊतल्ले की ओर गया था। एक मेंढक की आवाज़ सुनी। बढ़कर देखा तो कौड़ियाला साँप उसको पकड़े हुए था, न छोड़ सकता था, न निगल सकता था; उस मेंढक की भी भवव्यथा दूर नहीं होती थी। तब मैंने सोचा कि यदि इसको कोई असल साँप पकड़ता तो तीन ही पुकार में इसको चुप हो जाना पड़ता। इस कौड़ियाले ने पकड़ा है, इसीलिए साँप की भी दुर्दशा है और मेंढक की भी!

"यदि सद्गुरु हो तो जीव का अहंकार तीन ही पुकार में दूर होता है। गुरु कच्चा हुआ तो गुरु की भी दुर्दशा है और शिष्य की भी। शिष्य का अहंकार नहीं दूर होता, न उसके भवबन्धन की फाँस ही कटती है। कच्चे गुरु के पल्ले पड़ा तो शिष्य मुक्त नहीं होता।"

(८)

अहंकारविमूढात्मा कर्ताहं इति मन्यते।—गीता

अहंबुद्धि का नाश और ईश्वर-दर्शन।

विजय—महाराज, हम लोग इस तरह बद्ध क्यों हो रहे हैं? ईश्वर को क्यों नहीं देख पाते?

श्रीरामकृष्ण—जीव का अहंकार ही माया है। यही अहंकार कुल आवरणों का कारण है। 'मैं' मरा कि बला टली। यदि ईश्वर की कृपा से 'मैं अकर्ता हूँ', यह ज्ञान हो गया तो वह मनुष्य तो जीवन्मुक्त हो गया। फिर उसे कोई भय नहीं।

"यह माया या 'अहं' मेघ की तरह है। मेघ का एक छोटा सा ही टुकड़ा क्यों न हो, पर उससे सूर्य नहीं दीख पड़ते। उसके हट जाने से ही सूर्य दीख पड़ते हैं। यदि श्रीगुरु की कृपा से एक बार अहंबुद्धि दूर हो जाय तो फिर ईश्वर-दर्शन होते हैं।

" सिर्फ ढाई हाथ की दूरी पर श्रीरामचन्द्र हैं, जो साक्षात् ईश्वर हैं। बीच में सीतारूपिणी माया का पर्दा पड़ा हुआ है, जिसके कारण

लक्ष्मणरूपी जीव को ईश्वर के दर्शन नहीं होते। यह देखो, तुम्हारे मुँह के आगे मैं इस अंगौछे की ओट करता हूँ। अब तुम मुझे नहीं देख सकते। पर हूँ मैं तुम्हारे बिलकुल निकट। इसी तरह औरों की अपेक्षा भगवान् निकट हैं, परन्तु इस मायावरण के कारण तुम उनके दर्शन नहीं पाते।

"जीव तो स्वयं सच्चिदानन्दस्वरूप हैं, परन्तु इसी माया या अहंकार से वे नाना उपाधियों में पड़े हुए अपने स्वरूप को भूल गये हैं।

"एक एक उपाधि होती है और जीवों का स्वभाव बदल जाता है। किसी ने काली धारीदार धोती पहनी कि देखना, प्रेम के गीतों की तान मुँह से आप ही आप निकल पड़ती है, और ताश खेलना, सैरसपाटे के लिए निकलना तो हाथ में छड़ी लेकर—ये सब आप ही आप जुट जाते हैं! चाहे दुबला-पतला ही हो, परन्तु बूट पहनते ही सीटी बजाना शुरू हो जाता है; सीढ़ियों पर चढ़ते समय साहबों की तरह उछल उछलकर चढ़ता है! मनुष्य के हाथ में कलम रहे तो उसका यह गुण है कि कागज़ का एक जैसा-तैसा टुकड़ा पाते ही वह उस पर कलम घिसना शुरू कर देता है

"रुपया-भी एक विचित्र उपाधि है। रुपया होते ही मनुष्य एक दूसरी तरह का हो जाता है। वह पहले जैसा नहीं रह जाता। यहाँ एक ब्राह्मण आया जाया करता था। बाहर से वह बड़ा विनयी था। कुछ दिन बाद हम लोग कोन्नगर गए, हृदय साथ था। हम लोग नाव पर से उतरे कि देखा, वही ब्राह्मण गंगा के किनारे बैठा हुआ है। शायद हवाखोरी

के लिए आया था। हम लोगों को देखकर बोला, ' क्यों महाराज, कहो कैसे हो ? ' उसकी आवाज़ सुनकर मैंने हृदय से कहा—" हृदय, सुना, इसके धन हो गया है, इसी से आवाज़ किरकिराने लगी !" हृदय हँसने लगा।

" किसी मेंढक के पास एक रुपया था। वह एक बिल में रखा रहता था। एक हाथी उस बिल को लाँघ गया। तब मेंढक बिल से निकलकर बड़े गुस्से में आकर लगा हाथी को लात दिखाने ! और बोला, ' तुझे इतनी हिम्मत कि मुझे लांघ जाय ! ' रुपये का इतना अहंकार होता है !

" ज्ञानलाभ होने से अहंकार दूर हो सकता है। ज्ञानलाभ होने से समाधि होती है। जब समाधि होती है, तभी अहंकार जाता है। ऐसा ज्ञानलाभ बड़ा कठिन है।

" वेदों में कहा है कि मन सप्तम भूमि पर जाने से समाधि होती है। समाधि होने से ही अहंकार दूर हो सकता है। मन प्रायः प्रथम तीन भूमियों में रहता है। लिंग, गुदा और नाभि ये ही तीन भूमियाँ हैं। तब मन संसार की ओर—कामिनी-कांचन की ओर खिंचा रहता है। जब मन हृदय में रहता है, तब ईश्वरी ज्योति के दर्शन होते हैं। वह मनुष्य ज्योति देखकर कह उठता है—' यह क्या, यह क्या है ! ' इसके बाद मन कण्ठ में आता है। तब केवल ईश्वर की ही चर्चा उठाने और सुनने की इच्छा होती है। कपाल या भौंहों के बीच में जब मन जाता है तब सच्चिदानन्द-रूप दीख पड़ता है। उस रूप को गले लगाने और उसे छूने की इच्छा होती है, परन्तु छुआ नहीं जाता। लालटेन के भीतर की बत्ती को कोई चाहे देख ले पर उसे छू नहीं सकता, जान पड़ता है कि छू

लिया परन्तु छू नहीं पाता। जब सप्तम भूमि पर मन जाता है तब अहं नहीं रह जाता, समाधि होती है।"

विजय—वहाँ पहुँचने पर जब ब्रह्मज्ञान होता है, तब मनुष्य क्या देखता है?

श्रीरामकृष्ण—सप्तम भूमि में मन के जाने पर क्या होता है, वह मुँह से नहीं कहा जा सकता।

"जो 'मैं' संसारी बनता है, कामिनी-कांचन में फँसता है, वह बदमाश 'मैं' है। जीव और आत्मा में भेद सिर्फ इसलिए है कि बीच में यह 'मैं' जुड़ा हुआ है। पानी पर अगर एक लाठी डाल दी जाय तो पानी दो हिस्सों में बँटा हुआ दीख पड़ता है। परन्तु वास्तव में है वह एक ही पानी; लाठी से उसके दो हिस्से नज़र आते हैं।

"यह लाठी 'अहं' ही है। लाठी उठा लो वही एक जल रह जायगा।

"बदमाश 'मैं' वह है जो कहता है, मुझे नहीं जानते हो? मेरे इतने रुपये हैं, क्या मुझसे भी कोई बड़ा आदमी है? यदि किसी ने दस रुपये चुरा लिए तो पहले वह चोर से रुपये छीन लेता है, फिर चोर की ऐसी मरम्मत करता है कि पसली-पसली ढीली कर देता है; इतने पर भी उसको नहीं छोड़ता, पहरेवाले के हाथ सौंपता है और सज़ा दिलवाता है! 'बदमाश मैं' कहता है, अरे, इसने मेरे दस रुपये चुराये थे, उफ़ इतनी हिम्मत!"

विजय—यदि बिना ' अहं ' के दूर हुए सांसारिक भोगों से पिण्ड नहीं छूटने का—समाधि नहीं होने की, तो ज्ञानमार्ग पर आना ही अच्छा है, क्योंकि उससे समाधि होगी। यदि भक्तियोग में ' अहं ' रह जाता है तो ज्ञानयोग ही अच्छा ठहरा।

श्रीरामकृष्ण—समाधि से एक दो मनुष्यों का अहंकार जाता है अवश्य, परन्तु प्रायः नहीं जाता। लाख विचार करो, पर देखना कि ' अहं ' घूम-घामकर फिर उपस्थित है। आज बरगद का पेड़ काट डालो, कल सुबह को उसमें अंकुर निकला हुआ ही देखोगे। ऐसी दशा में यदि ' मैं ' नहीं दूर होने का तो रहने दो साले को दास ' मैं ' बना हुआ। ' हे ईश्वर ! तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ, ' इसी भाव में रहो। ' मैं दास हूँ, ' मैं भक्त हूँ ' ऐसे ' मैं ' में दोष नहीं। मिठाई खाने से अम्लशूल होता है, पर मिश्री मिठाइयों में नहीं गिनी जाती।

" ज्ञानयोग बड़ा कठिन है। देहात्मबुद्धि का नाश हुए बिना ज्ञान नहीं होता। कलियुग में प्राण अन्नगत है, अतएव देहात्मबुद्धि, अहंबुद्धि नहीं मिटती। इसलिए कलियुग के लिए भक्तियोग है। भक्तिपथ सीधा पथ है। हृदय से व्याकुल होकर उनके नाम का स्मरण करो, उनसे प्रार्थना करो, भगवान् मिलेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं।

" मानो जलराशि पर बिना बाँस रखे ही एक रेखा खींची गई है, मानो जल के दो भाग हो गए हैं; परन्तु वह रेखा बड़ी देर तक नहीं रहती। ' दास मैं ' या ' भक्त का मैं ' अथवा ' बालक का मैं ' ये सब ' मैं ' की रेखाएँ मात्र हैं। "

(९)

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥

गीता, १२।५

भक्तियोग ही युगधर्म है। ज्ञानयोग की विशेष कठिनता।

विजय—महाराज, आप 'बदमाश मैं' को दूर करने के लिए कहते हैं, तो क्या 'दास मैं' में दोष नहीं?

श्रीरामकृष्ण—नहीं। 'दास मैं' अर्थात् मैं ईश्वर का दास हूँ, इस अभिमान में दोष नहीं, बल्कि इससे भगवान् मिलते हैं।

विजय—अच्छा, तो 'दास मैं' वाले के कामक्रोधादि कैसे हैं?

श्रीरामकृष्ण—अगर उसके भाव में पूरी पूरी सचाई आ जाय तो कामक्रोधादि का आकार मात्र रह जाता है। यदि ईश्वरलाभ के पश्चात् भी किसी का 'दास मैं' या 'भक्त मैं' बना रहा तो वह मनुष्य किसी का अनिष्ट नहीं कर सकता। पारस पत्थर छू जाने पर तलवार सोना हो जाती है, तलवार का स्वरूप तो रहता है, पर वह किसी की हिंसा नहीं करती।

"नारियल के पेड़ का पत्ता झड़ जाता है, उसकी जगह सिर्फ दाग बना रहता है, जिससे यह समझ लिया जाता है कि कभी यहाँ पत्ता लगा हुआ था। इसी तरह जिसको ईश्वर मिल गये हैं, उसके अहंकार का चिह्न भर रह जाता है, काम-क्रोध का स्वरूप मात्र रह जाता

है, पर उसकी बालक जैसी अवस्था हो जाती है। बालक सत्त्वरजस्तम में से किसी गुण के बन्धन में नहीं आता। बालक जितनी जल्दी किसी वस्तु पर अड़ जाता है, उतनी ही जल्दी वह उसे छोड़ भी देता है। एक पाँच रुपये की कीमत का कपड़ा चाहे तुम धेले के खिलौने पर रिझाकर फुसला लो। कभी तो वह बहककर कह देगा—'नहीं, मैं न दूँगा, मेरे बाबूजी ने मोल ले दिया है।' और लड़के के लिए सभी बराबर हैं। ये बड़े हैं, यह छोटा है, यह ज्ञान उसे नहीं; इसीलिये उसे जाति-पाँति का विचार भी नहीं है। माँ ने कह दिया है—'वह तेरा दादा है,' फिर चाहे वह लोध हो, वह उसी के साथ बैठकर रोटी खाता है। बालक को घृणा नहीं, शुचि और अशुचि पर ध्यान नहीं, शौच के लिये जाकर हाथ नहीं मटियाता।

"कोई कोई समाधि के बाद भी 'भक्त का मैं,' 'दास का मैं' लेकर रहते हैं। 'मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो,' 'मैं भक्त हूँ, तुम भगवान् हो,' यह अभिमान भक्तों का बना रहता है। ईश्वरलाभ के पश्चात् भी रहता है। सम्पूर्ण 'मैं' नहीं दूर होता। और फिर इसी अभिमान का अभ्यास करते करते ईश्वर-प्राप्ति भी होती है। यही भक्तियोग है।

"भक्ति के मार्ग पर चलने से भी ब्रह्मज्ञान होता है। भगवान् सर्वशक्तिमान् हैं। वे इच्छा करें तो ब्रह्मज्ञान भी दे सकते हैं। भक्त प्रायः ब्रह्मज्ञान नहीं चाहते। 'मैं भक्त हूँ, तुम प्रभु हो,' 'मैं बच्चा हूँ, तू माँ है' वे ऐसा अभिमान रखना चाहते हैं।"

विजय—जो लोग वेदान्त-विचार करते हैं, वे भी तो उन्हें पाते हैं?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, विचारमार्ग से भी वे मिलते हैं। इसीको ज्ञानयोग कहते हैं। विचारमार्ग बड़ा कठिन है। सप्तम भूमि की बात तो तुम्हें बतलाई गई है। सप्तम भूमि पर मन के पहुँचने से समाधि होती है, परन्तु कलि में जीवों का प्राण अन्नगत है, तो 'ब्रह्म सत्य, संसार मिथ्या' का बोध फिर कब हो सकता है? ऐसा बोध देहबुद्धि के बिना दूर हुए नहीं हो सकता। 'मैं न शरीर हूँ, न मन हूँ, न चौबीस तत्त्व हूँ, मैं सुख और दुःख से परे हूँ, मुझे फिर कैसा रोग—कैसा शोक—कैसी जरा—कैसी मृत्यु?' ऐसा बोध कलिकाल में होना कठिन है। चाहे जितना विचार करो, देहात्मबुद्धि कहीं न कहीं से आ ही जाती है। बट के पेड़ को काट डालो, तुम तो सोचते हो कि जड़समेत उखाड़ फेंका, पर उसमें कनखट निकला ही हुआ देखोगे! देहाभिमान नहीं दूर होता; इसीलिए कलिकाल में भक्तियोग अच्छा है, सीधा है।

"और 'मैं चीनी बन जाना नहीं चाहता, चीनी खाना ही मुझे अच्छा जान पड़ता है।' मेरी कभी यह इच्छा नहीं होती कि कहूँ मैं ही ब्रह्म हूँ, मैं तो कहता हूँ 'तुम भगवान् हो, मैं तुम्हारा दास हूँ।' पाँचवीं और छठी भूमि के बीच में चक्कर काटना अच्छा है। छठी भूमि को पारकर सप्तम भूमि में ज्यादा देर तक रहने की मेरी इच्छा नहीं होती। मैं उनका नामगुण-कीर्तन करूँगा, यह मेरी इच्छा है। सेव्य-सेवक भाव बड़ा अच्छा है। और देखो, ये तरंगें गङ्गा ही की हैं, परन्तु तरंगों की गङ्गा है, ऐसा कोई नहीं कहता। 'मैं वही हूँ' यह अभिमान अच्छा नहीं। देहात्मबुद्धि के रहते ऐसा अभिमान जिसको होता है उसकी बड़ी हानि होती है, फिर वह आगे बढ़ नहीं सकता, धीरे धीरे पतित हो जाता है। वह दूसरों की आँखों में धूल झोंकता है, साथ ही अपनी

आँखों में भी; अपनी स्थिति का हाल वह नहीं समझ पाता।

" परन्तु मेड़ियाधसान की भक्ति से ईश्वर नहीं मिलते, उन्हें पाने के लिए 'प्रेमाभक्ति' चाहिए। 'प्रेमाभक्ति' का एक और नाम है 'रागभक्ति'। प्रेम या अनुराग के बिना भगवान् नहीं मिलते। ईश्वर पर जब तक प्यार नहीं होता तब तक उन्हें कोई प्राप्त नहीं कर सकता।

" और एक प्रकार की भक्ति है उसका नाम है 'वैध भक्ति'। इसका बहुत कुछ अनुष्ठान करते करते क्रमशः 'राग-भक्ति' होती है। जब तक रागभक्ति न होगी, तब तक ईश्वर नहीं मिलेंगे। उन्हें प्यार करना चाहिए। जब संसारबुद्धि बिलकुल चली जायगी—सोलह आना मन उन्हीं पर लग जायगा, तब वे मिलेंगे।

" परन्तु किसी किसी को रागभक्ति अपने आप ही होती है, स्वतः सिद्ध, लड़कपन से ही। बचपन से ही वह ईश्वर के लिए रोता है, जैसे प्रह्लाद। और एक 'विधिवादीय' भक्ति है। ईश्वर पर अनुराग उत्पन्न करने के लिए जप, तप, उपवास आदि विधिनिषेध माने जाते हैं; जैसे हवा लगने के लिए पंखा झलना; पंखे की ज़रूरत हवा के लिए है; परन्तु जब दक्षिणी हवा आप बह चलती है तब लोग पंखा रख देते हैं। ईश्वर पर अनुराग—प्रेम आप आ जाने से जप, तप आदि कर्म छूट जाते हैं। भगवत्प्रेम में मस्त हो जाने से वैध कर्म करने की फिर किसको समय है?

" जब तक उनका प्यार नहीं होगा, तब तक वह भक्ति कच्ची भक्ति है। जब उनका प्यार होता है, तब वह भक्ति सच्ची भक्ति कहलाती है।

"जिसकी भक्ति कच्ची है वह ईश्वर की कथा और उपदेशों की धारणा नहीं कर सकता। पक्की भक्ति होने पर ही धारणा होती है। फोटोग्राफ के शीशे पर अगर स्याही (Silver Nitrate) लगी हो तो जो चित्र उस पर पड़ता है वह ज्यों का त्यों उतर जाता है, परन्तु सादे शीशे पर चाहे हज़ारों चित्र दिखाए जायँ, एक भी नहीं उतरता। शीशे पर से चित्र हटा कि वही ज्यों का त्यों सफेद शीशा! ईश्वर पर बिना प्रीति हुए उपदेशों की धारणा नहीं।

विजय—महाराज, ईश्वर को कोई प्राप्त करना चाहे, उनके दर्शन करना चाहे तो क्या अकेली भक्ति से काम सध जायगा?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, भक्ति ही से उनके दर्शन हो सकते हैं। परन्तु पक्की भक्ति, प्रेमाभक्ति, रागभक्ति चाहिए। उसी भक्ति से उन पर प्रीति होती है, जैसे बच्चों को माँ का प्यार, माँ को बच्चे का प्यार और पत्नी को पति का प्यार होता है।

"इस प्यार, इस रागभक्ति के होने पर, स्त्री-पुत्र और आत्मीयों की ओर पहले जैसा आकर्षण नहीं रह जाता, फिर तो उन पर दया होती है। घर-द्वार विदेश जैसा जान पड़ता है। उसे देखकर सिर्फ एक कर्मभूमि का ख्याल जान पड़ता है; जैसे घर है देहात में और कलकत्ता है कर्मभूमि, कलकत्ते में किराए के मकान पर रहना पड़ता है कर्म करने के लिए। ईश्वर का प्यार होने से संसार की आसक्ति—विषयबुद्धि बिलकुल जाती रहेगी!

"विषयबुद्धि का लेशमात्र रहते उनके दर्शन नहीं हो सकते। दियासलाई अगर भीगी हो तो चाहे जितना रगड़ो वह जलेगी नहीं।

और बीसों सलाई मुफ्त ही बरबाद हो जाती हैं। विषयी मन भीगी दियासलाई है।

"श्रीमती (राधिका) ने जब कहा—मैं सर्वत्र कृष्णमय देखती हूँ, तब सखियाँ बोलीं—कहाँ, हम तो उन्हें नहीं देखतीं; तुम प्रलाप तो नहीं बक रही हो? श्रीमती बोलीं, सखियों, नेत्रों में अनुराग का अञ्जन लगा लो, तभी उन्हें देखोगी। (विजय से) तुम्हारे ब्राह्म-समाज ही के उपदेश में है—

"यह अनुराग, यह प्रेम, यह सच्ची भक्ति, यह प्यार यदि एक बार भी हो तो साकार और निराकार दोनों मिल जाते हैं।

ईश्वर-दर्शन उनकी कृपा बिना नहीं होता।

विजय—महाराज, क्या किया जाय जो ईश्वर-दर्शन हों?

श्रीरामकृष्ण—चित्तशुद्धि के बिना ईश्वर के दर्शन नहीं होते। कामिनी-कांचन में पड़कर मन मलिन हो गया है, उसमें जंग लग गया है। सुई में कीच लग जाने से उसे चुम्बक नहीं खींच सकता, मिट्टी-धूल साफ कर देने ही से चुम्बक खींचता है। मन का मैल नेत्रजल से धोया जा सकता है। 'हे ईश्वर, अब ऐसा काम न करूँगा', यह कहकर यदि कोई अनुताप करता हुआ रोवे तो मैल धुल जाता है। तब ईश्वर-रूपी चुम्बक मनरूपी सुई को खींच लेता है। तब समाधि होती है, ईश्वर के दर्शन होते हैं।

"परन्तु चेष्टा चाहे जितनी करो, बिना उनकी कृपा के कुछ नहीं होता। उनकी कृपा बिना, उनके दर्शन नहीं मिलते। और कृपा भी क्या

सहज ही होती है ? अहंकार का सम्पूर्ण त्याग कर देना चाहिए। मैं कर्ता हूँ, इस ज्ञान के रहते ईश्वर के दर्शन नहीं होते। भण्डार में अगर कोई हो, और तब घर के मालिक से अगर कोई कहे कि आप खुद चलकर चीज़ें निकाल दीजिये, तो वह यही कहता है, 'है तो वहाँ एक आदमी, फिर मैं क्यों जाऊँ !' जो खुद कर्ता बना बैठा है, उसके हृदय में ईश्वर सहज ही नहीं आते।

"कृपा होने से दर्शन होते हैं। वे ज्ञानसूर्य हैं। उनकी एक ही किरण से संसार में यह ज्ञानालोक फैला हुआ है। उसी से हम एक-दूसरे को पहचानते हैं और संसार में कितनी ही तरह की विद्याएँ सीखते हैं। अपना प्रकाश यदि वे एक बार अपने मुँह के सामने रखें तो दर्शन हो जायँ। सार्जन्ट रात को अँधेरे में हाथ में लालटेन लेकर घूमता है, पर उसका मुँह कोई नहीं देख पाता। और उसी लालटेन के उजाले में वह सबको देखता है, और आपस में सभी एक दूसरे का मुँह देखते हैं।

"यदि कोई सार्जन्ट को देखना चाहे तो उससे विनती करे, कहे—साहब, ज़रा लालटेन अपने मुँह के सामने लगाइये; आपको एक नज़र देख लूँ।

"ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि भगवान् एक बार कृपा करके आप अपना ज्ञानालोक अपने श्रीमुख पर धारण कीजिए, मैं आपके दर्शन करूँगा।

"घर में यदि दीपक न जले तो वह दारिद्रय का चिन्ह है। हृदय में ज्ञान का दीपक जलाना चाहिए। हृदय में ज्ञान का दीपक जलाकर उसको देखो।"

विजय अपने साथ दवा भी लाए हैं। श्रीरामकृष्ण के सामने पीयेंगे। दवा पानी में मिलाकर पी जाती है। श्रीरामकृष्ण पानी ले आए। विजय किराए की गाड़ी या नाव द्वारा आने में असमर्थ हैं, इसलिए कभी कभी श्रीरामकृष्ण खुद आदमी भेजकर उन्हें बुला लेते हैं। इस बार बलराम को भेजा था। किराया बलराम देंगे। शाम के समय विजय, नवकुमार और उनके दूसरे साथी बलराम की नाव पर चढ़े। बलराम उन्हें बागबाजार के घाट पर उतार देंगे। मास्टर भी साथ हो गए।

नाव बागबाजार के अन्नपूर्णा घाट पर लगाई गई। उतर कर सभी श्रीरामकृष्ण के अमृतोपम उपदेशों का मनन करते हुए अपने अपने घर पहुँचे।

परिच्छेद १२

प्राणकृष्ण, मास्टर आदि भक्तों के साथ।

(१)

समाधि में।

जाड़े का मौसम—पूस का महिना है। सोमवार, दिन के आठ बजे हैं। अगहन की कृष्णाष्टमी है, पहली जनवरी, १८८३।

श्रीरामकृष्ण काली मन्दिर के अपने कमरे में भक्तों के साथ बैठे हैं। दिन-रात भगवत्प्रेम—ब्रह्ममयी माता के प्रेम में मस्त रहते हैं।

फर्श पर चटाई बिछी है। आप उसी पर आकर बैठ गए। सामने हैं प्राणकृष्ण और मास्टर। श्रीयुत राखाल भी कमरे में बैठे हुए हैं। (इन्हें श्रीरामकृष्ण की अभीष्टदेवी काली जी ने श्रीरामकृष्ण को उनका मानसपुत्र बतलाया था; यही पीछे से स्वामी ब्रह्मानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए और रामकृष्ण-संघ के प्रथम संचालक हुए थे।) हाजरा महाशय घर के बाहर दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में बैठे हैं।

इस समय श्रीरामकृष्ण के अन्तरङ्ग सभी भक्त आने-जाने लगे हैं। लगभग साल भर से नरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, बलराम, मास्टर, बाबूराम, लाटू, आदि भक्त सदा आते-जाते रहते हैं। इनके आने के साल भर पूर्व से राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र और केदार आया करते हैं।

लगभग पाँच महीने हुए होंगे, जब श्रीरामकृष्ण विद्यासागर के 'बादुड़बागान' वाले मकान में पधारे थे। दो महीने पूर्व आप श्रीयुत

केशव सेन के साथ विजय आदि ब्राह्म भक्तों को लेकर नाव पर आनन्द करते हुए कलकत्ता गए थे।

श्रीयुत प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय कलकत्ता के श्यामपुकुर मुहल्ले में रहते हैं। पहले वे जनाई मौजे में रहते थे। श्रीरामकृष्ण पर इनकी बड़ी भक्ति है। स्थूल शरीर होने के कारण कभी कभी श्रीरामकृष्ण इन्हें 'मोटा ब्म्हन' कहकर पुकारते हैं। लगभग नौ महीने हुए होंगे, श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ इनका निमंत्रण स्वीकार किया था। इन्होंने बड़े आदर से सबको भोजन कराया था।

श्रीरामकृष्ण जमीन पर बैठे हुए हैं। पास ही टोकरी भर जलेबियाँ रखी हैं। आपने जलेबी का एक टुकड़ा तोड़कर खाया।

श्रीरामकृष्ण (प्राणकृष्ण आदि से, हँसते हुए)—देखा, मैं माता का नाम जपता हूँ, इसीलिए ये सब चीज़ें खाने को मिलती हैं।(हास्य)

"परन्तु वे लौकी-कोहड़े जैसे फल नहीं देतीं—वे देती हैं अमृतफल, ज्ञान, प्रेम, विवेक, वैराग्य।"

कमरे में छः-सात साल की उम्र का एक लड़का आया। इधर श्रीरामकृष्ण की भी बालकों जैसी अवस्था है। जैसे एक बालक किसी दूसरे बालक को देखकर उससे खाने की चीज़ छिपा लेता है जिससे वह छीनाझपटी न करे, वैसे ही श्रीरामकृष्ण की भी अवस्था उस बालक को देखकर होने लगी। उन्होंने जलेबियों को एक ओर हटाकर रख दिया।

प्राणकृष्ण गृहस्थ तो हैं परन्तु वे वेदान्तचर्चा भी करते हैं, कहते हैं—ब्रह्म ही सत्य है, संसार मिथ्या, मैं वही हूँ—सोऽहम्। श्रीरामकृष्ण

उन्हें समझाते हैं—"कलिकाल में प्राण अन्नगत हैं, कलिकाल में नारदीय भक्ति चाहिए।"

"वह विषय भाव का है, बिना भाव के कौन उसे पा सकता है?"

बालकों की तरह हाथों से जलेबियों की टोकरी छिपाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गए।

(२)

भावराज्य तथा रूपदर्शन।

श्रीरामकृष्ण समाधि में मग्न हैं। कुछ समय बाद समाधि छूटी, भाव के आवेश में पूर्ण बने बैठे हैं। न देह डुलती है, न पलक गिरते हैं; साँस भी चलती है या नहीं, जान नहीं पड़ता।

बड़ी देर बाद आपने एक लम्बी साँस छोड़ी,—मानो इन्द्रियराज्य में फिर लौट रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (प्राणकृष्ण से)—वे केवल निराकार नहीं, साकार भी हैं। उनके स्वरूप के दर्शन होते हैं। भाव और भक्ति से उनके अनुपम रूप के दर्शन मिलते हैं। माँ अनेक रूपों में दर्शन देती हैं।

"कल माँ को देखा, गेरुए रङ्ग का अँगरखा पहने हुए मेरे साथ बातें कर रही थीं।

"और एक दिन मुसलमान लड़की के रूप में मेरे पास आई थीं। मत्थे पर तिलक, पर शरीर पर कपड़ा नहीं!—छः-सात साल की बालिका, मेरे साथ साथ घूमने और मुझसे हँसी ठट्टा करने लगी।

"जब मैं हृदय के घर पर था तब गौरांग के दर्शन हुए थे, वे काली धारीदार धोती पहने थे।

"हलधारी कहता था, वे भाव और अभाव से परे हैं। मैंने माँ से जाकर कहा—'माँ, हलधारी ऐसी बात कह रहा है, तो क्या रूप आदि मिथ्या हैं?' माँ रति की माँ के रूप में मेरे पास आईं और बोलीं—'तू भाव में रह।' मैंने भी हलधारी से यही कहा।

"कभी कभी यह बात भूल जाता हूँ, इसलिए कष्ट भोगना पड़ता है। भाव में न रहने के कारण दाँत टूट गये। अतएव 'दैववाणी' या 'प्रत्यक्ष' न होने तक भाव में ही रहूँगा—भक्ति ही लेकर रहूँगा। क्यों—तुम क्या कहते हो?"

प्राणकृष्ण—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—और तुम्हीं से क्यों पूछूँ? इसके भीतर कोई एक रहता है। वही मुझे इस तरह चला रहा है। कभी कभी मुझमें देवभाव का आवेश होता था, तब बिना पूजा किये चित्त शान्त न होता था।

"मैं यंत्र हूँ और वे यंत्री। वे जैसा कराते हैं, वैसा ही करता। जो कुछ बुलवाते हैं, वही बोलता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण ने भक्त रामप्रसाद का एक गीत उदाहरण के लिए गाया; उसका अर्थ यह है—

'भवसागर में अपना डोंगा बहाकर उस पर बैठा हुआ हूँ। जब ज्वार आयेगा, तब पानी के साथ साथ मैं भी चढ़ता जाऊँगा और जब भाटा हो जायगा, तब उतरता जाऊँगा।'

श्रीरामकृष्ण—जूठी पत्तल हवा के झोंके से उड़कर कभी तो अच्छी जगह पर गिरती है, कभी नाली में गिर जाती है—हवा जिधर ले जाती है उधर ही चली जाती है।

"जुलाहे ने कहा—राम की ही मर्जी से डाका डाला गया, राम ही की मर्जी से पुलिसवालों ने मुझे पकड़ा और फिर राम ही की मर्जी से मुझे छोड़ दिया।

"हनुमान ने कहा—हे राम, मैं शरणागत हूँ—शरणागत हूँ—यही आशीर्वाद दीजिये कि आपके पादपद्मों में मेरी शुद्ध भक्ति हो, फिर कभी तुम्हारी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध न होऊँ।

"मेंढक बोला—राम, जब साँप पकड़ता है, तब तो 'राम, रक्षा करो' कहकर चिल्लाता हूँ, परन्तु अब जब कि राम ही के धनुष से बिंधकर मर रहा हूँ, तो चुप्पी साधनी ही पड़ी।

"पहले प्रत्यक्ष दर्शन होते थे—इन्हीं आँखों से,—जैसे तुम्हें देख रहा हूँ; अब भावावेश में दर्शन होते हैं।

"ईश्वर-लाभ होने पर बालकों का सा स्वभाव हो जाता है। जो जिसका चिन्तन करता है, वह उसकी सत्ता को भी पाता है। ईश्वर का स्वभाव बालकों ऐसा है। खेलते हुए बालक जैसे घरौंदा बनाते, बिगाड़ते, और उसे फिर से बनाते हैं—उसी तरह वे भी सृष्टि, स्थिति और प्रलय कर रहे हैं। बालक जैसे किसी गुण के वश में नहीं हैं उसी प्रकार वे भी सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों से परे हैं।

" इसीलिए जो परमहंस होते हैं, वे दस-पाँच बालक अपने साथ रखते हैं—अपने पर उनके स्वभाव का आरोप करने के लिए। "

फागड़पाड़ा से एक २०-२२ साल का लड़का आया है। यह जब आता है, श्रीरामकृष्ण को इशारा करके एकान्त में ले जाता है और वहीं चुपचाप अपने मन की बात कहता है। यह अभी पहले ही पहल आने जाने लगा है। आज वह निकट आकर बैठा।

प्रकृतिभाव तथा कामज्वर। सरलता और ईश्वर लाभ।

श्रीरामकृष्ण (उसी लड़के से)—आरोप करने पर भाव बदल जाता है। प्रकृति के भाव का आरोप करो तो धीरे धीरे कामादि रिपु नष्ट हो जाते हैं। ठीक स्त्रियों के से हाव-भाव हो जाते हैं। नाटक में जो लोग स्त्रियों का पार्ट खेलते हैं, उन्हें नहाते समय देखा है—स्त्रियों की ही तरह दाँत माँजते और बातचीत करते हैं।

" तुम किसी दिन शनिवार या मङ्गलवार को आओ। "

(प्राणकृष्ण से) " ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। शक्ति न मानो तो संसार मिथ्या हो जाता है; हम, तुम, घर, परिवार—सब मिथ्या हो जाते हैं। आद्या शक्ति के रहने ही के कारण संसार का अस्तित्व है। बिना आधार के कोई चीज़ कब ठहर सकती है? साँचा न होता तो उसकी ढली वस्तुओं की तारीफ़ कैसे होती?

" बिना विषय-बुद्धि का त्याग किये चैतन्य नहीं होता है—ईश्वर नहीं मिलते। उसके रहने ही से कपटता आ जाती है। बिना सरल हुए कोई उन्हें पा नहीं सकता।

'ऐसी भक्ति करो घट भीतर, छोड़ कपट चतुराई।
सेवा हो, अधीनता हो, तो सहज मिलें रघुराई॥'

"जो लोग विषयकर्म करते हैं, आफिस का काम या व्यवसाय करते हैं, उन्हें भी सचाई से रहना चाहिए। सच बोलना कलिकाल की तपस्या है।

प्राणकृष्ण—अस्मिन् धर्मे महेशि स्यात् सत्यवादी जितेन्द्रियः।
परोपकारनिरतो निर्विकारः सदाशयः॥

यह महानिर्वाणतंत्र में लिखा है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, इसकी धारणा करनी चाहिए।

(३)

श्रीरामकृष्ण का यशोदा-भाव तथा समाधि।

श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। भाव में तो सदा ही पूर्ण रहते हैं। भावनेत्रों से राखाल को देख रहे हैं। देखते ही देखते वात्सल्यरस हृदय में उमड़ने लगा, अङ्ग पुलकित होने लगे और आप समाधिलीन हो गए। घर के भीतर जितने भक्त बैठे हुए थे, श्रीरामकृष्ण के भाव की यह अद्भुत अवस्था देखकर, सभी आश्चर्य में आ गये।

श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ होकर कहते हैं—राखाल को देखकर इतनी उद्दीपना क्यों होती है? जितना ही ईश्वर की ओर बढ़ते जाओगे, ऐश्वर्य की मात्रा उतनी ही घटती जायगी। साधक पहले दशभुजा मूर्ति देखता है। वह ईश्वरी मूर्ति है। इसमें ऐश्वर्य का प्रकाश अधिक रहता है।

इसके पश्चात् द्विभुजा मूर्ति देखता है। तब दस हाथ नहीं रहते—इतने अस्त्र-शस्त्र नहीं रहते। इसके बाद गोपाल-मूर्ति के दर्शन होते हैं, कोई ऐश्वर्य नहीं—केवल एक छोटे बच्चे की मूर्ति। इससे भी परे है—केवल ज्योति-दर्शन।

"उन्हें प्राप्त कर लेने पर—उनमें समाधिमग्न हो जाने पर, फिर ज्ञान-विचार नहीं रह जाता।

"ज्ञान-विचार तो तभी तक है, जब तक बहु वस्तुओं की धारणा रहती है—जब तक जीव, जगत्, हम, तुम—यह ज्ञान रहता है। जब एकत्व का ज्ञान हो जाता है, तब चुप हो जाना पड़ता है। जैसे त्रैलंग-स्वामी।

"ब्रह्मभोज के समय नहीं देखा? पहले खूब गुलगपाड़ा मचता है। ज्यों ज्यों पेट भरता जाता है, त्यों त्यों आवाज़ घटती जाती है। जब दही आया, तब सुप् सुप्, बस और कोई शब्द नहीं। इसके बाद ही निद्रा—समाधि! तब आवाज़ ज़रा भी नहीं रह जाती!

(मास्टर और प्राणकृष्ण से) "कितने ही ऐसे हैं जो ब्रह्मज्ञान की बातें मारते हैं परन्तु नीचों की वस्तु लेते हैं। घर-द्वार, धन-मान, इन्द्रिय-सुख। मनूमेण्ट (Monument) के नीचे जब तक रहा जाता है, तब तक गाड़ी, घोड़ा, साहब, मेम—यही सब दीख पड़ते हैं। ऊपर चढ़ने पर सिर्फ आकाश समुद्र, धुआँ सा छाया हुआ दीख पड़ता है। तब घर-द्वार, घोड़ा-गाड़ी, आदमी—इन पर मन नहीं रमता, ये सब चींटी-जैसे नजर आते हैं।

"ब्रह्मज्ञान होने पर संसार की आसक्ति चली जाती है—काम-कांचन के लिए उत्साह नहीं रहता—सब 'शान्ति' बन जाते हैं। काठ जब जलता है तब उसमें चटाचट आवाज़ भी होती है और कडुआ धुआँ भी निकलता है। जब सब जलकर खाक हो जाता है, तब फिर शब्द नहीं होता। आसक्ति के जाने से उत्साह भी चला जाता है। अन्त में केवल शान्ति रह जाती है।

"ईश्वर की ओर कोई जितना ही बढ़ता है, उतनी ही शान्ति मिलती है। शान्तिः शान्तिः शान्तिः प्रशान्तिः। गंगा के निकट जितना ही जाया जाता है, शीतलता का अनुभव उतना ही होता जाता है। नहाने पर और भी शान्ति मिलती है।

"परन्तु जीव, जगत्, चौबीस तत्त्व, इनकी सत्ता उन्हीं की सत्ता से भासित हो रही है। उन्हें छोड़ देने पर कुछ भी नहीं रह जाता। १ के बाद शून्य रखने से संख्या बढ़ जाती है। एक को पोंछ डालो तो शून्य का कोई अर्थ नहीं रह जाता।"

प्राणकृष्ण से श्रीरामकृष्ण अपनी अवस्था के सम्बन्ध में कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—ब्रह्मज्ञान के पश्चात्, समाधि हो जाने पर, कोई कोई विद्या के राज्य का, 'ज्ञान का मैं'—'भक्ति का मैं' लेकर रहते हैं। हाट का क्रय-विक्रय समाप्त हो जाने पर भी कुछ लोग अपनी इच्छानुसार हाट में ही रह जाते हैं, जैसे नारद आदि। वे 'भक्ति का मैं' सहित लोकशिक्षा के लिए संसार में रहते हैं। शंकराचार्य ने लोकशिक्षा के लिए 'विद्या का मैं' रखा था।

"आसक्ति का नाममात्र भी रहते वे नहीं मिल सकते। सूत के आँस निकले हुए हों तो वह सुई के भीतर नहीं जा सकता।

"जिन्होंने ईश्वर को प्राप्त कर लिया है, उनके काम-क्रोध नाम मात्र के हैं, जैसे जली रस्सी,—रस्सी का आकार तो है परन्तु फूँकने से ही उड़ जाती है।

"मन से आसक्ति के चले जाने पर उनके दर्शन होते हैं। शुद्ध मन से जो निकलेगी, वह उन्हीं की वाणी है। शुद्ध मन जो है, शुद्ध बुद्धि भी वही है, और शुद्ध आत्मा भी वही है; क्योंकि उन्हें छोड़ कोई दूसरा शुद्ध नहीं है।

"परन्तु उन्हें पा लेने पर लोग धर्माधर्म को पार कर जाते हैं।"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से भक्त रामप्रसाद का एक गीत गाने लगे। मर्म उसका यह है—

"मन, चल, तू मेरे साथ सैर कर। कल्पलता काली के चरणों में तुझे चारों फल मिल जायँगे। उसकी प्रवृत्ति और निवृत्ति, इन दोनों लड़कियों में से निवृत्ति को साथ लेना, और उसी के पुत्र विवेक से तत्त्व की बातें पूछना।"

(४)

श्रीरामकृष्ण का श्रीराधा-भाव।

श्रीरामकृष्ण दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में आकर बैठे। प्राणकृष्णादि भक्त भी साथ साथ आये हैं। हाजरा महाशय बरामदे में बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए प्राणकृष्ण से कह रहे हैं—

" हाजरा कहीं कम नहीं है । अगर यहाँ स्वयंको लक्ष्य करके कोई बड़ी दरगाह हो तो हाजरा छोटी दरगाह है । " (सब हँसते हैं ।)

नवकुमार आकर बरामदे के दरवाज़े में खड़े हुए और इशारे से भक्तों को बतलाकर चले गए । उन्हें देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा—" अहंकार की मूर्ति है ! "

दिन के ८ बज चुके हैं । प्राणकृष्ण ने प्रणाम करके चलने की आज्ञा ली; उन्हें कलकत्ते के मकान में लौट जाना है ।

एक वैरागी गोपीयंत्र (एकतारे की सूरत-शक्ल का) लेकर श्रीरामकृष्ण के घर में गा रहे हैं । गीतों का आशय यह है—

१. " नित्यानन्द का जहाज़ आया है । तुम्हें पार जाना हो तो इस पर आ जाओ । छः गोरे इसमें सदा पहरा देते हैं । उनकी पीठ ढाल से घिरी हुई है और तलवार लटक रही है । सदर दरवाज़ा खोलकर वे धनरत्न लुटा रहे हैं । "

२. " इस समय घर छा लेना । इस बार वर्षा ज़ोरों की होगी, सावधान हो जाओ, अदरख का पानी पीकर अपने काम पर डट जाओ । जब श्रावण लग जायगा तब कुछ भी न सूझेगा । छप्पर का ठाठ सड़ जायगा । फिर तुम घर न छा सकोगे । जब झकोरे लगेंगे, तब छप्पर उड़ जायगा । घर वीरान हो जायगा । तुम्हें भी फिर स्थान बदलना ही पड़ेगा । "

३. " किसके भाव में नदिये में आकर दरिद्र वेश धारण किए हुए तुम हरिनाम गा रहे हो ? किसका भाव लेकर तुमने यह भाव और ऐसा स्वभाव धारण किया ? कुछ समझ में नहीं आता । "

श्रीरामकृष्ण गाना सुन रहे हैं, इसी समय श्रीयुत केदार चटर्जी आये और उन्होंने प्रणाम किया। वे आफिस के कपड़े—चोगा, अचकन पहने और घड़ी चेन लगाए हुए आए हैं। परन्तु ईश्वर चर्चा होती है तो आपकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लग जाती है। आप बड़े प्रेमी हैं। हृदय में गोपीभाव विराजमान है।

केदार को देखकर श्रीरामकृष्ण के मन में वृन्दावन की लीला का उद्दीपन होने लगा। आप प्रेमोन्मत्त हो गए। खड़े होकर केदार को सुनाते हुए इस मर्म का गाना गाने लगे—

" क्यों सखि, वह बन अभी कितनी दूर है जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं ? अब तो चला नहीं जाता ! "

श्रीराधिका जी के भावावेश में गाते ही गाते श्रीरामकृष्ण चित्र-वत् खड़े हुए समाधिमग्न हो गए। नेत्रों के दोनों कोरों से आनन्दाश्रु ढलक रहे हैं। भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण के चरणों का स्पर्श करके केदार उनकी स्तुति करने लगे—

हृदय-कमल-मध्ये निर्विशेषं निरीहं
हरि-हर-विधिवेद्यं योगिभिर्ध्यानगम्यम्।
जनन-मरण-भीति-भ्रंशि सच्चित्स्वरूपं
सकल-भुवन-बीजं ब्रह्म-चैतन्यमीड़े ॥

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। केदार को अपने घर हालीशहर से कलकत्ते में काम पर जाना है। रास्ते में दक्षिणेश्वर काली

मन्दिर में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करके जा रहे हैं। कुछ विश्राम के पश्चात् केदार ने बिदाई ली।

इसी तरह भक्तों से वार्तालाप करते हुए दोपहर का समय हो गया। श्रीयुत रामलाल श्रीरामकृष्ण के लिए थाली में काली जी का प्रसाद ले आए। घर में आसन पर दक्षिणास्य बैठकर श्रीरामकृष्ण ने प्रसाद पाया। बालकों की तरह थोड़ा थोड़ा सभी कुछ भोजन खाया।

भोजन करके श्रीरामकृष्ण उसी छोटी खाट पर विश्राम करने लगे। कुछ समय पश्चात् मारवाड़ी भक्तों का आगमन होने लगा।

(५)

अभ्यासयोग। दो पथ—विचार और भक्ति।

दिन के तीन बजे हैं। मारवाड़ी भक्त जमीन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे हैं। घर में मास्टर, राखाल और दूसरे भक्त भी हैं।

मारवाड़ी भक्त—महाराज, उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण—उपाय दो हैं। विचार-पथ और अनुराग अथवा भक्ति का मार्ग।

"सदसत् का विचार। एकमात्र सत्य या नित्य वस्तु ईश्वर हैं, और सब कुछ असत् या अनित्य है। इन्द्रजाल दिखलाने वाला ही सत्य है, इन्द्रजाल मिथ्या है। यही विचार है।

"विवेक और वैराग्य। इस सदसत् विचार का नाम विवेक है।

वैराग्य अर्थात् संसार की वस्तुओं पर विरक्ति। यह एकाएक नहीं होता —प्रतिदिन अभ्यास करना चाहिए। कामिनी-कांचन का त्याग पहले मन से करना पड़ता है। फिर तो उनकी इच्छा से मन से वह त्याग हो जाता है और बाहर का भी त्याग हो जाता है। पर कलकत्ते के आदमियों से क्या हिम्मत जो कहा जाय कि ईश्वर के लिए सब कुछ छोड़ो; उनसे यही कहना पड़ता है कि मन में त्याग का भाव लाओ। अभ्यासयोग से कामिनी-कांचन में आसक्ति का त्याग होता है—यह बात गीता में है। अभ्यास से मन में असाधारण शक्ति आ जाती है। तब इन्द्रियसंयम करने और काम-क्रोध को वश में लाने में कष्ट नहीं उठाना पड़ता। जैसे कछुआ पैर समेट लेने पर फिर बाहर नहीं निकालना चाहता—कुल्हाड़ी से टुकड़े टुकड़े कर डालने पर भी बाहर नहीं निकालता।"

मारवाड़ी भक्त—महाराज, आपने दो रास्ते बतलाए; दूसरा कौनसा है?

श्रीरामकृष्ण—वह अनुराग या भक्ति का मार्ग है। व्याकुल होकर एक बार निर्जन में रोओ, अकेले में दर्शनों की प्रार्थना करो।

"ऐ मन, जैसे बुलाया जाता है उस तरह तुम बुलाओ तो सही, फिर देखो भला तुम्हें छोड़कर माँ श्यामा कैसे रह सकती है!"

मारवाड़ी भक्त—महाराज, साकार-पूजा का क्या अर्थ है? और निराकार-निर्गुण का क्या मतलब है?

श्रीरामकृष्ण—जैसे बाप का फोटोग्राफ देखने से बाप की याद

आती है, वैसे ही प्रतिमा की पूजा करते करते सत्य के रूप की उद्दीपना होती है।

"साकार रूप कैसा है, जानते हो? जैसे जलराशि से बुलबुले निकलते हैं, वैसा ही। महाकाश—चिदाकाश से एक एक रूप आविर्भूत होते हुए दिख पड़ते हैं। अवतार भी एक रूप ही हैं। अवतार-लीला भी आद्याशक्ति ही की क्रीड़ा है।

"पाण्डित्य में क्या रखा है? व्याकुल होकर बुलाने पर वे मिलते हैं। अनेकानेक विषयों का ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं।

"जो आचार्य हैं उन्हीं को कई विषयों का ज्ञान रखना चाहिए। दूसरों को मारने के लिए ढाल तलवार की ज़रूरत होती है, परन्तु अपने को मारने के लिए एक सुई या नहरनी ही से काम चल सकता है।

"मैं कौन हूँ, इसकी ढूँढ़-तलाश करने के लिए चलो तो उन्हीं के निकट जाना पड़ता है। क्या मैं मांस हूँ? या हाड़, रक्त या मज्जा हूँ? मन या बुद्धि हूँ? अन्त में विचार करते हुए देखा जाता है कि मैं यह सब कुछ नहीं हूँ। 'नेति' 'नेति'। आत्मा वह चीज़ नहीं कि पकड़ में आ जाय। वह निर्गुण और निरुपाधि है।

"परन्तु भक्तिमत से वे सगुण हैं। चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम—सब चिन्मय!"

मारवाड़ी भक्तगण प्रणाम करके बिदा हुए। सन्ध्या हो गई। श्रीरामकृष्ण गंगा-दर्शन कर रहे हैं। घर में दीपक जलाया गया। श्रीरामकृष्ण जगन्माता का नामस्मरण कर रहे हैं और अपनी खाट पर बैठे हुए

उन्हीं के ध्यान में मग्न हैं !

श्रीठाकुर-मन्दिर में अब आरती होने लगी। जो लोग इस समय भी पंचवटी में घूम रहे हैं, वे दूर से आरती की मधुर घण्टाध्वनि सुन रहे हैं। ज्वार आ गया है, भागीरथी कल-कल स्वर से उत्तर-वाहिनी हो रही हैं। आरती का मधुर शब्द इस 'कल-कल' ध्वनि से मिलकर और भी मधुर हो गया है। इस माधुर्य के भीतर प्रेमोन्मत्त श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। सब कुछ मधुर हो रहा है !

परिच्छेद १३

भक्तों के साथ वार्तालाप और आनन्द

(१)

बेलघर-निवासियों को उपदेश । पापवाद ।

श्रीरामकृष्ण ने बेलघर के श्री गोविन्द मुखोपाध्याय के मकान पर शुभागमन किया है । रविवार, १८ फरवरी १८८३ ई० । माघ शुक्ल द्वादशी, पुष्य नक्षत्र । नरेन्द्र, राम आदि भक्तगण आए हैं, पड़ोसी-गण भी आए हैं । सबेरे सात आठ बजे के समय श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र आदि के साथ संकीर्तन में नृत्य किया था ।

कीर्तन के बाद सभी बैठ गए । सभी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर रहे हैं । श्रीरामकृष्ण बीच-बीच में कह रहे हैं, ' ईश्वर को प्रणाम करो । ' फिर कह रहे हैं, "वे ही सब रूपों में हैं, परन्तु किसी-किसी स्थान पर विशेष प्रकाश है—जैसे साधुओं में । यदि कहो दुष्ट लोग तो हैं, बाघ, सिंह भी हैं; परन्तु बाघरूपी नारायण से आलिंगन करने की आवश्य-कता नहीं है, दूर से प्रणाम करके चले जाना होता है । फिर देखो जल । कोई जल पिया जाता है, किसी जल से पूजा की जाती है, किसी जल से स्नान किया जाता है, और फिर किसी जल से केवल मुँह हाथ धोया जाता है । "

पड़ोसी—वेदान्त का क्या मत है ?

श्रीरामकृष्ण—वेदान्तवादी कहते हैं, 'सोऽहं', ब्रह्म सत्य, जगत्

मिथ्या है। 'मैं' भी मिथ्या, केवल वह पर-ब्रह्म ही सत्य है।

"परन्तु 'मैं' तो नहीं जाता। इसीलिए मैं उनका दास, मैं उनकी सन्तान, मैं उनका भक्त यह अभिमान बहुत अच्छा है।

"**कलियुग में भक्तियोग ही ठीक है।** भक्ति द्वारा भी उन्हें प्राप्त किया जाता है। देह-बुद्धि रहने से ही विषय-बुद्धि होती है। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द—ये सब विषय हैं। विषय-बुद्धि दूर होना बहुत कठिन है, विषय-बुद्धि के रहते 'सोऽहं' नहीं होता।

"संन्यासियों में विषय-बुद्धि कम है। संसारीगण सदैव विषय-चिन्ता लेकर ही रहते हैं, इसलिए संसारियों के लिए 'दासोऽहं'।"

पड़ोसी—हम पापी हैं, हमारा क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण—उनका नाम-गुणगान करने से देह से सब पाप भाग जाता है। देहरूपी वृक्ष में पाप-पक्षी हैं, उनका नामकीर्तन मानो हथेली बजाना है। हथेली बजाने से जिस प्रकार वृक्ष के ऊपर के सभी पक्षी भाग जाते हैं, उसी प्रकार उनके नाम गुणकीर्तन से सभी पाप भाग जाते हैं। ×

"फिर देखो मैदान के तालाब का जल धूप से स्वयं ही सूख जाता है। इसी प्रकार नाम-गुणकीर्तन से पाप रूपी तालाब का जल स्वयं ही सूख जाता है।

---

* अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते। गीता, १२।५—

× मामेकं शरणं व्रज, अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।

—गीता, १८।६६

" रोज अभ्यास करना पड़ता है। सर्कस में देख आया, घोड़ा दौड़ रहा है, उस पर मेम एक पैर से खड़ी है। कितने अभ्यास से ऐसा हुआ होगा।

" और उनके दर्शन के लिए कम से कम एक बार रोओ।

" यही दो उपाय हैं,—अभ्यास और अनुराग, अर्थात् उन्हें देखने के लिए व्याकुलता। "

बैठकखाना भवन के दुमंजले के घर के बरामदे में श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ प्रसाद पा रहे हैं। दिन के एक बजे का समय हुआ। भोजन समाप्त होने के साथ ही नीचे के आंगन में एक भक्त गाने लगा।

" जागो, जागो जननि ! हे कुलकुण्डलिनि, मूलाधार में सोते हुए कितने दिन बीत गए। "

श्रीरामकृष्ण गाना सुनकर समाधिस्थ हुए। सारा शरीर स्थिर है, हाथ प्रसाद-पात्र पर जैसा था, वैसा ही चित्रलिखित सा रह गया। और भोजन न हुआ। काफ़ी देर बाद भाव कुछ कम होने पर कह रहे हैं, " मैं नीचे जाऊँगा, मैं नीचे जाऊँगा। "

एक भक्त उन्हें बड़ी सावधानी के साथ नीचे ले जा रहे हैं।

आँगन में ही प्रातःकाल नामसंकीर्तन तथा प्रेमानन्द से श्रीरामकृष्ण का नृत्य हुआ था। अभी तक दरी और आसन बिछा हुआ है। श्रीरामकृष्ण अभी तक भावमग्न हैं। गानेवाले के पास आकर बैठे। गायक ने इतनी देर में गाना बन्द कर दिया था। श्रीरामकृष्ण दीन

भाव से कह रहे हैं, भाई, और एक बार 'माँ' का नाम सुनूँगा। गायक फिर गाना गा रहे हैं। भावार्थः—

'जागो, जागो, जननि! हे कुलकुण्डलिनि! मूलाधार में निद्रितावस्था में कितने दिन बीत गए। अपनी कार्य-सिद्धि के लिए मस्तक की ओर चलो जहाँ सहस्रदलपद्म में परमशिव विराजमान हैं। हे माँ, चैतन्यरूपिणि, षड्चक्र को भेद कर मन के खेद को दूर करो।"

गाना सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण फिर भावमग्न हो गए।

(२)

निर्जन में साधन। ईश्वर-दर्शन। गीता।

श्रीरामकृष्ण अपने उसी कमरे में दोपहर को भोजन करके भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। आज २५ फरवरी १८८३ का दिन है।

राखाल, हरीश, लाटू, हाजरा आजकल श्रीरामकृष्ण के पास ही रहते हैं। कलकत्ते से राम, केदार, नित्यगोपाल, मास्टर आदि भक्त आए हैं। और चौधरी भी आए हैं।

अभी अभी चौधरी की पत्नी का स्वर्गवास हो गया है। मन में शान्ति पाने के उद्देश्य से कई बार वे श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आ चुके हैं। उन्हें उच्च शिक्षा मिली है, सरकारी पद पर नौकरी करते हैं।

श्रीरामकृष्ण (राम आदि भक्तों से)—राखाल (स्वामी ब्रह्मानन्द), नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द), भवनाथ ये सब नित्यसिद्ध हैं, जन्म ही से इन्हें चैतन्य प्राप्त हैं, लोक-शिक्षा के लिए ही शरीरधारण करते हैं।

"एक श्रेणी के लोग और होते हैं। वे कृपासिद्ध कहलाते हैं। एकाएक उनकी कृपा हुई कि दर्शन हुए और ज्ञानलाभ हुआ। जैसे हजार वर्षों के अँधेरे घर में चिराग ले जाओ तो क्षणभर में उजाला हो जाता है—धीरे धीरे नहीं होता।

"जो लोग संसार में हैं, उन्हें साधना करनी चाहिए। निर्जन में व्याकुल होकर ईश्वर को बुलाना चाहिए।

(चौधरी से) "पाण्डित्य से वे नहीं मिलते।

"और उन्हें विचार करके समझने वाला है कौन? उनके पादपद्मों में जिस प्रकार से भक्ति हो, सबको वही करना चाहिए।

"उनका ऐश्वर्य अनन्त है—समझ में क्या आवे? और उनके कार्यों को भी कोई क्या समझे?

"भीष्मदेव जो साक्षात् अष्टवसुओं में एक हैं, शरशय्या पर रोने लगे; कहा—क्या आश्चर्य! पाण्डवों के साथ सदा स्वयं भगवान् रहते हैं; फिर भी उनके दुःख और विपत्तियों का अन्त नहीं!—भगवान् के कार्यों को कोई क्या समझे!

"कोई कोई सोचते हैं कि हम भजन-पूजन करते हैं—हम जीते। परन्तु हारजीत उनके हाथों में है। यहाँ एक वेश्या मरने के समय ज्ञानपूर्वक गङ्गा-स्पर्श करके मरी!

चौधरी—किस तरह उनके दर्शन हों।

श्रीरामकृष्ण—इन आँखों से वे नहीं दीख पड़ते। वे दिव्यदृष्टि देते हैं, तब उनके दर्शन होते हैं! अर्जुन को विश्वरूप दर्शन के समय श्रीभगवान् ने दिव्यदृष्टि दी थी।

"तुम्हारी फिलासफी (Philosophy) में सिर्फ हिसाब किताब होता है—सिर्फ विचार करते हैं। इससे वे नहीं मिलते।

"यदि रागभक्ति—अनुराग के साथ भक्ति—हो तो वे स्थिर नहीं रह सकते।

"भक्ति उनको उतनी ही प्रिय है जितनी बैल को सानी।

"रागभक्ति—शुद्धाभक्ति—अहैतुकी भक्ति, जैसे प्रह्लाद की।

"तुम किसी बड़े आदमी से कुछ चाहते नहीं हो, परन्तु रोज आते हो, उन्हें देखना ही चाहते हो। पूछने पर कहते हो—'जी नहीं, कोई काम नहीं है, बस् दर्शनों के लिए आ गया।' इसे अहैतुकी भक्ति कहते हैं। तुम ईश्वर से कुछ चाहते नहीं, सिर्फ प्यार करते हो।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गीता का मर्म यह है:—

"मैं मुक्ति देने में कातर नहीं होता, किन्तु शुद्धा भक्ति देने में कातर होता हूँ।"

"मूल बात है ईश्वर में रागानुगा भक्ति होनी चाहिए और विवेक-वैराग्य।"

चौधरी—महाराज, गुरु के न होने से क्या नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण—सच्चिदानन्द ही गुरु हैं ।

" शवसाधना करते समय जब इष्ट-दर्शन का मौका आता है, तब गुरु सामने आकर कहते हैं—' वह देख अपना इष्ट । ' फिर गुरु इष्ट में लीन हो जाते हैं । जो गुरु हैं वे ही इष्ट हैं । गुरु पतवार पकड़े रहते हैं ।

" अनन्त का तो व्रत, पर पूजा विष्णु की की जाती है । उसीमें ईश्वर का अनन्त रूप विराजमान है ।

(राम आदि भक्तों से) " यदि कहो कि किस मूर्ति का चिन्तन करेंगे, तो जो मूर्ति अच्छी लगे, उसी का ध्यान करना । परन्तु समझना कि सभी एक हैं ।

" किसी पर द्वेष न करना चाहिए । शिव, काली, हरि—सब एक ही के भिन्न भिन्न रूप हैं । वह धन्य है जिसको उनके एक होने का ज्ञान हो गया है ।

" बाहर शैव, हृदय में काली, मुख में हरिनाम !

" कुछ कुछ काम-क्रोधादि के न रहने से शरीर नहीं रहता । परन्तु तुम लोग घटाने ही की चेष्टा करना । "

श्रीरामकृष्ण केदार को देखकर कह रहे हैं—

" ये अच्छे हैं । नित्य भी मानते हैं, लीला भी मानते हैं । एक ओर ब्रह्म और दूसरी ओर देवलीला से लेकर मनुष्यलीला तक ! "

नित्यगोपाल को देखकर श्रीरामकृष्ण बोले—

" इसकी अच्छी अवस्था है । (नित्यगोपाल से) वहाँ ज्यादा न

जाना। कहीं एक-आध बार चले गए। भक्त है तो क्या हुआ—स्त्री है न ! इसीलिए सावधान रहना।

"संन्यासी के नियम बड़े कठिन हैं। उसके लिए स्त्रियों के चित्र देखने की भी मनाही है। यह संसारियों के लिए नहीं है।

"स्त्री यदि भक्त भी हो तो भी उससे ज्यादा न मिलना चाहिए।

"जितेन्द्रिय होने पर भी मनुष्य को लोक-शिक्षण के लिए यह सब करना पड़ता है !

"साधु पुरुष का सोलहो आना त्याग देखने पर दूसरे लोग त्याग की शिक्षा लेंगे। नहीं तो वे भी डूब जायँगे। संन्यासी जगद्गुरु हैं।"

अब श्रीरामकृष्ण और भक्तगण उठकर घूमने लगे।

परिच्छेद १४

श्रीरामकृष्ण का जन्ममहोत्सव

(१)

अमावस्या के दिन श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ। राखाल के प्रति गोपाल-भाव।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में राखाल, मास्टर आदि दो-एक भक्तों के साथ बैठे हैं। शुक्रवार, ९ मार्च, १८८३ ई०। माघी अमावस्या, प्रातःकाल ८-९ बजे का समय होगा।

अमावस्या के दिन श्रीरामकृष्ण को सदा ही जगन्माता का उद्दीपन हो रहा है। वे कह रहे हैं, "ईश्वर ही वस्तु है, बाकी सब अवस्तु। माँ ने अपनी महामाया द्वारा मुग्ध कर रखा है। मनुष्यों में देखो, बद्ध जीव ही अधिक हैं। इतना कष्ट पाते हैं, फिर भी उसी 'कामिनी-कांचन' में उनकी आसक्ति है। काँटेदार घास खाते समय ऊँट के मुँह से धर धर खून बहता रहता है, फिर भी वह उसे छोड़ता नहीं, खाता ही जाता है। प्रसव-वेदना के समय स्त्रियाँ कहती हैं, "ओः, अब और पति के पास नहीं जाऊँगी," परन्तु फिर भूल जाती हैं।

"देखो, उनकी खोज कोई नहीं करता। अनन्नास को छोड़ लोग उसके पत्ते खाते हैं!"

भक्त—महाराज, संसार में वे क्यों रख देते हैं?

श्रीरामकृष्ण—संसार कर्मक्षेत्र है। कर्म करते-करते ही ज्ञान होता है। गुरु ने कहा इन कर्मों को करो और इन कर्मों को न करो। फिर वे निष्काम कर्म का उपदेश देते हैं*। कर्म करते करते मन का मैल धुल जाता है। अच्छे डाक्टर की चिकित्सा में रहने पर दवा खाते खाते कैसा ही रोग क्यों न हो, ठीक हो जाता है।

"संसार को वे क्यों नहीं छोड़ते? रोग अच्छा होगा तब छोड़ेंगे। कामिनी-कांचन का भोग करने की इच्छा जब न रहेगी, तब छोड़ेंगे। अस्पताल में नाम लिखाकर भाग आने का उपाय नहीं है। रोग रहते डाक्टर साहब न छोड़ेंगे।"

श्रीरामकृष्ण आजकल यशोदा की तरह सदा वात्सल्य रस में मग्न रहते हैं, इसलिए उन्होंने राखाल को साथ रखा है। राखाल के साथ श्रीरामकृष्ण का गोपाल भाव है। जिस प्रकार माँ की गोदी के पास छोटा लड़का जाकर बैठता है, उसी प्रकार राखाल भी श्रीरामकृष्ण की गोदी के सहारे बैठते थे। मानो स्तन-पान कर रहे हों।

श्रीरामकृष्ण इसी भाव में बैठे हैं, इसी समय एक आदमी ने आकर समाचार दिया कि बाढ़ आ रही है। श्रीरामकृष्ण, राखाल, मास्टर आदि सभी लोग बाढ़ देखने के लिए पंचवटी की ओर दौड़ने लगे। पंचवटी के नीचे आकर सभी बाढ़ देख रहे हैं। दिन के करीब १०॥ बजे का समय होगा। एक नौका की स्थिति को देख श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "देखो, देखो, उस नाव की न जाने क्या दशा होगी।"

---

* कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। —गीता, २।४७

अब श्रीरामकृष्ण पंचवटी के पथ पर मास्टर, राखाल आदि के साथ बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—अच्छा, बाढ़ कैसे आती है?

मास्टर भूमि पर रेखाएँ खींचकर पृथ्वी, चन्द्र, सूर्य, मध्याकर्षण, ज्वार-भाटा, पूर्णिमा, अमावस्या, ग्रहण आदि समझाने की चेष्टा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—यह लो ! समझ नहीं सक रहा हूँ। सिर घूम जाता है। चक्कर आ रहा है। अच्छा, इतनी दूर की बातें कैसे जान सके ?

" देखो, मैं बचपन में चित्र अच्छी तरह खींच सकता था। परन्तु गणित से सिर चकराता था। हिसाब नहीं सीख सका। "

अब श्रीरामकृष्ण अपने घर में लौट आए हैं। दीवार पर टँगे हुए यशोदा के चित्र को देख, कह रहे हैं, " चित्र अच्छा नहीं हुआ। मानो ठीक मालिन मौसी है ! "

मध्याह्न के आहार के बाद श्रीरामकृष्ण ने थोड़ासा विश्राम किया। धीरे धीरे अधर तथा अन्य भक्तगण आ पहुँचे। अधर सेन यही पहली बार श्रीरामकृष्ण का दर्शन कर रहे हैं। अधर का मकान कलकत्ता, बेनी टोला में है। वे डिपुटी मेजिस्ट्रेट हैं, उम्र २९-३० वर्ष की होगी।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—फिर ऐसी भी स्थिति होती है कि सर्व भूतों में ईश्वर को देखता हूँ। चीटियों में भी वे ही हैं। ऐसी स्थिति में एकाएक किसी प्राणी के मरने पर मन में यही सान्त्वना होती

है कि उसकी देह मात्र का विनाश हुआ। आत्मा की मृत्यु नहीं है।*

"अधिक विचार करना ठीक नहीं, माँ के चरण-कमल में भक्ति रहने से ही हो जायगा। अधिक विचार करने से सब गोलमाल हो जाता है। इस देश में तालाब का जल ऊपर-ऊपर से पिओ, अच्छा साफ जल पाओगे, अधिक नीचे हाथ डालकर हिलाने से जल मैला हो जाता है। इसलिए उनसे भक्ति की प्रार्थना करो। ध्रुव की भक्ति सकाम थी, उसने राज्य पाने के लिए तपस्या की थी; परन्तु प्रह्लाद की निष्काम अहेतुकी भक्ति थी।"

भक्त—ईश्वर कैसे प्राप्त होते हैं?

श्रीरामकृष्ण—उसी भक्ति के द्वारा, परन्तु उनसे ज़बरदस्ती करनी होती है। दर्शन नहीं देगा तो गले में छुरा भोंक लूँगा,—इसका नाम है भक्ति का तमः।

भक्त—क्या ईश्वर को देखा जाता है?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, अवश्य देखा जाता है। निराकार-साकार दोनों ही देखे जाते हैं। चिन्मय साकार रूप का दर्शन होता है। फिर साकार मनुष्यरूप में भी वे प्रत्यक्ष हो सकते हैं। अवतार को देखना और ईश्वर को देखना एक ही है। ईश्वर ही युग-युग में मनुष्य के रूप में अवतीर्ण होते हैं।

---

* न हन्यते हन्यमाने शरीरे। —गीता, २।२०

(२)

भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण ।

कालीमन्दिर में श्रीरामकृष्ण का जन्ममहोत्सव है। फाल्गुन की शुक्ला द्वितीया, दिन रविवार, ११ मार्च, १८८३। आज श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त उन्हें लेकर जन्ममहोत्सव मनायेंगे।

सबेरे से भक्त एक-एक करके एकत्र हो रहे हैं। सामने माता भवतारिणी का मन्दिर है। मंगलारती के बाद ही प्रभाती रागिणी में मधुर तान लगाती हुई नौबत बज रही है। वसन्त का सुहावना मौसम है, लता वृक्ष नए कोमल पल्लवों से लहराते हुए दीख पड़ते हैं। इधर श्रीरामकृष्ण के जन्मदिन की याद करके भक्तों के हृदय में आनन्द-सिन्धु उमड़ रहा है। मास्टर ने देखा, भवनाथ, राखाल, भवनाथ के मित्र कालीकृष्ण आ गए हैं। श्रीरामकृष्ण पूर्व वाले बरामदे में बैठे हुए इनसे वार्तालाप कर रहे हैं। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—"तुम आए हो। (भक्तों से) लज्जा, घृणा, भय इन तीनों के रहते काम सिद्ध नहीं होता। आज कितना आनन्द होगा, परन्तु जो लोग भगवन्नाम में मस्त होकर नृत्य-गीत न कर सकेंगे, उनका कहीं कुछ न होगा। ईश्वरी चर्चा में कैसी लज्जा और कैसा भय? अच्छा, अब तुम लोग गाओ।" भवनाथ और कालीकृष्ण गा रहे हैं। गीत इस आशय का है:—

"हे आनन्दमय! आज का दिन धन्य है! हम सब तुम्हारे सत्य-धर्म का भारत में प्रचार करेंगे। हर एक हृदय में तुम्हीं रहते हो, चारों ओर तुम्हारे ही पवित्र नाम की ध्वनि गूँजती है, भक्त समाज तुम्हारी ही स्तुति करते हैं। धन, जन और मान न चाहिए, दूसरी कामना भी नहीं है, विकल जन तुम्हारी प्रार्थना कर रहे हैं। हे प्रभो, तुम्हारे चरणों में शरण ली तो फिर न विपत्ति में भय है, न मृत्यु में; मुझे तो अमृत मिल गया। तुम्हारी जय हो!"

हाथ जोड़कर बैठे हुए मन लगाकर श्रीरामकृष्ण गाना सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण का मन सूखी दियासलाई है। एक बार घिसने से उद्दीपना होती है। प्राकृत मनुष्यों का मन भोगी दियासलाई है, कितनी ही घिसो, पर जलती नहीं। श्रीरामकृष्ण बड़ी देर तक ध्यान में लगे हुए हैं। कुछ देर बाद कालीकृष्ण भवनाथ से कुछ कह रहे हैं।

कालीकृष्ण श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उठे। श्रीरामकृष्ण ने विस्मय में आकर पूछा—कहाँ जाओगे?

भवनाथ—कुछ काम है, इसीलिए वे जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्या काम है?

भवनाथ—श्रमजीवियों के शिक्षालय में (Baranagore Workingmen's Institute) जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—भाग्य ही में नहीं है। आज हरिनाम-कीर्तन में कितना आनन्द होता है, देखा नहीं। उसके भाग्य ही में नहीं था।

(३)

जन्मोत्सव के अवसर पर भक्तों के साथ।
संन्यासियों का कठिन नियम ।

दिन के साढ़े आठ नौ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण ने आज गंगाजी में स्नान नहीं किया, शरीर कुछ अस्वस्थ है। घड़ा भरकर पानी बरामदे में लाया गया। भक्त उनको स्नान करा रहे हैं। नहाते हुए श्रीरामकृष्ण ने कहा, "एक लोटा पानी अलग रख दो।" अन्त में वही पानी सिर पर डाला। आज आप बड़े सावधान हैं, एक लोटे से ज्यादा पानी सिर पर नहीं डाला।

स्नान के बाद मधुर कण्ठ से भगवान् का नाम ले रहे हैं। शुद्ध कपड़ा पहने, एक दो भक्तों के साथ आँगन से होते हुए कालीमाता के मन्दिर की ओर जा रहे हैं। लगातार नाम उच्चारण कर रहे हैं। चितवन बाहर की ओर नहीं है—अण्डे को सेते समय चिड़िया के सदृश हो रही है।

कालीमाता के मन्दिर में जाकर आपने प्रणाम और पूजा की। पूजा का कोई नियम न था— गन्ध-पुष्प कभी माता के चरणों में देते हैं और कभी अपने सिर पर। अन्त में माता का निर्माल्य सिर पर रख भवनाथ से कहा, 'यह लो डाब' (कच्चा नारियल); माता का प्रसादी डाब था।

फिर आँगन से होते हुए अपने कमरे की तरफ आ रहे हैं। साथ में भवनाथ और मास्टर हैं। रास्ते की दाहिनी ओर श्रीराधाकान्तजी का

मन्दिर है, जिसे श्रीरामकृष्ण 'विष्णुघर' कहा करते थे। इन युगलमूर्तियों को देखकर आपने भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। बाईं ओर बारह शिव-मन्दिर थे। शिवजी को हाथ जोड़कर प्रणाम करने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण अपने डेरे पर पहुँचे। देखा कि और भी कई भक्त आए हुए हैं। राम, नित्यगोपाल, केदार, चटर्जी आदि अनेक लोग आए हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। आपने भी उनसे कुशल प्रश्न पूछा।

नित्यगोपाल को देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "तू कुछ खायेगा?" ये भक्त उस समय बालक के भाव में थे। इन्होंने विवाह नहीं किया था, उम्र २३-२४ वर्ष की होगी। वे सदा भावराज्य में रहते थे और कभी अकेले, कभी राम के साथ, प्रायः श्रीरामकृष्ण के पास आया करते थे। श्रीरामकृष्ण उनकी भावावस्था को देखकर उनका बड़ा प्यार करते हैं—और कभी कभी कहते हैं कि उनकी परमहंस की अवस्था है, इसलिए आप उनको गोपाल जैसे देख रहे हैं।

भक्त ने कहा, "खाऊँगा।" उनकी बातें ठीक एक बालक की सी थीं।

खिलाने के बाद श्रीरामकृष्ण उनको गंगाजी की ओर अपने कमरे के गोल बरामदे में ले गए और उनसे बातें करने लगे।

एक परम भक्त स्त्री, जिनकी उम्र कोई ३१-३२ वर्ष की होगी, श्रीरामकृष्ण के पास अकसर आती हैं और उनकी बड़ी भक्ति करती हैं। वे भी इन भक्त की अद्भुत भावावस्था को देखकर उन्हें लड़के की

भाँति प्यार करती हैं और उन्हें प्रायः अपने घर लिवा ले जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्त से)—क्या तू वहाँ जाता है ?

नित्यगोपाल (बालक की तरह)—हाँ, जाता हूँ। मुझे लिवा ले जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण—अरे साधु, सावधान ! एक आध बार जाना, बस्। ज्यादा मत जाना, नहीं तो गिर पड़ेगा। कामिनी और कांचन ही माया है। साधु को स्त्रियों से बहुत दूर रहना चाहिए। वहाँ सब डूब जाते हैं। वहाँ ब्रह्मा और विष्णु तक लोटपोट हो जाते हैं।

भक्त ने सब सुना।

मास्टर (स्वगत)—क्या आश्चर्य की बात है ! इन भक्त की परमहंस की अवस्था है, यह कहते हुए भी आप इनके पतन की आशंका करते हैं। साधुओं के लिए आपने क्या ही कठिन नियम बना दिए हैं ! फिर इन भक्त पर आपका कितना प्रेम है। पहले ही से इन्हें सचेत कर रहे हैं।

(४)

साकार निराकार। श्रीरामकृष्ण की रामनाम में समाधि।

अब श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने कमरे के उत्तर-पूर्व वाले बरामदे में आ गए हैं। भक्तों में दक्षिणेश्वर के रहनेवाले एक गृहस्थ भी बैठे हैं, वे घर पर वेदान्त की चर्चा करते हैं। श्रीरामकृष्ण के सामने वे

केदार चटर्जी से शब्द-ब्रह्म पर बातचीत कर रहे हैं।

दक्षिणेश्वर वाले —यह अनाहत शब्द सदैव अपने भीतर और बाहर हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण—केवल शब्द होने से ही तो सब कुछ नहीं हुआ। शब्द का एक प्रतिपाद्य विषय भी तो होना चाहिए। तुम्हारे नाम ही से मुझे थोड़े ही आनन्द होता है। बिना तुमको देखे सोलहों आने आनन्द नहीं होता।

दक्षिणेश्वर वाले—वही शब्द ब्रह्म है—वही अनाहत शब्द।

श्रीरामकृष्ण (केदार से)—अहा, समझे तुम ? इनका ऋषियों का सा मत है। ऋषियों ने श्रीरामचन्द्र से कहा, "राम, हम जानते हैं कि तुम दशरथ के पुत्र हो। भरद्वाज आदि ऋषि भले ही तुम्हें अवतार जानकर पूजें, पर हम तो अखण्ड सच्चिदानन्द को चाहते हैं।" यह सुनकर राम हँसते हुए चल दिए।

केदार—ऋषियों ने राम को अवतार नहीं जाना। तो वे नासमझ थे।

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर भाव से)—तुम ऐसा मत कहना ! जिसकी जैसी रुचि ! और जिसके पेट में जो चीज़ पचे !

"ऋषि ज्ञानी थे, इसीलिए वे अखण्ड सच्चिदानन्द को चाहते थे। पर भक्त अवतार को चाहते हैं, भक्ति का स्वाद चखने के लिए। ईश्वर के दर्शनों से मन का अन्धकार हट जाता है। पुराणों में लिखा है कि जब

श्रीरामचन्द्र सभा में पधारे, तब वहाँ सौ सूर्यों का मानो उदय हो गया ! तो प्रश्न उठता है कि सभा में बैठे हुए लोग जल क्यों नहीं गए ? इसका उत्तर यह है कि उनकी ज्योति जड़ज्योति नहीं है। सभा में बैठे हुए सब लोगों के हृदय-कमल खिल उठे। सूर्य के निकलने से कमल खिल जाते हैं।"

श्रीरामकृष्ण खड़े होकर भक्तों से यह कह ही रहे थे कि एका-एक उनका मन बाहरी जगत् को छोड़ भीतर की ओर मुड़ गया। "हृदय-कमल खिल उठे"—ये शब्द कहते ही आप समाधिमग्न हो गए।

श्रीरामकृष्ण उसी अवस्था में खड़े हैं। क्या भगवान् के दर्शनों से आपका हृदय-कमल खिल उठा ? बाहरी जगत् का कुछ भी ज्ञान आपको न था। मूर्ति की तरह आप खड़े हैं। मुँह उज्ज्वल और सहास्य है। भक्तों में से कुछ खड़े और कुछ बैठे हैं, सभी निर्वाक् होकर टक-टकी लगाए प्रेम-राज्य की इस अनोखी छवि को—इस अपूर्व समाधि-दृश्य को—देख रहे हैं।

बड़ी देर बाद समाधि टूटी। श्रीरामकृष्ण लम्बी साँस छोड़कर बारम्बार "राम-नाम" उच्चारण कर रहे हैं। नाम के प्रत्येक वर्ण से मानो अमृत टपक रहा था। श्रीरामकृष्ण बैठे। भक्त भी चारों तरफ बैठकर उनको एकटक देख रहे थे।

श्रीरामकृष्ण (भक्त से)—जब अवतार आते हैं, तो साधारण लोग उनको नहीं जान सकते। वे छिपकर आते हैं। दो ही चार अन्त-रंग भक्त उनको जान सकते हैं। राम पूर्णब्रह्म थे, पूर्ण अवतार थे,

यह बात केवल बारह ऋषियों को मालूम थी। अन्य ऋषियों ने कहा था, 'राम, हम तो तुमको दशरथ का बेटा ही समझते हैं।'

'अखण्ड सच्चिदानन्द को सब कोई थोड़े ही समझ सकते हैं। लेकिन भक्ति उसी की पक्की है, जो नित्य को पहुँचकर विलास के उद्देश्य से लीला लेकर रहता है। विलायत में क्वीन (रानी) को जब देखकर आओ, तब क्वीन की बातें, क्वीन के कार्य, इन सबका वर्णन हो सकता है। क्वीन के विषय में कहना तभी ठीक उतरता है। भरद्वाज आदि ऋषियों ने राम की स्तुति की थी और कहा था, 'हे राम, तुम्हीं वह अखण्ड सच्चिदानन्द हो! हमारे सामने तुम मनुष्य के रूप में अवतीर्ण हुए हो। सच तो यह है कि माया के द्वारा ही तुम मनुष्य जैसे दिखते हो।' भरद्वाज आदि ऋषि राम के परम भक्त थे। उन्हीं की भक्ति पक्की है।"

(५)

कीर्तन का आनन्द तथा समाधि।

भक्त निर्वाक होकर यह अवतार-तत्व सुन रहे हैं। कोई कोई सोच रहे हैं, "क्या आश्चर्य है! वेदोक्त अखण्ड सच्चिदानन्द जिन्हें वेद ने मन-वचन से परे बताया है—क्या वे ही हमारे सामने साढ़े तीन हाथ का मनुष्य-शरीर लेकर आते हैं? जब श्रीरामकृष्ण ऐसा कहते हैं तो वैसा अवश्य ही होगा! यदि ऐसा न होता तो 'राम राम' कहते हुए इन महापुरुष को क्यों समाधि होती? अवश्य ही इन्होंने हृदय-कमल में राम का रूप देखा होगा।"

थोड़ी देर में कोन्नगर से कुछ भक्त मृदङ्ग और झाँझ लिए संकीर्तन करते हुए बगीचे में आए। मनोमोहन, नवाई आदि बहुत से लोग नाम-संकीर्तन करते हुए श्रीरामकृष्ण के पास उसी बरामदे में पहुँचे। श्रीराम-कृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर उनसे मिलकर संकीर्तन कर रहे हैं।

नाचते नाचते बीच बीच में समाधि हो जाती है। तब संकीर्तन के बीच में निःस्पन्द होकर खड़े रहते हैं। उसी अवस्था में भक्तों ने उनको फूलों के बड़े बड़े गजरों से सजाया। भक्त देख रहे हैं मानो सामने ही श्रीगौरांग खड़े हैं। गहरी भाव-समाधि में मग्न हैं। श्रीगौरांग की तरह श्रीरामकृष्ण की भी तीन दशाएँ हैं; कभी अन्तर्दशा—तब जड़ वस्तु की भाँति आप बेहोश और निःस्पन्द हो जाते हैं; कभी अर्धबाह्य दशा—तब प्रेम से भरपूर होकर नाचते हैं; और फिर बाह्य दशा—तब भक्तों के साथ कीर्तन करते हैं।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो खड़े हैं। गले में मालाएँ हैं। कहीं आप गिर न पड़ें इसीलिए एक भक्त उनको पकड़े हुए हैं। चारों ओर भक्त खड़े होकर मृदंग और झाँझ से कीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की दृष्टि स्थिर है। श्रीमुख पर प्रेम की छटा झलक रही है। आप पश्चिम की ओर मुँह किए हुए हैं। बड़ी देर तक सब लोग यह आनन्द-मूर्ति देखते रहे।

समाधि खुली। दिन चढ़ गया है। थोड़ी देर बाद कीर्तन भी बन्द हुआ। भक्त श्रीरामकृष्ण को भोजन कराने के लिए व्यग्र हुए।

कुछ विश्राम के पश्चात् श्रीरामकृष्ण एक नया पीला कपड़ा पहने अपनी छोटी खाट पर बैठे। आनन्दमय महापुरुष की उस अनुपम रूप-

छबि को भक्त देख रहे थे, पर देखने की प्यास नहीं मिटी। वे सोचते थे कि इस रूप-सागर में डूब जायँ।

श्रीरामकृष्ण भोजन करने बैठे। भक्तों ने भी प्रसाद पाया।

(६)

श्रीरामकृष्ण और सर्वधर्मसमन्वय।

भोजन के उपरान्त श्रीरामकृष्ण उस छोटी खाट पर आराम कर रहे हैं। कमरे में लोगों की भीड़ बढ़ रही है। बाहर के बरामदे भी लोगों से भरे हैं। कमरे के भीतर जमीन पर भक्त बैठे हैं और श्रीरामकृष्ण की ओर ताक रहे हैं। केदार, सुरेश, राम, मनोमोहन, गिरीन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर आदि बहुत लोग वहाँ पर मौजूद हैं। राखाल के पिता आए हैं, वे भी वहीं बैठे हैं।

एक वैष्णव गोसाईं भी उसी स्थान पर बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे बातें कर रहे हैं। गोसाइयों को देखते ही श्रीरामकृष्ण उनके सामने सिर झुका देते थे—कभी कभी तो साष्टांग प्रणाम भी करते थे।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम क्या कहते हो? उपाय क्या है?

गोसाईं—जी, नाम से ही सब कुछ होगा। कलियुग में नाम की बड़ी महिमा है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, नाम की बड़ी महिमा तो है, पर बिना अनुराग के क्या हो सकता है? ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होने चाहिए। सिर्फ

नाम लेते जा रहा हूँ, पर चित्त कामिनी और कांचन में है, इससे क्या होगा ?

" बिच्छू या मकड़ी के काटने पर खाली मंत्र से वह अच्छा नहीं होता—उसके लिए गोईंठे का ताप भी देना पड़ता है। "

गोसाईं—तो अजामिल को क्यों हुआ ? वह महा पातकी था, ऐसा पाप ही न था जो उसने न किया हो, पर मरते समय अपने लड़के को 'नारायण' कहकर बुलाने से ही उसका उद्धार हो गया।

श्रीरामकृष्ण—शायद अजामिल पूर्व जन्म में बहुत कर्म कर चुका था। और यह भी लिखा है कि उसने आगे भी तपस्या की थी।

"अथवा यों कहिए कि उस समय उसके अन्तिम क्षण आ गये थे; हाथी को नहला देने से क्या होगा, फिर कूड़ा करकट लिपटाकर वह ज्यों का त्यों हो जाता है। पर हाथीखाने में घुसने के पहले ही अगर कोई उसकी धूल झाड़ दे और उसे नहला दे तो फिर उसका शरीर साफ रह सकता है।

"मान लिया कि नाम से जीव एकबार शुद्ध हुआ, पर वह फिर तरह तरह के पापों में लिप्त हो जाता है। मन में बल नहीं; वह प्रण नहीं करता कि फिर पाप नहीं करूँगा। गङ्गास्नान से सब पाप मिट जाते हैं सही, पर सब लोग कहते हैं कि वे पाप एक पेड़ पर चढ़े रहते हैं। जब वह मनुष्य गङ्गाजी से नहाकर लौटता है, तो वे पुराने पाप पेड़ से कूदकर फिर उसके सिर पर सवार हो जाते हैं। (सब हँसे।) उन पुराने पापों ने उसे फिर घेर लिया है ! दो चार कदम आते उसे घर दबाया !

"इसीलिए नाम भी करो और साथ ही प्रार्थना भी करो कि ईश्वर पर अनुराग हो, और जो चीज़ें दो ही चार दिन के लिए हैं— जैसे, धन, मान, देहसुख आदि—उनसे आसक्ति घट जाय।

(गोसाईं से) "यदि आन्तरिकता हो तो सभी धर्मों से ईश्वर मिल सकते हैं। वैष्णवों को भी मिलेंगे, और शाक्तों, वेदान्तियों और ब्राह्मों को भी, फिर मुसलमानों और ईसाइयों को भी। हृदय से चाहने पर सब को मिलेंगे। कोई कोई झगड़ा कर बैठते हैं। वे कहते हैं कि हमारे श्रीकृष्ण को भजे बिना कुछ न बनेगा; या हमारी काली-माता को भजे बिना कुछ न होगा, अथवा हमारे ईसाई धर्म को ग्रहण किए बिना कुछ न होगा।

"ऐसी बुद्धि का नाम हठधर्म है, अर्थात् मेरा ही धर्म ठीक है और बाकी सब का ग़लत। यह बुद्धि खराब है। ईश्वर के पास हम बहुत रास्तों से पहुँच सकते हैं।

"फिर कोई कोई कहते हैं कि ईश्वर साकार हैं, निराकार नहीं। यह कहकर वे झगड़ने लग जाते हैं! जो वैष्णव है वह वेदान्ती से झगड़ता है।

"यदि ईश्वर के साक्षात् दर्शन हों, तो सब हाल ठीक ठीक बताया जा सकता है। जिसने दर्शन किए वे ठीक जानते हैं कि भगवान् साकार भी हैं और निराकार भी; वे और भी कैसे कैसे हैं, यह कौन बताए।

"कुछ अन्धे एक हाथी के पास आ गये थे। एक ने बता दिया, इस चौपाये का नाम हाथी है। तब अन्धों से पूछा गया, हाथी कैसा

है ? वे हाथी की देह छूने लगे । एक ने कहा, हाथी खम्भे के आकार का है ! उसने हाथी का पैर ही छुआ था । दूसरे ने कहा, हाथी सूप की तरह है ! उसके हाथ हाथी के कान में पड़े थे । इसी तरह किसी ने पेट पकड़कर कुछ कहा, किसी ने सूँड़ पकड़कर कुछ कहा । ऐसे ही ईश्वर के सम्बन्ध में जिसने जितना देखा है, उसने यही सोचा है कि ईश्वर बस ऐसे ही हैं और कुछ नहीं ।

" एक आदमी शौच के लिए गया था । लौटकर उसने कहा, मैंने पेड़ के नीचे एक सुन्दर लाल गिरगिट देखा । दूसरे ने कहा, तुमसे पहले मैं उस पेड़ के नीचे गया था; परन्तु वह लाल क्यों होने लगा ? वह तो हरा है, मैंने अपनी आँखों से दीखा है । तीसरे ने कहा,—मैं तुम दोनों से पहले गया था, उसको मैंने भी देखा है; परन्तु वह न लाल है, न हरा; वह तो नीला है । और दो थे; उनमें से एक ने बतलाया, पीला और एक ने, खाकी । इस तरह अनेक रंग हो गए। अन्त में सब में झगड़ा होने लगा । हरएक का यही विश्वास था कि उसने जो कुछ देखा है, वही ठीक है । उनकी लड़ाई देख एक ने पूछा, तुम लड़ते क्यों हो ? जब उसने कुल हाल सुना तब कहा, " मैं उसी पेड़ के नीचे रहता हूँ ; और उस जानवर को मैं खूब पहचानता हूँ । तुममें से हरएक का कहना सच है । वह कभी हरा, कभी नीला, कभी लाल, इस तरह अनेक रंग धारण करता है । और कभी देखता हूँ, कोई रंग नहीं ! निर्गुण है !"

साकार अथवा निराकार ?

(गोस्वामी से) " ईश्वर को सिर्फ साकार कहने से क्या होगा ? वे श्रीकृष्ण की तरह मनुष्यरूप धारण करके आते हैं यह भी सत्य है;

अनेक रूपों से भक्तों को दर्शन देते हैं, यह भी सत्य है; और फिर वे निराकार अखण्ड सच्चिदानन्द हैं, यह भी सत्य है। वेदों ने उनको साकार भी कहा है, निराकार भी कहा है; सगुण भी कहा है और निर्गुण भी।

"किस तरह, जानते हो? सच्चिदानन्द मानो एक अनन्त समुद्र है। ठंढक के कारण समुद्र का पानी बर्फ बनकर तैरता है। पानी पर बर्फ के कितने ही आकार के टुकड़े तैरते हैं। वैसे ही भक्ति-हिम के लगने से सच्चिदानन्द-सागर में साकार-मूर्ति के दर्शन होते हैं। वे भक्त के लिए साकार होते हैं। फिर जब ज्ञानसूर्य का उदय होता है तब बर्फ गल जाती है, फिर वही पहले का पानी ज्यों का त्यों रह जाता है। ऊपर-नीचे जल ही जल भरा हुआ है। इसीलिए श्रीमद्भागवत में सब स्तव करते हैं, 'हे देव, तुम्हीं साकार हो, तुम्हीं निराकार हो। हमारे सामने तुम मनुष्य बने घूम रहे हो, परन्तु वेदों ने तुम्हीं को वाक्य और मन से परे कहा है।'

"परन्तु यह कह सकते हो कि किसी किसी भक्त के लिए वे नित्य साकार हैं। ऐसा भी स्थान है जहाँ बर्फ गलती नहीं, स्फटिक का आकार धारण करती है।"

केदार—श्रीमद्भागवत में व्यासदेव ने तीन दोषों के लिए परमात्मा से क्षमा प्रार्थना की है। एक जगह कहा है, हे भगवन्, तुम मन और वाणी से दूर हो, किन्तु मैंने केवल तुम्हारी लीला, तुम्हारे साकार रूप का वर्णन किया है; अतएव अपराध क्षमा कीजिएगा।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ईश्वर साकार भी हैं और निराकार भी, फिर साकार-निराकार के भी परे हैं। उनकी इयत्ता नहीं की जा सकती।

(७)

श्रीरामकृष्ण, नित्यसिद्ध तथा कौमार वैराग्य।

राखाल के पिता भी बैठे हुए हैं। राखाल आजकल श्रीरामकृष्ण के पास ही रहते हैं। राखाल की माता की मृत्यु हो जाने पर उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह कर लिया है। राखाल यहीं रहते हैं, इसलिए उनके पिता कभी कभी आया करते हैं। राखाल के यहाँ रहने में इनकी ओर से कोई बाधा नहीं है। ये श्रीमान् और विषयी मनुष्य हैं। सदा मुकदमों की पैरवी में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण के पास कितने ही वकील और डिप्टी मैजिस्ट्रेट आया करते हैं। राखाल के पिता इनसे वार्तालाप करने के लिए कभी कभी आ जाते हैं। उनसे मुकदमों की बहुत सी बातें सूझ जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण रह रहकर राखाल के पिता को देख रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है, राखाल उन्हीं के पास रह जायँ।

श्रीरामकृष्ण (राखाल के पिता और भक्तों से)—अहा, आजकल राखाल का स्वभाव कैसा हुआ है! उसके मुँह पर दृष्टि डालने से देखोगे, उसके होंठ रह रहकर हिल रहे हैं। अन्तर में ईश्वर का नाम जपता है, इसीलिए होंठ हिलते रहते हैं।

"ये सब लड़के नित्यसिद्ध की श्रेणी के हैं। ईश्वर का ज्ञान साथ लेकर पैदा हुए हैं। कुछ उम्र होते ही ये समझ जाते हैं कि संसार की छूत देह में लगी तो फिर निस्तार न होगा। वेदों में 'होमा' पक्षी की कहानी है। वह चिड़िया आकाश ही में रहती है। आकाश

ही में अण्डे देती है। अण्डे गिरते रहते हैं, पर वे इतनी ऊँचाई से गिरते हैं कि गिरते ही गिरते बीच में वे फूट जाते हैं। तब बच्चे निकल आते हैं। वे भी गिरते रहते हैं। उस समय भी वे इतने ऊँचे पर रहते हैं कि गिरते ही गिरते उनकी आँखें भी खुल जाती हैं। तब वे समझ जाते हैं कि अरे हम मिट्टी में गिर जायँगे, और गिरे तो चकनाचूर। मिट्टी देखते ही वे ऊपर अपनी माता की ओर फिर उड़ जाते हैं, जमीन कभी छूते ही नहीं। माता के निकट पहुँचना ही उनका लक्ष्य हो जाता है।

"ये सब लड़के ठीक वैसे ही हैं। लड़कपन ही में संसार देखकर डर जाते हैं। इनकी एकमात्र चिन्ता यही है कि किस तरह माता के निकट जायँ, किस प्रकार ईश्वर के दर्शन हों।

"यदि यह कहो कि ये रहे विषयी मनुष्यों में, पैदा हुए विषयी के यहाँ, फिर इनमें ऐसी भक्ति, ऐसा ज्ञान कैसे हो गया, तो इसका भी अर्थ है। मैली जमीन पर यदि चना गिर जाय, तो उसमें चना ही फलता है। उस चने से कितने अच्छे काम होते हैं। मैली जमीन पर गिर गया है, इसलिए उससे कोई दूसरा पौधा थोड़े ही होगा।

"अहा, राखाल का स्वभाव आजकल कैसा हो गया है। और होगा भी क्यों नहीं ? यदि सुरन अच्छा हुआ, तो उसके अङ्कुर भी अच्छे होते हैं।"

मास्टर (गिरीन्द्र से अलग)—साकार और निराकार की बात कैसी समझाई उन्होंने ! जान पड़ता है, वैष्णव केवल साकार ही मानते हैं।

गिरीन्द्र—होगा। वे एक ही भाव पर अड़े रहते हैं।

मास्टर—'नित्य साकार' आप समझे? स्फटिकवाली बात? मैं उसे अच्छी तरह नहीं समझ सका।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—क्यों जी, तुमलोग क्या बातचीत कर रहे हो?

मास्टर और गिरीन्द्र ज़रा हँसकर चुप हो गए।

वृन्दा दासी (रामलाल से)—रामलाल, अभी इस आदमी को मिठाइयाँ दो, हमें बाद में देना।

श्रीरामकृष्ण—वृन्दा को अभी मिठाइयाँ नहीं दी गईं?

(८)

पंचवटी में कीर्तनानन्द।

दिन के तीसरे पहर भक्तगण पंचवटी में कीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भी उनमें मिल गए, भक्तों के साथ नाम-संकीर्तन करते हुए आनन्द में मग्न हो रहे हैं।

गीत का भावार्थ:—

"श्यामा माँ के चरणरूपी आकाश में मन की पतंग उड़ रही थी। कलुष की वायु से वह चक्कर खाकर गिर पड़ी। माया का कन्ना भारी हुआ, मैं उसे फिर उठा नहीं सका। स्त्री-पुत्रादि के तागे में उलझकर वह फट गई। उसका ज्ञानरूपी मस्तक (ऊपर का हिस्सा)

अलग हो गया है। उठाने से ही वह गिर पड़ती है। जब सिर ही नहीं रह गया तो वह उड़ कैसे सकती है। साथ के छः आदमियों की (काम-क्रोधादि की) विजय हुई। वह भक्ति के तागे से बँधी थी। खेलने के लिए आते ही तो यह भ्रम सवार हो गया, 'नरेशचन्द्र' को इस हँसने और रोने से तो बेहतर आना ही न था।"

फिर गाना होने लगा। गीत के साथ ही मृदङ्ग-करताल बजने लगे। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ नाच रहे हैं।

गीत का भावार्थ :—

"मेरा मन-मधुप श्यामापद-नीलकमल में मस्त हो गया। कामादि पुष्पों में जितने विषय-मधु थे, सब तुच्छ हो गए। चरण काले हैं, मधुप काला है, काले से काला मिल गया। पञ्चतत्त्व यह तमाशा देखकर भाग गये। कमलाकान्त के मन की आशा इतने दिनों में पूर्ण हुई। सुख-दुःख दोनों बराबर हुए; केवल आनन्द का सागर उमड़ रहा है।"

कीर्तन हो रहा है, और भक्त गा रहे हैं।

"श्यामा माँ ने एक कल बनाई है। साढ़े तीन हाथ की कल के भीतर वह कितने ही रङ्ग दिखा रही है। वह स्वयं कल के भीतर रहकर कल की डोर पकड़कर उसे घुमाया करती है। कल कहती है, मैं खुद घूमती हूँ। वह यह नहीं जानती कि कौन उसे घुमा रहा है। जिसने कल को पहचान लिया है, उसे कल न होना होगा। किसी किसी कल की भक्ति-रूपी डोर में श्यामा माँ बँधी हुई हैं।"

भक्तलोग आनन्द करने लगे। जब उन्होंने थोड़ी देर के लिए गाना बन्द किया तब श्रीरामकृष्ण उठे। इधर-उधर अभी भी अनेक भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी से अपने कमरे की ओर जा रहे हैं। मास्टर साथ हैं। बकुल के पेड़ के नीचे जब वे आए तब त्रैलोक्य से भेंट हुई। उन्होंने प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (त्रैलोक्य से)—पंचवटी में वे लोग गा रहे हैं, एक बार चलकर देखो तो।

त्रैलोक्य—मैं जाकर क्या करूँ ?

श्रीरामकृष्ण—क्यों देखने का आनन्द मिलता।

त्रैलोक्य—एक बार देख आया।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा।

(९)

श्रीरामकृष्ण और गृहस्थधर्म।

साढ़े पाँच या छः बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने घर के दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में बैठे हुए हैं। भक्तों को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केदार आदि भक्तों से)—जो संसार-त्यागी है वह ईश्वर का नाम तो लेगा ही। उसको तो और दूसरा काम ही नहीं। वह यदि ईश्वर का चिन्तन करता है तो इसमें आश्चर्य की बात क्या है ? वह यदि ईश्वर की चिन्ता न करे, यदि ईश्वर का नाम न ले, तो लोग उसकी निन्दा करेंगे !

"संसारी मनुष्य यदि ईश्वर का नाम जपे, तो समझो उसमें बड़ी मर्दानगी है। देखो, राजा जनक बड़े ही मर्द थे। वे दो तलवारें चलाते थे, एक ज्ञान की और एक कर्म की। एक ओर पूर्ण ज्ञान था, और दूसरी ओर वे संसार का कर्म कर रहे थे। बदचलन स्त्री घर के सब कामकाज बड़ी खूबी से करती है, परन्तु वह सदा अपने यार की चिन्ता में रहती है।

"साधुसंग की सदा ज़रूरत है। साधु ईश्वर से मिला देते हैं।"

केदार—जी हाँ, महापुरुष जीवों के उद्धार के लिए आते हैं। जैसे रेलगाड़ी के इंजिन के पीछे कितनी ही गाड़ियाँ बँधी रहती हैं, परन्तु वह उन्हें घसीट ले जाता है। अथवा जैसे नदी या तड़ाग कितने ही जीवों की प्यास बुझाते हैं।"

क्रमशः भक्तगण घर लौटने लगे। सभी ने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। भवनाथ को देखकर श्रीरामकृष्ण बोले, "तू आज न जा, तुझ जैसों को देखते ही उद्दीपना हो जाती है।"

भवनाथ अभी संसारी नहीं हुए। उम्र उन्नीस-बीस होगी। गोरा रङ्ग, सुन्दर देह। ईश्वर के नाम से आँखों में आँसू आ जाते हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें साक्षात् नारायण देखते हैं!

परिच्छेद १५

ब्राह्म भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

समाधि में ।

फाल्गुन के कृष्णपक्ष की पंचमी है, बृहस्पतिवार, २९ मार्च, १८८३ । दोपहर को भोजन करके भगवान् श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर के लिए दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर के उसी पहले के कमरे में विश्राम कर रहे हैं । सामने पश्चिम की ओर गंगाजी बह रही हैं । दिन के दो बजे का समय है, ज्वार आ रही है ।

कोई कोई भक्त आ गए हैं । ब्राह्म भक्त श्रीयुत अमृत और ब्राह्म समाज के नामी गवैये श्रीयुत त्रैलोक्य आ गए हैं ।

राखाल बीमार हैं । उन्हीं की बात श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—यह लो, राखाल बीमार पड़ गया । परन्तु सोडा पीने से कोई कभी अच्छा होता है ? इससे क्या होगा ? राखाल, तू जगन्नाथ का प्रसाद खा ।

यह कहते कहते श्रीरामकृष्ण एक अद्भुत भाव में आ गए । शायद आप देख रहे हैं, साक्षात् नारायण सामने राखाल के रूप में बालक का वेष धारण करके आ गए हैं । इधर कामिनी-कांचन-त्यागी बालकभक्त शुद्धात्मा राखाल हैं और उधर भगवत्प्रेम में सदा मस्त

रहनेवाली श्रीरामकृष्ण की प्रेमभरी दृष्टि—अतएव वात्सल्यभाव का उदय होना स्वाभाविक था। वे राखाल को वात्सल्यभाव से देखते हुए बड़े ही प्रेम से 'गोविन्द' 'गोविन्द' उच्चारण करने लगे। श्रीकृष्ण को देखकर यशोदा के मन में जिस भाव का उदय होता था, यह शायद वही भाव है! भक्तगण यह अद्भुत दृश्य देखकर स्थिर भाव से बैठे हैं। 'गोविन्द' नाम जपते हुए भक्तावतार श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गए। शरीर चित्रार्पितवत् स्थिर हो गया! इन्द्रियाँ मानो अपने काम से जवाब देकर चली गईं। नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि स्थिर हो रही है। साँस चल रही है या नहीं, इसमें सन्देह है। इस लोक में केवल शरीर पड़ा हुआ है, आत्माराम चिदाकाश में विहार कर रहे हैं। अब तक जो माता की तरह सन्तान के लिए घबड़ाये हुए थे, वे अब कहाँ हैं? क्या इसी अद्भुत अवस्था का नाम 'समाधि' है?

इसी समय गेरुए कपड़े पहने हुए एक बङ्गाली आ पहुँचे। भक्तों के बीच में बैठ गए।

(२)

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥

गीता, ३। ६

वैराग्य। नरेन्द्र आदि नित्यसिद्ध हैं। समाधितत्व।

धीरे धीरे श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटने लगी। भाव में आप ही आप बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (गेरुआ देखकर)—यह गेरुआ क्यों? क्या कुछ लपेट लेने ही से हो गया? (हँसते हैं।) किसी ने कहा था—'चण्डी छोड़कर अब ढोल बजाता हूँ।' पहले चण्डी के गीत गाता था, फिर ढोल बजाने लगा। (सब हँसते हैं।)

"वैराग्य तीन-चार प्रकार के होते हैं। जिसने संसार की ज्वाला से दग्ध होकर गेरुआ धारण कर लिया है, उसका वैराग्य अधिक दिन नहीं टिकता। किसी ने देखा, काम कुछ मिलता नहीं, झट गेरुआ पहनकर काशी चला गया! तीन महीने बाद घर में चिट्ठी आई, उसने लिखा—'मुझे काम मिल गया है, कुछ ही दिनों में घर आऊँगा, चिन्ता न करना!' परन्तु जिसके सब कुछ है, चिन्ता की कोई बात नहीं, किन्तु फिर भी कुछ अच्छा नहीं लगता, अकेले अकेले में भगवान् के लिए रोता है, उसी का वैराग्य यथार्थ वैराग्य है।

"मिथ्या कुछ भी अच्छा नहीं। मिथ्या वेष भी अच्छा नहीं। वेष के अनुकूल यदि मन न हुआ, तो क्रमशः उससे महा अनर्थ हो जाता है। झूठ बोलने या बुरा कर्म करने से धीरे धीरे उसका भय चला जाता है। इससे सादे कपड़े पहनना अच्छा है। मन में आसक्ति भरी है, कभी कभी पतन भी हो जाता है, और बाहर से गेरुआ! यह बड़ा ही भयानक है!

"यहाँ तक कि जो लोग सच्चे हैं उनके लिए कौतुकवश भी झूठ की नकल बुरी चीज़ है। केशव सेन के यहाँ मैं वृन्दावन-नाटक देखने गया था। न जाने कैसा क्रॉस (Cross) वह लाया और फिर पानी छिड़कने लगा; कहता था, शान्तिजल है। एक को देखा, मतवाला बना बहक रहा था।

ब्राह्मभक्त—कु—बाबू थे।

श्रीरामकृष्ण—भक्त के लिए इस तरह का स्वांग करना अच्छा नहीं। उन सब विषयों में बड़ी देर तक मन को डाल रखना ही दोष है। मन धोबी के घर का कपड़ा है, जिस रंग से रंगोगे, वही रंग उस पर चढ़ जायगा। मिथ्या में बड़ी देर तक डाल रखोगे तो मिथ्या ही हो जायगा।

"एक दूसरे दिन निमाई-संन्यास का अभिनय था। केशव के घर में मैं भी देखने के लिए गया था। केशव के खुशामदी चेलों ने अभिनय बिगाड़ डाला था। एक ने केशव से कहा—'कलिकाल के चैतन्य तो आप ही हैं।' केशव मेरी ओर देखकर हँसता हुआ कहने लगा, तो फिर ये क्या हुए? मैंने कहा—'मैं तुम्हारे दासों का दास—रज की रज हूँ।' केशव को नाम और यश की अभिलाषा थी।"

श्रीरामकृष्ण (अमृत और त्रैलोक्य से)—नरेन्द्र और राखाल आदि ये जो लड़के हैं, ये नित्यसिद्ध हैं। ये जन्म-जन्मान्तर से ईश्वर के भक्त हैं। अनेक लोगों को बड़ी साधना के बाद कहीं थोड़ी सी भक्ति प्राप्त होती है, परन्तु इन्हें जन्म से ही ईश्वर पर अनुराग है। मानो स्वयम्भू शिव हैं—बैठाए हुए शिव नहीं।

"नित्यसिद्धों का एक दर्जा ही अलग है। सभी चिड़ियों की चोंच टेढ़ी नहीं होती। ये कभी संसार में नहीं फँसते, जैसे प्रह्लाद।

"साधारण मनुष्य साधना करता है। ईश्वर पर भक्ति भी करता है और संसार में भी फँस जाता है, स्त्री और धन के लिए भी हाथ

लपकाता है। मक्खी जैसे फूल पर भी बैठती है, बर्फियों पर भी बैठती है और विष्ठा पर भी बैठती है। (सब स्तब्ध हैं।)

"नित्यसिद्ध तो मधुवाली मक्खी की तरह होते हैं। मधुवाली मक्खियाँ केवल फूल पर बैठतीं और मधु ही पीती हैं। नित्यसिद्ध रामरस का ही पान करते हैं, विषयरस की ओर नहीं जाते।

"साधना द्वारा जो भक्ति प्राप्त होती है, इनकी वह भक्ति नहीं है। इतना जप, इतना ध्यान करना होगा, इस तरह पूजा करनी होगी, यह सब विधिवादीय भक्ति है। जैसे किसी गाँव में किसी को जाना है, परन्तु रास्ते में धनहे खेत पड़ते हैं, तो मेड़ों से घूमकर उसे जाना पड़ता है। अगर किसी को सामनेवाले गाँव में जाना है, परन्तु रास्ते में नदी पड़ती है, तो टेढ़ा रास्ता चक्कर लगाते हुए ही पार करना पड़ता है।

"रागभक्ति, प्रेमाभक्ति, ईश्वर पर आत्मीयों की सी प्रीति होने पर फिर कोई विधिनियम नहीं रह जाता। तब का जाना धनहे खेतों की मेड़ों पर का जाना नहीं, किन्तु कटे हुए खेतों से सीधा निकल जाना है। चाहे जिस ओर से सीधे चले जाओ।

"बाढ़ आने पर फिर नदी के टेढ़े रास्ते से नहीं जाना पड़ता। तब इधर उधर की जमीन और रास्ते पर एक बाँस पानी चढ़ जाता है। तब तो बस सीधे नाव चलाकर पार हो जाओ।

"इस रागभक्ति, अनुराग या प्रेम के बिना ईश्वर नहीं मिलते।"

अमृत — महाराज ! इस समाधि अवस्था में भला आपको क्या जान पड़ता है ?

श्रीरामकृष्ण—सुना नहीं? किस तरह होता है, सुनो। जैसे हण्डी की मछली गंगा में छोड़ देने से फिर वह गंगा की मछली हो जाती है।

अमृत—क्या ज़रा भी अहंकार नहीं रह जाता?

श्रीरामकृष्ण—नहीं, पर मेरा कुछ अहंकार रह जाता है। सोने के एक टुकड़े को तुम चाहे जितना घिस डालो, पर अन्त में एक छोटा सा कण बचे ही रहता है। और, जैसे कोई बड़ी भारी अग्निराशि है, उसकी एक ज़रा सी चिनगारी हो। बाह्य ज्ञान चला जाता है, परन्तु थोड़ा सा अहंकार रह जाता है, शायद वे विलास के लिए रख छोड़ते हैं। 'मैं' और 'तुम' इन दोनों के रहने ही से स्वाद मिलता है। कभी कभी वे 'अहं' को भी मिटा देते हैं। इसे 'जड़ समाधि' या 'निर्विकल्प समाधि' कहते हैं। तब क्या अवस्था होती है, यह कहा नहीं जा सकता! नमक का पुतला समुद्र नापने गया था। ज्योंही समुद्र में उतरा कि गल गया। 'तदाकारकारित'। अब लौटकर कौन बतलाये कि समुद्र कितना गहरा है।

परिच्छेद १६

ईश्वरलाभ के उपाय

(१)

कीर्तनानन्द में। संसारी तथा शास्त्रार्थ।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बलराम बाबू के मकान में बैठे हुए हैं, बैठक के उत्तर-पूर्व वाले कमरे में। दोपहर ढल चुकी, एक बजा होगा। नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द), भवनाथ, राखाल, बलराम और मास्टर घर में उनके साथ बैठे हुए हैं।

आज अमावस्या है, शनिवार ७ अप्रैल, १८८३। श्रीरामकृष्ण बलराम बाबू के घर सुबह को आए थे। दोपहर को भोजन वहीं किया है। नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल तथा और भी दो एक भक्तों को आपने निमंत्रित करने के लिए कहा था। अतएव उन लोगों ने भी यहीं आकर भोजन किया है। श्रीरामकृष्ण बलराम से कहते थे—"इन्हें खिलाना, तो बहुत से साधुओं के खिलाने का पुण्य होगा।"

कुछ दिन हुए श्रीरामकृष्ण श्रीयुत केशव बाबू के यहाँ नव वृन्दा-वन नाटक देखने गए थे। साथ नरेन्द्र और राखाल भी गए थे। नरेन्द्र ने भी अभिनय में भाग लिया। केशव पवहारी बाबा बने थे।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्रादि भक्तों से)—केशव साधु बनकर शान्ति-

जल छिड़कने लगा। परन्तु मुझे यह अच्छा न लगा। अभिनय में शान्ति-जल।

"और एक आदमी पाप-पुरुष बना था। ऐसा करना भी अच्छा नहीं। न पाप करना ही अच्छा है और न पाप का अभिनय करना ही।"

नरेन्द्र का शरीर अच्छा नहीं; परन्तु उनका गाना सुनने की श्रीरामकृष्ण को बड़ी इच्छा है। वे कहने लगे—"नरेन्द्र, ये लोग कह रहे हैं, तू कुछ गा।"

नरेन्द्र तानपुरा लेकर गाने लगे। गीत का भावार्थ यह है—

१। "मेरे प्राण-पिंजरे के पक्षी, गाओ। ब्रह्म-कल्पतरु पर बैठकर परमात्मा के गुण गाओ; धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष-रूपी पके हुए फल खाओ।" इ०

२। "वे विश्वरंजन हैं, परम-ज्योति ब्रह्म हैं, अनादिदेव जगत्पति हैं, प्राणों के भी प्राण हैं।" इ०

३। "हे राजराजेश्वर! दर्शन दो! मैं जिन प्राणों को तुम्हारे चरणों में अर्पित कर रहा हूँ, वे संसार के अनल-कुण्ड में पड़कर झुलस गए हैं। तिस पर यह हृदय कलुष-कलंक से आवृत है; दयामय! मोह-मुग्ध होकर मैं मृतकल्प हो रहा हूँ, तुम मृत-संजीवनी दृष्टि से मेरा शोधन कर लो।"

और भी दो गाने नरेन्द्रनाथ ने गाए। गानों के समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने भवनाथ से गाने के लिए कहा। भवनाथ ने भी एक गाना गाया।

नरेन्द्र (हँसते हुए)—इसने (भवनाथ ने) पान और मछली खाना छोड़ दिया है।

श्रीरामकृष्ण (भवनाथ से हँसते हुए)—क्यों रे, यह क्या किया? इससे कुछ नहीं होता। कामिनीकांचन का त्याग ही त्याग है। राखाल कहाँ है?

एक भक्त—जी, राखाल सो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—"एक आदमी बगल में चटाई लेकर नाटक देखने के लिए गया था। नाटक शुरू होने में देर थी, इसलिए वह चटाई बिछाकर सो गया। जब जागा तब सब समाप्त हो गया था! (सब हँसते हैं।)

"फिर चटाई बगल में दबाकर घर लौट आया!"

रामदयाल बहुत बीमार हैं। एक दूसरे कमरे में, बिछौने पर पड़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण उस घर में जाकर उनकी बीमारी का हाल पूछने लगे।

तीसरे पहर के चार बज चुके हैं। श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र, राखाल, मास्टर, भवनाथ आदि के साथ बैठक में बैठे हुए हैं। कई ब्राह्मभक्त भी आए हैं। उन्हीं के साथ बातचीत हो रही है।

ब्राह्मभक्त—महाराज ने पञ्चदशी देखी है?

श्रीरामकृष्ण—यह सब पहले पहल एक बार सुनना पड़ता है,—पहले पहल एक बार विचार कर लेना पड़ता है। इसके बाद—

'यत्नपूर्वक प्यारी श्यामा को माँ को हृदय में रखना। मन, तू देख और मैं देखूँ और दूसरा कोई न देखने पावे।'

"साधन-अवस्था में वह सब सुनना पड़ता है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर ज्ञान का अभाव नहीं रहता। माँ ज्ञान की राशि ठेलती रहती है।

"पहले हिज्जे करके लिखना पड़ता है—फिर सीधे घसीटते जाओ।

"सोना गलाने के समय कमर कसकर काम में लगना पड़ता है। एक हाथ में धौंकनी—दूसरे में पंखा—मुँह से फूँकना,—जब तक सोना न गल जाय। गल जाने पर ज्यों ही साँचे में छोड़ा कि सब चिन्ता दूर हो गई।

"शास्त्र पढ़ने ही से कुछ नहीं होता। कामिनी—कांचन में रहने से वे शास्त्र का अर्थ समझने नहीं देते। संसार की आसक्ति में ज्ञान का लोप हो जाता है।

'प्रयत्नपूर्वक मैंने काव्यरसों के जितने भेद सीखे थे वे सब इस बहरे की प्रीति में पड़ने से नष्ट हो गए।' (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण ब्राह्मभक्तों से केशव की बात कहने लगे—

"केशव योग और भोग दोनों में है। संसार में रहकर ईश्वर की ओर उसका मन लगा रहता है।"

एक भक्त विश्वविद्यालय की उपाधिवितरण-सभा (Convocation) के सम्बन्ध में कहते हुए बोले—"देखा, वहाँ बड़ी भीड़ लगी हुई थी।"

श्रीरामकृष्ण—एक जगह बहुत से लोगों को देखने पर ईश्वर का उद्दीपन होता है। यदि मैं ऐसा देखता तो विह्वल हो जाता।

(२)

मणिलाल और काशीदर्शन! 'ईश्वर कर्ता'।

दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में भगवान् श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आनन्द कर रहे हैं। सदा ईश्वर के भावों में मस्त रहते हैं। कभी समाधिमग्न, कभी कीर्तन के आनन्द में डूबे हुए, कभी प्राकृत मनुष्यों की तरह भक्तों से वार्तालाप करते हैं। मुख में सदा ईश्वरी प्रसंग रहता है; मन सदा अन्तर्मुख; और व्यवहार पाँच वर्ष के बच्चे की तरह। अभिमान कहीं छू तक नहीं गया।

रविवार, चैत्र की शुक्ला प्रतिपदा, ८ अप्रैल १८८३। कल शनिवार को श्रीरामकृष्ण बलराम बाबू के घर गये थे।

श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह बैठे हुए हैं। पास ही बालकभक्त राखाल बैठे हैं। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण के भतीजे रामलाल भी हैं। किशोरी तथा और भी कुछ भक्त आ गये! थोड़ी देर में पुराने ब्राह्मभक्त श्रीयुत मणिलाल मल्लिक भी आये और भूमिष्ठ हो उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

मणिलाल काशी गए थे। व्यवसायी आदमी हैं, काशी में उनकी कोठी है।

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, काशी गए थे, कुछ साधुमहात्मा भी देखे?

मणिलाल—जी हाँ, त्रैलंग स्वामी, भास्करानन्द, इन सबको देखने गया था।

श्रीरामकृष्ण—कहो, इन सबको कैसे देखा ?

मणि—त्रैलंग स्वामी उसी ठाकुरबाड़ी में हैं, मणिकर्णिका घाट पर वेणीमाधव के पास। लोग कहते हैं, पहले उनकी बड़ी ऊँची अवस्था थी। बड़े बड़े चमत्कार दिखला सकते थे। अब बहुत कुछ घट गया है।

श्रीरामकृष्ण—यह सब विषयी लोगों की निन्दा है।

मणि—भास्करानन्द सब से मिलते जुलते हैं, वे त्रैलंगस्वामी की तरह नहीं हैं कि एकदम बोलना ही बन्द।

श्रीरामकृष्ण—भास्करानन्द से तुम्हारी कोई बातचीत हुई ?

मणि—जी हाँ, बड़ी बातें हुईं। उनसे पापपुण्य की भी बात चली थी। उन्होंने कहा, पापमार्ग का त्याग करना, पाप की चिन्ता न करना; ईश्वर यही सब चाहते हैं। जिन कामों के करने से पुण्य होता है, उन्हें अवश्य करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह एक तरह की बात है। ऐहिक इच्छाएँ रखनेवालों के लिए। परन्तु जिनमें चैतन्य का उदय हुआ है, उनका भाव एक दूसरी तरह का होता है। वे जानते हैं कि ईश्वर ही एकमात्र कर्ता हैं और सब अकर्ता हैं। जिन्हें चैतन्य हुआ है, उनके पैर बेताला नहीं पड़ते। उन्हें हिसाब-किताब करके पाप का त्याग नहीं करना पड़ता। ईश्वर पर उनका इतना अनुराग होता है कि जो कर्म वे करते हैं, वही सत्कर्म हो जाता है, परन्तु वे जानते हैं कि इन सब कर्मों का कर्ता मैं नहीं हूँ। मैं तो उनका दास हूँ। मैं यंत्र हूँ,

वे यंत्री हैं। वे जैसा कराते हैं वैसा ही करता हूँ; जैसा कहलाते हैं, वैसा ही कहता हूँ, जैसा चलाते हैं, वैसा ही चलता हूँ।

"जिन्हें चैतन्य हुआ है, वे पाप-पुण्य के अतीत हो गए, वे देखते हैं, ईश्वर ही सब कुछ करते हैं। कहीं एक मठ था। मठ के साधु-महात्मा रोज भिक्षा के लिए जाया करते थे। एक दिन एक साधु ने देखा कि एक ज़मींदार किसी किसान को पीट रहा है। साधु बड़े दयालु थे। बीच में पड़कर उन्होंने ज़मींदार को मारने से मना किया। ज़मींदार उस समय मारे गुस्से के आग-बबूला हो रहा था। उसने दिल का सारा बुखार महात्मा जी पर ही उतारा; उन्हें इतना पीटा कि वे बड़ी देर तक बेहोश पड़े रहे। किसी ने मठ में जाकर खबर दी कि तुम्हारे किसी साधु को एक ज़मींदार ने बहुत मारा। मठ के अन्य साधु दौड़ते हुए आए और देखा तो वे साधु बेहोश पड़े हैं। तब उन्हें उठाकर मठ के भीतर किसी कमरे में सुलाया। साधु बेहोश थे, चारों ओर से लोग उन्हें घेरे दुःखित भाव से बैठे थे। कोई कोई पंखा झल रहे थे। एक ने कहा, मुँह में ज़रा दूध डालकर तो देखो। मुँह में दूध डालते ही उन्हें होश आया। आँखें खोलकर ताकने लगे। किसी ने कहा, अब यह देखना चाहिए कि इन्हें इतना ज्ञान है या नहीं कि आदमी पहचान सकें। यह कहकर उसने ऊँची आवाज़ लगाकर पूछा—क्यों महाराज, आपको यह कौन दूध पिला रहा है? साधु ने धीमे स्वर में कहा—भाई! जिसने मुझे मारा था वही अब दूध पिला रहा है।

"ईश्वर को बिना जाने ऐसी अवस्था नहीं होती।"

मणिलाल—जी हाँ, पर आपने यह जो कहा यह बड़ी ऊँची अवस्था की बात है। भास्करानन्द के साथ ऐसी ही कुछ बातें हुई थीं।

श्रीरामकृष्ण—वे किसी मकान में रहते हैं ?

मणिलाल—जी हाँ, एक आदमी के घर में रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण—उम्र क्या है ?

मणिलाल—पचपन की होगी।

श्रीरामकृष्ण—कुछ और भी बातें हुईं ?

मणिलाल—मैंने पूछा, भक्ति कैसे हो ? उन्होंने बतलाया, नाम जपो, राम राम कहो।

श्रीरामकृष्ण—यह बड़ी अच्छी बात है।

(३)

गृहस्थ और कर्मयोग।

श्रीठाकुर-मन्दिर में भवतारिणी, श्रीराधाकान्तजी और द्वादश शिवमन्दिरों के महादेवों की पूजा समाप्त हो गई। अब उनकी भोगारती के बाजे बज रहे हैं। चैत का महीना, समय दोपहर का है। अभी अभी ज्वार का चढ़ना आरम्भ हुआ है। दक्षिण की ओर से बड़े ज़ोरों की हवा चल रही है। पूतसलिला भागीरथी अभी अभी उत्तरवाहिनी हुई हैं। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद विश्राम कर रहे हैं।

राखाल बसीरहाट में रहते हैं। वहाँ, गरमी के दिनों में पानी के अभाव से लोगों को बड़ा कष्ट होता है।

श्रीरामकृष्ण (मणिलाल से)—देखो, राखाल कहता था, उसके देश में लोगों को पानी बिना बड़ा कष्ट होता है। तुम वहाँ एक

तालाब क्यों नहीं खुदा देते ? इससे लोगों का बड़ा उपकार होगा। (हँसते हुए) तुम्हारे पास तो बहुत रुपये हैं, इतने रुपये रखकर क्या करोगे ?……(श्रीरामकृष्ण के साथ दूसरे भक्त भी हँस पड़े।)

मणिलाल कलकत्ते की सिंदूरिया पट्टी में रहते हैं। सिंदूरिया पट्टी के ब्राह्मसमाज के वार्षिक उत्सव में वे बहुत से लोगों को आमंत्रित करते हैं। वराहनगर में मणिलाल का एक बगीचा भी है। वहाँ वे बहुधा अकेले आया करते हैं और उस समय श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाया करते हैं। वे सचमुच बड़े हिसाबी हैं। रास्ते भर के लिए किराए की गाड़ी नहीं करते। पहले ट्राम में चढ़कर शोभाबाजार तक आते हैं। फिर वहाँ से कई आदमियों के साथ हिस्से में किराया देकर घोड़ागाड़ी पर चढ़कर वराहनगर आते हैं; परन्तु रुपये की कमी नहीं है। कई साल बाद गरीब विद्यार्थियों के लिए उन्होंने एक बारगी पचीस हज़ार रुपये देने का बन्दोबस्त कर दिया था।

मणिलाल चुप बैठे रहे। कुछ देर दूसरी बातें करके बोले— महाराज! आप तालाब खुदाने की बात कह रहे थे। कहने ही से काम हो जाता।

(४)

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण तथा ब्राह्मभक्त। प्रेमतत्त्व।

कुछ देर बाद कलकत्ते से कई पुराने ब्राह्मभक्त आ पहुँचे। उनमें एक श्रीठाकुरदास सेन भी थे। कमरे में कितने ही भक्तों का समागम

हुआ है। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी चारपाई पर बैठे हुए हैं। सहास्य बदन, बालक की सी मूर्ति, उत्तरास्य होकर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (ब्राह्म तथा दूसरे भक्तों से)—तुम प्रेम प्रेम चिल्लाते हो, पर प्रेम को क्या ऐसी साधारण वस्तु समझ लिया है? प्रेम चैतन्य-देव को हुआ था। प्रेम के दो लक्षण हैं। पहला, संसार भूल जाता है। ईश्वर पर इतनी प्रीति है कि संसार का कोई ज्ञान ही नहीं। चैतन्यदेव वन देखकर वृन्दावन सोचते थे और समुद्र देखकर यमुना सोचते थे। दूसरा लक्षण यह है कि अपनी देह इतनी प्यारी वस्तु है, परन्तु उस पर भी ममता न रह जायगी। देहात्मबोध समूल नष्ट हो जाता है।

"ईश्वर-प्राप्ति के कुछ लक्षण हैं। जिसके भीतर अनुराग के लक्षण प्रकाशित हो रहे हैं, उसके लिए ईश्वर-प्राप्ति में ज्यादा देर नहीं है।

"अनुराग के ऐश्वर्य क्या हैं, सुनोगे? विवेक, वैराग्य, जीवों पर दया, साधुसेवा, साधुसंग, ईश्वर का नाम-गुणकीर्तन, सत्य बोलना, यही सब।

"अनुराग के यही सब लक्षण देखने पर ठीक ठीक कहा जा सकता है कि ईश्वर-प्राप्ति में अब बहुत देर नहीं है। यदि किसी नौकर के घर उसके मालिक का जाना ठीक हो जाय तो नौकर के घर की दशा देखकर यह बात समझ में आ जाती है। पहले घासफूस की कटाई होती है, घर का जाला झाड़ा जाता है, घर बुहारा जाता है। बाबू खुद अपने यहाँ से दरी और गुड़ीगुड़ी भेज देते हैं। ये सब सामान जब उसके घर आने लगते हैं, तब समझने में कुछ बाकी नहीं रहता कि अब बाबूजी आना ही चाहते हैं।"

एक भक्त—क्या पहले विचार करके इन्द्रियनिग्रह करना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—वह भी एक रास्ता है, विचार-मार्ग। भक्तिमार्ग से अन्तरिन्द्रिय-निग्रह आप ही आप हो जाता है और सहज ही हो जाता है। ईश्वर पर प्यार जितना ही बढ़ता जाता है, उतना ही इन्द्रिय-सुख अलोना मालूम पड़ता है।

"जिस रोज लड़का मर जाता है उस रोज क्या स्त्री-पुरुष का मन देहसुख की ओर जा सकता है?"

एक भक्त—उन्हें प्यार कर कहाँ सकते हैं!

श्रीरामकृष्ण—उनका नाम लेते रहने से सब पाप कट जाते हैं। काम, क्रोध, शरीर-सुख की इच्छा, ये सब दूर हो जाते हैं!

एक भक्त—उनके नाम में रुचि नहीं होती।

श्रीरामकृष्ण—व्याकुल होकर उनसे प्रार्थना करो जिससे उनके नाम में रुचि हो। वे ही तुम्हारा मनोरथ पूरा करेंगे।

श्रीरामकृष्ण गन्धर्व कण्ठ से गाने लगे। जीवों के दुःख से कातर होकर माँ से अपने हृदय का दुःख कह रहे हैं। अपने पर प्राकृत जीवों की अवस्था का आरोप करके माँ को जीवों का दुःख गाकर सुना रहे हैं। गीत का आशय यह है।

"माँ श्यामा! दोष किसी का नहीं, मैं जिस पानी में डूब रहा हूँ, वह मेरे ही हाथों के खोदे कुएँ का है। माँ कालमनोरमा, षड्रिपुओं की कुदाल लेकर मैंने पुण्य-क्षेत्र पर कूप खोदा जिसमें अब कालरूपी पानी भरा हुआ है। तारिणि, त्रिगुण-धारिणि माँ, सगुण ने विगुण कर दिया

है, परन्तु अब मेरी क्या दशा होगी ? इस वारि का निवारण कैसे करूँ ? जब यह सोचता हूँ तब आँखों से वारिधारा बहने लगती है। पहले पानी कमर तक था, वहाँ से छाती तक आया। इस पानी से मेरे जीवन की रक्षा कैसे होगी ? माँ, मुझे तेरी ही अपेक्षा है। मुझे तू मुक्ति-भिक्षा दे, कृपा-कटाक्ष करके भवसागर से पार कर दे।"

फिर गाना होने लगा—उनके नाम पर रुचि होने से जीवों का विकार दूर हो जाता है—इसी भाव का।

"हे शङ्करि ! यह कैसा विकार है ? तुम्हारी कृपा-औषधि मिलने पर ही यह दूर होगा। मिथ्या गर्व से मेरा सर्वाङ्ग जल रहा है, धन-जन की तृष्णा छूटती भी नहीं, अब मैं कैसे जीवित रह सकता हूँ ! जो कुछ कहता हूँ सब अनित्य प्रलाप है। माया की नींद किसी तरह नहीं छूटती। पेट में हिंसा की कृमि हो गई है, व्यर्थ कामों में घूमते रहने को भ्रम-रोग हो गया है। जब तुम्हारे नाम ही पर अरुचि है, तब भला इस रोग से मैं कैसे बच सकूँगा !"

श्रीरामकृष्ण—उनके नाम में अरुचि। विकार में यदि अरुचि हो गई तो फिर बचने की राह नहीं रह जाती। यदि ज़रा भी रुचि हो तो बचने की बहुत कुछ आशा है। इसीलिए नाम में रुचि होनी चाहिए। ईश्वर का नाम लेना चाहिए, दुर्गानाम, कृष्णनाम, शिवनाम, चाहे जिस नाम से पुकारो। यदि नाम लेने में दिन दिन अनुराग बढ़ता जाय, आनन्द हो तो फिर कोई भय नहीं, विकार दूर होगा ही—उनकी कृपा अवश्य होगी।

आन्तरिक भक्ति तथा दिखावटी भक्ति । भगवान् मन देखते हैं ।

जैसा भाव होता है लाभ भी वैसा ही होता है । रास्ते से दो मित्र जा रहे थे । एक मित्र ने कहा आओ भाई, ज़रा भागवत सुनें । दूसरे ने ज़रा झाँककर देखा । फिर वहाँ से वेश्या के घर चला गया । वहाँ कुछ देर बाद उसके मन में बड़ी विरक्ति हो गई । वह आप ही आप कहने लगा, 'मुझे धिक्कार है । मेरे मित्र ने मुझसे भागवत सुनने के लिए कहा और मैं यहाँ कहाँ पड़ा हूँ ।' इधर जो व्यक्ति भागवत सुन रहा था वह भी अपने मन को धिक्कार रहा था । वह कह रहा था, 'मैं कैसा मूर्ख हूँ, यह पण्डित न जाने क्या बक रहा है और मैं यहाँ बैठा हुआ हूँ ! मेरा मित्र वहाँ कैसे आनन्द में होगा ।' जब ये दोनों मरे, तब जो भागवत सुन रहा था, उसे तो यमदूत ले गये और जो वेश्या के घर गया था, उसे विष्णु के दूत बैकुण्ठ में ले गए ।

" भगवान् मन देखते हैं । कौन क्या कर रहा है, कहाँ पड़ा हुआ है, यह नहीं देखते । 'भावग्राही जनार्दनः ।'

" कर्ताभजा नाम का एक सम्प्रदाय है । वे मंत्र-दीक्षा देने के समय कहते हैं, 'अब मन तेरा है' । अर्थात् सब कुछ तेरे मन पर निर्भर है ।

"वे कहते हैं जिसका मन ठीक है, उसका करण ठीक है, वह अवश्य ईश्वर को प्राप्त करेगा ।

"मन के ही गुण से हनुमान समुद्र पार कर गये । मैं श्रीरामचन्द्र जी का दास हूँ, मैंने रामनाम उच्चारण किया है; मैं क्या नहीं कर सकता ?"—विश्वास इसे कहते हैं ।

"जब तक अहंकार है तब तक अज्ञान है। अहंकार के रहते मुक्ति नहीं होती।

"गौएँ 'हम्मा' 'हम्मा' करती हैं और बकरे 'में' 'में' करते हैं। इसीलिए उनको इतना कष्ट भोगना पड़ता है। कसाई काटते हैं। चमड़े से जूते बनते हैं, ढोल मढ़ा जाता है, दुःख की परकाष्ठा हो जाती है। हिन्दी में अपने को 'हम' कहते हैं और 'मैं' भी कहते हैं। 'मैं' 'मैं' करने के कारण कितने कर्म भोगने पड़ते हैं! अन्त में आँतों से धनुहे की ताँत बनाई जाती है। जुलाहे के हाथ में जब वह पडती है, तब 'तूँ' 'तूँ' कहती है। 'तूँ' कहने के बाद निस्तार होता है। फिर दुःख नहीं उठाना पड़ता।

"हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और मैं अकर्ता हूँ, इसी का नाम ज्ञान है।

"नीचे आने से ही ऊँचे उठा जाता है। चातक पक्षी का घोंसला नीचे रहता है, परन्तु वह बहुत ऊँचे उड़ जाता है। ऊँची ज़मीन में कृषि नहीं होती। नीची ज़मीन चाहिए, पानी उसी में रुकता है। तभी कृषि होती है।

" कुछ कष्ट उठाकर सत्संग करना चाहिए। घर में तो केवल विषय-चर्चा होती है, रोग लगा ही रहता है। जब चिड़िया सीखचे पर बैठती है, तभी राम राम बोलती है, बन जाने पर वही 'टें टें' करने लगती है।

"धन होने से ही कोई बड़ा आदमी नहीं हो जाता। बड़े आदमी के घर का यह लक्षण है कि सब कमरों में दिये जलते रहते हैं। गरीब

तेल नहीं खर्च कर सकते; इसीलिए दिये का वैसा बन्दोबस्त नहीं कर सकते। यह देह-मन्दिर अँधेरे में न रखना चाहिए, ज्ञान-दीप जला देना चाहिए! ज्ञान-दीप जलाकर ब्रह्ममयी का मुँह देखो।

"ज्ञान सभी को हो सकता है। जीवात्मा और परमात्मा। प्रार्थना करो, उस परमात्मा के साथ सभी जीवों का योग हो सकता है। गैस का नल सब घरों में लगाया हुआ है। और गैस गैस-कम्पनी के यहाँ मिलती है। अर्ज़ी भेजो, गैस का बन्दोबस्त हो जायगा, घर में गैसबत्ती जल जायगी। सियालदह में आफिस है। (सब हँसते हैं।)

"किसी किसी को चैतन्य हुआ है। इसके लक्षण भी हैं। ईश्वरी प्रसंग को छोड़ और कुछ सुनने को उसका जी नहीं चाहता, न इसके अतिरिक्त कोई दूसरी बात वह कहता ही है! जैसे सातों समुद्र, गंगा-यमुना और सब नदियों में पानी है, परन्तु चातक को स्वाती की बूँदों की ही रट रहती है। मारे प्यास के जी चाहे जितना व्याकुल हो, परन्तु वह दूसरा पानी कभी नहीं पीता।"

(५)

ईश्वर-लाभ का उपाय—अनुराग। गोपीप्रेम; अनुरागरूपी बाघ।

श्रीरामकृष्ण ने कुछ गाने के लिए कहा। रामलाल और काली-मन्दिर के एक ब्राह्मण कर्मचारी गाने लगे। ठेका लगाने के लिए एक बायाँ मात्र था। कई भजन गाये गए!

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—बाघ जैसे दूसरे पशुओं को खा जाता

है, वैसे ही 'अनुरागरूपी बाघ' काम-क्रोध आदि रिपुओं को खा जाता है। एकबार ईश्वर पर अनुराग होने से फिर काम-क्रोध आदि नहीं रह जाते। गोपियों की ऐसी ही अवस्था हुई थी। श्रीकृष्ण पर उनका ऐसा ही अनुराग हुआ था।

"और है 'अनुराग-अंजन'। श्रीमती (राधा) कहती हैं—'सखियो, मैं चारों ओर कृष्ण ही देखती हूँ।' उन लोगों ने कहा—'सखि, तुमने आँखों में अनुराग-अंजन लगा लिया है, इसीलिए ऐसा देखती हो।'

"इस प्रकार लिखा है कि, मेंढक का सिर जलाकर उसका अंजन आँखों में लगाने से चारों ओर साँप ही साँप दीख पड़ते हैं।

"जो लोग केवल कामिनी-कांचन में पड़े हुए हैं,—कभी ईश्वर का स्मरण नहीं करते, वे बद्ध जीव हैं। उन्हें लेकर क्या कभी अच्छा कार्य हो सकता है? जैसे कौए का काटा आम ठाकुरसेवा में लगाने की क्या, खाने में भी हिचकिचाहट होती है।

"संसारी जीव, बद्ध जीव, ये रेशम के कीड़े जैसे हैं। यदि चाहें तो काटकर उससे निकल सकते हैं, परन्तु खुद जिस घर को बनाया है, उसे छोड़ने में बड़ा मोह होता है। फल यह होता है कि उसी में उनकी मृत्यु हो जाती है।

"जो मुक्त जीव हैं, वे कामिनी-कांचन के वशीभूत नहीं होते। कोई कोई कीड़े (रेशम के) जिस कोये को इतने प्रयत्न से बनाते हैं, उसे काटकर निकल भी आते हैं, परन्तु ऐसे एक ही दो होते हैं।

"माया मोह में डाले रहती है। दो एक मनुष्यों को ज्ञान होता है। वे माया के धोखे में नहीं आते—कामिनी-कांचन के वशीभूत नहीं होते।

"साधनासिद्ध और कृपासिद्ध। कोई कोई बड़े परिश्रम से खेत में खींचकर पानी लाते हैं। यदि ला सकें तो फसल भी अच्छी होती है। किसी किसी को पानी सींचना ही नहीं पड़ा, वर्षा के जल से खेत भर गया। उसे पानी सींचने के लिए कष्ट नहीं उठाना पड़ा। माया के हाथ से रक्षा पाने के लिए कष्टसाध्य साधन-भजन करना पड़ता है। कृपासिद्ध को कष्ट नहीं उठाना पड़ता। परन्तु ऐसे दो ही एक मनुष्य होते हैं।

"और हैं नित्यसिद्ध। इनका ज्ञान—चैतन्य—जन्म-जन्मान्तरों में बना ही रहता है। मानो फव्वारे की कल बन्द है, मिस्त्री ने इसे-उसे खोलते हुए उसको भी खोल दिया और उससे फर से पानी निकलने लगा। जब नित्यसिद्ध का प्रथम अनुराग मनुष्य देखते हैं तब कहने लगते हैं—'इतनी भक्ति, इतना अनुराग, इतना प्रेम इसमें कहाँ था?'"

श्रीरामकृष्ण गोपियों के अनुराग की बात कह रहे हैं। बात समाप्त होते ही रामलाल गाने लगे। गीत का आशय यह है:—

" हे नाथ! तुम्हीं हमारे सर्वस्व हो, तुम्हीं हमारे प्राणों के आधार हो और सब वस्तुओं में सार पदार्थ भी तुम्हीं हो। तुम्हें छोड़ तीनों लोक में अपना और कोई नहीं। सुख, शान्ति, सहाय, सम्बल, सम्पद्, ऐश्वर्य, ज्ञान, बुद्धि, बल, वासगृह, आरामस्थल, आत्मीय, बन्धु, परिवार सब कुछ तुम्हीं हो। तुम्हीं हमारे इहकाल हो और तुम्हीं परकाल हो; तुम्हीं परित्राण हो और तुम्हीं स्वर्गधाम हो, शास्त्रविधि और कल्पतरु

गुरु भी तुम्हीं हो; तुम्हीं हमारे अनन्त सुख के आधार हो। हमारे उपाय, हमारे उद्देश्य तुम्हीं हो। तुम्हीं स्रष्टा, पाता (पालन कर्ता) और उपास्य हो! दण्डदाता पिता, स्नेहमयी माता और भवार्णव के कर्णधार भी तुम्हीं हो।"

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—अहा! कैसा गीत है!—'तुम्हीं हमारे सर्वस्व हो।' अक्रूर के आने पर गोपियों ने श्रीराधा से कहा, 'राधे! यह तेरे सर्वस्व-धन का हरण करने के लिए आया है।' प्यार यह है। ईश्वर के लिए व्याकुलता इसे कहते हैं।

संगीत सुनते ही श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि-सागर में मग्न हो गए। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को चुपचाप टकटकी लगाये देख रहे हैं। कमरे में सन्नाटा छाया हुआ है। श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़े हुए समाधिस्थ हैं—वैसे ही जैसे फोटोग्राफ में उनका चित्र है। नेत्रों से आनन्द-धारा बह रही है।

बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। परन्तु अभी उन्हीं से वार्तालाप कर रहे हैं, जिन्हें समाधि-अवस्था में देख रहे थे। कोई-कोई शब्द सुन पड़ता है। श्रीरामकृष्ण आप ही आप कह रहे हैं "तुम्हीं मैं हो, मैं ही तुम हूँ।...खूब करते हो लेकिन!"

"यह मुझे पीलिया रोग तो नहीं हो गया?—चारों ओर तुम्हीं को देख रहा हूँ।

"हे कृष्ण, दीनबन्धु! प्राणवल्लभ! गोविन्द!"

'प्राणवल्लभ! गोविन्द!' कहते हुए श्रीरामकृष्ण फिर समाधिमग्न हो गए। भक्तगण महाभावमय श्रीरामकृष्ण को बार बार देख रहे हैं, किन्तु फिर भी नेत्रों की तृप्ति नहीं होती।

(६)

श्रीरामकृष्ण का ईश्वरावेश। उनके मुख से ईश्वरवाणी।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हैं। अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। चारों ओर भक्तगण हैं। श्रीयुत अधर सेन कई मित्रों के साथ आए हैं। अधर बाबू डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। इन्होंने श्रीरामकृष्ण को पहले ही बार देखा है। आपकी उम्र कोई २९-३० साल की होगी। इनके मित्र, सारदाचरण को मृत पुत्र का शोक है। ये स्कूलों के डिप्टी इन्स्पेक्टर रह चुके हैं। अब पेन्शन ले ली है। साधन-भजन पहले ही से कर रहे हैं। बड़े लड़के का देहान्त हो जाने से किसी तरह मन को सान्त्वना नहीं मिलती। श्रीरामकृष्ण के पास इसीलिए आए हैं। बहुत दिनों से आप श्रीरामकृष्ण को देखना भी चाहते थे।

श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। आँखें खोलकर आपने देखा, कमरे भर के लोग आपकी ओर ताक रहे हैं। उस समय श्रीरामकृष्ण मन ही मन कुछ कह रहे थे।

"कभी कभी विषयी मनुष्यों में ज्ञान का उन्मेष होता है, दीप-शिखा की तरह दीख पड़ता है; नहीं नहीं, सूर्य की एक किरण की तरह। छेद के भीतर से मानो किरण निकल रही है। विषयी मनुष्य और ईश्वर का नाम! उसमें अनुराग नहीं होता। जैसे बालक कहता है, तुझे भगवान् की शपथ है। घर की स्त्रियों का झगड़ा सुनकर 'भगवान् की शपथ' याद कर ली है।

"विषयी मनुष्यों में निष्ठा नहीं होती। हुआ हुआ, न हुआ तो न सही। पानी की ज़रूरत है, कुआँ खोद रहा है। खोदते खोदते जैसे ही

कंकड़ निकला कि बस छोड़ दी वह जगह, दूसरी जगह खोदने लगा। लो, वहाँ भी बालू ही बालू निकलती है! बस वहाँ से भी अलग हुआ। जहाँ खोदना आरम्भ किया है, वहीं जब खोदता रहे तभी तो पानी मिलेगा?

"जीव जैसे कर्म करता है वैसे ही फल भी पाता है।

"इसीलिए कहा है—

(गीत) "माँ श्यामा! दोष किसी का नहीं, मैं जिस पानी में डूब रहा हूँ वह मेरे ही हाथों के खोदे कुएँ का है।" इत्यादि (पृष्ठ २६१ देखिए।)

'मैं' और 'मेरा' अज्ञान है। विचार करो तो देखोगे जिसे 'हम' कह रहे हो, वह आत्मा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। विचार करो—तुम शरीर हो या मांस या और कुछ? तब देखोगे, तुम कुछ नहीं हो। तुम्हारी कोई उपाधि नहीं। तब कहोगे मैंने कुछ भी नहीं किया, न दोष, न गुण। मुझे न पाप है, न पुण्य।

"यह सोना है और यह पीतल; ऐसे विचार को अज्ञान कहते हैं और सब कुछ सोना है, इसे ज्ञान।

"ईश्वर-दर्शन होने पर विचार बन्द हो जाता है; और ऐसा भी है कि ईश्वर-लाभ करके भी मनुष्य विचार करता है। कोई कोई भक्ति लेकर रहते हैं, उनका गुणगान करते हैं।

"बच्चा तभी तक रोता है जब तक उसे माता का दूध पीने को नहीं मिलता। मिला कि रोना बन्द हो गया। तब आनन्दपूर्वक पीता

रहता है। परन्तु एक बात है। कभी कभी वह दूध पीते पीते खेलता भी है और आनन्द से किलकारियाँ भरता रहता है।

"वही सब कुछ हुए हैं। परन्तु मनुष्य में उनका प्रकाश अधिक है। जहाँ शुद्धसत्त्व बालकों का सा स्वभाव है कि कभी हँसता है, कभी रोता है, कभी नाचता है, कभी गाता है, वहाँ वे प्रत्यक्ष भाव से रहते हैं।"

श्रीरामकृष्ण अधर का परिचय ले रहे हैं। अधर ने अपने मित्र के पुत्रशोक का हाल कहा। श्रीरामकृष्ण मन ही मन गाने लगे। भावः—

"जीव! समर के लिए तैयार हो जाओ। रण के वेश से काल तुम्हारे घर में घुस रहा है। भक्तिरथ पर चढ़कर, ज्ञानतूण लेकर रसना-धनुष में प्रेम-गुण लगा, ब्रह्ममयी के नामरूपी ब्रह्मास्त्र का सन्धान करो। लड़ाई के लिए एक युक्ति और है। तुम्हें रथ-रथी की आवश्यकता न होगी यदि भागीरथी के तट पर तुम्हारी यह लड़ाई हो।"

"क्या करोगे? इसी काल के लिए तैयार हो जाओ। काल घर में घुस रहा है। उनका नामरूपी अस्त्र लेकर लड़ना होगा। कर्ता वही है। मैं कहता हूँ, जैसा कराते हो वैसा ही करता हूँ। जैसा कहाते हो, वैसा ही कहता हूँ। मैं यंत्र हूँ, तुम यंत्री हो; मैं घर हूँ, तुम घर के मालिक; मैं गाड़ी हूँ, तुम इञ्जीनियर। आममुख्तार उन्हीं को बनाओ। काम का भार अच्छे आदमी को देने से कभी अमंगल नहीं होता। उनकी जो इच्छा हो, करें।

"शोक भला क्यों नहीं होगा? आत्मज है न। रावण मरा तो लक्ष्मण दौड़े हुए गये, देखा, उसके हाड़ों में ऐसी जगह नहीं थी जहाँ छेद न रहे हों। लौटकर राम से बोले—भाई, तुम्हारे बाणों की बड़ी

महिमा है, रावण की देह में ऐसी जगह नहीं है जहाँ छेद न हों ! राम बोले— हाड़ के भीतर वाले छेद हमारे बाणों के नहीं हैं, मारे शोक के उसके हाड़ जर्जर हो गए हैं। वे छिद्र शोक के ही चिह्न हैं।

"परन्तु है यह सब अनित्य। गृह, परिवार, सन्तान, सब दो दिन के लिए हैं। ताड़ का पेड़ ही सत्य है। दो एक फल गिर जाते हैं पर उसे कोई दुःख नहीं।

"ईश्वर तीन काम करते हैं,—सृष्टि, स्थिति और प्रलय। मृत्यु है ही। प्रलय के समय सब ध्वंस हो जायगा, कुछ भी न रह जायगा। माँ केवल सृष्टि के बीज बीनकर रख देंगी। फिर नई सृष्टि होने के समय उन्हें निकालेंगी। घर की स्त्रियों के जैसे हण्डी रहती है जिसमें वे खीरे-कोहड़े के बीज, समुद्रफेन, नील, बड़ी आदि पोटलियों में बाँधकर रख देती हैं। (सब हँसते हैं।)

(७)

अधर को उपदेश।

श्रीरामकृष्ण अधर के साथ अपने घर के उत्तर तरफ के बरामदे में खड़े होकर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (अधर से)—तुम डिप्टी हो। यह पद भी ईश्वर के ही अनुग्रह से मिला है। उन्हें न भूलना, समझना, सबको एक ही रास्ते से जाना है, यहाँ सिर्फ दो दिन के लिए आना हुआ है।

"संसार कर्मभूमि है। यहाँ कर्म करने के लिए आना हुआ है,

जैसे देहात में घर है और कलकत्ते में काम करने के लिए आया जाता है।

"कुछ काम करना आवश्यक है। यह साधन है। जल्दी जल्दी सब काम समाप्त कर लेना चाहिए। जब सुनार सोना गलाते हैं, तब धौंकनी, पंखा, फुँकनी आदि से हवा करते हैं, जिसमें आग तेज़ हो और सोना गल जाय। सोना गल जाता है, तब कहते हैं, चिलम भरो। अब तक पसीने-पसीने हो रहे थे; पर काम करके ही तम्बाकू पियेंगे।

"पूरी ज़िद चाहिए; साधन तभी होता है। दृढ़ प्रतिज्ञा होनी चाहिए।

"उनके नाम-बीज में बड़ी शक्ति है। वह अविद्या का नाश करता है। बीज कितना कोमल है, और अङ्कुर भी कितना नरम होता है, परन्तु मिट्टी कैसी ही कड़ी क्यों न हो, वह उसे पार कर ही जाता है —मिट्टी फट जाती है।

"कामिनी-कांचन के भीतर रहने से, वे मन को खींच लेते हैं। सावधानी से रहना चाहिए। त्यागियों के लिए विशेष भय की बात नहीं। यथार्थ त्यागी कामिनी-कांचन से अलग रहता है। साधन के बल से सदा ईश्वर पर मन रखा जा सकता है।

"जो यथार्थ त्यागी हैं वे सर्वदा ईश्वर पर मन रख सकते हैं, वे मधुमक्खी की तरह केवल फूल पर बैठते हैं; मधु ही पीते हैं। जो लोग संसार में कामिनी-कांचन के भीतर हैं उनका मन ईश्वर में लगता तो है, पर कभी कभी कामिनी-कांचन पर भी चला जाता है; जैसे साधारण मक्खियाँ बर्फियों पर भी बैठती हैं और सड़े घावों पर भी बैठती हैं। हाँ, विष्ठा पर

भी बैठती हूँ।

"मन सदा ईश्वर पर रखना। पहले कुछ मेहनत करनी पड़ेगी; फिर पेन्शन पा जाओगे।"

(८)

अहंकार। स्वाधीन इच्छा अथवा ईश्वर-इच्छा। साधुसंग।

सुरेन्द्र के घर के आँगन में श्रीरामकृष्ण सभा को आलोकित कर बैठे हुए हैं। शाम के छः बजे होंगे।

आँगन से पूव की ओर, दालान के भीतर, देवी-प्रतिमा प्रतिष्ठित है। माता के पादपद्मों में जवा और गले में फूलों की माला पड़ी हुई है। माता भी ठाकुर-दालान को आलोकित करके बैठी हुई हैं।

आज अन्नपूर्णा देवी की पूजा है। चैत्र शुक्ला अष्टमी, १५ अप्रैल १८८३, दिन रविवार। सुरेन्द्र माता की पूजा कर रहे हैं, इसीलिए निमंत्रण देकर श्रीरामकृष्ण को ले गए हैं। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आए हैं, आते ही उन्होंने ठाकुर-दालान पर चढ़कर देवी के दर्शन किए। फिर खड़े होकर उँगलियों पर मूलमंत्र जपने लगे।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आँगन में आए। आँगन में दरी पर साफ धुली हुई चद्दर बिछी है।

बिस्तरे पर कई तकिए रक्खे हुए हैं। एक ओर खोल-करताल लेकर कई वैष्णव आकर एकत्रित हुए; संकीर्तन होगा। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को घेरकर बैठ गए।

लोग श्रीरामकृष्ण को एक तकिए के पास ले जाकर बैठाने लगे; परन्तु वे तकिया हटाकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—तकिये के सहारे बैठना! जानते हो न अभिमान छोड़ना बड़ा कठिन है। अभी विचार कर रहे हो कि अभिमान कुछ नहीं है, परन्तु फिर न जाने कहाँ से आ जाता है।

"बकरा काट डाला गया, फिर भी उसके अंग हिल रहे हैं।

"स्वप्न में डर गये हो; आँखें खुल गईं, बिलकुल सचेत हो गए, फिर भी छाती धड़क रही है! अभिमान ठीक ऐसा ही है। हटा देने पर भी न जाने कहाँ से आ जाता है! बस आदमी मुँह फुलाकर कहने लगता है, मेरा आदर नहीं किया।"

केदार—'तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना।'

श्रीरामकृष्ण—मैं भक्तों की रेणु की रेणु हूँ।

(वैद्यनाथ आते हैं।)

वैद्यनाथ विद्वान् हैं। कलकत्ते के हाईकोर्ट के वकील हैं, श्रीरामकृष्ण को हाथ जोड़कर प्रणाम करके एक ओर बैठ गए।

सुरेन्द्र (श्रीरामकृष्ण से)—ये मेरे आत्मीय हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, इनका स्वभाव तो बड़ा अच्छा है।

सुरेन्द्र—ये आपसे कुछ पूछना चाहते हैं, इसीलिए आए हैं।

श्रीरामकृष्ण (वैद्यनाथ से)—जो कुछ देख रहे हो, सभी उनकी शक्ति है। उनकी शक्ति के बिना कोई कुछ भी नहीं कर सकता।

परन्तु एक बात है। उनकी शक्ति सब जगह बराबर नहीं है। विद्यासागर ने कहा था, परमात्मा ने क्या किसी को अधिक शक्ति दी है? मैंने कहा, शक्ति अगर अधिक न देते तो तुम्हें हम लोग देखने क्यों आते? तुम्हारे दो सींग थोड़े ही हैं? अन्त में यही ठहरा कि विभुरूप से सर्वभूतों में ईश्वर हैं, केवल शक्ति का भेद है।

वैद्यनाथ—महाराज! मुझे एक सन्देह है। यह जो Free Will अर्थात् स्वाधीन इच्छा की बात होती है,—कहते हैं कि हम इच्छा करें तो अच्छा काम भी कर सकते हैं और बुरा भी; क्या यह सच है? क्या हम सचमुच स्वाधीन हैं?

श्रीरामकृष्ण—सभी ईश्वर के अधीन हैं। उन्हीं की लीला है। उन्होंने अनेक वस्तुओं की सृष्टि की है,—छोटी-बड़ी, भली-बुरी, मजबूत-कमज़ोर। अच्छे आदमी, बुरे आदमी। यह सब उन्हीं की माया है—उन्हीं का खेल है। देखो न, बगीचे के सब पेड़ बराबर नहीं होते।

"जब तक ईश्वर नहीं मिलते, तब तक जान पड़ता है, हम स्वाधीन हैं। यह भ्रम वही रख देते हैं, नहीं तो पाप की वृद्धि होती, पाप से कोई न डरता, न पाप का फल मिलता।

"जिन्होंने ईश्वर को पा लिया है, उनका भाव जानते हो क्या है? मैं यंत्र हूँ, तुम यंत्री हो; मैं गृह हूँ, तुम गृहस्थ; मैं रथ हूँ, तुम रथी; जैसा चलाते हो, वैसा ही चलता हूँ; जैसा कहाते हो, वैसा ही कहता हूँ।

"तर्क करना अच्छा नहीं। (वैद्यनाथ से) आप क्या कहते हैं?

वैद्यनाथ--जी हाँ। तर्क करने का स्वभाव ज्ञान होने पर नष्ट हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण—Thank you (थैंक्यू–धन्यवाद) (लोग हँसते हैं।) तुम पाओगे। ईश्वर की बात कोई कहता है, तो लोगों को विश्वास नहीं होता। यदि कोई महापुरुष कहे, मैंने ईश्वर को देखा है, तो कोई उस महापुरुष की बात ग्रहण नहीं करता। लोग सोचते हैं, इसने अगर ईश्वर को देखा है तो हमें भी दिखावें तो जानें। परन्तु नाड़ी देखना कोई एक दिन में थोड़े ही सीख लेता है ? वैद्य के पीछे महीनों घूमना पड़ता है। तभी वह कह सकता है, कौन कफ की नाड़ी है, कौन पित्त की है और कौन वात की है। नाड़ी देखना जिनका पेशा है, उनका संग करना चाहिए। (सब हँसते हैं।)

" क्या सभी पहचान सकते हैं कि यह अमुक नम्बर का सूत है ? सूत का व्यवसाय करो, जो लोग व्यवसाय करते हैं, उनकी दूकान में कुछ दिन रहो, तो कौन चालीस नम्बर का सूत है—कौन इकतालीस नम्बर का, तुरन्त कह सकोगे। "

(९)

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द। समाधि में।

अब संकीर्तन होगा। गोष्ठ खोल बजा रहा है। अभी गाना शुरू नहीं हुआ। खोल का मधुर वाद्य गौरांग-मण्डल और उनके नाम-संकीर्तन की याद दिलाकर मन को उद्दीप्त कर रहा है। श्रीरामकृष्ण भाव में मग्न हो रहे हैं। रह रहकर खोल पर दृष्टि डालकर कह रहे हैं—

" अहा ! मुझे रोमांच हो रहा है ! "

गवैयों ने पूछा 'कैसा पद गावें ? ' श्रीरामकृष्ण ने विनीत भाव से कहा—" ज़रा गौरांग के कीर्तन गाओ । "

कीर्तन आरम्भ हो गया । पहले गौरचन्द्रिका होगी, फिर दूसरे गाने ।

कीर्तन में गौरांग के रूप का वर्णन हो रहा है । कीर्तनगवैये अन्तरों में चुन चुनकर अच्छे पद जोड़ते हुए गा रहे हैं—"सखी, मैंने पूर्णचन्द्र देखा "—" न हास है—न मृगांक "—" हृदय को आलोकित करता है । "

गवैयों ने फिर गाया—" कोटि चन्द्र के अमृत से उसका मुख धुला हुआ है । "

श्रीरामकृष्ण सुनते ही सुनते समाधिस्थ हो गये ।

गाना होता ही रहा । कुछ देर पश्चात् श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी । वे भाव में मग्न होकर एकाएक उठकर खड़े हो गये तथा प्रेमोन्मत्त गोपिकाओं की तरह श्रीकृष्ण के रूप का वर्णन करते हुए कीर्तन-गवैयों के साथ साथ गाने लगे,—"सखि ! रूप का दोष है या मन का ? "—" दूसरों को देखती हुई तीनों लोक में श्याम ही श्याम देखती हूँ । "

श्रीरामकृष्ण नाचते हुए गा रहे हैं । भक्तगण निर्वाक् होकर देख रहे हैं । गवैये फिर गा रहे हैं,—गोपिका की उक्ति । "बंसी री ! तू अब न बज । क्या तुझे नींद भी नहीं आती ? " इसमें पद जोड़कर गा

रहे हैं—"और नींद आए भी कैसे ! "—" सेज तो करपल्लव हैं न!"—" श्रीमुख के अमृत का पान करती है ! "—"तिस पर उँगलियाँ सेवा करती हैं !"

श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। कीर्तन होता रहा। श्रीमती राधा की उक्ति गाई जाने लगी। वे कहती हैं—" दृष्टि, श्रवण और घ्राण की शक्ति तो चली गई—इन्द्रियों ने उत्तर दे दिया, तो मैं ही अकेली क्यों रह गई ? "

अन्त में श्रीराधा-कृष्ण दोनों के एक दूसरे से मिलने का कीर्तन होने लगाः—

" राधिकाजी श्रीकृष्ण को पहनाने के लिए माला गूँथ ही रही थीं कि अचानक श्रीकृष्णजी उनके सामने आकर खड़े हो गए। "

युगल-मिलन के संगीत का आशय यह हैः—

" कुञ्जवन में श्याम-विनोदिनी राधिका कृष्ण के भावावेश में विभोर हो रही हैं। दोनों में से न तो किसी के रूप की उपमा हो सकती है और न किसी के प्रेम की ही सीमा है। आधे में सुनहली किरणों की छटा है और आधे में नीलकान्त मणि की ज्योति। गले के आधे हिस्से में वन के फूलों की माला है और आधे में गज-मुक्ता। कानों के अर्ध-भाग में मकर कुण्डल है और अर्धभाग में रत्नों की छवि। अर्धललाट में चन्द्रोदय हो रहा है और आधे में सूर्योदय। मस्तक के अर्धभाग में मयूरशिखण्ड शोभा पा रहा है और आधे में वेणी। कर-कमल झिलमिला रहे हैं, फणी मानो मणि उगल रहा है।"

कीर्तन बन्द हुआ। श्रीरामकृष्ण "भागवत, भक्त, भगवान्" इस मंत्र का बार बार उच्चारण करते हुए भूमिष्ठ हो प्रणाम कर रहे हैं। चारों ओर के भक्तों को उद्देश्य करके प्रणाम कर रहे हैं और संकीर्तन-भूमि की धूलि लेकर अपने मस्तक पर रख रहे हैं।

(१०)

श्रीरामकृष्ण और साकार-निराकार।

रात के साढ़े नौ बजे का समय होगा। अन्नपूर्णा देवी ठाकुर-दालान को आलोकित कर रही हैं। सामने श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ खड़े हुए हैं। सुरेन्द्र, राखाल, केदार, मास्टर, राम, मनोमोहन तथा और भी अनेक भक्त हैं। उन लोगों ने श्रीरामकृष्ण के साथ ही प्रसाद पाया है। सुरेन्द्र ने सब को तृप्तिपूर्वक भोजन कराया है। अब श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर लौटनेवाले हैं। भक्तजन भी अपने अपने घर जायेंगे। सब लोग ठाकुर-दालान में आकर इकट्ठे हुए हैं।

सुरेन्द्र (श्रीरामकृष्ण से)—परन्तु आज मातृ-वन्दना का एक भी गाना नहीं हुआ।

श्रीरामकृष्ण (देवी प्रतिमा की ओर उँगली उठाकर)—अहा ! दालान की कैसी शोभा हुई है ! माँ मानो अपनी दिव्य छटा छिटकाकर बैठी हुई हैं। इस रूप के दर्शन करने पर कितना आनन्द होता है ! भोग की इच्छा, शोक, ये सब भाग जाते हैं। परन्तु क्या निराकार के दर्शन नहीं होते ? नहीं, होते हैं। हाँ, ज़रा भी विषय-बुद्धि के रहते नहीं होते। ऋषियों ने सर्वस्व तक का त्याग करके 'अखण्ड-सच्चिदानन्द' में मन लगाया था।

"आजकल ब्रह्मज्ञानी उन्हें अचल-घन, कहकर गाते हैं,—मुझे अलोना लगता है। जो लोग गाते हैं, वे मानो कोई मधुर रस नहीं पाते। शीरे पर ही भूले रहे, तो मिश्री की खोज करने की इच्छा नहीं हो सकती।

"तुम लोग देखते हो— बाहर कैसे सुन्दर दर्शन हो रहे हैं, और आनन्द भी कितना मिलता है। जो लोग निराकार-निराकार करके कुछ नहीं पाते, उनके न है बाहर और न है भीतर।"

श्रीरामकृष्ण माता का नाम लेकर इस भाव का गीत गा रहे हैं,— "माँ, आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द न करना। मेरा मन तुम्हारे उन दोनों चरणों के सिवा और कुछ नहीं जानता। मैं नहीं जानता, धर्मराज मुझे किस दोष से दोषी बतला रहे हैं। मेरे मन में यह वासना थी कि तुम्हारा नाम लेता हुआ मैं भवसागर से निकल जाऊँगा। मुझे स्वप्न में भी नहीं मालूम था कि यम मुझे असीम सागर में डुबा देगा। दिनरात मैं दुर्गानाम जप रहा हूँ, किन्तु फिर भी मेरी दुःखराशि दूर न हुई। परन्तु हे हर-सुन्दरि, यदि इस बार भी मैं मरा, तो यह निश्चय है कि संसार में फिर तुम्हारा नाम कोई न लेगा।"

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे। गीत इस आशय का है:—

"मेरे मन! दुर्गानाम जपो। जो दुर्गा-नाम जपता हुआ रास्ते में चला जाता है, शूलपाणि शूल लेकर उसकी रक्षा करते हैं। तुम दिवा हो, तुम सन्ध्या हो, तुम्हीं रात्रि हो; कभी तो तुम पुरुष का रूप धारण करती हो, कभी कामिनी बन जाती हो। तुम तो कहती हो कि मुझे छोड़ दो, परन्तु मैं तुम्हें कदापि न छोड़ूँगा,—मैं तुम्हारे चरणों में नूपुर होकर बजता रहूँगा,—जय दुर्गा-श्रीदुर्गा कहता हुआ! माँ, जब

शंकरी होकर तुम आकाश में उड़ती रहोगी तब मैं मीन बनकर पानी में रहूँगा; तुम अपने नखों पर मुझे उठा लेना। हे ब्रह्ममयी, नखों के आघात से यदि मेरे प्राण निकल जायँ, तो कृपा करके अपने अरुण चरणों का स्पर्श मुझे करा देना।"

श्रीरामकृष्ण ने देवी को फिर प्रणाम किया। अब सीढ़ियों से उतरते समय पुकारकर कह रहे हैं—

"ओ रा—जू हैं ?" (ओ राखाल ! जूते सब हैं ?)

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़े। सुरेन्द्र ने प्रणाम किया। दूसरे भक्तों ने भी प्रणाम किया। चाँदनी अभी भी रास्ते पर पड़ रही है। श्रीरामकृष्ण की गाड़ी दक्षिणेश्वर की ओर चल दी।

परिच्छेद १७

ब्राह्मभक्तों के संग में

(१)

संसार में निष्काम कर्म ।

श्रीरामकृष्ण ने श्री बेणीपाल के सींती के बगीचे में शुभागमन किया है। आज सींती के ब्राह्मसमाज का छमाही महोत्सव है। रविवार, चैत्र पूर्णिमा, २२ अप्रैल १८८३। तीसरे प्रहर का समय। अनेक ब्राह्मभक्त उपस्थित हैं। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को घेरकर दक्षिण के बरामदे में आ बैठे। सायंकाल के बाद आदि समाज के आचार्य श्री बेचाराम उपासना करेंगे। ब्राह्म भक्तगण बीच बीच में श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे हैं।

ब्राह्मभक्त—महाराज, मुक्ति का उपाय क्या है ?

श्रीरामकृष्ण—उपाय अनुराग, अर्थात् उनसे प्रेम करना, और प्रार्थना।

ब्राह्मभक्त—अनुराग या प्रार्थना ?

श्रीरामकृष्ण—अनुराग पहले, फिर प्रार्थना।

श्रीरामकृष्ण सुर के साथ गाना गाने लगे जिसका भावार्थ यह

है,—'हे मन, पुकारने की तरह पुकारो तो देखूँ श्यामा कैसे रह सकती हैं।"

"और सदा ही उनका नामगुण-गान, कीर्तन और प्रार्थना करनी चाहिए। पुराने लोटे को रोज माँजना होगा, एक बार माँजने से क्या होगा? और विवेक-वैराग्य, संसार अनित्य है यह बुद्धि।"

ब्राह्मभक्त—संसार छोड़ना क्या अच्छा है?

श्रीरामकृष्ण—सभी के लिए संसार त्याग ठीक नहीं। जिसके भोग का अन्त नहीं हुआ, उनसे संसार त्याग नहीं होता। रत्तीभर शराब से क्या मस्ती आती है।

ब्राह्मभक्त—तो फिर वे लोग क्या संसार करेंगे?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे लोग निष्काम कर्म करने की चेष्टा करें। हाथ में तेल मलकर कटहल छीलें। धनियों के घर में दासियाँ सब काम करती हैं, परन्तु मन रहता है अपने निज के घर में। इसी का नाम निष्काम कर्म है। * इसी का नाम है मन से त्याग। तुम लोग मन से त्याग करो। संन्यासी बाहर का त्याग और मन का त्याग दोनों ही करे।

ब्राह्मभक्त—भोग के अन्त का क्या अर्थ है?

श्रीरामकृष्ण—कामिनी-कांचन भोग है। जिस घर में इमली का

---

* कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। —गीता २।२७

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥ —गीता, ९।२७

आचार और पानी की सुराही है, उस घर में यदि सन्निपात का रोगी रहे, तो मुश्किल ही है। रुपया, पैसा, मान, इज़्ज़त, शारीरिक सुख ये सब भोग एक बार न हो जाने पर,—भोग का अन्त न होने पर, ईश्वर के लिए सभी को व्याकुलता नहीं होती।

ब्राह्मभक्त—स्त्री-जाति खराब है या हम खराब हैं ?

श्रीरामकृष्ण—विद्यारूपिणी स्त्री भी है, और फिर अविद्यारूपिणी स्त्री भी है। विद्यारूपिणी स्त्री भगवान् की ओर ले जाती है और अविद्यारूपिणी स्त्री ईश्वर को भुला देती है, संसार में डुबो देती है।

"उनकी महामाया से यह संसार हुआ है। इस माया के भीतर विद्यामाया और अविद्यामाया दोनों ही हैं। विद्यामाया का आश्रय लेने पर साधुसंग की इच्छा, ज्ञान, भक्ति, प्रेम, वैराग्य ये सब होते हैं। पंचभूत तथा इन्द्रियों के भोग के विषय अर्थात् रूप–रस–गन्ध–स्पर्श-शब्द, यह सब अविद्यामाया है। यह ईश्वर को भुला देती है।

ब्राह्मभक्त—अविद्या यदि अज्ञान पैदा करती है तो उन्होंने अविद्या को पैदा क्यों किया ?

श्रीरामकृष्ण—उनकी लीला। अन्धकार न रहने पर प्रकाश की महिमा समझी नहीं जा सकती। दुःख न रहने पर सुख समझा नहीं जा सकता। बुराई का ज्ञान रहने पर ही भलाई का ज्ञान होता है।

"फिर आम पर छिलका है इसीलिए आम बढ़ता है और पकता है। आम जब तैयार हो जाता है उस समय छिलका फेंक देना पड़ता

है। मायारूपी छिलका रहने पर ही धीरे धीरे ब्रह्मज्ञान होता है। विद्या-माया, अविद्यामाया, आम के छिलके की तरह हैं। दोनों ही आवश्यक हैं!

ब्राह्मभक्त—अच्छा, साकार पूजा, मिट्टी से बनाई हुई देवमूर्ति की पूजा—ये सब क्या ठीक हैं?

श्रीरामकृष्ण—तुम लोग साकार नहीं मानते हो, अच्छी बात है। तुम्हारे लिए मूर्ति नहीं, भाव मुख्य है। तुम लोग आकर्षण मात्र को लो, जैसे श्रीकृष्ण का राधा पर आकर्षण, प्रेम। साकारवादी जिस प्रकार माँ काली, माँ दुर्गा की पूजा करते हैं, 'माँ, माँ' कहकर पुकारते हैं, कितना प्यार करते हैं, तुम लोग इसी भाव को लो, मूर्ति को न भी मानो तो कोई बात नहीं है।

ब्राह्मभक्त—वैराग्य कैसे होता है? और सभी को क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण—भोग की शान्ति हुए बिना वैराग्य नहीं होता। छोटे बच्चे को खाना और खिलौना देकर अच्छी तरह से भुलाया जा सकता है, परन्तु जब खाना हो गया और खिलौने के साथ खेल भी समाप्त हो गया, तब वह कहता है, 'माँ के पास जाऊँगा।' माँ के पास न ले जाने पर खिलौना पटक देता है और चिल्लाकर रोता है।

ब्राह्मभक्तगण गुरुवाद के विरोधी हैं। इसलिए ब्राह्मभक्त इस सम्बन्ध में चर्चा कर रहे हैं।

ब्राह्मभक्त—महाराज, गुरु न होने पर क्या ज्ञान न होगा?

श्रीरामकृष्ण—सच्चिदानन्द ही गुरु हैं। यदि मनुष्य गुरु के रूप में चैतन्य देता है, तो जानो कि सच्चिदानन्द ने ही उस रूप को धारण

किया है। गुरु मानो सखा हैं। हाथ पकड़कर ले जाते हैं। भगवान् का दर्शन होने पर फिर गुरु-शिष्य का ज्ञान नहीं रह जाता। 'वह बड़ा कठिन स्थान है, वहाँ पर गुरु-शिष्यों में साक्षात्कार नहीं होता।' इसीलिए जनक ने शुकदेव से कहा था—'यदि ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो पहले दक्षिणा दो; क्योंकि ब्रह्मज्ञान हो जाने पर गुरु-शिष्यों में भेद-बुद्धि नहीं रहेगी। जब तक ईश्वर का दर्शन नहीं होता, तभी तक गुरु-शिष्य का सम्बन्ध रहता है।'

थोड़ी देर में सन्ध्या हुई। ब्राह्मभक्तों में से कोई कोई श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं, "शायद अब आपको सन्ध्या करनी होगी।"

श्रीरामकृष्ण—नहीं, ऐसा कुछ नहीं। यह सब पहले पहल एक एक बार कर लेना पड़ता है। उसके बाद फिर अर्घ्यपात्र या नियम आदि की आवश्यकता नहीं रहती।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा आचार्य श्री बेचाराम; वेदान्त और ब्रह्मतत्व के प्रसंग में।

सन्ध्या के बाद आदि समाज के आचार्य श्री० बेचाराम ने वेदी पर बैठ कर उपासना की। बीच-बीच में ब्रह्म-संगीत और उपनिषद् का पाठ होने लगा।

उपासना के बाद श्रीरामकृष्ण के साथ बैठकर आचार्यजी अनेक प्रकार के वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है। आपका क्या मत है?

आचार्य—जी, निराकार मानो बिजली का प्रवाह जैसा है, आँखों से देखा नहीं जाता, परन्तु अनुभव किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, दोनों ही सत्य हैं। साकार-निराकार, दोनों सत्य हैं। केवल निराकार कहना कैसा है जानते हो?

"जैसे रोशनचौकी की शहनाई में सात छेद रहते हुए भी एक व्यक्ति केवल 'पों' करता रहता है, परन्तु दूसरे को देखो, कितनी ही रागरागिनियाँ बजाता है। उसी प्रकार देखो, साकारवादी ईश्वर का कितने भावों से आस्वाद लेता है। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर—अनेक भावों से।

"असली बात क्या है जानते हो? किसी भी प्रकार से अमृत के कुण्ड में पड़ना है। चाहे स्तव करके पड़ो अथवा कोई धक्का दे दे और तुम जाकर कुण्ड में गिर पड़ो। परिणाम एक ही होगा। दोनों ही अमर होंगे। *

"ब्राह्मों के लिए जल और बरफ की उपमा ठीक है। सच्चिदानन्द मानो अनन्त जलराशि है। महासागर का जल ठण्डे देश में स्थान-स्थान पर जिस प्रकार बरफ का आकार धारण कर लेता है, उसी प्रकार भक्ति-

---

अमृतकुण्ड:—आनन्दरूपममृत यद्विभाति, ब्रह्मैवेदममृतं, पुरस्ताद् ब्रह्म, पश्चाद् ब्रह्म, दक्षिणतश्चोत्तरेण अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्म।

—मुण्डकोपनिषद् २।२।११

रूपी ठण्ड से वह सच्चिदानन्द भक्त के लिए साकार रूप धारण करते हैं। ऋषियों ने उस अतीन्द्रिय, चिन्मय-रूप का दर्शन किया था और उनके साथ वार्तालाप किया था। भक्त के प्रेम के शरीर–भागवती तनु † द्वारा इस चिन्मय-रूप का दर्शन होता है।

फिर है ब्रह्म 'अवाङ्मनसोगोचरम्।' ज्ञानरूपी सूर्य के ताप से साकार बरफ गल जाता है, ब्रह्मज्ञान के बाद, निर्विकल्प समाधि के बाद, फिर वही अनन्त, वाक्य-मन के अतीत, अरूप, निराकार ब्रह्म।

"उसका स्वरूप मुख से नहीं कहा जाता, चुप हो जाना पड़ता है। मुख से कहकर अनन्त को कौन समझाएगा? पक्षी जितना हो ऊपर उटता है, उसके ऊपर और भी है। आप क्या कहते हैं?"

आचार्य—जी हाँ, वेदान्त में इसी प्रकार की बातें हैं।

श्रीरामकृष्ण—नमक का पुतला समुद्र नापने गया था। लौटकर फिर उसने खबर न दी। एक मत में है, शुकदेव आदि ने, दर्शन-स्पर्शन किया था, डुबकी नहीं लगाई थी।

"मैंने विद्यासागर से कहा था, 'सब चीजें उच्छिष्ट हो गई हैं, परन्तु ब्रह्म उच्छिष्ट नहीं हुआ। * अर्थात् ब्रह्म क्या है, कोई मुँह से कह नहीं

---

† नारद ने कहा, 'मुझे शुद्धा, सर्वमयी, भागवती तनु प्राप्त हो गई।'

प्रयुज्यमाने मयि तां शुद्धां भागवतीं तनुम्
आरब्धकर्मनिर्वाणो न्यपतत् पांचभौतिकः।

—श्रीमद्भागवत, १।६।२९

* अचिन्त्यम् अव्यपदेश्यम् अद्वैतम्। —माण्डुक्य उपनिषद्

सका। मुख से बोलने से ही चीज़ उच्छिष्ट हो जाती है।' विद्यासागर विद्वान् हैं, यह सुनकर बहुत खुश हुए।

"सुना है, केदार के उस तरफ बरफ से ढका पहाड़ है। अधिक ऊँचाई पर उठने से फिर लौटना नहीं होता। जो लोग यह जानने के लिए गए हैं कि अधिक ऊँचाई पर क्या है तथा वहाँ जाने पर कैसी स्थिति होती है, उन्होंने फिर लौटकर खबर नहीं दी!

"उनका दर्शन होने पर मनुष्य आनन्द से विह्वल हो जाता है, चुप हो जाता है। * खबर कौन देगा? समझाएगा कौन?

"सात फाटकों से परे राजा है। प्रत्येक फाटक पर एक एक महा ऐश्वर्यवान् पुरुष बैठे हैं। प्रत्येक फाटक में शिष्य पूछ रहा है, 'क्या यही राजा हैं?' गुरु भी कह रहे हैं 'नहीं...नेति नेति।' सातवें फाटक पर जाकर जो कुछ देखा, एकदम अवाक् रह गए। आनन्द से विह्वल हो गए। ¶ फिर यह पूछना न पड़ा कि क्या यही राजा हैं? देखते ही सब सन्देह मिट गए।"

आचार्य—जी हाँ, वेदान्त में इसी प्रकार सब लिखा है।

श्रीरामकृष्ण—जब वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हैं; तब हम उन्हें सगुण ब्रह्म, आद्याशक्ति कहते हैं। जब वे तीनों गुणों से अतीत हैं, तब उन्हें निर्गुण ब्रह्म, वाक्य-मन के अतीत परब्रह्म कहा जाता है।

---

* यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।—तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मानन्द वल्ली।

¶ छिद्यन्ते सर्वसंशयः तस्मिन् दृष्टे परावरे।

—मुण्डकोपनिषद्, २।२।८

"मनुष्य उनकी माया में पड़कर अपने स्वरूप को भूल जाता है। इस बात को भूल जाता है कि वह अपने पिता के अनन्त ऐश्वर्य का अधिकारी है। उनकी माया त्रिगुणमयी है। ये तीनों ही गुण डाकू हैं। सब कुछ हर लेते हैं, हमारे स्वरूप को भुला देते हैं। सत्व, रज, तम तीन गुण हैं। इनमें से केवल सत्व गुण ही ईश्वर का रास्ता बताता है, परन्तु ईश्वर के पास सत्व गुण भी नहीं ले जा सकता।

" एक धनी जंगल के बीच में से जा रहा था। इसी समय तीन डाकुओं ने आकर उसे घेर लिया और उसका सब कुछ छीन लिया। सब कुछ छीनकर एक डाकू ने कहा, ' और इसे रखकर क्या करोगे? इसे मार डालो।' ऐसा कहकर वह उसे काटने गया। दूसरा डाकू बोला, ' जान से मत मारो, हाथ पैर बाँधकर इसे यहीं पर छोड़ दिया जाय, तो फिर यह पुलिस को खबर नहीं दे सकेगा।' यह कहकर उसे बाँधकर डाकू लोग वहीं छोड़कर चले गए।

" थोड़ी देर के बाद तीसरा डाकू लौट आया। आकर बोला, 'खेद है; तुमको बहुत कष्ट हुआ? मैं तुम्हारा बन्धन खोले देता हूँ।' बन्धन खोलने के बाद उस व्यक्ति को साथ लेकर डाकू रास्ता दिखाता हुआ चलने लगा। सरकारी रास्ते के पास आकर उसने कहा, ' इस रास्ते से चले जाओ; अब तुम सहज ही अपने घर जा सकोगे।' उस व्यक्ति ने कहा, ' यह क्या महाशय? आप भी चलिए; आपने मेरा कितना उपकार किया! हमारे घर पर चलने से हम कितने आनन्दित होंगे!' डाकू ने कहा, 'नहीं, मेरे वहाँ जाने पर छुटकारे का उपाय नहीं, पुलिस पकड़ लेगी।' यह कहकर रास्ता बताकर वह लौट गया।

“ पहला डाकू तमोगुण है, जिसने कहा था, ‘इसे रखकर क्या करोगे, मार डालो।’ तमोगुण से विनाश होता है। दूसरा डाकू रजोगुण है; रजोगुण से मनुष्य संसार में आबद्ध होता है। अनेकानेक कार्यों में जकड़ जाता है। रजोगुण ईश्वर को भुला देता है। सत्वगुण ही केवल ईश्वर का रास्ता बताता है। दया, धर्म, भक्ति यह सब सत्वगुण से उत्पन्न होते हैं। सत्वगुण मानो अन्तिम सीढ़ी है। उसके बाद ही है छत। मनुष्य का स्वधाम है परब्रह्म। त्रिगुणातीत न होने पर ब्रह्मज्ञान नहीं होता।”

आचार्य—अच्छा हुआ, ये सब बातें हुईं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—भक्त का स्वभाव क्या है, जानते हो? मैं कहूँ, तुम सुनो या तुम कहो, मैं सुनूँ। तुम लोग आचार्य हो, कितने लोगों को शिक्षा दे रहे हो। तुम लोग जहाज़ हो, हम तो हैं मछुओं की छोटी नैया। (सभी हँस पड़े।)

(३)

श्रीमन्दिर-दर्शन और उद्दीपन। श्रीराधा का प्रेमोन्माद।

श्रीरामकृष्ण नन्दनबागान के ब्राह्मसमाज-मन्दिर में भक्तों के साथ बैठे हैं। ब्राह्मभक्तों से बातचीत कर रहे हैं। साथ में राखाल, मास्टर आदि हैं। शाम के पाँच बजे होंगे।

स्वर्गीय काशीश्वर मित्र का मकान नन्दनबागान में है। वे पहले सब-जज थे। वे आदि ब्राह्मसमाज वाले ब्राह्म थे। अपने ही घर पर ईश्वर की उपासना किया करते थे, और बीच-बीच में भक्तों को निमंत्रण

देकर उत्सव मनाते थे। उनके देहान्त के बाद श्रीनाथ, यज्ञनाथ आदि उनके पुत्रों ने कुछ दिन तक वैसे उत्सव मनाए थे। वे ही श्रीरामकृष्ण को बड़े आदर से आमंत्रित कर लाए हैं।

श्रीरामकृष्ण आकर पहले नीचे के एक कमरे में बैठे, जहाँ धीरे धीरे बहुत से ब्राह्मभक्त सम्मिलित हुए। रवीन्द्र बाबू आदि ठाकुर-परिवार के भक्त भी इस उत्सव में शामिल हुए थे।

बुलाए जाने पर श्रीरामकृष्ण एकमंजले के उपासना-मन्दिर में आ विराजे। कमरे के पूर्व ओर वेदी रची गई है। नैऋत्य कोने में एक पियानो है। कमरे के उत्तरी हिस्से में कई कुर्सियाँ रखी हुई हैं। उसी के पूर्व ओर अन्तःपुर में जाने का दरवाज़ा है।

गर्मी का मौसम है—आज बुधवार, चैत्र की कृष्णादशमी है। २ मई, १८८३। अनेक ब्राह्मभक्त नीचे के बड़े आँगन या बरामदे में इधर उधर घूम रहे हैं। श्रीयुत जानकी घोषाल आदि दो-चार सज्जन श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं।—वे उनके श्रीमुख से ईश्वरी प्रसंग सुनेंगे। कमरे में प्रवेश करते ही श्रीरामकृष्ण ने वेदी के सम्मुख प्रणाम किया। फिर बैठकर राखाल, मास्टर आदि से कहने लगे—

"नरेन्द्र ने मुझसे कहा था, 'समाज-मन्दिर को प्रणाम करने से क्या होता है?' मन्दिर देखने से ईश्वर ही की याद आती है—उद्दीपना होती है। जहाँ उसकी चर्चा होती है, वहाँ उसका आविर्भाव होता है, और सारे तीर्थ वहाँ आ जाते हैं। ऐसे स्थानों के देखने से भगवान् की ही याद होती है।

"एक भक्त बबूल का पेड़ देखकर भावाविष्ट हुआ था। यही सोचकर कि इसी लकड़ी से श्रीराधाकान्त के बगीचे के लिए कुल्हाड़ी का बेंट बनता है।

"किसी किसी भक्त की ऐसी गुरुभक्ति होती है कि गुरुजी के मुहल्ले के एक आदमी को ही देखकर भावों से तर हो गया!

"मेघ देखकर, नीला कपड़ा देखकर अथवा एक चित्र देखकर श्रीराधा को श्रीकृष्ण की उद्दीपना हो जाती थी! ये सब चीज़ें देखकर वे 'कृष्ण कहाँ हैं?' कहकर बावली सी हो जाती थीं!"

घोषाल—उन्माद तो अच्छा नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—यह तुम क्या कह रहे हो। यह उन्माद विषयचिन्ता का फल थोड़े ही है, कि उससे बेहोशी आ जायगी? यह अवस्था तो ईश्वर-चिन्ता से उत्पन्न होती है! क्या तुमने प्रेमोन्माद, ज्ञानोन्माद की बात नहीं सुनी?

एक ब्राह्मभक्त—किस उपाय से ईश्वर मिल सकता है?

श्रीरामकृष्ण—उस पर प्रेम होना चाहिए, और सदा यह विचार रहे कि ईश्वर ही सत्य है और जगत् अनित्य।

"पीपल का पेड़ ही सत्य है—फल तो दो ही दिन के लिए हैं।"

ब्राह्मभक्त—काम, क्रोध आदि रिपु हैं—इनका क्या किया जाय?

श्रीरामकृष्ण—छः रिपुओं को ईश्वर की ओर मोड़ दो। आत्मा

के साथ रमण करने की कामना हो। जो ईश्वर की राह पर बाधा पहुँचाते हैं उन पर क्रोध हो। उसे ही पाने के लिए लोभ। यदि ममता है तो उसी के लिए हो। जैसे 'मेरे राम' 'मेरे कृष्ण'। यदि अहंकार करना है तो विभीषण की तरह—'मैंने श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम किया, फिर यह सिर किसी दूसरे के सामने नहीं नवाऊँगा!'

ब्राह्मभक्त—यदि ईश्वर ही सब कुछ करा रहा है तो मैं पापों के लिए उत्तरदायी नहीं हूँ?

पापकर्मों का उत्तरदायित्व।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—दुर्योधन ने वही बात कही थी—'त्वया हृषीकेश हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।'—'हे हृषीकेश, तुम हृदय में बैठकर जैसा करा रहे हो, वैसा ही मैं करता हूँ।' जिनको ठीक विश्वास है कि ईश्वर ही कर्ता हैं और मैं अकर्ता हूँ, वह पाप नहीं कर सकता। जिसने नाचना सीख लिया है उसके पैर ताल के विरुद्ध नहीं पड़ते।

"मन शुद्ध न होने से यह विश्वास हो नहीं होता कि ईश्वर है!"

श्रीरामकृष्ण उपासना-मन्दिर में एकत्रित भक्तों को देख रहे हैं और कहते हैं, "बीच-बीच में इस तरह एक साथ मिलकर ईश्वर-चिन्ता करना और उसके नामगुण गाना बहुत अच्छा है।

"लेकिन संसारी लोगों का ईश्वरानुराग क्षणिक है—वह उतनी ही देर तक ठहरता है जितना तपाये हुए लोहे पर पानी का छिड़काव।"

अब सन्ध्या की उपासना होगी। वह बड़ा कमरा भक्तों से भर गया। कई ब्राह्म महिलाएँ हाथों में संगीत पुस्तक लिए कुर्सियों पर आ बैठीं।

पियानो और हार्मोनियम के सहारे ब्रह्मसंगीत होने लगा। गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण के आनन्द की सीमा न रही। थोड़ी देर में उद्बोधन, प्रार्थना और उपासना हुई। आचार्य वेदी पर बैठ वेदों से मंत्रपाठ करने लगे। "ॐ पिता नोऽसि पिता नो बोधि। नमस्तेऽस्तु मा मा हिंसीः।— तुम हमारे पिता हो, हमें सद्बुद्धि दो। तुम्हें नमस्कार है। हमें नष्ट न करो।" ब्राह्मभक्त उनसे स्वर मिलाकर कहते हैं—"ॐ सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। आनन्दरूपममृतं यद्विभाति। शान्तं शिवमद्वैतम्। शुद्धमपापविद्धम्।" फिर आचार्यों ने स्तवपाठ किया।

"ॐ नमस्ते सते ते जगत्कारणाय। नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय॥" इत्यादि।

तदनन्तर उन्होंने प्रार्थना की—"असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय। आविराविर्म एधि। रुद्र यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहि नित्यम्।"—"मुझे अनित्य से नित्य को, अन्धकार से ज्योति को और मृत्यु से अमरत्व को पहुँचाओ। मेरे पास आविर्भूत होओ। हे रुद्र, अपने कारुण्यपूर्ण मुख से सदा मेरी रक्षा करो।"

ये पाठ सुनकर श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो रहे हैं। अब आचार्य निबन्ध पढ़ते हैं।

उपासना समाप्त हो गई। भक्तों को खिलाने का प्रबन्ध हो रहा है।

रात के नौ बज गये। श्रीरामकृष्ण को दक्षिणेश्वर लौट जाना

है। घर के मालिक निमंत्रित गृही भक्तों की संवर्धना में इतने व्यस्त हैं कि श्रीरामकृष्ण की कोई खबर ही नहीं ले सकते।

श्रीरामकृष्ण (राखाल आदि से)—अरे, कोई बुलाता भी तो नहीं!

राखाल (क्रोध में)—महाराज, आइये चलें, हम दक्षिणेश्वर जायँ।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—अरे ठहर। गाड़ी का किराया—तीन रुपये दो आने—कौन देगा? चिढ़ने से ही काम न चलेगा! पैसे का नाम नहीं, और थोथी झाँझ! फिर इतनी रात को खाऊँ कहाँ?

बड़ी देर में सुना गया कि पत्तल बिछे हैं। सब भक्त एक साथ बुलाए गये। उस भीड़ में श्रीरामकृष्ण भी राखाल आदि के साथ एक मंज़ले में भोजन करने चले। भीड़ में बैठने की जगह नहीं मिलती। बड़ी मुश्किल से श्रीरामकृष्ण एक तरफ बैठाये गए। स्थान भद्दा था। एक रसोइया ठकुराइन ने भाजी परोसी। श्रीरामकृष्ण को उसे खाने की रुचि नहीं हुई। उन्होंने नमक के सहारे एक आध पूड़ी और थोड़ी सी मिठाई खाई।

आप दयासागर हैं। गृहस्वामी लड़के हैं। वे आपकी पूजा करना नहीं जानते तो क्या आप उनसे नाराज़ होंगे? अगर आप बिना खाए चले जायँ तो उनका अमंगल होगा। फिर उन्होंने तो ईश्वर के ही उद्देश्य से इतना आयोजन किया।

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। गाड़ी का किराया कौन दे? उस भीड़ में गृहस्वामियों का पता ही नहीं चलता था। इस

किराये के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण ने पीछे से विनोद करते हुए भक्तों से कहा था—

"गाड़ी का किराया माँगने गया ! पहले तो उसे भगा ही दिया। फिर बड़ी कोशिश से तीन रुपये मिले, पर दो आने नहीं दिये। कहा कि उसीसे हो जायगा !"

परिच्छेद १८

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

(१)

हरि-कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण ।

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता कँसारी-पाड़ा की हरिभक्ति-प्रदायिनी सभा में शुभागमन किया है। रविवार, शुक्ल सप्तमी संक्रान्त, १३ मई १८८३। आज सभा में वार्षिकोत्सव हो रहा है। मनोहर साँई का कीर्तन हो रहा है।

श्रीराधाकृष्ण-प्रेम का गाना हो रहा है। सखियाँ श्रीमती राधिका से कह रही हैं, 'तूने प्रणयकोप क्यों किया? तो क्या तू कृष्ण का सुख नहीं चाहती?' श्रीमती कहती हैं—'उनके चन्द्रावली के कुञ्ज में जाने के लिए मैंने कोप नहीं किया। वहाँ उन्हें क्यों जाना चाहिये? चन्द्रावली तो सेवा नहीं जानती।'

दूसरे रविवार को (२०–५–८३) रामचन्द्र के मकान पर फिर कीर्तन हो रहा है। माथुर-गान। श्रीरामकृष्ण आए हैं। वैशाख शुक्ल चतुर्दशी। माथुर-गान हो रहा है। श्रीमती राधिका श्रीकृष्ण के विरह में बहुत कुछ कह रही हैं, "जब मैं बालिका थी उसी समय से श्याम को देखना चाहती थी। सखि, दिन गिनते-गिनते नाखून घिस गए। देखो, उन्होंने जो माला दी थी वह सूख गई है, फिर भी मैंने उसे नहीं फेंका।

कृष्णचन्द्र का उदय कहाँ हुआ ? वह चन्द्र प्रणयकोप (मान) रूपी राहू के भय से कहीं चला तो नहीं गया। हाय ! उस कृष्ण मेघ का कब दर्शन होगा ? क्या फिर दर्शन होगा ? प्रिय, प्राण खोलकर तुम्हें कभी भी न देख सकी ? एक तो कुल दो ही आँखें, उसमें फिर पलक; उसमें फिर आँसुओं की धारा। उनके सिर पर मोर का पंख मानो स्थिर बिजली है। मोरगण उस मेघ को देख पंख खोलकर नृत्य करते थे।

"सखि! यह प्राण तो नहीं रहेगा—मेरी देह तमाल वृक्ष की शाखा पर रख देना और मेरे शरीर पर कृष्ण नाम लिख देना।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'वे और उनका नाम अभिन्न हैं। इसीलिए श्रीमती राधिका इस प्रकार कह रही हैं। जो राम वही नाम हैं।' श्रीरामकृष्ण भावमग्न होकर यह माथुर-कीर्तन का गाना सुन रहे हैं। गोस्वामी कीर्तनिया इन गानों को गा रहे हैं। अगले रविवार को फिर दक्षिणेश्वर मन्दिर में वही गाना होगा। उसके बाद के शनिवार को फिर अधर के मकान पर वही कीर्तन होगा।

(२)

ईश्वरनिष्ठा। श्रीरामकृष्ण द्वारा जगन्माता की पूजा। विपत्ति-नाशिनी मंत्र।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में खड़े भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं। रविवार, कृष्ण पंचमी, २७ मई १८८३। दिन के नौ बजे का समय होगा। भक्तगण धीरे-धीरे आकर उपस्थित हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि भक्तों के प्रति)—विद्वेष भाव अच्छा नहीं,—शाक्त, वैष्णव, वेदान्ती ये सब झगड़ा करते हैं, यह ठीक नहीं। पद्मलोचन बर्दवान के सभापण्डित थे। सभा में विचार हो रहा था,—

'शिव बड़े हैं या ब्रह्मा।' पद्मलोचन ने अच्छा कहा था,—'मैं नहीं जानता, मुझसे न शिव का परिचय है, और न ब्रह्मा का!' (सभी हँसने लगे।)

"व्याकुलता रहने पर सभी पथों से उन्हें प्राप्त किया जाता है, परन्तु निष्ठा रहनी चाहिए। निष्ठा-भक्ति का दूसरा नाम है—अव्यभिचारिणी भक्ति, जिस प्रकार एक शाखावाला वृक्ष सीधा ऊपर की ओर जाता है। व्यभिचारिणी भक्ति जैसे पाँच शाखावाला वृक्ष। गोपियों की ऐसी निष्ठा थी कि वृन्दावन के पीताम्बर और मोहन चूड़ावाले गोपालकृष्ण के अतिरिक्त और किसी से प्रेम न करेंगी। मथुरा में जब राजवेष था, तो सिर पर पगड़ी वाले कृष्ण को देख उन्होंने घूंघट की आड़ में मुँह छिपा लिया और कहा,—

'यह कौन है? क्या इनके साथ बात करके हम द्विचारिणी बनेंगी?'

"स्त्री जो स्वामी की सेवा करती है वह भी निष्ठा-भक्ति है। देवर, जेठ को खिलाती है, पैर धोने को जल देती है, परन्तु स्वामी के साथ दूसरा ही सम्बन्ध रहता है। इसी प्रकार अपने धर्म में भी निष्ठा हो सकती है। इसलिए दूसरे धर्म से घृणा नहीं करना, बल्कि उनके साथ मीठा व्यवहार करना।"

श्रीरामकृष्ण गंगास्नान करके कालीघर में गए हैं। साथ में मास्टर हैं। श्रीरामकृष्ण पूजा के आसन पर बैठे हैं, माँ के चरण-कमलों पर फूल रख रहे हैं। बीच-बीच में अपने सिर पर भी रख रहे हैं और ध्यान कर रहे हैं।

बहुत समय के बाद श्रीरामकृष्ण आसन से उठे—भाव में विभोर होकर नृत्य कर रहे हैं और मुँह से माँ का नाम ले रहे हैं। कह रहे हैं, 'माँ विपदनाशिनि!' देह धारण करने से ही दुःख, विपदाएँ होती हैं, सम्भव है इसीलिए जीव को इस विपदनाशिनि महामंत्र का उच्चारण कर कातर होकर पुकारना सिखा रहे हैं।

अब श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के पश्चिम वाले बरामदे में आकर बैठे हैं। अभी तक भाव का आवेश है। पास हैं मास्टर, नकुड़ वैष्णव आदि। नकुड़ वैष्णव को श्रीरामकृष्ण २८–२९ वर्षों से जानते हैं। जिस समय वे पहले पहल कलकत्ते में आकर झामापुकुर में रहे थे और घर-घर में घूम घूमकर पूजा करते थे, उस समय कभी कभी नकुड़ वैष्णव की दूकान में जाकर बैठते थे और आनन्द मनाते थे। आजकल पानिहाटी में राघव पण्डित के महोत्सव के उपलक्ष्य में नकुड़ बाबाजी आकर प्रायः प्रतिवर्ष श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते हैं। नकुड़ भक्त वैष्णव थे। कभी कभी वे भी महोत्सव का भण्डारा देते थे। नकुड़ मास्टर के पड़ोसी थे।

श्रीरामकृष्ण जिस समय झामापुकुर में थे, उस समय गोविन्द चटर्जी के मकान में रहते थे। नकुड़ ने मास्टर को वह पुराना मकान दिखाया था।

जगन्माता के नामकीर्तन के आनन्द में श्रीरामकृष्ण।

श्रीरामकृष्ण भाव के आवेश में गाना गा रहे हैं, जिसका भावार्थ यह है:—

कीर्तन।

(१)"महाकाल की मनोमोहिनी सदानन्दमयी काली, माँ, तुम अपने आनन्द में आप ही नाचती हो और आप ही हथेली बजाती हो। हे आदिभूते सनातनि, शून्यरूपे शशिभालिके, जिस समय ब्रह्माण्ड न था, उस समय तुझे मुण्डमाला कहाँ मिली? एक मात्र तुम यंत्री हो, हम सब तुम्हारे निर्देश पर चलते हैं। माँ, तुम जैसा कराती हो, हम वैसा ही करते हैं, जैसा कहलाती हो वैसा ही कहते हैं। हे निर्गुणे, माँ, कमलाकान्त गाली देकर कहता है कि तुझ सर्वनाशिनी ने खड्ग धारण करके धर्म और अधर्म दोनों को नष्ट कर दिया है!"

(२) "हे तारा, तुम ही मेरी माँ हो। तुम त्रिगुणधरा परात्परा हो। मैं जानता हूँ, माँ, कि तुम दीनों पर दया करनेवाली और विपत्ति में दुःख को हरनेवाली हो। तुम सन्ध्या, तुम गायत्री, तुम जगद्धात्री हो। माँ, तुम असहाय को बचानेवाली तथा सदाशिव के मन को हरनेवाली हो। माँ, तुम जल में, थल में और आदि मूल में विराजमान हो। तुम साकार रूप में सर्व घट में विद्यमान होते हुए भी निराकार हो।"

श्रीरामकृष्ण ने 'माँ' के और भी कुछ गीत गाए। फिर भक्तों से कह रहे है, "संसारियों के सामने केवल दुःख की बात ठीक नहीं। आनंद चाहिए। जिनको अन्न का अभाव है, वे दो दिन उपवास भी कर सकते

हैं, परन्तु खाने में थोड़ा विलम्ब होने पर जिन्हें दुःख होता है उनके पास केवल रोने की बातें, दुःख की बातें करना ठीक नहीं।

"वैष्णवचरण कहा करता था, केवल पाप, पाप यह सब क्या है? आनन्द करो।"

श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद विश्राम भी न कर सके थे कि मनोहर साँई गोस्वामी आ पधारे।

श्रीराधा के भाव में महाभावमय श्रीरामकृष्ण; क्या श्रीरामकृष्ण गौरांग हैं?

गोस्वामी पूर्वराग का कीर्तन कर रहे हैं। थोड़ा सुनकर ही श्रीरामकृष्ण राधा के भाव में भावाविष्ट हो गए।

पहले ही गौरचन्द्रिका-कीर्तन। 'हथेली पर हाथ—चिन्तित गोरा—आज क्यों चिन्तित हैं?—सम्भवतः राधा के भाव में भावित हुए हैं।'

गोस्वामी फिर गा रहे हैं। भावार्थः—

(१)। "घड़ी में सँवार, पल-पल में घर से बाहर आती और फिर भीतर जाती है, कहीं पर भी मन नहीं लग रहा है, ज़ोर ज़ोर से श्वास चल रही है, बार बार बगीचे की ओर ताकती है। (राधे, ऐसा क्यों हुआ?)"

संगीत की इसी पंक्ति को सुन श्रीरामकृष्ण की महाभाव की स्थिति हुई है! उन्होंने अपनी कमीज को फाड़कर फेंक दिया।

कीर्तनकार का संगीत सुनते सुनते महाभाव में श्रीरामकृष्ण काँप

रहे हैं ! केदार को देख वे कीर्तन के स्वर में कह रहे हैं, "प्राणनाथ, हृदयवल्लभ, तुम लोग मुझे कृष्ण ला दो, यही तो मित्रता का काम है, या तो उन्हें ला दो और नहीं तो मुझे ले चलो, तुम लोगों की मैं चिरकाल के लिए दासी बनी रहूँगी।"

गोस्वामी कीर्तनिया श्रीरामकृष्ण के महाभाव की स्थिति को देखकर मुग्ध हुए हैं। वे हाथ जोड़कर कह रहे हैं, "मेरी विषय-बुद्धि मिटा दीजिए।"

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—तुम उस साधु के सदृश हो जिसने पहले रहने की जगह ठीक कर, फिर शहर देखना शुरू किया। तुम इतने बड़े रसिक हो, तुम्हारे भीतर से इतना मीठा रस निकल रहा है !

गोस्वामी—प्रभो, मैं चीनी का बोझ ढोनेवाला बैल हूँ, चीनी का आस्वादन कहाँ कर सका ?

फिर कीर्तन होने लगा। कीर्तनकार श्रीमती राधिका की दशा का वर्णन कर कह रहे हैं—"कोकिल-कुल कुर्वति कलनादम्।"

कोकिल का कलनाद सुनकर श्रीमती को वज्रध्वनि जैसा लग रहा है। इसलिए वे जैमिनि का नाम उच्चारण कर रही हैं और कह रही हैं,—"सखि, कृष्ण के विरह में यह प्राण नहीं रहेगा; इस देह को तमाल वृक्ष की शाखा पर रख देना।"

गोस्वामी ने राधाश्याम का मिलन गाकर कीर्तन समाप्त किया।

परिच्छेद १९

भक्तों के मकान पर

(१)

कलकत्ते में बलराम तथा अधर के मकान पर श्रीरामकृष्ण। नरलीला का दर्शन और आस्वादन।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर से कलकत्ता आए हैं। बलराम के मकान से होकर अधर के मकान पर और उसके बाद राम के मकान पर जायेंगे, अधर के मकान में मनोहर साँई का कीर्तन होगा। राम के घर पर कथा होगी। शनिवार, कृष्ण द्वादशी, २ जून १८८३ ई०।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी में आते आते राखाल, मास्टर आदि भक्तों से कह रहे हैं, "देखो, उन पर प्रेम हो जाने पर पाप आदि सब भाग जाते हैं, जैसे धूप से मैदान के तालाब का जल सूख जाता है।"

"विषय की वासना तथा कामिनी-कांचन पर मोह रखने से कुछ नहीं होता। यदि विषयासक्ति रहे तो संन्यास लेने पर भी कुछ नहीं होता—जैसे थूक को फेंककर फिर चाट लेना।"

थोड़ी देर बाद गाड़ी में श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, "ब्राह्म-समाजी लोग साकार को नहीं मानते। (हँसकर) नरेन्द्र कहता है, पुत्तलिका! फिर कहता है, 'वे अभी तक कालीघर में जाते हैं'।"

श्रीरामकृष्ण बलराम के घर पर आए हैं। वे एकाएक भावाविष्ट

हो गये हैं। सम्भव है, देख रहे हैं, ईश्वर ही जीव तथा जगत् बने हुए हैं, ईश्वर ही मनुष्य बनकर घूम रहे हैं। जगन्माता से कह रहे हैं, "माँ, यह क्या दिखा रही हो? रुक जाओ; यह सब क्या दिखा रही हो? राखाल आदि के द्वारा क्या दिखा रही हो, माँ! रूप आदि सब उड़ गया। अच्छा माँ, मनुष्य तो केवल ऊपर का ढाँचा ही है न? चैतन्य तुम्हारा ही है।

"माँ, आजकल के ब्राह्म-समाजी मीठा रस नहीं पाते! आँखें सूखी, मुँह सूखा, प्रेमभक्ति न होने से कुछ न हुआ!

"माँ, तुमसे कहा था, एक व्यक्ति को साथी बना दो, मेरे जैसे किसी को! इसीलिए राखाल को दिया है न?"

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान पर आए हैं। मनोहर साँई के कीर्तन की तैयारी हो रही है।

श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए अधर के बैठक-घर में अनेक भक्त तथा पड़ोसी आए हैं। सभी की इच्छा है कि श्रीरामकृष्ण कुछ कहें।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—संसार और मुक्ति दोनों ही ईश्वर की इच्छा पर निर्भर हैं। उन्होंने ही संसार में अज्ञान बनाकर रखा है। फिर जिस समय वे अपनी इच्छा से पुकारेंगे, उसी समय मुक्ति होगी। लड़का खेलने गया है, खाने के समय माँ बुला लेती है।

"जिस समय वे मुक्ति देंगे उस समय वे साधु-संग करा देते हैं और फिर अपने को पाने के लिए व्याकुलता उत्पन्न कर देते हैं।"

पड़ोसी—महाराज, किस प्रकार व्याकुलता होती है ?

श्रीरामकृष्ण—नौकरी छूट जाने पर क्लर्क को जिस प्रकार व्याकुलता होती है। वह जिस प्रकार रोज आफिस-आफिस में घूमता है और पूछता रहता है, "साहब, कोई नौकरी की जगह खाली हुई ?" व्याकुलता होने पर छटपटाता है—कैसे ईश्वर को पाऊँ ! और यदि मूछों पर हाथ फेरते हुए पैर पर पैर धरकर बैठे-बैठे पान चबा रहा है—कोई चिन्ता नहीं, तो ऐसी स्थिति में ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती।

पड़ोसी—साधुसंग होने पर क्या व्याकुलता हो सकती है ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, हो सकती है; परन्तु पाखण्डियों को नहीं होती, साधु का कमण्डल चारों धाम होकर आने पर भी कड़ुए का कड़ुआ ही रह जाता है !

अब कीर्तन शुरू हुआ है; गोस्वामीजी कलह-संवाद गा रहे हैं-

श्रीमतीजी कह रही हैं, 'सखि ! प्राण जाता है, कृष्ण को ला दे।'

सखी—राधे, कृष्णरूपी मेघ बरसता है; परन्तु तूने प्रेमकोप-रूपी आंधी से उस मेघ को उड़ा दिया। तू कृष्णसुख में सुखी नहीं है; नहीं तो प्रेमकोप क्यों करती ?

श्रीमती—'सखि, प्रेमकोप तो मेरा नहीं है। जिसका प्रेमकोप है उसी के साथ चला गया है।' ललिता श्रीमती की ओर से कुछ कह रही है।

अब कीर्तन में गोस्वामी कह रहे हैं कि सखियाँ राधाकुण्ड के पास श्रीकृष्ण की खोज करने लगीं। उसके बाद यमुना-तट पर श्रीकृष्ण

का दर्शन, साथ में श्रीदाम, सुदाम, मधु-मंगल। वृन्दा के साथ श्रीकृष्ण का वार्तालाप, श्रीकृष्ण का योगी का सा भेष, जटिला-संवाद, राधा का भिक्षादान, राधा का हाथ देख योगी द्वारा गणना तथा कष्ट की भविष्य-वाणी। कात्यायनी की पूजा में जाने की तैयारी!

कीर्तन समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—गोपियों ने कात्यायनी की पूजा की थी। सभी उस महामाया आद्याशक्ति के आधीन हैं। अवतार आदि तक उस माया का आश्रय लेकर ही लीला करते हैं; इसीलिए वे आद्याशक्ति की पूजा करते हैं; देखो न, राम सीता के लिए कितने रोये हैं। पंच-भूतों के फन्दे में पड़कर ब्रह्म रोते हैं।

" हिरण्याक्ष का वध कर वराह अवतार कच्चे-बच्चे लेकर थे। आत्म-विस्मृत होकर उन्हें स्तनपान करा रहे थे! देवताओं ने परामर्श करके शिवजी को भेज दिया। शिवजी ने त्रिशूल के आघात से वराह का शरीर विनष्ट कर दिया। तब वे स्वधाम में पधारे, शिवजी ने पूछा था,—तुम आत्मविस्मृत क्यों हो गये हो? इस पर उन्होंने कहा था, मैं बहुत अच्छा हूँ! "

अधर के मकान से होकर अब श्रीरामकृष्ण राम के मकान पर आए हैं। वहाँ पर कथाकार के मुख से उद्धव-संवाद सुना। राम के मकान पर केदार आदि भक्तगण उपस्थित थे।

(२)

[illegible]क-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण। [illegible]-भक्ति और प्रेम-भक्ति।

आज वैशाख की कृष्णा द्वादशी है, शनिवार, तारीख २ जून, १८८३। श्रीरामकृष्णदेव का कलकत्ते में शुभागमन हुआ। वे बलराम बाबू के मकान से होकर अधर बाबू के मकान पर आए। वहाँ से कीर्तन सुनकर, सिमुलिया मोहल्ले की मधु राय की गली में राम बाबू के मकान पर आए हैं।

रामचन्द्र दत्त परमहंसदेव के विशिष्ट भक्त थे। वे डाक्टरी की शिक्षा प्राप्त कर मेडिकल कालेज में रसायन-शास्त्र के सहकारी परीक्षक नियुक्त हुए थे और साइन्स असोसिएशन (Science Association) में रसायन-शास्त्र के अध्यापक भी थे। उन्होंने स्वोपार्जित धन से यह मकान बनवाया था। इस मकान में परमहंसदेव कई बार आए थे, इसी-लिए यह मकान भक्तों के लिए आज तीर्थ के तुल्य महान् पवित्र है। रामचन्द्र गुरुदेव की कृपा लाभ कर ज्ञानपूर्वक संसार-धर्म पालन करने की चेष्टा करते थे। परमहंसदेव मुक्तकण्ठ से राम बाबू की प्रशंसा करते और कहते थे, राम अपने मकान में भक्तों को स्थान देता है, कितनी सेवा करता है, उसका मकान भक्तों का एक अड्डा है। नित्यगोपाल, लाटू, तारक आदि एक प्रकार से रामचन्द्र के घर के आदमी हो गए थे। उनके साथ बहुत दिनों तक एकत्र वास भी किया था। इसके सिवाय उनके मकान में नित्य नारायण की पूजा और सेवा भी होती थी।

रामचन्द्र श्रीरामकृष्ण को वैशाख की पूर्णिमा को, जिस समय हिंडोले का शृङ्गार होता है, इस मकान में उनकी पूजा करने के लिए सर्वप्रथम ले आए थे। प्रायः प्रतिवर्ष आज के दिन वे उनको ले जाकर भक्तों से सम्मिलित हो महोत्सव मनाया करते थे। रामचन्द्र के प्यारे शिष्य-वृन्द अब भी उस दिन उत्सव मनाते हैं।

आज रामचन्द्र के मकान में उत्सव है, श्रीरामकृष्ण आयेंगे। आप ईश्वरी प्रसंग सुनकर मुग्ध होते हैं, इसीलिए रामचन्द्र ने श्रीमद्भागवत की कथा का प्रबन्ध किया है। छोटा सा आँगन है, महोदय बैठे हैं। राजा हरिश्चन्द्र की कथा हो रही है। इसी समय बलराम और अधर के मकान से होकर श्रीरामकृष्ण यहाँ आ पहुँचे। रामचन्द्र ने आगे बढ़कर उनकी चरण-रज को मस्तक में धारण किया और वेदी के सम्मुख उनके लिए निर्दिष्ट आसन पर उन्हें लाकर बैठाया। चारों ओर भक्त और पास ही मास्टर बैठे हैं।

राजा हरिश्चन्द्र की कथा होने लगी। विश्वामित्र बोले, 'महाराज! तुमने मुझे ससागरा पृथ्वी दान कर दी है, इसलिए अब इसके भीतर तुम्हारा स्थान नहीं है; किन्तु तुम काशीधाम में रह सकते हो, वह महादेव का स्थान है। चलो, तुम्हें और तुम्हारी सहधर्मिणी शैव्या और तुम्हारे पुत्र को वहाँ पहुँचा दें। वहीं पर जाकर तुम प्रबन्ध करके मुझे दक्षिणा दे देना।' यह कहकर राजा को साथ ले विश्वामित्र काशीधाम की ओर चले। काशी में आकर उन लोगों ने विश्वेश्वर के दर्शन किए।

विश्वेश्वर-दर्शन की बात होते ही श्रीरामकृष्ण एकदम भावाविष्ट हो अस्पष्ट रूप से 'शिव' 'शिव' उच्चारण कर रहे हैं।

कथक कथा कहते गए। अन्त में रोहिताश्व को जीवनदान, सब लोगों का विश्वेश्वर-दर्शन और हरिश्चन्द्र का पुनः राज्यलाभ वर्णन कर कथक महोदय ने कथा समाप्त की। श्रीरामकृष्ण बहुत समय तक वेदी के सम्मुख बैठकर कथा सुनते रहे। कथा समाप्त होने पर बाहर के कमरे में जाकर बैठे। चारों ओर भक्तमण्डली बैठी है, कथक भी पास

आकर बैठ गए। श्रीरामकृष्ण कथक से बोले, कुछ उद्धव-संवाद कहो।

कथक कहने लगे, " जब उद्धव वृन्दावन आए, गोपियाँ और ग्वाल-बाल उनके दर्शन के लिए व्याकुल हो दौड़कर उनके पास गए। सभी पूछने लगे, ' श्रीकृष्ण कैसे हैं ? क्या वे हम लोगों को भूल गए ? क्या वे कभी हम लोगों को स्मरण करते हैं ? ' यह कहकर कोई रोने लगा, कोई उन्हें साथ ले वृन्दावन के अनेक स्थानों को दिखलाने और कहने लगा, ' इस स्थान में श्रीकृष्ण गोवर्धन धारण किए थे, यहाँ पर धेनुकासुर और वहाँ पर शकटासुर का वध किए थे; इस मैदान में गौओं को चराते थे, इसी यमुना के तट पर वे विहार करते थे; यहाँ पर ग्वाल-बालों सहित क्रीड़ा करते थे। इस कुञ्ज में गोपियों के साथ आलाप करते थे। ' उद्धव बोले, ' आप लोग कृष्ण के लिए इतने व्याकुल क्यों हो रहे हैं ? वे तो सर्व भूतों में व्याप्त हैं। वे साक्षात् नारायण हैं ! उनके सिवाय और कुछ नहीं है। ' गोपियों ने कहा, ' हम यह सब नहीं समझ सकतीं। लिखना पढ़ना हमें नहीं मालूम। हम तो केवल अपने वृन्दावन-विहारी कृष्ण को जानती हैं। वे यहाँ बहुत कुछ लीला कर गये हैं।' उद्धव फिर बोले, ' वे साक्षात् नारायण हैं, उनकी चिन्ता करने से पुनः संसार में नहीं आना पड़ता, जीव मुक्त हो जाता है।' गोपियों ने कहा 'हम मुक्ति आदि—यह सब बातें नहीं समझतीं। हम तो अपने प्राणवल्लभ कृष्ण को चाहती हैं।"

श्रीरामकृष्ण देव यह सब ध्यान से सुनते रहे और भाव में मग्न हो बोले, 'गोपियों का कहना सत्य है।' यह कहकर वे अपने मधुर कण्ठ से गाने लगे। गाने का आशय यह है:—

'मैं मुक्ति देने में कातर नहीं होता, पर शुद्धा भक्ति देने में कातर होता हूँ। जो शुद्धा भक्ति प्राप्त कर लेते हैं वे सबसे आगे हैं। वे पूज्य होकर त्रिलोकजयी होते हैं। सुनो चन्द्रावलि, भक्ति की बात करता हूँ, मुक्ति तो मिलती है, पर भक्ति कहाँ मिलती है? भक्ति के कारण मैं पाताल में बलिराजा का द्वारपाल होकर रहता हूँ। शुद्धा भक्ति एक वृन्दावन में है जिसे गोप-गोपियों के सिवाय दूसरा कोई नहीं जानता। भक्ति के कारण मैं नन्द के भवन में उन्हें पिता जानकर उनके जूते सिर पर ले चलता हूँ।'

श्रीरामकृष्ण (कथक के प्रति)—गोपियों की भक्ति थी प्रेमा-भक्ति—**अव्यभिचारिणी भक्ति**—निष्ठा-भक्ति। व्यभिचारिणी भक्ति किसे कहते हैं, जानते हो? ज्ञानमिश्रित भक्ति। जैसे कृष्ण ही सब हुए हैं—वे ही परब्रह्म हैं, वे ही राम, वे ही शिव, वे ही शक्ति हैं। पर प्रेमा-भक्ति में उस ज्ञान का संयोग नहीं है। द्वारका में आकर हनुमान जी ने कहा, सीताराम के दर्शन करूँगा।' भगवान् रुक्मिणी से बोले, 'तुम सीता बनकर बैठो, अन्यथा हनुमान से रक्षा नहीं है।' पाण्डवों ने जब राजसूय यज्ञ किया, उस समय देश-देश के नरेश युधिष्ठिर को सिंहासन पर बिठाकर प्रणाम करने लगे। विभीषण बोले, 'मैं एक नारायण को प्रणाम करूँगा, और दूसरे को नहीं!' यह सुनते ही भगवान् स्वयं भूमिष्ठ होकर युधिष्ठिर को प्रणाम करने लगे, तब विभीषण ने राजमुकुट धारण किये हुए भी युधिष्ठिर को साष्टांग प्रणाम किया।

"किस प्रकार, जानते हो?—जैसे घर की बहू अपने देवर, जेठ, ससुर और स्वामी सब की सेवा करती है। पैर धोने के लिए जल देती है, अंगोछा देती है, पीढ़ा रख देती है, परन्तु दूसरी तरह का सम्बन्ध

एकमात्र स्वामी ही के साथ रहता है।

"इस प्रेमा-भक्ति में दो चीज़ें हैं। 'अहंता' और 'ममता'। यशोदा सोचती थीं, गोपाल को मैं न देखूँगी तो और कौन देखेगा? मेरे देख-भाल न करने पर उन्हें रोग-व्याधि हो सकती है। यशोदा नहीं जानती थीं कि कृष्ण स्वयं भगवान् हैं। और 'ममता'—मेरा कृष्ण, मेरा गोपाल। उद्धव बोले, 'माँ, तुम्हारे कृष्ण साक्षात् नारायण हैं, वे संसार के चिन्तामणि हैं। वे सामान्य वस्तु नहीं हैं।' यशोदा कहने लगीं, 'अरे तुम्हारे चिन्तामणि कौन! मेरा गोपाल कैसा है, मैं पूछती हूँ। चिन्तामणि नहीं, मेरा गोपाल।'

"गोपियों की निष्ठा कैसी थी! मथुरा में द्वारपाल से अनुनय-विनय कर वे सभा में आईं। द्वारपाल उन लोगों को कृष्ण के पास ले गया। कृष्ण को देख गोपियाँ मुख नीचा कर परस्पर कहने लगीं, 'यह पगड़ी बाँधे राजवेश में कौन है? इसके साथ वार्तालाप कर क्या अन्त में हम द्विचारिणी बनेंगी? हमारे मोहन मोरमुकुट पीताम्बरधारी प्राण-वल्लभ कहाँ हैं?' देखते हो इन लोगों की निष्ठा कैसी है! वृन्दावन का भाव ही दूसरा है। सुना है, द्वारका की तरफ लोग पार्थ-सखा श्रीकृष्ण की पूजा करते हैं—वे राधा को नहीं चाहते!"

भक्त—कौन श्रेष्ठ है, ज्ञानमिश्रित भक्ति या प्रेमाभक्ति?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर के प्रति एकान्त अनुराग हुए बिना प्रेमा-भक्ति का उदय नहीं होता है। और 'ममत्व'-ज्ञान अर्थात् भगवान् मेरे अपने हैं, यह ज्ञान। तीन भाई जङ्गल में जा रहे थे, सहसा एक बाघ सामने आ खड़ा हुआ! एक आदमी बोला, 'भाई, हम सब आज

मरे।' एक आदमी बोला, 'क्यों, मरेंगे क्यों ? आओ, ईश्वर का स्मरण करें।' दूसरा आदमी, बोला, 'नहीं, भगवान् को कष्ट देकर क्या होगा ? आओ इसी पेड़ पर चढ़कर बैठें।'

"जिस आदमी ने कहा था, 'हम लोग मरे' वह नहीं जानता था कि ईश्वर रक्षा करनेवाले हैं। जिसने कहा, 'आओ भगवान् को स्मरण करें', वह ज्ञानी था, वह जानता था कि ईश्वर सृष्टि, स्थिति, प्रलय के मूल कारण हैं। और जिसने कहा, 'भगवान् को कष्ट देकर क्या होगा, आओ पेड़ पर चढ़ बैठें', उसके भीतर प्रेम उत्पन्न हुआ था—स्नेह-ममता का भाव आया था। तो प्रेम का स्वभाव ही यह है कि प्रेमी अपने को बड़ा समझता है और प्रेमास्पद को छोटा देखता है, कहीं उसे कोई कष्ट न हो। उसकी यही इच्छा होती है कि जिससे प्रेम करें उसके पैर में एक काँटा भी न चुभे।"

परमहंसदेव तथा भक्तों को ऊपर ले जाकर अनेक प्रकार के मिष्टान्न आदि से रामबाबू ने उनकी सेवा की। भक्तों ने बड़े आनन्द से प्रसाद पाया।

परिच्छेद २०

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ

(१)

मनुष्य में ईश्वरदर्शन; नरेन्द्र से प्रथम भेंट।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में अपने कमरे में बैठे हैं। भक्तगण उनके दर्शन के लिए आ रहे हैं। आज ज्येष्ठ मास की कृष्ण चतुर्दशी, सावित्री चतुर्दशी व्रत का दिन है। सोमवार, तारीख ४ जून, १८८३ ई०। आज रात को अमावस्या तिथि में फलहारिणी काली-पूजा होगी।

मास्टर कल रविवार से आए हैं। कल रात को कात्यायनी की पूजा हुई थी। श्रीरामकृष्ण प्रेमाविष्ट हो नाट-मन्दिर में माता के सामने खड़े हो कह रहे हैं, 'माता, तुम्हीं व्रज की कात्यायनी हो।' यह कहकर उन्होंने एक गाना गाया जिसका आशय यह है:—तुम्हीं स्वर्ग हो, तुम्हीं मर्त्य हो, तुम्हीं पाताल भी हो। तुम्हीं से हरि, ब्रह्मा और द्वादश गोपाल पैदा हुए हैं। दश महाविद्याएँ, और दश अवतार भी तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं। अबकी बार तुम्हें किसी प्रकार मुझे पार करना होगा।

श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं, और अपनी माँ से बातें कर रहे हैं। प्रेम से बिलकुल मतवाले हो गए हैं। मन्दिर से वे अपने कमरे में आकर चौकी पर बैठे।

रात के दूसरे पहर तक माँ का नाम-कीर्तन होता रहा।

सोमवार को सबेरे के समय बलराम और कई दूसरे भक्त आए। फलहारिणी काली-पूजा के उपलक्ष्य में त्रैलोक्य बाबू आदि भी सपरिवार आए हैं। सबेरे नौ बजे का समय है। परमहंसदेव प्रसन्न चित्त, गङ्गाजी की ओर के गोल बरामदे में बैठे हैं। पास ही राखाल लेटे हैं। आनन्द में उन्होंने राखाल का मस्तक अपनी गोद में उठा लिया है। आज कई दिनों से श्रीरामकृष्ण राखाल को साक्षात् गोपाल के रूप में देखते हैं।

त्रैलोक्य सामने से माँ काली के दर्शन को जा रहे हैं। साथ में नौकर माथे पर छाता लगाए जा रहा है। श्रीरामकृष्ण राखाल से बोले, 'उठरे, उठ!'

श्रीरामकृष्ण बैठे हैं। त्रैलोक्य ने आकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (त्रैलोक्य से)—कल 'यात्रा' नहीं हुई?

त्रैलोक्य—जी नहीं, अबकी बार 'यात्रा' का वैसा सुभीता नहीं हुआ।

श्रीरामकृष्ण—तो इस बार जो हुआ सो हुआ। देखना, जिसमें फिर ऐसा न होने पावे। जैसा नियम है वैसा ही बराबर होना अच्छा है।

त्रैलोक्य यथोचित उत्तर देकर चले गए। कुछ देर बाद विष्णुमन्दिर के पुरोहित श्रीयुत राम चटर्जी आए।

श्रीरामकृष्ण—राम, मैंने त्रैलोक्य से कहा, इस साल 'यात्रा' नहीं हुई, देखना जिसमें आगे ऐसा न हो। तो क्या यह कहना ठीक हुआ?

राम—महाराज, उससे क्या हुआ! अच्छा ही तो कहा। जैसा नियम है उसी प्रकार ठीक ठीक होना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (बलराम से)—अजी, आज तुम यहीं भोजन करो।

भोजन के कुछ पहले परमहंसदेव अपनी अवस्था के सम्बन्ध में भक्तों से बहुत सी बातें करने लगे। राखाल, बलराम, मास्टर, रामलाल और दो-एक भक्त बैठे थे।

श्रीरामकृष्ण—हाजरा मुझे उपदेश देता है कि तुम इन लड़कों के लिए इतनी चिन्ता क्यों करते हो? गाड़ी में बैठकर बलराम के मकान पर जा रहा था, उसी समय मन में बड़ी चिन्ता हुई। कहने लगा, 'माँ, हाजरा कहता है, नरेन्द्र आदि बालकों के लिए मैं इतनी चिन्ता क्यों करता हूँ; वह कहता है, ईश्वर की चिन्ता त्यागकर इन लड़कों की चिन्ता आप क्यों करते हैं?' यह कहते कहते अचानक उन्होंने दिखलाया कि वे ही मनुष्य-रूप में लीला करती हैं। शुद्ध आधार में उनका प्रकाश स्पष्ट होता है। इस दर्शन के बाद जब समाधि कुछ टूटी तो हाजरा के ऊपर बड़ा क्रोध हुआ। कहा, उसने मेरा मन खराब कर दिया था। फिर सोचा, उस बेचारे का अपराध ही क्या है; वह यह कैसे जान सकता है?

"मैं इन लोगों को साक्षात् नारायण जानता हूँ। नरेन्द्र के साथ पहले भेंट हुई। देखा, देह-बुद्धि नहीं है। जरा छाती को स्पर्श करते ही उसका बाह्य-ज्ञान लोप हो गया। होश आने पर कहने लगा, 'आपने यह क्या किया! मेरे तो माता-पिता हैं।' यदु मल्लिक के मकान में भी ऐसा ही हुआ था। क्रमशः उसे देखने के लिए व्याकुलता बढ़ने लगी, प्राण छटपटाने लगे। तब भोलानाथ* से कहा, 'क्यों जी, मेरा मन ऐसा

* भोलानाथ मुकर्जी ठाकुरबाड़ी के मुन्शी थे, बाद में खजाञ्ची हुए थे।

क्यों होता है ? नरेन्द्र नाम का एक कायस्थ लड़का है, उसके लिए ऐसा क्यों होता है ?' भोलानाथ बोले, 'इस सम्बन्ध में महाभारत में लिखा है कि समाधिवान् पुरुषों का मन जब नीचे उतरता है, तब सतोगुणी लोगों के साथ विलास करता है, सतोगुणी मनुष्य देखने से उनका मन शान्त होता है।' यह बात सुनकर मेरे चित्त को शान्ति मिली। बीच बीच में नरेन्द्र को देखने के लिए मैं बैठा बैठा रोया करता था।"

(२)

श्रीरामकृष्ण का प्रेमोन्माद और रूपदर्शन।

श्रीरामकृष्ण—उः, कैसी कैसी अवस्था बीत गई है ! पहले जब ऐसी अवस्था हुई तो रात दिन कैसे व्यतीत होते थे, कह नहीं सकता। सब कहने लगे थे, पागल हो गया, इसीलिए इन लोगों ने शादी कर दी। उन्माद अवस्था थी। पहले स्त्री के बारे में चिन्ता हुई, पीछे सोचा कि वह भी इसी प्रकार रहेगी, खायेगी, पियेगी। ससुराल गया, वहाँ भी खूब संकीर्तन हुआ। नफर, दिगम्बर बनर्जी के पिता आदि सब लोग आये। खूब संकीर्तन होता था। कभी कभी सोचता था, क्या होगा। फिर कहता था, माँ, गाँव के जमींदार यदि मानें तो समझूँगा यह अवस्था सत्य है। और सचमुच वे भी आप ही आने लगे और बातचीत करने लगे।

"कैसी अवस्था व्यतीत हुई है ! थोड़े ही कारण से एकदम भगवान् की उद्दीपना होती थी। मैंने सुन्दरी की पूजा की, चौदह वर्ष की लड़की थी। देखा साक्षात् माँ जगदम्बा ! रुपये देकर मैंने प्रणाम किया।

"रामलीला देखने के लिए गया तो सीता, राम, लक्ष्मण, हनुमान,

बिभीषण, सभी को साक्षात् प्रत्यक्ष देखा। तब जो जो बने थे उनकी पूजा करने लगा।

"कुमारी कन्याओं को बुलाकार उनकी पूजा करता,—देखता साक्षात् माँ जगदम्बा।

"एक दिन बकुलवृक्ष के तले देखा, नीला वस्त्र पहने हुए एक लड़की खड़ी है। वह वेश्या थी, पर मेरे मन में एकदम सीता की उद्दीपना हो गई। उस कन्या को बिलकुल भूल गया और देखा साक्षात् सीता देवी लङ्का से उद्धार पाकर राम के पास जा रही हैं। बहुत देर तक बाह्य-संज्ञाहीन हो समाधि अवस्था में रहा।

"और एक दिन कलकत्ते में किले के मैदान में घूमने के लिए गया था। उस दिन बेलून (हवाई जहाज़) उड़नेवाला था। बहुत से लोगों की भीड़ थी। अचानक एक अंग्रेज बालक की ओर दृष्टि गई, वह पेड़ के सहारे त्रिभङ्ग होकर खड़ा था। श्रीकृष्ण की उद्दीपना हो समाधि हो गई।

"शिऊड़ गाँव में कई चरवाहों को भोजन कराया। सब को हाथ में मैंने जलपान की सामग्री दी। देखा, साक्षात् ब्रज के ग्वालबाल! उनसे जलपान लेकर मैं भी खाने लगा।

"प्रायः होश न रहता था। मथुर बाबू ने मुझे ले जाकर जानबाजार के मकान में कुछ दिन रखा। मैं देखने लगा, साक्षात् माँ की दासी हो गया हूँ। घर की औरतें बिलकुल शरमाती नहीं, जैसे छोटे

छोटे बच्चों को देख कोई भी स्त्री लज्जा नहीं करती। रात को बाबू की कन्या को जमाई के पास पहुँचाने जाता था।

"अब भी सामान्य उद्दीपना से ही भाव हो जाता है। राखाल जप करते समय ओठ हिलाता था। मैं उसे देखकर स्थिर नहीं रह सकता था, एकदम ईश्वर की उद्दीपना होती और विह्वल हो जाता।"

श्रीरामकृष्ण अपने प्रकृति-भाव की कथाएँ और भी कहने लगे। बोले, मैंने एक कीर्तनियाँ को स्त्री-कीर्तनियाँ के ढंग दिखलाये थे। उसने कहा, 'आप बिलकुल ठीक करते हैं। आपने यह सब कैसे सीखा?' यह कहकर आप स्त्री-कीर्तनियाँ के ढंग का अनुकरण कर दिखलाने लगे। कोई भी अपनी हँसी न रोक सका।

(३)

श्रीरामकृष्ण 'अहेतुक कृपा-सिन्धु'। गुरुकृपा से मुक्ति।

भोजन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण थोड़ा विश्राम कर रहे हैं। गाढ़ी नींद नहीं, तन्द्रा सी है। श्रीयुत मणिलाल मल्लिक ने आकर प्रणाम किया और आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण अब भी लेटे हैं। मणिलाल बीच बीच में बातें करते हैं। श्रीरामकृष्ण अर्धनिद्रित अर्धजाग्रत अवस्था में हैं, वे किसी किसी बात का उत्तर दे देते हैं।

मणिलाल—शिवनाथ नित्यगोपाल की प्रशंसा करते हैं। कहते हैं, उनकी अच्छी अवस्था है।

श्रीरामकृष्ण अभी पूरी तरह से नहीं जागे। वे पूछते हैं, 'हाजरा को वे लोग क्या कहते हैं?'

श्रीरामकृष्ण उठ बैठे। मणिलाल से भवनाथ की भक्ति के बारे में पूछ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—अहा, उसका भाव कैसा सुन्दर है। गाना गाते गाते आँखें आँसुओं से भर जाती हैं। हरीश को देखते ही उसे भाव हो गया। कहता है, वे लोग अच्छे हैं। हरीश घर छोड़ यहाँ कभी-कभी रहता है न, इसीलिए।

मास्टर से प्रश्न कर रहे हैं, 'अच्छा, भक्ति का कारण क्या है? भवनाथ आदि बालकों की क्यों उद्दीपना होती है?' मास्टर चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि मनुष्य बाहर से देखने में सब एक ही तरह के होते हैं। पर किसी किसी में खोए का पूर भरा है। पकवान तो कई प्रकार के हो सकते हैं। उनमें उरद का पूर भी रहता है और खोए का भी, पर देखने में सब एक से हैं। भगवान् को जानने की इच्छा, उन पर प्रेम और भक्ति, इसी का नाम खोए का पूर है।

अब आप भक्तों को अभय देते हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—कोई सोचता है कि मुझे ज्ञान भक्ति न होगी, मैं शायद बद्धजीव हूँ। श्रीगुरु की कृपा होने पर कोई भय नहीं है। बकरियों के एक झुण्ड में बाघिन पड़ी थी। कूदते समय बाघिन को बच्चा पैदा हो गया। बाघिन तो मर गई, पर वह बच्चा बकरियों के

साथ पलने लगा। बकरियाँ घास खातीं तो वह भी घास खाता था। बकरियाँ 'मैं मैं' करतीं तो वह भी करता। धीरे धीरे वह बचा बड़ा हो गया। एक दिन इन बकरियों के झुण्ड पर एक दूसरा बाघ झपटा। वह उस घास खानेवाले बाघ को देखकर आश्चर्य में पड़ गया। दौड़कर उसने उसे पकड़ा तो वह 'मैं मैं' कर चिल्लाने लगा। उसे घसीटकर वह जल के पास ले गया और बोला, 'देख, जल में तू अपना मुँह देख। देख, मेरे ही समान तू भी है, और ले यह थोड़ा सा मांस है, इसे खा ले।' यह कहकर वह उसे बलपूर्वक खिलाने लगा। पर वह किसी तरह खाने को राजी न हुआ, 'मैं मैं' चिल्लाता ही रहा। अन्त में रक्त का स्वाद पाकर वह खाने लगा। तब उस नये बाघ ने कहा, अब तूने समझा कि जो मैं हूँ, वही तू भी है, अब आ, मेरे साथ जंगल को चल।'

"इसीलिए गुरु की कृपा होने पर फिर कोई भय नहीं।

"वे बतला देंगे, तुम कौन हो, तुम्हारा स्वरूप क्या है। थोड़ा साधन करने पर गुरु सब बातें साफ साफ समझा देते हैं। तब मनुष्य स्वयं समझ सकता है, क्या सत् है, क्या असत्। ईश्वर ही सत्य और यह संसार अनित्य है।

"एक धीवर किसी दूसरे के बाग में रात के समय चुराकर मछलियाँ पकड़ रहा था। मालिक को इसकी टोह लग गई और दूसरे लोगों की सहायता से उसने उसे घेर लिया। मसाल जलाकर वे चोर को खोजने लगे। इधर वह धीवर शरीर में कुछ भस्म लगाए, एक पेड़ के नीचे साधु बनकर बैठ गया। उन लोगों ने अनेक ढूँढ़-तलाश करने पर भी केवल भभूत रमाए एक ध्यानमग्न साधु के सिवाय और किसी

को न पाया। दूसरे दिन गाँव भर में खबर फैल गई कि अमुक के बाग में एक बड़े महात्मा आए हैं। फिर क्या था, सब लोग फल, फूल, मिठाई आदि लेकर साधु के दर्शन को आए। बहुत से रुपये-पैसे भी साधु के सामने पड़ने लगे। धींवर ने विचारा, आश्चर्य की बात है कि मैं सच्चा साधु नहीं हूँ, फिर भी मेरे ऊपर लोगों की इतनी भक्ति है। इसलिए यदि मैं हृदय से साधु हो जाऊँ तो अवश्य ही भगवान् मुझे मिलेंगे, इसमें सन्देह नहीं।

"कपट साधन से ही उसे इतना ज्ञान हुआ, सत्य साधन होने पर तो कोई बात ही नहीं। क्या सत्य है, क्या असत्य तुम समझ सकोगे। ईश्वर ही सत्य है और सारा संसार अनित्य।"

एक भक्त चिन्ता कर रहे हैं, क्या संसार अनित्य है? धींवर तो संसार त्याग कर चला गया। फिर जो संसार में हैं उनका क्या होगा? उन लोगों को भी क्या त्याग करना होगा? श्रीरामकृष्ण अहेतुक कृपासिन्धु हैं, इसलिए कहते हैं, यदि किसी आफिस के कर्मचारी को जेल जाना पड़े तो वह जेल में सजा काटेगा सही, पर जब जेल से मुक्त हो जाएगा, तब क्या वह रास्ते में नाचता फिरेगा? वह फिर किसी आफिस की नौकरी ढूँढ़ लेगा, वही पुराना काम करता रहेगा। इसी तरह गुरु की कृपा से ज्ञानलाभ होने पर मनुष्य संसार में भी जीवन्मुक्त होकर रह सकता है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने सांसारिक मनुष्यों को अभय प्रदान किया।

(४)

निराकारवाद। विश्वास ही सब कुछ है। सतीत्व धर्म।

मणिलाल (श्रीरामकृष्ण से)—पूजन के समय उन्हें किस जगह ध्यान करेंगे ?

श्रीरामकृष्ण—हृदय तो खूब प्रसिद्ध स्थान है। वहीं उनका ध्यान करना।

मणिलाल निराकारवादी ब्राह्म हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें लक्ष्य कर कहते हैं, कबीर कहते थे,

निर्गुण तो है पिता हमारा और सगुण महतारी।
काकों निन्दौं काकों बन्दौं दोनों पल्ले भारी॥

"हलधारी दिन में साकार भाव में और रात को निराकार भाव में रहता था। बात यह है कि चाहे जिस भाव का आश्रय करो, विश्वास पक्का होना चाहिए। चाहे साकार में विश्वास करो चाहे निराकार में, परन्तु वह ठीक ठीक होना चाहिए।

"शम्भु मल्लिक बागबाजार से पैदल अपने बाग में आया करते थे। किसी ने कहा था, 'इतनी दूर है, गाड़ी से क्यों नहीं आते ? रास्ते में कोई घटना हो सकती है।' उस समय शम्भु ने गरम होकर कहा, 'क्या ! मैं भगवान् का नाम लेकर निकला हूँ, फिर मुझे विपत्ति !'

"विश्वास से ही सब कुछ होता है। मैं कहता था यदि अमुक से भेंट हो जाय तो समझूँ कि मेरी यह अवस्था सत्य है, या यदि अमुक खजाञ्ची मेरे साथ बात करे तो। लेकिन जो मन में आता है वही हो जाता है।"

मास्टर ने अंग्रेजी का न्याय-शास्त्र पढ़ा था। उसमें लिखा है

कि सबेरे के स्वप्न का सत्य होना लोगों के कुसंस्कार की ही उपज है। इसलिए उन्होंने पूछा, "अच्छा, कभी ऐसा भी हुआ है कि कोई घटना नहीं हुई ?"

श्रीरामकृष्ण—"नहीं, उस समय सब हो जाता था। ईश्वर का नाम लेकर जो विश्वास करता था, वही हो जाता था। (मणिलाल से) पर इसमें एक बात है। सरल और उदार हुए बिना यह विश्वास नहीं होता। जिसके शरीर की हड्डियाँ दिखाई देती हैं, जिसकी आँखें छोटी और घुसी हुई हैं, जो ऐंचाताना है, उसे सहज में विश्वास नहीं होता। इसी प्रकार और भी कई लक्षण हैं।"

शाम हो गई। दासी घर में धूनी दे गई। मणिलाल आदि के चले जाने के बाद दो एक भक्त अभी बैठे हैं। घर शान्त और धूने से सुवासित है। श्रीरामकृष्ण अपनी खटिया पर बैठे जगन्माता की चिन्ता कर रहे हैं। मास्टर और राखाल जमीन पर बैठे हैं।

थोड़ी देर बाद मथुर बाबू के घर की दासी भगवती ने आकर दूर से श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। उन्होंने उसे बैठने के लिए कहा। भगवती बाबू की पुरानी दासी है। श्रीरामकृष्ण उसे बहुत दिनों से जानते हैं। पहले उसका स्वभाव अच्छा न था, पर श्रीरामकृष्ण दया के सागर, पतितपावन हैं, इसीलिए उससे पुरानी बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—अब तो तेरी उम्र बहुत हुई है। जो रुपये कमाये हैं उनसे साधु-वैष्णवों को खिलाती है कि नहीं ?

भगवती (मुसकराकर)—यह भला कैसे कहूँ ?

श्रीरामकृष्ण—काशी, वृन्दावन यह सब तो हो आई ?

भगवती (थोड़ा सकुचाती हुई)—कैसे बतलाऊँ ? एक घाट बनवा दिया है। उसमें पत्थर पर मेरा नाम लिखा है।

श्रीरामकृष्ण—ऐसी बात !

भगवती—हाँ, नाम लिखा है, 'श्रीमती भगवती दासी।'

श्रीरामकृष्ण (मुसकराकर)—बहुत अच्छा।

भगवती ने साहस पाकर श्रीरामकृष्ण के चरण छूकर प्रणाम किया।

बिच्छू के काटने से जैसे कोई चौंक उठता है और अस्थिर हो खड़ा हो जाता है, वैसे ही श्रीरामकृष्ण अधीर हो, 'गोविन्द' 'गोविन्द' उच्चारण करते हुए खड़े हो गये। घर के कोने में गंगाजल का एक मटका था—और अब भी है—हाँफते हाँफते, मानो घबराये हुए, उसी के पास गये और पैर के जिस स्थान को दासी ने छुआ था, उसे गंगा-जल से धोने लगे।

दो एक भक्त जो घर में थे, निर्वाक् हो एकटक यह दृश्य देख रहे थे। दासी जीवन्मृत की तरह बैठी थी। दयासिन्धु श्रीरामकृष्ण ने दासी से करुणा से सने हुए स्वर से कहा, "तुम लोग ऐसे ही प्रणाम करना।" यह कहकर फिर आसन पर बैठे दासी को बहलाने की चेष्टा करते रहे। उन्होंने कहा, "कुछ गाते हैं, सुन।" यह कहकर उसे गाना सुनाने लगे।

परिच्छेद २१

ईश्वरदर्शन तथा साधना

(१)

पूर्वकथा—देवेन्द्र ठाकुर, दीन मुखर्जी, और कुँवरसिंह ।

आज अमावस्या, मंगलवार का दिन है, ५ जून, १८८३ ई० । श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर में हैं । भक्त-समागम रविवार को विशेष होता है, आज अधिक लोग नहीं हैं । राखाल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं । हाजरा भी हैं, श्रीरामकृष्ण के कमरे के सामनेवाले बरामदे में अपना आसन लगाया है । मास्टर गत रविवार से यहाँ हैं ।

दोपहर को भोजन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण अपने प्रेमोन्माद की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—कैसी हालत बीत चुकी है । यहाँ भोजन न करता था, बराहनगर या दक्षिणेश्वर या आरियादह में किसी ब्राह्मण के घर चला जाता, और जाता भी देर में था । जाकर बैठ जाता था, पर बोलता कुछ नहीं । घर के लोग पूछते तो केवल कहता, मैं यहाँ खाऊँगा । और कोई बात नहीं है ।

"एक दिन हठ कर बैठा, देवेन्द्र ठाकुर के घर जाऊँगा । मथुर बाबू से कहा, देवेन्द्र ईश्वर का नाम लेते हैं, उनको देखना चाहता हूँ, मुझे ले चलोगे ? मथुर बाबू को अपनी मान-मर्यादा का बड़ा अभिमान

था, वे अपनी गरज से किसी के मकान पर क्यों जाने लगे ? आगापीछा करने लगे। बाद को बोले, 'अच्छा, देवेन्द्र और हम एक साथ पढ़ चुके हैं, चलिए, आपको ले चलेंगे।'

"एक दिन सुना कि दीन मुखर्जी नाम का एक भला आदमी बागबाजार के पुल के पास रहता है। भक्त है। मथुर बाबू को पकडा, दीन मुखर्जी के यहाँ जाऊँगा। मथुर बाबू क्या करते, गाड़ी पर मुझे ले गए। छोटा सा मकान और इधर एक बड़ी भारी गाड़ी पर एक सेठ आया है; वह भी शरमा गया और हम भी। फिर उसके लड़के का जनेऊ होनेवाला था। कहाँ बैठावें ! हम लोग पास के घर में जाने लगे, तो उसने कहा, 'वहाँ न जाइए, उस घर में औरतें हैं।' बड़ा असमंजस था। मथुर बाबू लौटते समय बोले, 'बाबा, तुम्हारी बात अब कभी न मानूँगा।' मैं हँसने लगा।

"'कैसी अनोखी अवस्था थी, कुँवरसिंह ने साधुओं को भोजन कराना चाहा, मुझे भी न्योता दिया। जाकर देखा बहुत से साधु आए हैं। मेरे बैठने पर साधुओं में से कोई-कोई मेरा परिचय पूछने लगे 'आप गिरी हैं या पुरी ?' पर ज्योंही उन्होंने पूछा, त्योंही मैं अलग जाकर बैठा। सोचा कि इतनी खबर काहे की ? बाद को ज्योंही पत्तल बिछाकर भोजन के लिए बैठाया किसी के कुछ कहने के पहले ही मैंने खाना शुरू कर दिया। साधुओं में से किसी-किसी को कहते सुना, 'अरे यह क्या !"

(२)

साधु और अवतार में अन्तर।

समय पाँच बजे का है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के बरामदे की सीढ़ी पर बैठे हैं। राखाल, हाजरा और मास्टर पास बैठे हैं।

हाजरा का भाव है, 'सोऽहं—मैं ही ब्रह्म हूँ।'

श्रीरामकृष्ण (हाजरा से)—हाँ, यह सोचने से सब गड़बड़ मिट जाता है;—वे ही आस्तिक हैं, वे ही नास्तिक; वे ही भले हैं, वे ही बुरे; वे ही नित्य वस्तु हैं, वे ही अनित्य जगत्; जाग्रति और निद्रा उन्हीं की अवस्थाएँ हैं, फिर वे इन सारी आवस्थाओं से परे भी हैं।

"एक किसान को बुढ़ापे में एक लड़का हुआ था। लड़के को वह बहुत यत्न से पालता था। धीरे धीरे लड़का बड़ा हुआ। एक दिन जब किसान खेत में काम कर रहा था, किसी ने आकर उसे खबर दी कि तुम्हारा लड़का बहुत बीमार है—अब-तब हो रहा है। उसने घर में आकर देखा, लड़का मर गया है। स्त्री खूब रो रही है; पर किसान की आँखों में आँसू तक नहीं। उसकी स्त्री अपनी पड़ोसिनियों के पास इसलिए और भी शोक करने लगी कि ऐसा लड़का चला गया, पर इनकी आँखों में आँसू का नाम नहीं! बड़ी देर बाद किसान ने अपनी स्त्री को पुकार कर कहा, 'मैं क्यों नहीं रोता, जानती हो? मैंने कल स्वप्न में देखा कि राजा हो गया हूँ और सात लड़कों का बाप बना हूँ। स्वप्न में ही देखा कि वे लड़के रूप और गुण में अच्छे हैं। क्रमशः वे बड़े हुए और विद्या तथा धर्म उपार्जन करने लगे। इतने में ही मेरी नींद खुल गई। अब सोच रहा हूँ कि तुम्हारे इस एक लड़के के लिए रोऊँ कि अपने उन सात लड़कों के लिए? ज्ञानियों के मत से स्वप्न कि अवस्था जैसी सत्य है, जाग्रत् अवस्था भी वैसी ही सत्य है।

"ईश्वर ही कर्ता हैं, उन्हीं की इच्छा से सब कुछ हो रहा है।"

हाजरा—पर यह समझना बड़ा कठिन है। भू-कैलास के साधू को कितना कष्ट दिया गया, जो एक तरह से उनकी मृत्यु का कारण हुआ। वे समाधि की हालत में मिले थे। होश में लाने के लिए लोगों ने उन्हें कभी जमीन में गाड़ा, कभी जल में डुबोया और कभी उनका शरीर दाग दिया। इस तरह उन्हें चैतन्य कराया। इन यंत्रणाओं के कारण उनका शरीर छूट गया। लोगों ने उन्हें कष्ट भी दिया और इधर ईश्वर की इच्छा से उनकी मृत्यु भी हुई।

श्रीरामकृष्ण—जिसका जैसा कर्म है, उसका फल वह पायेगा। किन्तु ईश्वर की इच्छा से उन साधु का शरीर-त्याग हुआ। वैद्य बोतल के अन्दर मकरध्वज तैयार करते हैं। उसके चारों ओर मिट्टी लीपकर वे उसे आग में रख देते हैं। बोतल के अन्दर का सोना आग की गरमी से और कई चीज़ों के साथ मिलकर मकरध्वज बन जाता है। तब वैद्य बोतल को उठाकर उसे धीरे धीरे तोड़ता है और उससे मकरध्वज निकालकर रख लेता है। उस समय बोतल रहे चाहे नष्ट हो जाय, उससे क्या? उसी तरह लोग सोचते हैं कि साधु मार डाले गये, पर शायद उनकी चीज़ बन चुकी होगी। भगवान् के लाभ करने के पश्चात् शरीर रहे भी तो क्या, और जाय तो भी क्या?

"भू-कैलास के वे साधु समाधिस्थ थे। समाधि अनेक प्रकार की होती है। हृषीकेश के साधु के कथन से मेरी हालत मिल गई थी। कभी शरीर में चींटी की तरह वायु चलती हुई जान पड़ती थी, कभी बड़े वेग के साथ, जैसे बन्दर एक डाल से दूसरी डाल पर कूदते हैं; कभी

मछली की तरह गति थी। जिसको हो वही जान सकता है। जगत् का ख्याल जाता रहता है। मन के कुछ उतरने पर मैं कहता था, माँ, मुझे अच्छा कर दो, मैं बातें करना चाहता हूँ।

" ईश्वर-कोटि के, जैसे अवतार आदि, न होने पर मनुष्य समाधि से नहीं लौट सकता। जीव-कोटि के कोई कोई साधना के बल से समाधिस्थ होते तो हैं; पर वे फिर नहीं लौटते। जब ईश्वर स्वयं मनुष्य होकर आते हैं, अवतार रूप में आते हैं और जीवों की मुक्ति की चाभी उनके हाथ में रहती है, तब वे समाधि के बाद लौटते हैं—लोगों की भलाई के लिए।"

मास्टर (मन ही मन)—क्या श्रीरामकृष्ण के हाथ में जीवों की मुक्ति की चाभी है ?

हाजरा—ईश्वर को सन्तुष्ट करने से सब कुछ हुआ। अवतार हों या न हों।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—हाँ, हाँ। विष्णुपुर में रजिष्टरी का बड़ा दफ्तर है, वहाँ रजिष्टरी हो जाने पर फिर 'गोघाट' में कोई बखेड़ा नहीं होता।

शाम हुई। मन्दिर में आरती हो रही है। बारह शिव-मन्दिरों, तथा श्रीराधाकान्त जी के और माता भवतारिणी के मन्दिरों में शंख घण्टा आदि मंगल-वाद्य बज रहे हैं। आरती समाप्त होने के कुछ पश्चात् श्रीरामकृष्ण अपने घर से दक्षिण के बरामदे में आ बैठे। चारों ओर घना अन्धकार है, केवल मन्दिर में स्थान स्थान पर दीपक जल रहे

हैं। गंगा जी के वक्ष पर आकाश की काली छाया पड़ी है। आज अमावस्या है। श्रीरामकृष्ण सहज ही भावमय हैं, आज भाव और भी गम्भीर हो रहा है; बीच बीच में प्रणव उच्चारण कर रहे हैं और देवी का नाम ले रहे हैं। ग्रीष्म का मौसम, और घर के भीतर गरमी बहुत है। इसीलिए बरामदे में आए हैं। किसी भक्त ने एक कीमती चटाई दी है। वही बरामदे में बिछाई गई है। श्रीरामकृष्ण को सर्वदा माँ का ध्यान लगा रहता है। लेटे हुए आप मणि से धीरे धीरे बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—देखो, ईश्वर के दर्शन होते हैं। अमुक को दर्शन मिले हैं, लेकिन किसी से कहना मत। तुम्हें ईश्वर का रूप पसन्द है या निराकार-चिन्ता।

मणि—इस समय तो निराकार-चिन्ता कुछ अच्छी लगती है, पर यह भी कुछ कुछ समझ में आया है कि वे ही इन अनेक रूपों में विराजते हैं।

श्रीरामकृष्ण—देखो, मुझे गाड़ी पर बेलघरिया में मोती झील की झील को ले चलोगे? वहाँ चारा फेंक दो, मछलियाँ आकर उसे खाने लगेंगी। अहा! मछलियों को खेलती हुई देखकर क्या आनन्द होता है! तुम्हें उद्दीपना होगी कि मानो सच्चिदानन्दरूपी सागर में आत्मारूपी मछली खेल रही है। उसी तरह लम्बे चौड़े मैदान में खड़े होने से ईश्वरीय भाव आ जाता है, जैसे किसी हण्डी में रखी हुई मछली तालाब को पहुँच गई हो।

"उनके दर्शनों के लिए साधना चाहिए। मुझे कठोर साधनाएँ करनी पड़ीं। बेल के नीचे तरह तरह की साधनाएँ कर चुका। पेड़ के

नीचे पड़ा रहता था,—यह कहते हुए कि माँ, दर्शन दो। रोते रोते आँसुओं की झड़ी लग जाती थी।

मणि—जब आप ही इतनी साधनाएँ कर चुके तब दूसरे लोग क्या एक ही क्षण में सब कर लेंगे? मकान के चारों ओर उँगली फेर देने ही से क्या दीवाल बन जायगी?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—अमृत कहता है, एक आदमी के आग जलाने पर दस आदमी उसकी गरमी से लाभ उठाते हैं। एक बात और है,—नित्य को पहुँचकर लीला में रहना अच्छा है।

मणि—आपने तो कहा है कि लीला विलास के लिए है।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, लीला भी सत्य है। और देखो, जब यहाँ आओगे तब अपने साथ थोड़ा कुछ लेते आना। खुद नहीं कहना चाहिए, इससे अभिमान होता है। अधर सेन से भी कहता हूँ एक पैसे का कुछ लेकर आना। भवनाथ से कहता हूँ कि एक पैसे का पान लाना। भवनाथ की भक्ति कैसी है, देखी है तुमने? भवनाथ और नरेन्द्र मानो स्त्री और पुरुष हैं। भवनाथ नरेन्द्र का अनुगत है। नरेन्द्र को गाड़ी पर ले आना। कुछ खाने की चीज़ लाना। इससे बहुत भला होता है।

ज्ञानपथ और नास्तिकता।

"ज्ञान और भक्ति; दोनों ही मार्ग हैं, भक्ति-मार्ग में आचार कुछ अधिक पालन करना पड़ता है। ज्ञान-मार्ग में यदि कोई अनाचार भी

करे तो वह मिट जाता है। खूब आग जलाकर एक केले का पेड़ भी झोंक दो, तो वह भी भस्म हो जाता है।

" ज्ञानी का मार्ग विचार-मार्ग है। विचार करते करते कभी कभी नास्तिकपन भी आ सकता है। पर भगवान् को जानने के लिए भक्त की जब हार्दिक इच्छा होती है, तब नास्तिकता आने पर भी वह ईश्वर-चिन्ता नहीं त्यागता। जिसके बाप-दादे किसानी करते आ रहे हैं, अतिवृष्टि और अनावृष्टि के कारण किसी साल फसल न होने पर भी वह खेती करता ही रहता है। "

श्रीरामकृष्ण लेटे लेटे बातें कर रहे हैं। बीच में मणि से बोले, मेरा पैर कुछ दुखता है, ज़रा हाथ फेर दो।

कृपासिन्धु गुरुदेव के कमल-चरणों की सेवा करते हुए, मणि उनके श्रीमुख से वे अपूर्व तत्त्व सुन रहे थे।

(२)

श्रीरामकृष्ण की समाधि। भक्तों के द्वारा श्रीचरण पूजा।

श्रीरामकृष्ण आज सन्ध्या-आरती के बाद दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में देवी की प्रतिमा के सम्मुख खड़े होकर दर्शन करते और चमर लेकर कुछ देर डुलाते रहे।

ग्रीष्म ऋतु है। ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया तिथि है। शुक्रवार, तारीख ८ जून, १८८३ ई०। आज शाम को श्रीयुत राम, केदार चटर्जी, और तारक श्रीरामकृष्ण के लिए फूल और मिठाई लिए कलकत्ते से गाड़ी पर आए हैं।

केदार की उम्र कोई पचास वर्ष की होगी। बड़े भक्त हैं। ईश्वर की चर्चा सुनते ही उनके नेत्र अश्रुपूर्ण हो जाते हैं। पहले ब्राह्म-समाज में आते जाते थे। फिर कर्ताभजा, नवरसिक आदि अनेक सम्प्रदायों से मिलकर अन्त में उन्होंने श्रीरामकृष्ण के चरणों में शरण ली है। सरकारी नौकरी में हिसाबनवीस का काम करते हैं। उनका घर काँचड़ापाडा के निकट हालीशहर गाँव में है।

तारक की उम्र २४ वर्ष की होगी। विवाह के कुछ दिन बाद उनकी स्त्री की मृत्यु हो गई। उनका मकान बारासात गाँव में है। उनके पिता एक उच्च कोटि के साधक थे, श्रीरामकृष्ण के दर्शन उन्होंने अनेक बार किए थे। तारक की माता की मृत्यु होने पर उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह कर लिया था।

तारक राम के मकान पर सर्वदा आते जाते रहते हैं। उनके और नित्यगोपाल के साथ वे प्रायः श्रीरामकृष्ण देव के दर्शन करने के लिए आते हैं। इस समय भी किसी आफिस में काम करते हैं। लेकिन सर्वदा विरक्ति का भाव है।

श्रीरामकृष्ण ने काली-मन्दिर से निकलकर चबूतरे पर भूमिष्ठ हो माता को प्रणाम किया। उन्होंने देखा राम, मास्टर, केदार, तारक आदि भक्त वहाँ खड़े हैं।

तारक को देखकर आप बड़े प्रसन्न हुए और उनकी ठुड्डी छूकर आदर करने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर अपने कमरे में जमीन पर बैठे हैं।

उनके दोनों पैर फैले हैं। राम और केदार ने उन चरण-कमलों को पुष्प-मालाओं से शोभित किया है। श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हैं।

केदार का भाव नवरसिक समाज का है। वे श्रीरामकृष्ण के चरणों के अँगूठों को पकड़े हुए हैं। उनकी धारणा है कि इससे शक्ति का सञ्चार होगा। श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हो कह रहे हैं, 'माँ! अँगूठों को पकड़कर वह मेरा क्या कर सकेगा?'

केदार विनीत भाव से हाथ जोड़े बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केदार से भावावेश में)—कामिनी और कांचन पर तुम्हारा मन खिंचता है। मुँह से कहने से क्या होगा कि मेरा मन उधर नहीं है।

"आगे बढ़ चलो। चन्दन की लकड़ी के आगे और भी बहुत कुछ है, चाँदी की खान—सोने की खान—फिर हीरे और माणिक, थोड़ी सी उद्दीपना हुई है, इससे यह मत सोचो कि सब कुछ हो गया।"

श्रीरामकृष्ण फिर अपनी माता से बातें कर रहे हैं। कहते हैं 'माँ! इसे हटा दो।'

केदार का कण्ठ सूख गया है। भयभीत हो राम से कहते हैं, वे यह क्या कह रहे हैं?

राखाल को देखकर श्रीरामकृष्ण फिर भावाविष्ट हो रहे हैं। उन्हें पुकारकर कहते हैं, 'मैं यहाँ बहुत दिनों से आया हूँ। तू कब आया?'

क्या श्रीरामकृष्ण इशारे से कहते हैं कि वे भगवान् के अवतार हैं और राखाल उनके एक अन्तरङ्ग पार्षद!

परिच्छेद २२

मणिरामपुर तथा बलघर के भक्तों के साथ

(१)

श्रीमुख-कथित चरितामृत ।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में कभी खड़े होकर, कभी बैठकर भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। आज रविवार, १० जून १८८३ ई०, ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी । दिन के दस बजे का समय होगा । राखाल, मास्टर, लाटू, किशोरी, रामलाल, हाजरा आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित हैं।

श्रीरामकृष्ण स्वयं अपने चरित्र का वर्णन कर अपनी पूर्व कथा सुना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—उस अंचल में (कामारपुकुर में) बचपन में मुझे स्त्री-पुरुष सभी चाहते थे। सभी मेरा गाना सुनते थे, फिर मैं लोगों की नकल उतार सकता था—लोग मेरा नकल उतारना देखते थे और सुनते थे। उनके घर की बहू-बेटियाँ मेरे लिए खाने की चीज़ें रख देती थीं। कोई मुझ पर अविश्वास न करता था। सभी घर के लड़का जैसा मानते थे।

"परन्तु सुख पर लट्टू था। अच्छा सुखी घर देखकर आया जाया

करता था। जिस घर पर दुःख-विपत्ति देखता था, वहाँ से भाग जाता था।

"लड़कों में किसी को भला देखने पर उससे प्रेम करता था। और किसी किसी के साथ गहरी मित्रता जोड़ता था, परन्तु अब वे घोर संसारी बन गए हैं। अब उनमें से कोई कोई यहाँ पर आते हैं, आकर कहते हैं, 'वाह खूब! पाठशाला में भी जैसा देखा यहाँ पर भी वैसा ही देख रहे हैं।'

"पाठशाला में हिसाब देखकर सिर चकराता था, परन्तु चित्र अच्छा खींच सकता था और अच्छी अच्छी मूर्तियाँ गढ़ सकता था।

सदावर्त, रामायण और महाभारत से प्रेम।

"जहाँ भी सदावर्त, धर्मशाला देखता था वहीं पर जाता था—जाकर बहुत देर तक खड़ा खड़ा देखता रहता था।

"कहीं पर रामायण या भागवत की कथा होने पर बैठकर सुनता था, परन्तु यदि कोई मुँह हाथ बनाकर पढ़ता, तो उसकी नकल उतारता था और लोगों को सुनाता था।

"औरतों की चाल-चलन खूब समझ सकता था। उनकी बातें, स्वर आदि की नकल उतारता था।

"बदचलन औरतों को पहचान सकता था। बदचलन विधवा के सिर पर सीधी माँग और बड़ी लगन से शरीर पर तेल की मालिश, लज्जा कम, बैठने का ढंग ही दूसरा होता है।

"रहने दो विषयी लोगों की बातें!"

रामलाल का गाना गाने के लिए कह रहे हैं। रामलाल गा रहे हैं— (भावार्थ)—

(१) "रणांगण में यह कौन बादल जैसा रंगवाली नाच रही है, मानो रुधिर-सरोवर में नवीन नलिनी तैर रही हो।"

अब रामलाल रावण-वध के बाद मन्दोदरी के विलाप का गा... गा रहे हैं। (भावार्थ)—

(२) "हे कान्त! अबला के प्राणप्रिय, यह तुमने क्या किया! प्राणों का अन्त हुए बिना तो अब शान्ति नहीं मिलती!"

आखिर का गाना सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण आँसू बहा रहे हैं और कह रहे हैं,—"मैंने झाऊतले में शौच जाते समय सुना था, नाव के माँझी नाव में वही गाना गा रहे हैं। वहाँ जब तक बैठा रहा, केवल रो रहा था। लोग पकड़कर मुझे कमरे में लाए थे।"

गाना—(भावार्थ)—(३) "सुना है राम तारक ब्रह्म हैं, जटाधारी राम मनुष्य नहीं हैं। हे पिताजी, क्या वंश का नाश करने के लिए उनकी सीता को चुराया है?"

अक्रूर श्रीकृष्ण को रथ पर बैठाकर मथुरा ले जा रहे हैं। यह देख गोपियों ने रथचक्रों को जकड़कर पकड़ लिया है और उनमें से कोई कोई रथचक्र के सामने लेट गई हैं। वे अक्रूर पर दोषारोपण कर रही हैं। वे नहीं जानतीं कि श्रीकृष्ण अपनी ही इच्छा से जा रहे हैं।

गीत (भावार्थ)—(४) "रथ-चक्र को न पकड़ो, न पकड़ो। क्या

रथ चक्र से चलता है ? जिस चक्र के चक्री हरि हैं, उनके चक्र से जगत् चलता है।"

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—अहा, गोपियों का कितना यह प्रेम ! श्रीमती राधिका ने अपने हाथ से श्रीकृष्ण का चित्र अंकित किया है, परन्तु पैर नहीं बनाया, कहीं वे वृन्दावन से मथुरा न भाग जायँ !

"मैं इन सब गानों को बचपन में खूब गाता था। एक एक नाटक सारा का सारा गा सकता था। कोई कहता था कि मैं कालीय-दमन नाटक दल में था।"

एक भक्त नई चद्दर ओढ़कर आए हैं। राखाल का बालक जैसा स्वभाव है—कैंची लाकर उनकी चद्दर के किनारे के सूतों को काटने जा रहा था। श्रीरामकृष्ण बोले, "क्यों काटता है ? रहने दे। शाल की तरह अच्छा दिखाई देता है। हाँ जी, इसका क्या दाम है ?" उन दिनों बिलायती चद्दरों का दाम कम था। एक भक्त ने कहा, "एक रुपया छः आना जोड़ी।" श्रीरामकृष्ण बोले, "क्या कहते हो ? जोड़ी ! एक रुपया छः आना जोड़ी !"

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण भक्त से कह रहे हैं, "जाओ, गंगा-स्नान कर लो ! अरे, इन्हें तेल दो तो थोड़ा !"

स्नान के बाद जब वे लौटे तो श्रीरामकृष्ण ने ताक पर से एक आम लेकर उन्हें दिया। कहा, "यह आम इन्हें देता हूँ। तीन डिग्रियाँ पास हैं ये ! अच्छा, तुम्हारे भाई अब कैसे हैं ?"

भक्त—हाँ, उनकी दवा ठीक हो रही है, असर ठीक हो रहा है, अब चलें तो है बात!

श्रीरामकृष्ण—उसके लिए किसी नौकरी की व्यवस्था कर सकते हो? बुरा क्या है, तुम मुखिया बनोगे।

भक्त—स्वस्थ होने पर सभी सुविधाएँ हो जायँगी।

(२)

साधन-भजन करो और व्याकुल बनो।

श्रीरामकृष्ण भोजन के उपरान्त छोटी खटिया पर ज़रा बैठे हैं—अभी विश्राम करने का समय नहीं हुआ था। भक्तों का समागम होने लगा। पहले मणिरामपुर से भक्तों का एक दल आकर उपस्थित हुआ। एक व्यक्ति पी. डब्ल्यू. डी. में काम करते थे। इस समय पेन्शन पाते हैं। एक भक्त उन्हें लेकर आए हैं। धीरे धीरे बेलघर से भक्तों का एक दल आया। श्री मणि मल्लिक आदि भक्तगण भी धीरे धीरे आ पहुँचे। मणि-रामपुर के भक्तों ने कहा, "आपके विश्राम में विघ्न हुआ।"

श्रीरामकृष्ण बोले, "नहीं, नहीं, यह तो रजोगुण की बातें हैं कि वे अब सोएँगे।"

चाणक मणिरामपुर का नाम सुनकर श्रीरामकृष्ण को अपने बचपन के मित्र श्रीराम का स्मरण हुआ। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "श्रीराम की दूकान तुम्हारे वहीं पर है। श्रीराम मेरे साथ पाठशाला में पढ़ता था। थोड़े दिन हुए यहाँ पर आया था।"

मणिरामपुर के भक्तगण कह रहे हैं, "दया करके हमें ज़रा बता दीजिए कि किस उपाय से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।"

श्रीरामकृष्ण—ज़रा साधन-भजन करना होता है। 'दूध में मक्खन है' केवल कहने से ही नहीं मिलता, दूध से दही बनाकर मथन करने के बाद मक्खन उठाना पड़ता है; परन्तु बीच बीच में ज़रा निर्जन में रहना चाहिए। * कुछ दिन निर्जन में रहकर भक्ति प्राप्त करके उसके बाद फिर कहीं भी रहो। पैर में जूता पहनकर काँटेदार जंगल में भी आसानी से जाया जा सकता है।

"मुख्य बात है विश्वास। जैसा भाव वैसा लाभ। मूल है विश्वास। विश्वास हो जाने पर फिर भय नहीं होता।"

मणिरामपुर के भक्त—महाराज, गुरु क्या आवश्यक हैं?

श्रीरामकृष्ण—अनेकों के लिए आवश्यक हैं, ¶ परन्तु गुरुवाक्य में विश्वास करना पड़ता है। गुरु को ईश्वर मानना पड़ता है। इसीलिए वैष्णव भक्त कहते हैं,—गुरु-कृष्ण-वैष्णव।

"उनका नाम सदा ही लेना चाहिए। कलि में नाम का माहात्म्य है। प्राण अन्नगत है, इसीलिए योग नहीं होता। उनका नाम लेकर हथेली बजाने से पापरूपी पक्षी भाग जाते हैं।

"सत्संग सदा ही आवश्यक है। गंगाजी के जितने ही निकट

---

* योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।—गीता, ६।१०

¶ आचार्यवान् पुरुषो वेद—छान्दोग्य, ६।१४।२

जाओगे, उतनी ही ठण्डी हवा पाओगे। आग के जितने ही निकट जाओगे उतनी ही गर्मी होगी।

"सुस्ती करने से कुछ नहीं होगा। जिनकी सांसारिक विषय-भोग की इच्छा है, वे कहते हैं, 'होगा! कभी न कभी ईश्वर को प्राप्त कर लेंगे।'

"मैंने केशव सेन से कहा था, पुत्र को व्याकुल देखकर उसके पिता उसके बालिग होने के तीन वर्ष पहले ही उसका हिस्सा छोड़ देते हैं।

"माँ भोजन बना रही है, गोदी का बच्चा सो रहा है। माँ मुँह में चूसी दे गई है। जब चूसी छोड़ चीत्कार करके बच्चा रोता है, तब माँ हंडियाँ उतारकर बच्चे को गोदी में लेकर स्तन-पान कराती है। ये सब बातें मैंने केशव सेन से कही थीं।

"कहते हैं, कलियुग में एक दिन एक रात भर रोने से ईश्वर का दर्शन होता है। मन में अभिमान करो और कहो, 'तुमने मुझे पैदा किया है—दर्शन देना ही होगा!'

"गृहस्थी में रहो, अथवा कहीं भी रहो, ईश्वर मन को देखते हैं। विषय–बुद्धिवाला मन मानों भीगी दियासलाई है, चाहे जितना रगड़ो कभी नहीं जलेगी। एकलव्य ने मिट्टी के बने द्रोण अर्थात् अपने गुरु की मूर्ति को सामने रखकर बाण चलाना सीखा था।

"कदम बढ़ाओ,—लकड़हारे ने आगे बढ़कर देखा था, चन्दन की लकड़ी, चाँदी की खान, सोने की खान, और आगे बढ़कर देखा हीरा-मणि!

"जो लोग अज्ञानी हैं, वे मानो मिट्टी की दीवालवाले कमरे के भीतर हैं। भीतर भी रोशनी नहीं है और बाहर की किसी चीज़ को भी देख नहीं सकते! ज्ञान प्राप्त करके जो लोग संसार में रहते हैं वे मानो काँच के बने कमरे के भीतर हैं। भीतर रोशनी, बाहर भी रोशनी; भीतर की चीज़ों को भी देख सकते हैं और बाहर की चीज़ों को भी!

ब्रह्म और जगन्माता एक हैं।

"एक के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। वे परब्रह्म जब तक 'मैं-पन' को रखते हैं, तब तक दिखाते हैं कि वे आद्याशक्ति के रूप में सृष्टि, स्थिति व प्रलय कर रहे हैं।

"जो ब्रह्म हैं, वे ही आद्याशक्ति हैं। एक राजा ने कहा था कि उसे एक ही बात में ज्ञान देना होगा। योगी ने कहा, 'अच्छा, तुम एक ही बात में ज्ञान पाओगे।' थोड़ी देर बाद राजा के यहाँ अकस्मात् एक जादूगर आ पहुँचा। राजा ने देखा वह आकर सिर्फ दो उँगलियों को घुमा रहा है और कह रहा है, 'राजा, यह देख, यह देख।' राजा विस्मित होकर देख रहा है! जादूगर एक उँगली घुमाता हुआ कह रहा है,—'राजा, यह देख, यह देख।' अर्थात् ब्रह्म और आद्याशक्ति पहले पहल दो समझे जाते हैं, परन्तु ब्रह्मज्ञान होने पर फिर दो नहीं रह जाते! अभेद! एक! अद्वितीय! अद्वैतम्!"

(३)

माया तथा मुक्ति।

बेलघर से गोविन्द मुखोपाध्याय आदि भक्तगण आए हैं। श्रीराम-कृष्ण जिस दिन उनके मकान पर पधारे थे, उस दिन गायक का

" जागो, जागो जननि," यह गाना सुनकर समाधिस्थ हुए थे। गोविन्द उस गायक को भी लाए हैं। श्रीरामकृष्ण गायक को देख आनन्दित हुए हैं और कह रहे हैं, " तुम कुछ गाना गाओ। " गायक गा रहे हैं,—(भावार्थ)—

(१) " किसी का दोष नहीं है, माँ ! मैं अपने ही खोदे हुए तालाब के जल में डूबकर मर रहा हूँ। "

(२) " रे यम ! मुझे न छूना, मेरी ज़ात बिगड़ गई है। यदि पूछता है कि मेरी जात कैसी बिगड़ी तो सुन,—इत्यादि। "

(३) "जागो, जागो, जननि ! कितने ही दिनों से कुलकुण्डलिनी मूलाधार में सो रही है। माँ, अपने काम के लिए मस्तक में चलो, जहाँ पर सहस्र-दल-पद्म में परम शिव विराजमान हैं; षट्चक्र को भेदकर। हे चैतन्यरूपिणि ! मन के दुःख को मिटा दो। "

श्रीरामकृष्ण—इस गीत में षट्चक्र-भेद की बात है। ईश्वर बाहर भी हैं, अन्दर भी हैं। वे भीतर से मन में अनेक प्रकार की लहरें उत्पन्न कर रहे हैं। षट्चक्र का भेद होने पर माया का राज्य छोड़, जीवात्मा परमात्मा के साथ एक हो जाता है। इसी का नाम है ईश्वर-दर्शन।

" माया का रास्ता न छोड़ने पर ईश्वर का दर्शन नहीं होता। राम, लक्ष्मण और सीता एक साथ जा रहे हैं। सब से आगे राम, बीच में सीता और पीछे हैं लक्ष्मण। जिस प्रकार सीता के बीच में रहने से लक्ष्मण राम को नहीं देख सकते, उसी प्रकार बीच में माया के रहने से जीव

ईश्वर का दर्शन नहीं कर सकता। (मणि मल्लिक के प्रति) परन्तु ईश्वर की कृपा होने पर माया दरवाज़े से हट जाती है, जिस प्रकार दरवान लोग कहते हैं, 'साहब की आज्ञा हो तो उसे अन्दर जाने दूँ।' *

"दो मत हैं—वेदान्त मत और पुराण मत। वेदान्त मत में कहा है, 'यह संसार धोखे की टट्टी है' अर्थात् जगत् सभी भूल, स्वप्न की तरह है; परन्तु पुराण मत या भक्ति-शास्त्र कहता है कि ईश्वर ही चौबीस तत्व बनकर मौजूद हैं। अन्दर-बाहर उनकी पूजा करो।

"जब तक उन्होंने 'मैं' बुद्धि को रखा है, तब तक सभी हैं। फिर स्वप्नवत् कहने का उपाय नहीं है। नीचे आग जल रही है, इसीलिए बर्तन में दाल, भात और आलू सब उबल रहे हैं, कूद रहे हैं और मानो कह रहे हैं, 'मैं हूँ', 'मैं कूद रहा हूँ'। यह शरीर मानो बर्तन है। मन-बुद्धि जल है, इन्द्रियों के विषय मानो दाल, भात और आलू हैं, 'अहं' मानो उनका अभिमान है कि मैं उबल रहा हूँ और सच्चिदानन्द अग्नि हैं।

"इसीलिए भक्तिशास्त्र में इस संसार को 'मज़े की कुटिया' कहा है। रामप्रसाद के गाने में है, 'यह संसार धोखे की टट्टी है।' इसीलिए एक ने जवाब दिया था, 'यह संसार मज़े की कुटिया है।' 'काली का भक्त जीवन्मुक्त नित्यानन्दमय है।' भक्त देखता है, जो ईश्वर हैं, वे ही माया बने हैं। वे ही जीव जगत् बने हैं। भक्त ईश्वर-माया, जीव-जगत् एक देखता है। कोई कोई भक्त सभी को राममय देखते हैं। राम ही सब बने हैं। कोई राधाकृष्णमय देखते हैं। कृष्ण ही ये चौबीस

---

* मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।—गीता, ७।१४

तत्व बने हुए हैं, जिस प्रकार हरा चश्मा पहनने पर सभी कुछ हरा हरा दिखाई देता है।

"भक्ति के मत में भक्ति के प्रकाश की न्यूनाधिकता होती है। राम ही सब कुछ बने हुए हैं, परन्तु कहीं पर अधिक शक्ति है और कहीं पर कम। अवतार में उनका एक प्रकार का प्रकाश है और जीव में दूसरे प्रकार का। अवतार को भी देह और बुद्धि है। माया के कारण ही शरीर धारणकर सीता के लिए राम रोए थे; परन्तु अवतार जान बूझकर अपनी आँखों पर पट्टी बाँधते हैं, जैसे लड़के चोर-चोर खेलते हैं और माँ के पुकारते ही खेल बन्द कर देते हैं। जीव की अलग बात है। जिस कपड़े से आँखों पर पट्टी बँधी हुई है, वह कपड़ा पीछे से आठ गाँठों से बड़ी मज़बूती से बँधा हुआ है। अष्ट पाश!* लज्जा, घृणा, भय, जाति, कुल, शील, शोक, जुगुप्सा (निन्दा)—ये आठ पाश हैं। जब तक गुरु खोल नहीं देते, तब तक कुछ नहीं होता।"

(४)

सच्चे भक्त के लक्षण; हठयोग तथा राजयोग।

बेलघर का भक्त—आप हम पर कृपा कीजिए।

श्रीरामकृष्ण—सभी के बीच में वे मौजूद हैं, परन्तु इलेक्ट्रिक कम्पनी में अर्जी दो—तुम्हारे घर के साथ संयोग हो जायगा।

---

* घृणा लज्जा भयं शंका जुगुप्सा चेति पञ्चमी। कुलं शीलं तथा जातिरष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः॥—कुलार्णवतंत्र

"परन्तु व्याकुल होकर प्रार्थना करनी होगी। कहावत है तीन प्रकार के प्रेम के आकर्षण एक साथ होने पर ईश्वर का दर्शन होता है,—सन्तान पर माता का प्रेम, सती स्त्री का स्वामी पर प्रेम और विषयी जीवों का विषय पर प्रेम।

"सच्चे भक्त के कुछ लक्षण हैं। वह गुरु का उपदेश सुनकर स्थिर हो जाता है; बेनिया के संगीत को अजगर साँप स्थिर होकर सुनता है, परन्तु नाग नहीं। और दूसरा लक्षण; सच्चे भक्त की धारणा-शक्ति होती है। केवल काँच पर चित्र का दाग नहीं पड़ता, परन्तु रासायनिक द्रव्य लगे हुए काँच पर चित्र खींचा जाता है। जैसा फोटोग्राफ। भक्ति है वह रासायनिक द्रव्य।

"एक लक्षण और है। सच्चा भक्त जितेन्द्रिय होता है, और काम-जयी होता है। गोपियों में काम का संचार नहीं होता था।

"तुमलोग गृहस्थी में हो, रहो न, इससे साधन भजन में और भी सुविधा है, मानो किले में से युद्ध करना। जिस समय शव-साधन करते हैं उस समय बीच बीच में शव मुँह खोलकर डराता है। इसलिए भुना हुवा चाँवल चना रखना पड़ता है और उसके मुख में बीच बीच में देना पड़ता है। शव के शान्त होने पर निश्चिन्त होकर जप कर सकोगे। इसलिए घरवालों को शान्त रखना चाहिए। उनके खाने-पीने की व्यवस्था कर देनी पड़ती है, तब साधन-भजन की सुविधा होती है।

"जिनका भोग अभी बाकी है, वे गृहस्थी में रहकर ही ईश्वर का नाम लेंगे। निताई कहा करते थे, 'मागुर माछेर झोल, युवती नारीर

बोल, बोल हरी बोल ! '—हरिनाम लेने से मागुर मछली की रसदार तरकारी तथा युवती नारी तुम्हें मिलेगी ।

" सच्चे त्यागी की बात अलग है । मधुमक्खी फूल के अतिरिक्त और किसी पर भी नहीं बैठेगी । चातक की दृष्टि में सभी जल निःस्वाद हैं । वह दूसरे किसी भी जल को नहीं पीयेगा, केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा के लिए ही मुँह खोले रहेगा । सच्चा त्यागी अन्य कोई भी आनन्द नहीं लेगा, केवल ईश्वर का आनन्द । मधुमक्खी केवल फूल पर बैठती है । सच्चे त्यागी साधु मधुमक्खी की तरह होते हैं । गृही-भक्त मानो साधारण मक्खियाँ हैं । मिठाई पर भी बैठती हैं और फिर सड़े घाव पर भी ।

" तुम लोग इतना कष्ट करके यहाँ पर आये हो, तुम ईश्वर को ढूँढ़ते फिर रहे हो, अधिकांश लोग बगीचा देखकर ही सन्तुष्ट रहते हैं, मालिक की खोज बिरले ही लोग करते हैं । जगत् के सौन्दर्य को देख इसके मालिक को ढूँढ़ना भूल जाते हैं ।

श्रीरामकृष्ण (गानेवाले को दिखाकर)—इन्होंने षट्चक्र का गाना गाया । वह सब योग की बातें हैं । हठयोग और राजयोग । हठयोगी कुछ शारीरिक कसरतें करता है; सिद्धियाँ प्राप्त करना, लम्बी उम्र प्राप्त करना तथा अष्ट-सिद्धि प्राप्त करना, ये सब उद्देश्य हैं । राजयोग का उद्देश्य है भक्ति, प्रेम, ज्ञान, वैराग्य । राजयोग ही अच्छा है ।

" वेदान्त की सप्त भूमि और योगशास्त्र के षट्चक्र आपस में मिलते जुलते हैं । वेद की प्रथम तीन भूमियाँ और योगशास्त्र के मूलाधार, स्वाधिष्ठान तथा मणिपुर चक्र इन तीन भूमियों में—गुह्य लिंग तथा

नाभि में मन का निवास है। जिस समय मन चौथी भूमि पर अर्थात् अनाहत पद्म पर उठता है, उस समय ऐसा दर्शन होता है कि जीवात्मा शिखा की तरह देदीप्यमान है और उसे ज्योति का दर्शन होता है। साधक कह उठता है—यह क्या ! यह क्या !

"मन के पाँचवीं भूमि में उठने पर केवल ईश्वर की ही बात सुनने की इच्छा होती है। यहाँ पर विशुद्ध चक्र है। षष्ठ भूमि और आज्ञाचक्र एक ही हैं। वहाँ पर मन के जाने से ईश्वर का दर्शन होता है। परन्तु वह उसी प्रकार होता है जिस प्रकार लालटेन के भीतर रोशनी रहती है—छू नहीं सकते, क्योंकि बीच में काँच रहता है।

"जनक राजा पंचम भूमि पर से ब्रह्मज्ञान का उपदेश देते थे। वे कभी पंचम भूमि पर और कभी षष्ठ भूमि पर रहते थे।

"षट्चक्र भेद के बाद सप्तम भूमि है। मन वहाँ पर लीन हो जाता है; जीवात्मा परमात्मा, एक हो, समाधि हो जाती है। देह-बुद्धि चली जाती है। बाह्यज्ञान नहीं रहता, अनेकत्व का बोध नष्ट हो जाता है और विचार बन्द हो जाता है।

"त्रैलिंग स्वामी ने कहा था, विचार करते समय अनेकता तथा विभिन्नता का बोध होता है। समाधि के बाद अन्त में इक्कीस दिन में मृत्यु हो जाती है।

"परन्तु कुण्डलिनी न जागने पर चैतन्य नहीं प्राप्त होता।"

ईश्वर-दर्शन के लक्षण।

"जिसने ईश्वर को प्राप्त किया है, उसके कुछ लक्षण हैं। वह बालक की तरह, उन्मत्त की तरह, जड़ की तरह, पिशाच की तरह

बन जाता है और उसे सच्चा अनुभव होता है कि 'मैं यंत्र हूँ और वे यंत्री हैं। वे ही कर्ता हैं, और सभी अकर्ता हैं।' जिस प्रकार सिक्खों ने कहा था, पत्ता हिल रहा है, यह भी ईश्वर की इच्छा है। राम की इच्छा से ही सब कुछ हो रहा है,—यह ज्ञान। जैसे जुलाहे ने कहा था, राम की इच्छा से ही कपड़े का दाम एक रुपया छः आना है, राम की इच्छा से ही डकैती हुई, राम की इच्छा से ही डाकू पकड़े गये। राम की इच्छा से ही पुलिसवाले मुझे ले गये और फिर राम की ही इच्छा से मुझे छोड़ दिया।"

सन्ध्या निकट थी, श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा भी विश्राम नहीं किया। भक्तों के साथ लगातार हरि कथा हो रही है। अब मणिरामपुर और बेलघर के तथा अन्य भक्तगण भूमिष्ठ होकर उन्हें प्रणाम कर देवालय में देवदर्शन के बाद अपने-अपने स्थानों को लौटने लगे।

परिच्छेद २३

गृहस्थाश्रम के सम्बन्ध में उपदेश

(१)

तीव्र वैराग्य। पाप-पुण्य। संन्यास।

आज गंगा-पूजा, ज्येष्ठ शुक्ल दशमी, शुक्रवार का दिन है; तारीख १५ जून, १८८३ ई०। भक्तगण श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में आए हैं। गंगा-पूजा के उपलक्ष्य में अधर और मास्टर को छुट्टी मिली है।

राखाल के पिता और पिता के स्वसुर आए हैं। पिता ने दूसरी बार विवाह किया है। स्वसुर महाशय श्रीरामकृष्ण का नाम बहुत दिनों से सुनते आ रहे हैं, वे साधक पुरुष हैं, श्रीरामकृष्ण के दर्शनों के लिए आए हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें टहर-ठहर कर देख रहे हैं। भक्तगण जमीन पर बैठे हैं।

स्वसुर महाशय ने पूछा,—"महाराज, क्या गृहस्थाश्रम में भगवान् का लाभ हो सकता है ?"

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—क्यों नहीं हो सकता ! कीचड़ में रहनेवाली मछली की तरह रहो। वह कीचड़ में रहती है, पर उसके शरीर में कीचड़ नहीं लगता। और अ-सती स्त्री की तरह रहो जो घर का सारा काम काज करती है, पर उसका मन अपने उपपति की ओर ही

रहता है। ईश्वर से मन लगाकर गृहस्थी का सब काम करो। लेकिन यह है बड़ा कठिन। मैंने ब्राह्मसमाजवालों से कहा था कि जिस घर में इमली का अचार और पानी का मटका है, यदि उसी घर में सन्निपात का रोगी भी रहे तो बीमारी किस तरह दूर हो? फिर इमली की याद आते ही मुँह में पानी भर आता है। पुरुषों के लिए स्त्रियाँ इमली के अचार की तरह हैं; और विषय की तृष्णा तो सदा लगी रही है। यही पानी का मटका है। इस तृष्णा का अन्त नहीं है। सन्निपात का रोगी कहता है कि मैं एक मटका पानी पिऊँगा। बड़ा कठिन है। संसार में बहुत बखेड़े होते हैं। जिधर जाओ उधर ही कोई न कोई बला आ खड़ी हो जाती है; और निर्जन स्थान न होने के कारण भगवान् की चिन्ता नहीं होती। सोने को गलाकर गहना गढ़ाना है, तो यदि गलाते समय कोई दस बार बुलाए, तो सोना किस तरह गलेगा? चावल छाँटते समय अकेले बैठकर छाँटना होता है। हरबार चावल हाथ में लेकर देखना पड़ता है कि कैसा साफ हुआ। छाँटते समय यदि कोई दस बार बुलाए तो कैसे अच्छी तरह छाँटना हो सकता है?

एक भक्त—महाराज, फिर उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण—उपाय है। यदि तीव्र वैराग्य हो, तो हो सकता है। जिसे मिथ्या समझते हो उसे हठपूर्वक उसी समय त्याग दो। जिस समय मैं बहुत बीमार था, गंगाप्रसाद सेन के पास लोग मुझे ले गए। गंगाप्रसाद ने कहा, औषध खानी पड़ेगी, पर जल नहीं पी सकते। हाँ, अनार का रस पी सकते हो। सब लोगों ने सोचा कि बिना जल पिये मैं कैसे रह सकता हूँ। मैंने निश्चय किया कि अब जल न पिऊँगा। मैं परमहंस हूँ! मैं बदक थोड़े ही हूँ;—मैं तो राजहंस हूँ! दूध पिया करूँगा।

"कुछ काल निर्जन में रहना पड़ता है। खेल के समय पाला छू लेने पर फिर भय नहीं रहता। सोना हो जाने पर जहाँ जी चाहे रहो। निर्जन में रहकर यदि भक्ति मिली हो, और भगवान् मिल चुके हों, तो फिर संसार में भी रह सकते हो। (राखाल के पिता के प्रति) इसीसे तो लड़कों को यहाँ रहने के लिए कहता हूँ; क्योंकि यहाँ थोड़े दिन रहने पर भगवान् में भक्ति होगी; उसके उपरान्त सहज ही संसार में जाकर रह सकेंगे।"

एक भक्त—यदि ईश्वर ही सब कुछ करते हैं, तो फिर लोग भला और बुरा, पाप और पुण्य, यह सब क्यों कहते हैं? पाप भी तो उन्हीं की इच्छा से होता है।

राखाल के पिता के स्वसुर—यह उनकी इच्छा है, हम कैसे समझें।
'Thou great First Cause least understood' *

—Pope

श्रीरामकृष्ण—पाप और पुण्य हैं, पर वे स्वयं निर्लिप्त हैं। वायु में सुगन्ध भी है और दुर्गन्ध भी, लेकिन वायु स्वयं निर्लिप्त है। ईश्वर की सृष्टि भी ऐसी है; भला-बुरा, सत्-असत्—दोनों हैं। जैसे पेड़ों में कोई आम का पेड़ है, कोई कटहल का, कोई किसी और चीज़ का। देखो न, दुष्ट आदमियों की भी आवश्यकता है। जिस ताल्लुके की प्रजा उद्दण्ड होती है, वहाँ एक दुष्ट आदमी भेजना पड़ता है, तब कहीं ताल्लुके का ठीक शासन होता है।

फिर गृहस्थाश्रम की बात चली।

---

* "हे परमकारण ईश्वर, तू सबसे दुर्बोध है।"

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—बात यह है, संसार करने पर मन की शक्ति का अपव्यय होता है। इस अपव्यय की हानि तभी पूरी हो सकती है जब कोई संन्यास ले। पिता प्रथम जन्मदाता है; उसके बाद द्वितीय जन्म उपनयन के समय होता है। एकबार फिर जन्म होता है, संन्यास के समय। कामिनी और कांचन—ये ही दो विघ्न हैं। स्त्री की आसक्ति पुरुष को ईश्वर के मार्ग से डिगा देती है। किस तरह पतन होता है, यह पुरुष नहीं जान सकता। किले के अन्दर जाते समय यह बिलकुल न जान सका कि ढालू रास्ते से जा रहा हूँ। जब किले के अन्दर गाड़ी पहुँची तो मालूम हुआ कि कितने नीचे आ गया हूँ! स्त्रियाँ पुरुषों को कुछ नहीं समझने देतीं। कप्तान * कहता है, मेरी स्त्री ज्ञानी है! भूत जिस पर सवार होता है, वह नहीं जानता कि भूत सवार है, वह कहता है मैं आनन्द में हूँ। (सभी निस्तब्ध हैं।)

श्रीरामकृष्ण—संसार में केवल काम का ही नहीं, क्रोध का भी भय है। कामना के मार्ग में रुकावट होने से ही क्रोध पैदा हो जाता है।

मास्टर—भोजन करते समय मेरी थाली से बिल्ली कुछ खाना उठा लेने को बढ़ती है, मैं कुछ नहीं बोल सकता।

श्रीरामकृष्ण—क्यों! एक बार मारते क्यों नहीं? उसमें क्या दोष है? गृहस्थ को फुफकारना चाहिए, पर विष न उगलना चाहिए। कभी अपने कामों से किसी को हानि न पहुँचाये, पर शत्रुओं के हाथ से बचने के लिये उसे क्रोध का आभास दिखलाना चाहिए; नहीं तो शत्रु आकर उसे हानि पहुँचायेंगे। पर त्यागी के लिए फुफकारने की भी आवश्यकता नहीं है।

---

* श्रीयुत विश्वनाथ उपाध्याय।

एक भक्त—महाराज, संसार में रहकर भगवान् को पाना बड़ा ही कठिन देखता हूँ। कितने आदमी ऐसे हो सकते हैं? शायद ही कोई ऐसा देखने में आए।

श्रीरामकृष्ण—क्यों नहीं होगा? उधर (कामारपुकुर की ओर) सुना है कि एक डिप्टी है। बड़ा अच्छा आदमी है। प्रतापसिंह उसका नाम है; दानशीलता, ईश्वर की भक्ति आदि बहुत से गुण उसमें हैं। मुझे लेने के लिए आदमी भेजा था। ऐसे लोग भी तो हैं।

(२)

साधना का प्रयोजन। गुरुवाक्य में विश्वास। व्यास का विश्वास। ज्ञानयोग और भक्तियोग।

श्रीरामकृष्ण—साधना की बड़ी आवश्यकता है। फिर क्यों नहीं होगा? ठीक से यदि विश्वास हो, तो अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता। चाहिए गुरु के वचनों पर विश्वास।

"व्यासदेव यमुना के उस पार जायेंगे; इतने में वहाँ गोपियाँ आईं। वे भी पार जायेंगी, पर नाव नहीं मिलती। गोपियों ने कहा, महाराज, अब क्या किया जाय? व्यासदेव ने कहा, 'अच्छा, तुम लोगों को पार किए देता हूँ, पर मुझे बड़ी भूख लगी है, तुम्हारे पास कुछ है?' गोपियों के पास दूध, दही, मक्खन आदि था, थोड़ा थोड़ा सब उन्होंने खाया। गोपियों ने कहा, महाराज, अब पार जाने का क्या हुआ? व्यासदेव तब किनारे पर जाकर खड़े हुए और कहा, हे यमुने, यदि आज मैंने कुछ न खाया हो तो तुम्हारा जल दो भागों में बँट जाय।

यह कहते ही जल अलग अलग हो गया। गोपियाँ यह देखकर दंग रह गईं; सोचने लगीं, इन्होंने अभी अभी तो इतनी चीज़ें खाई हैं, फिर भी कहते हैं, यदि आज मैंने कुछ न खाया हो!

"यही दृढ़ विश्वास है। मैंने नहीं—हृदय में जो नारायण हैं उन्होंने खाया है।

"शङ्कराचार्य तो ब्रह्मज्ञानी थे, पर पहले उनमें भेद-बुद्धि भी थी। वैसा विश्वास न था। चाण्डाल मांस बोझ लिए आ रहा था, वे गंगा-स्नान करके ही उठे थे कि चाण्डाल से स्पर्श हो गया। कह उठे, अरे! तू मुझे छू गया! चाण्डाल ने कहा, महाराज, न आपने मुझे छुआ न मैंने आपको! शुद्ध आत्मा—न वह शरीर है, न पञ्चभूत है, और न चौबीस तत्व है। तब शङ्कर को ज्ञान हुआ। जड़भरत राजा रहुगण की पालकी ले जाते समय जब आत्मज्ञान की बातें करने लगे, तब राजा ने पालकी से नीचे उतरकर कहा, आप कौन हैं? जड़भरत ने कहा, नेति नेति—मैं शुद्ध आत्मा हूँ। उनका पक्का विश्वास था कि वे शुद्ध आत्मा हैं।

"सोऽहम्। मैं शुद्ध आत्मा हूँ—यह ज्ञानियों का मत है। भक्त कहते हैं, यह सब भगवान् का ऐश्वर्य है। धनी का ऐश्वर्य न होने से उसे कौन जान सकता है?

"पर यदि साधक की भक्ति देखकर ईश्वर कहेंगे कि जो मैं हूँ, वही तू भी है, तब दूसरी बात है। राजा बैठे हैं; उस समय नौकर यदि सिंहासन पर जाकर बैठ जाय और कहे, 'राजा, जो तुम हो, वही मैं भी हूँ,' तो लोग उसे पागल कहेंगे। पर यदि नौकर की सेवा से सन्तुष्ट हो राजा एक दिन यह कहें, 'आ जा, तू मेरे पास बैठ, इसमें

कोई दोष नहीं; जो तू है वही मैं भी हूँ ! ' और तब यदि वह जाकर बैठे तो उसमें कोई दोष नहीं है। एक साधारण जीव का यह कहना कि, सोऽहम्—मैं वही हूँ—अच्छा नहीं है। जल की ही तरंग होती है; तरंग का जल थोड़े ही होता है।

" बात यह है कि मन स्थिर न होने से योग नहीं होता, तुम चाहे जिस राह से चलो। **मन योगी के वश में रहता है, योगी मन के वश में नहीं।**

" मन स्थिर होने पर वायु स्थिर होता है—उससे कुम्भक होता है। वह कुम्भक भक्तियोग से भी होता है, भक्ति से वायु स्थिर हो जाता है। ' मेरे निताई मस्त हाथी हैं ! मेरे निताई मस्त हाथी हैं !'—यह कहते कहते जब भाव हो जाता है, तब वह मनुष्य पूरा वाक्य नहीं कह सकता, केवल ' हाथी हैं ' 'हाथी हैं' कहता है। इसके बाद सिर्फ 'हा—' इतना ही। भाव से वायु स्थिर होता है, और उससे कुम्भक होता है।

" एक आदमी झाड़ू दे रहा था कि किसी ने आकर कहा, 'अजी, अमुक मर गया !' जो झाड़ू दे रहा था, उसका यदि वह अपना आदमी न हुआ, तो वह झाड़ू देता ही रहता है, और बीच बीच में कहता है, 'दुःख की बात है, वह आदमी मर गया ! बड़ा अच्छा आदमी था।' पर इधर झाड़ू भी चल रहा है। परन्तु यदि कोई अपना आदमी हुआ तो झाड़ू उसके हाथ से छूट जाता है, और 'हाय !' कहकर वह बैठ जाता है। उस समय उसका वायु स्थिर हो जाता है; कोई काम या विचार उससे फिर नहीं हो सकता। औरतों में नहीं देखा—यदि कोई निर्वाक् होकर कुछ देखे या सुने तो दूसरी औरतें उससे कहती हैं, क्यों क्या

तुझे भाव हुआ है ?' यहाँ पर भी वायु स्थिर हो गया है, इसी से निर्वाक् होकर मुँह खोले रहती हैं।"

ज्ञानी के लक्षण। साधना-सिद्ध और नित्य-सिद्ध।

"सोऽहम् सोऽहम् कहने से ही नहीं होता। ज्ञानी के लक्षण हैं। नरेन्द्र * के नेत्र उभड़े हुए हैं। उसके कपाल का लक्षण भी अच्छा है।

"फिर सब की एक सी हालत नहीं होती। जीव चार प्रकार के कहे गये हैं,—बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य। सभी को साधना करनी पड़ती है, यह बात भी नहीं है। नित्य-सिद्ध और साधना-सिद्ध, दो तरह के साधक हैं। कोई अनेक साधनाएँ करने पर ईश्वर को पाता है; कोई जन्म से ही सिद्ध हैं, जैसे प्रह्लाद। 'होमा' नाम की चिड़िया आकाश में रहती है। वहीं वह अण्डा देती है। अण्डा आकाश से गिरता है और गिरते ही गिरते वह फूट जाता है, और उससे बच्चा निकलकर गिरता है। वह इतने ऊँचे पर से गिरता है कि गिरते ही गिरते उसके पंख निकल आते हैं। जब वह पृथ्वी के पास आ जाता है तब देखता है कि जमीन से टकराते ही वह चूरचूर हो जायगा। तब वह सीधे ऊपर उड़ जाता है—अपनी माँ के पास!

"प्रह्लाद आदि नित्य-सिद्ध भक्तों की साधना पीछे से होती है। साधना के पहले ही उन्हें ईश्वर का लाभ होता है, जैसे लौकी, कुम्हड़े का पहले फल, और उसके बाद फूल होता है। (राखाल के पिता से) नीच वंश में भी यदि नित्य-सिद्ध जन्म ले तो वह वही होता है, दूसरा

* स्वामी विवेकानन्दजी।

कुछ नहीं होता। चनों के मैली जगह में गिरने पर भी चनों का ही पेड़ होता है।

"ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है, किसी को कम। कहीं पर एक दिया जल रहा है, कहीं पर एक मशाल। विद्यासागर की बात से जान लिया कि उनकी बुद्धि की पहुँच कितनी दूर है। अब मैंने शक्ति-विशेष की बात कही, तब विद्यासागर ने कहा,—'महाराज, तो क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?' मैंने भी कहा, 'फिर क्या? शक्ति की कमी-बेशी हुए बिना तुम्हारा इतना नाम क्यों है? तुम्हारी विद्या, तुम्हारी दया, यही सब सुनकर तो हम लोग आए हैं। तुम्हारे कोई दो सींग तो निकले नहीं हैं!' विद्यासागर की इतनी विद्या और इतना नाम होते हुए भी उन्होंने ऐसी कच्ची बात कह दी। बात यह है कि जाल में पहले-पहल बड़ी मछलियाँ पड़ती हैं; रोहू, कातल आदि। उसके बाद मछुआ पैर से कीचड़ को घोट देता है। तब तरह तरह की छोटी छोटी मछलियाँ निकल आती हैं, और तुरन्त जाल में फँस जाती हैं। ईश्वर को न जानने से थोड़ी ही देर में छोटी छोटी मछलियाँ (कच्ची बातें) निकल पड़ती हैं। केवल पण्डित होने से क्या होगा?"

(३)

तांत्रिक भक्त तथा संसार; निर्लिप्त को भी भय।

श्रीरामकृष्ण आहार के बाद दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में थोड़ा विश्राम कर रहे हैं। अधर तथा मास्टर ने आकर प्रणाम किया। एक तांत्रिक भक्त भी आए हैं। राखाल, हाजरा, रामलाल आदि

आजकल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। आज रविवार १७ जून, १८८३ ई० ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—गृहस्थाश्रम में होगा क्यों नहीं? परन्तु बहुत कठिन है। जनक आदि ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् गृहस्थाश्रम में आये थे। परन्तु फिर भी भय है। निष्काम गृहस्थ को भी भय है। भैरवी को देखकर जनक ने मुँह नीचा कर लिया। स्त्री के दर्शन से संकोच हुआ था। भैरवी ने कहा, 'जनक! मैं देखती हूँ कि तुम्हें अभी ज्ञान नहीं हुआ। तुममें अभी भी स्त्री-पुरुष-बुद्धि विद्यमान है।'

"कितना ही सयाना क्यों न हो, काजल की कोठरी में रहने पर शरीर पर कुछ न कुछ काला दाग लगेगा ही।

"मैंने देखा है, गृहस्थ-भक्त जिस समय शुद्धवस्त्र पहनकर पूजा करते हैं उस समय उनका अच्छा भाव रहता है। यहाँ तक कि जल-पान करने तक वही भाव रहता है। उसके बाद अपनी वही मूर्ति; फिर से रजः, तमः।

"सत्व गुण से भक्ति होती है। किन्तु भक्ति का सत्व, भक्ति का रजः, भक्ति का तमः हैं। भक्ति का सत्व विशुद्ध सत्व है, इसकी प्राप्ति होने पर, ईश्वर के अतिरिक्त और किसी में भी मन नहीं लगता। देह की रक्षा हो सके, केवल इतना ही शरीर की ओर ध्यान रहता है।

"परमहंस तीनों गुणों से अतीत होते हैं।* उनमें तीन गुण हैं और फिर नहीं भी हैं। ठीक बालक जैसा, किसी गुण के आधीन नहीं है।

---

* मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥—गीता, १४।२६

इसलिए परमहंस छोटे छोटे बच्चों को अपने पास आने देते हैं, जिससे उनके स्वभाव को अपना सकें।

"परमहंस संचय नहीं कर सकते। यह अवस्था गृहस्थों के लिए नहीं है। उन्हें अपने घरवालों के लिए संचय करना पड़ता है।"

तांत्रिक भक्त—क्या परमहंस को पाप-पुण्य का बोध रहता है?

श्रीरामकृष्ण—केशव सेन ने यही बात पूछी थी। मैंने कहा, और अधिक कहने पर तुम्हारा दल-बल नहीं रहेगा। केशव ने कहा, 'तो फिर रहने दीजिए, महाराज।'

"पाप-पुण्य क्या है, जानते हो? परमहंस अवस्था में अनुभव होता है कि वे ही सुबुद्धि देते हैं, वे ही कुबुद्धि देते हैं। क्या फल मीठे—कड़ुवे नहीं होते? किसी पेड़ में मीठा फल, किसी में कड़ुवा या खट्टा फल। उन्होंने मीठे आम का वृक्ष भी बनाया है, और फिर खट्टे फल का वृक्ष भी!"

तांत्रिक भक्त—जी हाँ, पहाड़ पर गुलाब की खेती दिखाई देती है। जहाँ तक दृष्टि जाती है केवल गुलाब ही गुलाब का खेत!

श्रीरामकृष्ण—परमहंस देखता है, यह सब उनकी माया का ऐश्वर्य है, सत्-असत्, भला-बुरा, पाप-पुण्य, यह सब समझना बहुत दूर की बात है। उस अवस्था में दल-बल नहीं रहता।

तांत्रिक भक्त—तो फिर कर्मफल है?

श्रीरामकृष्ण—वह भी है। अच्छा कर्म करने पर सुफल और बुरा कर्म करने पर कुफल मिलता है। मिर्च खाने पर तीखा तो लगेगा ही! यह सब उनकी लीला है, खेल है।

तांत्रिक भक्त—हमारे लिए क्या उपाय है ? कर्म का फल तो है न ?

श्रीरामकृष्ण—होने दो, परन्तु उनके भक्तों की बात अलग है। (संगीत —भावार्थ)—" रे मन ! तुम खेती का काम नहीं जानते हो ! काली नाम का बेड़ा लगा लो, फसल नष्ट न होगी। वह तो मुक्तकेशी का पक्का बेड़ा है, उसके पास तो यम भी नहीं आता। गुरु का दिया हुआ बीज बोकर भक्ति का जल सींच देना। हे मन, यदि तुम अकेले न कर सको, तो रामप्रसाद को साथ ले लेना। "

फिर गा रहे हैं—(संगीत—भावार्थ)—

" यम के आने का रास्ता बन्द हो गया। मेरे मन का सन्देह मिट गया। मेरे घर के नौ दरवाज़ों पर चार शिव पहरेदार हैं। एक ही स्तम्भ पर घर है, जो तीन रस्सियों से बँधा हुआ है। श्रीनाथ सहस्र-दल कमल पर अभय होकर बैठा है। "

" काशी में ब्राह्मण मरे या वेश्या—सभी शिव होंगे।

" जब हरिनाम से, रामनाम से आँखों में आँसू भर आते हैं, तब सन्ध्या कवच आदि की कुछ भी आवश्यकता नहीं रह जाती। कर्म का त्याग हो जाता है। कर्म का फल स्पर्श नहीं करता। "

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं, (संगीत—भावार्थ)—

" चिन्तन से भाव का उदय होता है। जैसा सोचो, वैसी ही प्राप्ति होती है,—विश्वास ही मूल है। यदि चित्त काली के चरण-रूपी अमृत-सरोवर में डूबा रहता है, तो पूजा-होम, यज्ञ आदि का कुछ भी महत्व नहीं है। "

श्रीरामकृष्ण फिर गा रहे हैं—(संगीत—भावार्थ)—

"जो त्रिसन्ध्या में काली का नाम लेता है, क्या वह सन्ध्या-पूजा को चाहता है? सन्ध्या उसकी खोज में फिरती रहती है, कभी उससे मिल नहीं पाती! यदि काली-काली कहते मेरा समय व्यतीत हो जाय, तो फिर गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची आदि कौन चाहता है?"

"ईश्वर में मग्न हो जाने पर फिर असत्बुद्धि, पापबुद्धि नहीं रह जाती।"

तान्त्रिक भक्त—आपने ठीक कहा है 'विद्या का मैं' रहता है।

श्रीरामकृष्ण—'विद्या का मैं' 'भक्त का मैं' 'दास का मैं' 'भला मैं' रहता है। 'बदमाश मैं' चला जाता है। (हँसी।)

तान्त्रिक भक्त—जी, महाराज, हमारे अनेक सन्देह मिट गये।

श्रीरामकृष्ण—आत्मा का साक्षात्कार होने पर सब सन्देह मिट जाते हैं।*

तान्त्रिक भक्त तथा भक्ति का तमः; अष्टसिद्धि।

"भक्ति का तमः लाओ। कहो,—क्या जब मैंने राम का नाम लिया, काली का नाम लिया, फिर भी सम्भव है मेरा यह बन्धन, मेरा यह कर्मफल?"

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं—(संगीत—भावार्थ)—

"माँ, यदि मैं दुर्गा-दुर्गा कहता हुआ मरूँ, तो हे शंकरी, देखूँगा

---

* भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ॥
—मुण्डक-उपनिषद्, २।२।८

कि अन्त में इस दीन का तुम कैसे उद्धार नहीं करती ! माँ ! गो-ब्राह्मण की, भ्रूण की तथा नारी की हत्या, सुरापान आदि पापों की रत्तीभर परवाह न कर मैं ब्रह्मपद प्राप्त कर सकता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण फिर कहते हैं—विश्वास, विश्वास, विश्वास ! गुरु ने कह दिया है, राम ही सब कुछ बनकर विराजमान हैं। वही राम घट-घट में लेटा है। कुत्ता रोटी खाता जा रहा है। भक्त कहता है, 'राम ! ठहरो, ठहरो, रोटी में घी लगा दूँ।' गुरुवाक्य में ऐसा विश्वास !

"'भुक्कड़ों को विश्वास नहीं होता ! सदा ही सन्देह ! आत्मा का साक्षात्कार हुए बिना सन्देह दूर नहीं होते।

"शुद्ध भक्ति, जिसमें कोई कामना न हो, ऐसी भक्ति द्वारा उन्हें शीघ्र प्राप्त किया जा सकता है।

"अणिमा आदि सिद्धियाँ—ये सब कामनाएँ हैं। कृष्ण ने अर्जुन से कहा है,—'भाई, अणिमा आदि सिद्धियों में से एक के भी रहते ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। शक्ति को थोड़ा बढ़ा भर सकती हैं वे।"

तांत्रिक भक्त—महाराज, तान्त्रिक क्रिया आजकल सफल क्यों नहीं होती ?

श्रीरामकृष्ण—सर्वांगीण नहीं होती और भक्तिपूर्वक भी नहीं की जाती, इसीलिए सफल नहीं होती।

अब श्रीरामकृष्ण उपदेश समाप्त कर रहे हैं। कह रहे हैं,—"भक्ति ही सार है। सच्चे भक्त को कोई भय, कोई चिन्ता नहीं। माँ सब कुछ जानती है। बिल्ली चूहा पकड़ती है विशेष प्रकार से, परन्तु अपने बच्चे को पकड़ती है दूसरे प्रकार से।"

परिच्छेद २४

पानीहाटी महोत्सव में

(१)

कीर्तनानन्द में।

श्रीरामकृष्ण पानीहाटी के महोत्सव में बहुत लोगों से घिरे हुए संकीर्तन में नृत्य कर रहे हैं। दिन का एक बजा है। आज सोमवार, ज्येष्ठ शुक्ल त्रयोदशी तिथि है। तारीख १८ जून, १८८३।

संकीर्तन के बीच में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए चारों ओर लोग कतार बाँधकर खड़े हैं। आप प्रेम में मतवाले हो नाच रहे हैं। कोई कोई सोच रहे हैं कि क्या श्रीगौरांग फिर प्रकट हुए हैं! चारों ओर हरि-ध्वनि सागर की तरंगों के समान उमड़ रही है। चारों ओर से लोग फूल बरसा रहे हैं और बताशे लुटा रहे हैं।

श्रीयुत नवद्वीप गोस्वामी संकीर्तन करते हुए राघव पण्डित के मन्दिर की ओर आ रहे थे कि एकाएक श्रीरामकृष्ण दौड़कर उनसे आ मिले और नाचने लगे।

यह राघव पण्डित का "चूड़े का महोत्सव" है। शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तिथि पर प्रतिवर्ष होता है। इस महोत्सव को पहले दास रघुनाथ ने किया था। उसके बाद राघव पण्डित प्रतिवर्ष करते थे। दास रघुनाथ से नित्यानन्द ने कहा था "अरे, तू घर से केवल भाग:भागकर

आता है, और हमसे छिपाकर प्रेम का स्वाद लेता रहता है ! आज तुझे दण्ड दूँगा; तू चूड़े का महोत्सव करके भक्तों की सेवा कर ।"

श्रीरामकृष्ण प्रायः प्रतिवर्ष यहाँ आते हैं, आज भी यहाँ राम आदि भक्तों के साथ आनेवाले थे। राम सबेरे मास्टर के साथ कलकत्ते से दक्षिणेश्वर आये थे। श्रीरामकृष्ण से मिलकर वहीं उन्होंने प्रसाद पाया। राम कलकत्ते से जिस गाड़ी पर आये थे, उसी पर श्रीरामकृष्ण पानीहाटी आये। राखाल, मास्टर, राम, भवनाथ तथा और भी दो एक भक्त उनके साथ थे।

गाड़ी मेगज़ीन रोड़ से होकर चानक के बड़े रास्ते पर आई। जाते जाते श्रीरामकृष्ण बालक भक्तों से विनोद करने लगे।

पानीहाटी के महोत्सव-स्थल पर गाड़ी पहुँचते ही राम आदि भक्त यह देखकर विस्मित हुए कि श्रीरामकृष्ण, जो अभी गाड़ी में विनोद कर रहे थे एकाएक अकेले ही उतरकर बड़े वेग से दौड़ रहे हैं। बहुत ढूँढ़ने पर उन्होंने देखा कि वे नवद्वीप गोस्वामी के संकीर्तन के दल में नृत्य कर रहे हैं और बीच बीच में समाधिस्थ भी हो रहे हैं। कहीं वे गिर न पड़ें, इसलिए नवद्वीप गोस्वामी समाधि की दशा में उन्हें बड़े यत्न से सँभाल रहे हैं। चारों ओर भक्तगण हरि-ध्वनि कर उनके चरणों पर फूल और बताशे चढ़ा रहे हैं और उनके दर्शन पाने के लिए धक्कमधक्का कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण अर्ध-बाह्य दशा में नृत्य कर रहे हैं। फिर बाह्य दशा में आकर वे गा रहे हैं—

"हरि का नाम लेते ही जिनकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लग जाती है, वे दोनों भाई आये हैं; जो स्वयं नाचकर जगत् को नचाते हैं, वे दोनों भाई आये हैं; जो स्वयं रोकर जगत् को रुलाते हैं, और जो मार खाकर भी प्रेम की याचना करते हैं, वे आये हैं!"

श्रीरामकृष्ण के साथ सब उन्मत्त हो नाच रहे हैं, और अनुभव कर रहे हैं कि गौरांग और निताई हमारे सामने नाच रहे हैं!

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे—"गौरांग के प्रेम के हिलोरों से नवद्वीप डाँवाडोल हो रहा है।"

संकीर्तन की तरंग राघव के मन्दिर की ओर बढ़ रही है। वहाँ परिक्रमा और नृत्य आदि करने के बाद वह तरंगायित जनसंघ श्रीराधाकृष्ण के मन्दिर की ओर बढ़ रहा है।

संकीर्तनकारों में से कुछ ही लोग श्रीराधाकृष्ण के मन्दिर में घुस पाये हैं। अधिकांश लोग दरवाज़े से ही एक दूसरे को ढकेलते हुए झाँक रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण श्रीराधाकृष्ण के आँगन में फिर नाच रहे हैं। कीर्तनानन्द में बिलकुल मस्त हैं! बीच बीच में समाधिस्थ हो रहे हैं, और चारों ओर से फूल-बताशे चरणों पर पड़ रहे हैं। आँगन के भीतर बारबार हरि-ध्वनि हो रही है। वही ध्वनि सड़क पर आते ही हज़ारों कण्ठों से उच्चारित होने लगी। गंगाजी पर नावों से आने-जानेवाले लोग चकित होकर इस सागर-गर्जन के समान उठती हुई ध्वनि को सुनने लगे और वे भी स्वयं 'हरिबोल' 'हरिबोल' कहने लगे।

पानीहाटी के महोत्सव में एकत्रित हजारों नर-नारी सोच रहे हैं कि इन महापुरुष के भीतर निश्चित ही श्रीगौरांग का आविर्भाव हुआ है। दो-एक आदमी यह विचार कर रहे हैं कि शायद ये ही साक्षात् गौरांग हों।

छोटे से आँगन में बहुत से लोग एकत्रित हुए हैं। भक्तगण बड़े यत्न से श्रीरामकृष्ण को बाहर लाए।

श्रीरामकृष्ण श्रीयुत मणि सेन की बैठक में आकर बैठे। इसी सेन परिवारवालों से पानीहाटी में श्रीरामकृष्ण की सेवा होती है। वे ही प्रतिवर्ष महोत्सव का आयोजन करते हैं और श्रीरामकृष्ण को निमंत्रण देते हैं।

श्रीरामकृष्ण के कुछ विश्राम करने के बाद मणि सेन और उनके गुरुदेव नवद्वीप गोस्वामी ने उनको अलग ले जाकर प्रसाद लाकर भोजन कराया। कुछ देर बाद राम, राखाल, मास्टर, भवनाथ आदि भक्त एक दूसरे कमरे में बिठाए गये। भक्तवत्सल श्रीरामकृष्ण स्वयं खड़े हो आनन्द करते हुए उनको खिला रहे हैं।

(२)

श्रीगौरांग का महाभाव, प्रेम और तीन अवस्थाएँ। पाण्डित्य और शास्त्र।

दोपहर का समय है। राखाल, राम आदि भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण मणि सेन की बैठक में विराजमान हैं। नवद्वीप गोस्वामी भोजन करके श्रीरामकृष्ण के पास आ बैठे हैं।

मणि सेन ने श्रीरामकृष्ण को गाड़ी का किराया देना चाहा।

श्रीरामकृष्ण बैठक में एक कोच पर बैठे हैं, और कहते हैं, ‘ गाड़ी का किराया वे लोग (राम आदि) क्यों लेंगे ? वे रोजगार करते हैं ।’

अब श्रीरामकृष्ण नवद्वीप गोस्वामी से ईश्वरी प्रसंग करने लगे ।

श्रीरामकृष्ण (नवद्वीप से)—भक्ति के परिपक्व होने पर भाव होता है, फिर महाभाव, फिर प्रेम, फिर वस्तु (ईश्वर) का लाभ होता है ।

“ गौरांग को महाभाव और प्रेम हुआ था ।

“ इस प्रेम के होने पर जगत् तो भूल ही जाता है, बल्कि अपना शरीर, जो इतना प्रिय है, उसकी भी सुधि नहीं रहती । गौरांग को यह प्रेम हुआ था । समुद्र को देखते ही यमुना समझकर वे उसमें कूद पड़े !

“ जीवों को महाभाव या प्रेम नहीं होता, उनको भाव तक ही होता है । फिर गौरांग को तीन अवस्थायें होती थीं ।”

नवद्वीप—जी हाँ । अन्तर्दशा, अर्ध-बाह्य दशा और बाह्य दशा ।

श्रीरामकृष्ण—अन्तर्दशा में वे समाधिस्थ रहते थे, अर्धबाह्य दशा में केवल नृत्य कर सकते थे, और बाह्य दशा में नाम-संकीर्तन करते थे ।

नवद्वीप ने अपने लड़के को लाकर श्रीरामकृष्ण से परिचित करा दिया । वे तरुण हैं—शास्त्र का अध्ययन करते हैं । उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया ।

नवद्वीप—यह घर में शास्त्र पढ़ता है । इस देश में वेद एक प्रकार

से अप्राप्य ही थे। मैक्समूलर ने उन्हें छपवाया, इसी से तो लोग अब उनको पढ़ सकते हैं।

श्रीरामकृष्ण—अधिक शास्त्र पढ़ने से और भी हानि होती है।

"शास्त्र का सार जान लेना चाहिए। फिर ग्रन्थ की क्या आवश्यकता है?

"शास्त्र का सार जान लेने पर डुबकी लगानी चाहिए—ईश्वर का लाभ करने के लिए।

"मुझे माँ ने बतला दिया है कि वेदान्त का सार यही है 'ब्रह्म सत्य और जगत् मिथ्या।' गीता का सार क्या है? दस बार 'गीता' शब्द कहने से जो हो वही—अर्थात् त्यागी, त्यागी।

नवद्वीप—ठीक 'त्यागी' नहीं बनता, 'तागी' होता है। फिर उसका भी धातु-घटित अर्थ वही है।

श्रीरामकृष्ण—गीता का सार यही है कि हे जीव, सब त्यागकर भगवान् का लाभ करने के लिए साधना करो।

नवद्वीप—त्याग की ओर तो मन नहीं जाता?

श्रीरामकृष्ण—तुम लोग गोस्वामी हो, तुम्हारे यहाँ देवसेवा होती है,—तुम्हारे संसार त्याग करने पर काम नहीं चलेगा। ऐसा करने से देवसेवा कौन करेगा? तुम लोग मन से त्याग करना।

"ईश्वर ही ने लोकशिक्षा के लिए तुम लोगों को संसार में रखा है। तुम हज़ार संकल्प करो, त्याग नहीं कर सकोगे। उसने तुम्हें ऐसी प्रकृति दी है कि तुम्हें संसार में संसार का काम-काज करना ही पड़ेगा।

"श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—तुम 'युद्ध नहीं करूँगा'—यह क्या कह रहे हो ? इच्छा करने ही से तुम युद्ध से निवृत्त न हो सकोगे ! तुम्हारी प्रकृति तुमसे युद्ध करायेगी।"

श्रीकृष्ण अर्जुन से बातें करते हैं—यह कहते ही श्रीरामकृष्ण फिर समाधिस्थ हो रहे हैं। बात की बात में सब अंग स्थिर हो गए। आँखें एकटक हो गईं। साँस चल रही थी कि नहीं—जान नहीं पड़ता था।

नवद्वीप गोस्वामी, उनके लड़के और भक्तगण निर्वाक् हो यह दृश्य देख रहे हैं।

कुछ प्रकृतिस्थ हो श्रीरामकृष्ण नवद्वीप से कहते हैं—

"योग और भोग। तुम लोग गोस्वामी वंश के हो, तुम लोगों के लिए दोनों हैं।

"अब केवल प्रार्थना—हार्दिक प्रार्थना करो कि हे ईश्वर, तेरी इस भुवन-मोहिनी माया के ऐश्वर्य को मैं नहीं चाहता,—मैं तुझे चाहता हूँ।

"ईश्वर तो सब प्राणियों में है। फिर भक्त किसे कहते हैं ? जो ईश्वर में रहता है—जिसका मन, प्राण, अन्तरात्मा—सब कुछ उसमें लीन हो गया है।"

अब श्रीरामकृष्ण सहज दशा में आ गये हैं। नवद्वीप से कहते हैं—

"मुझे यह जो अवस्था होती है (समाधि अवस्था), इसे कोई-कोई रोग कहते हैं। इस पर मेरा कहना यह है कि जिसके चैतन्य से

जगत् चैतन्यमय है, उसकी चिन्ता कर कोई अचैतन्य कैसे हो सकता है ?"

श्रीयुत मणि सेन अभ्यागत ब्राह्मणों और वैष्णवों को बिदा कर रहे हैं—उनकी मर्यादा के अनुसार किसी को एक रुपया, किसी को दो रुपये बिदाई देते हैं। श्रीरामकृष्ण को पाँच रुपये देने आये। आप बोले, —'मुझे रुपये न लेने चाहिए।' तो भी मणि सेन नहीं मानते। तब श्रीरामकृष्ण ने कहा, यदि रुपये दोगे तो तुम्हें तुम्हारे गुरु की शपथ है। मणि सेन इतने पर भी देने आये। तब श्रीरामकृष्ण ने अधीर होकर मास्टर से कहा,—'क्यों जी, लेना चाहिए?' मास्टर ने बड़ी आपत्ति से कहा, 'कभी नहीं।'

श्रीयुत मणि सेन के घरवालों ने तब आम और मिठाई खरीदने के नाम पर राखाल के हाथ में रुपये दिये।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—मैंने गुरु की शपथ दी है—मैं अब मुक्त हूँ। राखाल ने रुपये लिए हैं—अब वह जाने !

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ गाड़ी पर बैठ दक्षिणेश्वर लौट जायेंगे।

निराकार ध्यान और श्रीरामकृष्ण।

मार्ग में मोती शील का ठाकुरद्वारा है। श्रीरामकृष्ण बहुत दिनों से मास्टर से कहते आये हैं—एक साथ आकर इस ठाकुरद्वारे की झील को देखेंगे—यह सिखलाने के लिए कि निराकार ध्यान कैसे आरोप करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण को खूब सर्दी हुई है, तथापि भक्तों के साथ ठाकुर-द्वारा देखने के लिए गाड़ी से उतरे।

मन्दिर में श्रीगौरांग की पूजा होती है। अभी सन्ध्या होने में कुछ देर है।

श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ गौरांग-मूर्ति के सम्मुख भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया।

अब मन्दिर के पूरब ओर जो झील है, उसके घाट पर आकर पानी की लहरों और मछलियों को देख रहे हैं। कोई मछलियों की हिंसा नहीं करता। कुछ चारा फेंकने पर बड़ी बड़ी मछलियों के झुण्ड सामने आकर खाने लगते हैं—फिर निर्भय होकर आनन्द से पानी में घूमती-फिरती हैं।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कहते हैं—"यह देखो, कैसी मछलियाँ हैं! चिदानन्द-सागर में इन मछलियों की तरह आनन्द से विचरण करो।"

(३)

आत्मदर्शन का उपाय। नित्य-लीला योग।

श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ते में बलराम के मकान पर शुभागमन किया है। मास्टर पास बैठे हैं, राखाल भी है। श्रीरामकृष्ण भावमग्न हुए हैं। आज ज्येष्ठ कृष्ण पंचमी, सोमवार, २५ जून १८८३ ई०। समय दिन के पाँच बजे का होगा?

श्रीरामकृष्ण (भाव के आवेश में)—देखो, अन्तर से पुकारने पर

अपने स्वरूप को देखा जाता है, परन्तु विषयभोग की वासना जितनी रहती है, उतनी ही बाधा पड़ती है।

मास्टर—जी, आप जैसा कहते हैं, डुबकी लगाना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण (आनन्दित होकर)—बहुत ठीक।

सभी चुप हैं, श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—देखो, सभी को आत्मदर्शन हो सकता है।

मास्टर—जी, परन्तु ईश्वर कर्ता हैं; वे अपनी इच्छानुसार भिन्न भिन्न प्रकार से प्रकट हो रहे हैं। किसी को चैतन्य दे रहे हैं, किसी को अज्ञानी बनाकर रखा है।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करनी पड़ती है। आन्तरिक होने पर वे प्रार्थना अवश्य सुनेंगे।

एक भक्त—जी हाँ, 'मैं' है, इसलिए प्रार्थना करनी होगी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—लीला के सहारे नित्य में जाना होता है—जिस प्रकार सीढ़ी पकड़-पकड़ कर छत पर चढ़ना होता है। नित्य-दर्शन के बाद नित्य से लीला में आकर रहना होता है, भक्तों के साथ भक्ति लेकर। यही मेरा परिपक्व मत है।

"उनके अनेक रूप, अनेक लीलाएँ हैं। ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, जगत्-लीला। वे मानव बनकर, अवतार होकर युग-युग में

आते हैं,—प्रेम-भक्ति सिखाने के लिए। देखो न चैतन्य देव को। अवतार द्वारा ही उनके प्रेम तथा भक्ति का आस्वादन किया जा सकता है। उनकी अनन्त लीलाएँ हैं—परन्तु मुझे आवश्यकता है प्रेम तथा भक्ति की। मुझे तो सिर्फ दूध चाहिए। गाय के स्तनों से ही दूध आता है। अवतार गाय के स्तन हैं।"

क्या श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं कि वे अवतीर्ण हुए हैं, उनका दर्शन करने से ही ईश्वर का दर्शन होता है? चैतन्य देव का उल्लेख कर क्या श्रीरामकृष्ण अपनी ओर संकेत कर रहे हैं?

जे. एस. मिल और श्रीरामकृष्ण; मानव की सीमाबद्धता।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर देवालय में शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर बैठे हैं। ज्येष्ठ मास, १८८३ ई०, खूब गर्मी पड़ रही है। थोड़ी देर बाद सायंकाल होगा। बरफ आदि लेकर मास्टर आये हैं और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर उनके चरणों के पास शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—मणि मल्लिक की पोती का स्वामी आया था। उन्होंने किसी पुस्तक में* पढ़ा है, ईश्वर वैसे ज्ञानी, सर्वज्ञ नहीं जान पड़ते। नहीं तो इतना दुःख क्यों? और यह जो जीव की मौत होती है, उन्हें एक बार में मार डालना ही अच्छा होता है, धीरे-धीरे अनेक कष्ट देकर मारना क्यों? जिसने पुस्तक लिखी है, उसने कहा है कि यदि वह होता तो इससे बढ़िया सृष्टि कर सकता था!

मास्टर विस्मित होकर श्रीरामकृष्ण की बातें सुन रहे हैं और बड़े आनन्द से बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं—

---

* John Stuart Mill's Autobiography.

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—उन्हें क्या समझा जाता है जी? मैं भी कभी उन्हें अच्छा मानता हूँ और कभी बुरा। अपनी महामाया के भीतर हमें रखा है। कभी वह होश में लाते हैं, तो कभी बेहोश कर देते हैं। एक बार अज्ञान दूर हो जाता है, दूसरी बार फिर आकर घेर लेता है। तालाब का जल सिवार से ढँका हुआ है। पत्थर फेंकने पर कुछ जल दिखाई देता है, फिर थोड़ी देर बाद सिवार नाचते-नाचते आकर उस जल को भी ढक लेता है।

"जब तक देहबुद्धि है, तभी तक सुख-दुःख, जन्म-मृत्यु, रोग-शोक हैं। ये सब देह के हैं, आत्मा के नहीं। देह की मृत्यु के बाद सम्भव है वे अच्छे स्थान पर ले जाएँ— जिस प्रकार प्रसव-वेदना के बाद सन्तान की प्राप्ति! आत्मज्ञान होने पर सुख-दुःख, जन्म-मृत्यु स्वप्न जैसे लगते हैं।

"हम क्या समझेंगे? क्या एक सेर के लोटे में दस सेर दूध आ सकता है? नमक का पुतला समुद्र नापने जाकर फिर खबर नहीं देता। गलकर उसी में मिल जाता है।"

सन्ध्या हुई, मन्दिरों में आरती हो रही है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटी खटिया पर बैठकर जगज्जननी का चिन्तन कर रहे हैं। राखाल, लाटू, रामलाल, किशोरी गुप्त आदि भक्तगण उपस्थित हैं। मास्टर आज रात को ठहरेंगे। कमरे के उत्तर की ओर एक छोटे बरामदे में श्रीरामकृष्ण एक भक्त के साथ एकान्त में बातें कर हैं। कह रहे हैं, 'भोर में तथा उत्तर-रात्रि में ध्यान करना ठीक है और प्रति दिन सन्ध्या के बाद।' किस प्रकार ध्यान करना चाहिए, साकार ध्यान, अरूप ध्यान, यह सब बता रहे हैं।

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण पश्चिम के गोल बरामदे में बैठ गए। रात के नौ बजे का समय होगा। मास्टर पास बैठे हैं, राखाल आदि बीच-बीच में कमरे के भीतर आ-जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—देखो, यहाँ पर जो लोग आयेंगे, सभी का सन्देह मिट जायगा, क्या कहते हो ?

मास्टर—जी, हाँ।

उसी समय गंगाजी में काफ़ी दूरी पर माँझी अपनी नाव खेता हुआ गाना गा रहा है। संगीत की वह ध्वनि मधुर अनाहत ध्वनि की तरह अनन्त आकाश के बीच में से होकर मानो गंगाजी के विशाल वक्ष को स्पर्श करती हुई श्रीरामकृष्ण के कानों में प्रविष्ट हुई। श्रीरामकृष्ण उसी समय भावाविष्ट हो गए ! सारे शरीर के रोंगटे खड़े हो उठे। श्रीरामकृष्ण मास्टर का हाथ पकड़कर कह रहे हैं, " देखो, देखो, मेरे रोंगटे खड़े हो रहे हैं। मेरे शरीर पर हाथ रखकर देखो।" प्रेम से आविष्ट उनके उस रोंगटेवाले शरीर को छूकर वे विस्मित हो गए। उपनिषद् में कहा गया है कि वे विश्व में, आकाश में " ओतप्रोत " होकर विद्यमान हैं—, क्या वे ही शब्द के रूप में श्रीरामकृष्ण को स्पर्श कर रहे हैं, क्या यही शब्दब्रह्म है ? *

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप कर रहे हैं।

---

* ' एतस्मिन् नु खलु अक्षरे गार्गि आकाश ओतश्च प्रोतश्च। '

—बृहदारण्यक, ३-८-११।

शब्दः खे पौरुषं नृषु। —गीता, ७।८

श्रीरामकृष्ण—जो लोग यहाँ पर आते हैं, उनका शुभ संस्कार है; क्या कहते हो ?

मास्टर—जी, हाँ ।

श्रीरामकृष्ण—अधर का वैसा संस्कार था ।

मास्टर—इसमें क्या कहना है ।

श्रीरामकृष्ण—सरल होने पर ईश्वर शीघ्र प्राप्त होते हैं । फिर दो पथ हैं,—सत् और असत्, सत् पथ से चले जाना चाहिए ।

मास्टर—जी हाँ, धागे का मुँह थोड़ा भी फैला रहने पर सुई के भीतर नहीं जाता ।

श्रीरामकृष्ण—ग्रास के साथ मुँह में केश चले जाने पर सब का सब थूककर फेंक देना पड़ता है ।

मास्टर—परन्तु आप जैसे कहते हैं, जिन्होंने ईश्वर का दर्शन किया है, असत्-संग उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता, प्रखर अग्नि में केले का पेड़ तक जल जाता है !

परिच्छेद २५

कीर्तनानन्द में

(१)

अधर के मकान पर चण्डी का संगीत।

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण कलकत्ते के बेनेटोला में अधर के मकान पर पधारे हैं। आषाढ़ शुक्ल दशमी, १४ जुलाई १८८३, शनिवार। अधर श्रीरामकृष्ण को राजनारायण का चण्डी-संगीत सुनायेंगे। राखाल, मास्टर आदि साथ हैं। ठाकुर-घर के बरामदे में गाना हो रहा है। राजनारायण गाने लगे—

(संगीत–भावार्थ)

"अभय पद में प्राणों को सौंप दिया है, फिर मुझे यम का क्या भय है? आत्मारूपी सिर की शिखा में काली नामक महामंत्र बाँध लिया है। मैं इस संसाररूपी बाजार में अपने शरीर को बेचकर श्रीदुर्गा-नाम खरीद लाया हूँ। काली-नामरूपी कल्पतरु को हृदय में बो दिया है। अब यम के आने पर हृदय खोलकर दिखाऊँगा, इसलिए बैठा हूँ। देह में छ: दुष्ट हैं, उन्हें भगा दिया है। मैं जय दुर्गा, श्री दुर्गा कहकर रवाना होने के लिए बैठा हूँ।"

श्रीरामकृष्ण थोड़ा सुनकर भावाविष्ट हो खड़े हो गये और मण्डली के साथ सम्मिलित होकर गाना गा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण पद जोड़ रहे हैं,—"ओ माँ, रखो माँ !" पद जोड़ते-जोड़ते एकदम समाधिस्थ ! बाह्य-ज्ञानशून्य, निस्पन्द होकर खड़े हैं। फिर गायक गा रहे हैं,—

(संगीत–भावार्थ)

"यह किसकी कामिनी रणांगण को आलोकित कर रही है, मानो इसकी देह-कान्ति के सामने जलधर बादल हार मानता है और दाँतों की ज्योति ही मानो बिजली की चमक है ?"

श्रीरामकृष्ण फिर समाधिस्थ हुए।

गाना समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण अधर के बैठकघर में जाकर भक्तों के साथ बैठ गये। ईश्वरीय चर्चा हो रही है। इस प्रकार भी वार्तालाप हो रहा है कि कोई-कोई भक्त मानो 'अन्तःसार फल्गु नदी है, ऊपर भाव का कोई प्रकाश नहीं !'

(२)

भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर से गाड़ी पर कलकत्ते की ओर जा रहे हैं—साथ में रामलाल और दो-एक भक्त हैं। फाटक से निकलते ही उन्होंने देखा कि मणि चार फजली आम लिए हुए पैदल आ रहे हैं। मणि को देखकर गाड़ी को रोकने के लिए कहा। मणि ने गाड़ी पर सिर टेककर प्रणाम किया।

आज शनिवार, २१ जुलाई, १८८३ ई० आषाढ़ कृष्ण प्रतिपदा; दिन के चार बजे हैं। श्रीरामकृष्ण अधर के घर जायेंगे, उसके बाद यदु मल्लिक के घर; और फिर ख० खेलात घोष के यहाँ जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से हँसते हुए)—तुम भी आओ न, हम अधर के यहाँ जा रहे हैं।

मणि 'जैसी आपकी आज्ञा' कहकर गाड़ी पर बैठ गये।

मणि अँग्रेजी पढ़े लिखे हैं, इसी से संस्कार नहीं मानते थे; पर कुछ दिन हुए श्रीरामकृष्ण के पास यह स्वीकार कर गये थे कि अधर के संस्कार थे, इसी से वे उनकी इतनी भक्ति करते हैं। घर लौटकर विचार करने पर मास्टर ने देखा कि संस्कार के बारे में अभी तक उनको पूर्ण विश्वास नहीं हुआ। यही कहने के लिए आज श्रीरामकृष्ण से मिलने आये। श्रीरामकृष्ण बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, अधर को तुम कैसा समझते हो?

मणि—उनका बहुत अनुराग है।

श्रीरामकृष्ण—अधर भी तुम्हारी बड़ी प्रशंसा करता है।

मणि कुछ देर तक चुप रहे, फिर पूर्वजन्म के संस्कार की बात उठाई।

'ईश्वर के कार्य समझना असम्भव है।'

मणि—मुझे 'पूर्वजन्म' और 'संस्कार' आदि पर उतना विश्वास नहीं है; क्या इससे मेरी भक्ति में कोई बाधा आयेगी?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर की सृष्टि में सब कुछ हो सकता है—यह विश्वास ही पर्याप्त है। मैं जो सोचता हूँ वही सत्य है, और सब का मत मिथ्या है—ऐसा विचार मन में न आने देना। बाकी ईश्वर ही समझा देगा।

"ईश्वर के कार्यों को मनुष्य क्या समझेगा? कार्य अनन्त हैं इसलिए मैं इनको समझने का थोड़ा भी प्रयत्न नहीं करता। मैंने सुन

रखा है कि उसकी सृष्टि में सब कुछ हो सकता है। इसीसे इन सब बातों की चिन्ता न कर केवल ईश्वर ही की चिन्ता करता हूँ। हनुमान से पूछा गया था आज कौनसी तिथि है; हनुमान ने कहा था—मैं तिथि, नक्षत्र आदि नहीं जानता, केवल एक राम की चिन्ता करता हूँ।

"ईश्वर के कार्य क्या कुछ समझ में आते हैं? वह तो पास ही है—पर यह समझना कितना कठिन है! बलराम कृष्ण को भगवान् नहीं जानते थे।"

मणि—जी हाँ। आपने भीष्मदेव की बात जैसी कही थी।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, हाँ! क्या कहा था, कहो तो।

मणि—भीष्मदेव शरशय्या पर पड़े रो रहे थे। पाण्डवों ने श्रीकृष्ण से कहा, भाई, यह कैसा आश्चर्य है! पितामह इतने ज्ञानी होकर भी मृत्यु का विचार कर रो रहे हैं? श्रीकृष्ण ने कहा, उनसे पूछो न, क्यों रोते हैं। भीष्मदेव बोले, मैं यह विचार कर रोता हूँ कि भगवान् के कार्य को कुछ भी न समझ सका। हे कृष्ण, तुम इन पाण्डवों के साथ फिरते हो, पग पग पर इनकी रक्षा करते हो, फिर भी इनकी विपद् का अन्त नहीं।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर ने अपनी माया से सब कुछ ढक रखा है—कुछ जानने नहीं देता। कामिनी और कांचन ही माया है। इस माया को हटाकर जो ईश्वर के दर्शन करता है, वही उसे देख पाता है। एक आदमी को समझाते समय ईश्वर ने एक चमत्कार दिखलाया। अचानक सामने देखा देश (कामारपुकुर) का एक तालाब, और एक आदमी ने काई हटाकर उससे जल पिया। जल स्फटिक की तरह

साफ़ था। इससे यह सूचित हुआ कि वह सच्चिदानन्द मायारूपी काई से ढका हुआ है;—जो काई हटाकर जल पीता है वही पाता है।

"सुनो, तुमसे बड़ी गूढ़ बातें कहता हूँ। झाउओं के तले बैठे हुए देखा कि चारखाने का सा एक दरवाज़ा सामने है। कोठरी के अन्दर क्या है, यह तो मुझे मालूम नहीं पड़ा। मैं एक नहन्नी से छेद करने लगा, पर कर न सका। मैं छेदता रहा, पर वह बार बार भर जाता था। लेकिन पीछे से एक बार इतना बड़ा छेद बना!"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण चुप रहे। फिर बोलने लगे—ये सब बड़ी ऊँची बातें हैं। वह देखो, कोई मानो मेरा मुँह दबा देता है।

"ईश्वर के चैतन्य से जगत् चैतन्यमय है। कभी कभी देखता हूँ कि छोटी छोटी मछलियों में वही चैतन्य घूम-फिर रहा है।"

गाड़ी दरमाहट्टा के निकट पहुँची। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं।

"कभी कभी देखता हूँ कि वर्षा में जिस प्रकार पृथ्वी जल से ओतप्रोत रहती है, उसी प्रकार इस चैतन्य से जगत् ओतप्रोत है।

"इतना सब दिखलाई तो पड़ता है, पर मुझे अभिमान नहीं होता।"

मणि (सहास्य)—आपका अभिमान कैसा!

श्रीरामकृष्ण—शपथ खाके कहता हूँ, थोड़ा भी अभिमान नहीं होता।

मणि—ग्रीस देश में सुकरात नाम का एक आदमी था। यह दैववाणी हुई थी कि सब लोगों में वही ज्ञानी है। उसे अचम्भा हुआ। बहुत देर तक निर्जन में चिन्ता करने पर उसे भेद मालूम हुआ। तब

उसने अपने बान्धवों से कहा, केवल मुझको ही मालूम हुआ है कि मैं कुछ नहीं जानता; पर दूसरे सब लोग कहते हैं कि हमें खूब ज्ञान हुआ है। लेकिन वास्तव में सभी अनजान हैं।

श्रीरामकृष्ण—मैं कभी कभी सोचता हूँ कि मैं जानता ही क्या हूँ कि इतने लोग यहाँ आते हैं! वैष्णवचरण बड़ा पण्डित था। वह कहता था कि तुम जो कुछ कहते हो सब शास्त्रों में पाया जाता है। तो फिर तुम्हारे पास क्यों आता हूँ? तुम्हारे मुँह से वही सब सुनने के लिए।

मणि—आपकी सब बातें शास्त्र से मिलती हैं। नवद्वीप गोस्वामी भी उस दिन पानीहाटी में यही बात कहते थे। आपने कहा था न— 'गीता' 'गीता' बार बार कहने से 'त्यागी' 'त्यागी' हो जाता है। आपकी इसी बात पर।

श्रीरामकृष्ण—मेरे साथ क्या दूसरों का कुछ मिलता जुलता है? किसी पण्डित या किसी साधु का?

मणि—आपको ईश्वर ने स्वयं अपने हाथों से बनाया है। और दूसरों को मशीन में डालकर। जैसे नियम के अनुसार सृष्टि होती है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य, रामलाल आदि से)—अरे, कहता क्या है!

श्रीरामकृष्ण की हँसी रुकती ही नहीं। अन्त में उन्होंने कहा— शपथ खाता हूँ, मुझे इससे तनिक भी अभिमान नहीं होता।

मणि—विद्या से एक लाभ होता है। उससे यह मालूम हो जाता है कि मैं कुछ नहीं जानता, और मैं कुछ नहीं हूँ।

श्रीरामकृष्ण—ठीक है, ठीक है। मैं कुछ नहीं हूँ! मैं कुछ नहीं हूँ! अच्छा, अँग्रेजी ज्योतिष पर तुम्हें विश्वास है?

मणि—उन लोगों के नियम के अनुसार नये आविष्कार हो सकते हैं; युरेनस (Uranus) ग्रह की अनियमित चाल देखकर उन्होंने दुर्बीन से पता लगाकर देखा कि एक नया ग्रह (Neptune) चमक रहा है। और उससे ग्रहण की गणना भी हो सकती है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, होती है।

गाड़ी चल रही है—प्रायः अधर के मकान के पास आ गई है। श्रीरामकृष्ण मणि से कहते हैं—सत्य में रहना, तभी ईश्वर मिलेगा।

मणि—एक और बात आपने नवद्वीप गोस्वामी से कही थी—'हे ईश्वर, मैं तुझे ही चाहता हूँ। देखना, अपनी भुवनमोहिनी माया के ऐश्वर्य से मुझे मुग्ध न करना। मैं तुझे ही चाहता हूँ।'

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह दिल से कहना होगा।

परिच्छेद २६

ज्ञानयोग और निर्वाण मत

(१)

पण्डित पद्मलोचन। विद्यासागर।

आषाढ़ की कृष्णा तृतीया तिथि है, २२ जुलाई, १८८३ ई०। आज रविवार है। भक्त लोग अवसर पाकर श्रीरामकृष्ण के दर्शनों के लिए फिर आए हैं। अधर, राखाल और मास्टर कलकत्ते से एक गाड़ी पर दिन के एक दो बजे दक्षिणेश्वर पहुँचे। श्रीरामकृष्ण भोजन के पश्चात् थोड़ी देर आराम कर चुके हैं। कमरे में मणि मल्लिक आदि भी भक्त बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर उत्तर की ओर मुँह किए बैठे हैं। भक्त लोग जमीन पर—कोई चटाई और कोई आसन पर—बैठे हैं। सभी महापुरुष की आनन्द-मूर्ति को एकटक देख रहे हैं। कमरे के पास ही, पश्चिम ओर गंगाजी दक्षिण की ओर बह रही हैं। वर्षा ऋतु के कारण स्रोत बड़ा प्रबल था, मानो गंगाजी सागर-संगम पर पहुँचने के लिए बड़ी व्यग्र हो, केवल राह में क्षणभर के लिए महापुरुष के ध्यान-मन्दिर के दर्शन और स्पर्श करती हुई जा रही थीं।

श्रीयुत मणि मल्लिक पुराने ब्राह्मभक्त हैं। उनकी उम्र साठ-पैंसठ वर्ष की है। कुछ दिन हुए वे काशी गये थे। आज श्रीरामकृष्ण से मिलने आए हैं और उनसे काशी-दर्शन का वर्णन कर रहे हैं।

मणि मल्लिक—एक और साधु को देखा। वे कहते हैं कि बिना इन्द्रिय-संयम के कुछ नहीं होगा। सिर्फ ईश्वर की रट लगाने से क्या हो सकता है?

श्रीरामकृष्ण—इन लोगों का मत यह है कि पहले साधना चाहिए—शम, दम, तितिक्षा चाहिए। ये निर्वाण के लिए चेष्टा कर रहे हैं। ये वेदान्ती हैं, सदैव विचार करते हैं, 'ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या।' बड़ा कठिन मार्ग है। यदि जगत् मिथ्या हुआ तो तुम भी मिथ्या हुए। जो कह रहे हैं वे स्वयं मिथ्या हैं, उनकी बातें भी स्वप्नवत् हैं। बड़ी दूर की बात है।

"एक दृष्टान्त देकर समझाता हूँ। जैसे कपूर जलाने पर कुछ भी शेष नहीं रहता, मगर लकड़ी जलाने पर राख बाकी रह जाती है। अन्तिम विचार के बाद समाधि होती है। तब 'मैं' 'तुम' 'जगत्' इन सबका कोई पता ही नहीं रहता।

"पद्मलोचन बड़ा ज्ञानी था, इधर मैं तो 'माँ माँ' कहकर प्रार्थना करता था, तो भी मुझे खूब मानता था। वह बर्दवान राज का सभा-पण्डित था। कलकत्ते में आया था—कामारहाटी के पास एक बागमें रहता था। पण्डित को देखने की मेरी इच्छा हुई। मैंने हृदय को यह जानने के लिए भेजा कि पण्डित को अभिमान है या नहीं। सुना कि अभिमान नहीं है। मुझसे उसकी भेंट हुई। वह तो उतना ज्ञानी और पण्डित था, परन्तु मेरे मुँह से रामप्रसाद के गाने सुनकर रो पड़ा! बातें करके ऐसा सुख मुझे कहीं और नहीं मिला। उसने मुझसे कहा, 'भक्तों का सङ्ग करने की कामना त्याग दो, नहीं तो तरह तरह के लोग हैं, वे

तुमको गिरा देंगे।' वैष्णवचरण के गुरु उत्सवानन्द से उसने पत्र-व्यवहार करके विचार किया था, फिर मुझसे कहा, आप भी ज़रा सुनिये। एक सभा में विचार हुआ था, —शिवजी बड़े हैं या ब्रह्माजी? अन्त में पण्डितों ने पद्मलोचन से पूछा। पद्मलोचन ऐसा सरल था कि उसने कहा, 'मेरे चौदह पुरखों में से किसी ने न तो शिवजी को देखा और न ब्रह्मा जी को ही।' 'कामिनी-कांचन का त्याग' सुनकर एक दिन उसने मुझसे कहा, 'उन सब का त्याग क्यों कर रहे हो? यह रुपया है, वह मिट्टी है,—यह भेदबुद्धि तो अज्ञान से पैदा होती है।' मैं क्या कह सकता था —बोला, 'क्या मालूम, पर मुझे रुपया-पैसा आदि रुचता ही नहीं।'

"एक पण्डित को बड़ा अभिमान था। वह ईश्वर का रूप नहीं मानता था। परन्तु ईश्वर का कार्य कौन समझे? वे आद्याशक्ति के रूप में उसके सामने प्रकट हुए। पण्डित बड़ी देर तक बेहोश रहा। ज़रा होश सँभालने पर लगातार 'का, का, का' (अर्थात्, काली) की रट लगाता रहा।"

भक्त—महाराज, आपने विद्यासागर को देखा है? कैसा देखा?

श्रीरामकृष्ण—विद्यासागर के पाण्डित्य है, दया है लेकिन अन्तर्दृष्टि नहीं है। भीतर सोना दबा पड़ा है, यदि इसकी खबर उसे होती तो इतना बाहरी काम जो वह कर रहा है, वह सब घट जाता और अन्त में एकदम त्याग हो जाता। भीतर, हृदय में ईश्वर है यह बात जानने पर उन्हीं के ध्यान और चिन्तन में मन लग जाता। किसी किसी को बहुत दिन तक निष्काम कर्म करते करते अन्त में वैराग्य होता है और मन उधर मुड़ जाता है—ईश्वर से लग जाता है।

"जैसा काम ईश्वर विद्यासागर कर रहा है वह बहुत अच्छा है। दया बहुत अच्छी है। दया और माया में बड़ा अन्तर है। दया अच्छी है, माया अच्छी नहीं। माया का अर्थ आत्मीयों से प्रेम है—अपनी स्त्री, पुत्र, भाई, बहन, भतीजा, भाञ्जा, माँ, बाप इन्हीं से। दया—सब प्राणियों से समान प्रेम है।"

(२)

ब्रह्म त्रिगुणातीत। 'मुँह से नहीं बताया जा सकता।'

मास्टर—क्या दया भी एक बन्धन है?

श्रीरामकृष्ण—वह तो बहुत दूर की बात ठहरी। दया सतोगुण से होती है। सतोगुण से पालन, रजोगुण से सृष्टि और तमोगुण से संहार होता है, परन्तु ब्रह्म सत्व, रजः, तमः इन तीनों गुणों से परे है—प्रकृति से परे है।

"जहाँ यथार्थ तत्व है वहाँ तक गुणों की पहुँच नहीं। जैसे चोर-डाकू किसी ठीक जगह पर नहीं जा सकते; वे डरते हैं कि कहीं पकड़े न जायँ। सत्व, रजः, तमः ये तीनों गुण डाकू हैं। एक कहानी सुनाता हूँ।

"एक आदमी जंगल की राह से जा रहा था कि तीन डाकुओं ने उसे पकड़ा। उन्होंने उसका सब कुछ छीन लिया। एक डाकू ने कहा 'इसे जीवित रखने से क्या लाभ?' यह कहकर वह तलवार से उसे काटने आया। तब दूसरे डाकू ने कहा, 'नहीं जी, काटने से क्या होगा? इसके हाथ-पैर बाँधकर यहीं छोड़ दो।' वैसा करके डाकू उसे वहीं छोड़कर चले गए। थोड़ी देर बाद उनमें से एक लौट आया और

कहा, 'ओह ! तुम्हें चोट लगी ! आओ, मैं तुम्हारा बन्धन खोल देता हूँ।' उसे मुक्त कर डाकू ने कहा, 'आओ मेरे साथ, तुम्हें सड़क पर पहुँचा दूँ।' बड़ी देर में सड़क पर पहुँचकर उसने कहा, 'इस रास्ते से चले जाओ, वह तुम्हारा मकान दिखता है।' तब उस आदमी ने डाकू से कहा, 'भाई, आपने मेरा बड़ा उपकार किया; अब आप भी चलिए, मेरे मकान तक; आइए।' डाकू ने कहा, 'नहीं, मैं वहाँ नहीं जा सकता पुलिस को खबर लग जायगी।'

"यह संसार ही जंगल है। इसमें सत्व, रजः, तमः ये तीन डाकू रहते हैं—वे जीवों का तत्वज्ञान छीन लेते हैं। तमोगुण मारना चाहता है; रजोगुण संसार में फँसाता है; पर सतोगुण रजः और तमः से बचाता है। सत्वगुण का आश्रय मिलने पर काम, क्रोध आदि तमोगुणों से रक्षा होती है। फिर सतोगुण जीवों का ससार-बन्धन तोड़ देता है; लेकिन सतोगुण भी डाकू है—वह तत्त्वज्ञान नहीं दे सकता। हाँ, वह जीव को उस परमधाम में जाने की राह तक पहुँचा देता है और कहता है, 'वह देखो, तुम्हारा मकान वह दीख रहा है!' जहाँ ब्रह्मज्ञान है, वहाँ से सतोगुण भी बहुत दूर है।

"ब्रह्म क्या है, यह मुँह से नहीं बताया जा सकता। जिसे उसका पता लगता है वह फिर खबर नहीं दे सकता। लोग कहते हैं कि कालेपानी में जाने पर जहाज़ फिर नहीं लौटता।

"चार मित्रों ने घूमते-फिरते ऊँची दीवार से घिरी एक जगह देखी। भीतर क्या है यह देखने के लिए सभी बहुत ललचाये। एक दीवार पर चढ़ गया। झाँककर उसने जो देखा तो दंग रह गया, और 'हा हा हा हा' कहते हुए भीतर गिर पड़ा! फिर कोई खबर नहीं दी। इस

तरह जो कोई चढ़ा, वही 'हा हा हा हा' कहते हुए गिर गया! फिर खबर कौन दे!

"जड़-भरत, दत्तात्रेय—ये ब्रह्मदर्शन के पश्चात् फिर खबर नहीं दे सके। ब्रह्मज्ञान के उपरान्त समाधि होने से फिर 'अहं' नहीं रहता। इसीलिए रामप्रसाद ने कहा है, 'यदि अकेले सम्भव न हो तो मन, रामप्रसाद को साथ ले।' मन की लय होनी चाहिए, फिर 'रामप्रसाद' की, अर्थात् अहं तत्त्व की भी लय होनी चाहिए। तब कहीं वह ब्रह्मज्ञान मिल सकता है।"

एक भक्त—महाराज, क्या, शुकदेव को ज्ञान नहीं हुआ था?

श्रीरामकृष्ण—कितने कहते हैं कि शुकदेव ने ब्रह्म-समुद्र को देखा और छुआ ही भर था, उसमें पैठकर गोता नहीं लगाया। इसीलिए लौटकर उतना उपदेश दे सके। कोई कहता है, ब्रह्मज्ञान के पश्चात् वे लौट आए थे—लोकशिक्षा देने के लिए। परीक्षित को भागवत सुनाना था और कितनी ही लोकशिक्षा देनी थी—इसीलिए ईश्वर ने उनके सम्पूर्ण अहं-तत्व की लय नहीं की। एकमात्र 'विद्या का अहं' रख छोड़ा था।

केशव को शिक्षा। 'दल (साम्प्रदायिकता) अच्छा नहीं।'

एक भक्त—क्या ब्रह्मज्ञान होने के बाद सम्प्रदाय आदि चलाया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण—केशव सेन से ब्रह्मज्ञान की चर्चा हो रही थी। केशव ने कहा, आगे कहिये। मैंने कहा, और आगे कहने से सम्प्रदाय

आदि नहीं रहेगा।' इस पर केशव ने कहा, तो फिर रहने दीजिये। (सब हँसे।) तो भी मैंने कहा, 'मैं' और 'मेरा'—यह कहना अज्ञान है। 'मैं कर्ता हूँ, और यह स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति, मान, प्रतिष्ठा—यह सब मेरा है' यह विचार बिना अज्ञान के नहीं होता। तब केशव ने कहा, महाराज, 'अहं' को त्याग देने से तो फिर कुछ रहता ही नहीं। मैंने कहा, केशव, मैं तुमसे पूरा 'अहं' त्यागने को नहीं कहता हूँ, तुम 'कच्चा अहं' छोड़ दो। 'मैं कर्ता हूँ', 'यह स्त्री और पुत्र मेरा है', 'मैं गुरु हूँ'—इस तरह का अभिमान 'कच्चा अहं' है—इसी को छोड़ दो। इसे छोड़कर 'पक्का अहं' बनाये रखो। 'मैं ईश्वर का दास हूँ, उनका भक्त हूँ; मैं अकर्ता हूँ और वे ही कर्ता हैं,—ऐसा सोचते रहो।

एक भक्त—क्या 'पक्का अहं' सम्प्रदाय बना सकता है?

श्रीरामकृष्ण—मैंने केशव सेन से कहा, 'मैं सम्प्रदाय का नेता हूँ, मैंने सम्प्रदाय बनाया है, मैं लोगों को शिक्षा दे रहा हूँ'—इस तरह का अभिमान 'कच्चा अहं' है। किसी मत का प्रचार करना बड़ा कठिन काम है। वह ईश्वर की आज्ञा बिना नहीं हो सकता। ईश्वर का आदेश होना चाहिए। शुकदेव को भागवत की कथा सुनाने के लिए आदेश मिला था। यदि ईश्वर का साक्षात्कार होने के बाद किसी को आदेश मिले और तब यदि वह प्रचार का बीड़ा उठाए—लोगों को शिक्षा दे, तो कोई हानि नहीं। उसका अहं 'कच्चा अहं' नहीं, 'पक्का अहं' है।

"मैंने केशव से कहा था, 'कच्चा अहं' छोड़ दो। 'दास-अहं', 'भक्त का अहं'—इसमें कोई दोष नहीं। तुम सम्प्रदाय की चिन्ता कर रहे हो, लेकिन तुम्हारे सम्प्रदाय से लोग अलग होते जा रहे हैं। केशव

ने कहा, महाराज, अमुक व्यक्ति तीन वर्ष हमारे सम्प्रदाय में रहकर फिर दूसरे सम्प्रदाय में चला गया और जाते समय उलटे गालियाँ दे गया।' मैंने कहा, तुम लक्षणों का विचार क्यों नहीं करते ? क्या किसी को चेला बना लेने से ही काम हो जाता है ?

"केशव से मैंने और भी कहा था कि तुम आद्याशक्ति को मानो। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं—जो ब्रह्म हैं वे ही शक्ति हैं। जब तक 'मैं देह हूँ,' यह बोध रहता है, तब तक दो अलग अलग प्रतीत होते हैं। कहने के समय दो आ ही जाते हैं। केशव ने काली (शक्ति) को मान लिया था।

"एक दिन केशव अपने शिष्यों के साथ आया। मैंने कहा, मैं तुम्हारा व्याख्यान सुनूँगा। उसने चाँदनी में बैठकर व्याख्यान दिया। फिर घाट पर आकर बहुत कुछ बातचीत की। मैंने कहा, जो भगवान् हैं वे ही दूसरे रूप में भक्त हैं, फिर वे ही एक दूसरे रूप में भागवत हैं। तुम लोग कहो, भागवत-भक्त-भगवान्। केशव ने और साथ ही भक्तों ने भी कहा, भागवत भक्त-भगवान्। फिर जब मैंने कहा, 'कहो, गुरु-कृष्ण-वैष्णव,' तब केशव ने कहा, महाराज, अभी इतनी दूर बढ़ना ठीक नहीं। लोग मुझे कट्टर कहेंगे।

"त्रिगुणातीत होना बड़ा कठिन है। बिना ईश्वर-लाभ किये वह सम्भव नहीं। जीव माया के राज्य में रहता है। यही माया ईश्वर को जानने नहीं देती। इसी माया ने मनुष्य को अज्ञानी बना रक्खा है। हृदय एक बछड़ा लाया था। एक दिन मैंने देखा कि उसे उसने बाग़ में बाँध दिया है, चारा चुगाने के लिए। मैंने पूछा, 'हृदय, तू प्रति-दिन उसे वहाँ

क्यों बाँधता है ?' हृदय ने कहा, 'मामा, बछड़े को घर भेजूँगा। बड़ा होने पर वह हल में जोता जायगा।' ज्योंही उसने यह कहा, मैं मूर्छित हो गिर पड़ा! सोचा, कैसा माया का खेल है! कहाँ तो कामारपुकुर-सिहोड़ और कहाँ कलकत्ता! यह बछड़ा उतना रास्ता चला जायगा, वहाँ बढ़ता रहेगा, फिर कितने दिन बाद हल खींचेगा? इसी का नाम संसार है—इसी का नाम माया है।

"बड़ी देर बाद मेरी मूर्छा टूटी थी।"

(२)

समाधि में।

श्रीरामकृष्ण प्रायः रात दिन समाधिस्थ रहते हैं—उनका बाहरी ज्ञान नहीं के बराबर होता है, केवल बीच-बीच में भक्तों के साथ ईश्वरीय प्रसंग और संकीर्तन करते हैं। करीब तीन-चार बजे मास्टर ने देखा कि वे अपनी छोटी खाट पर बैठे हैं—भावाविष्ट हैं। थोड़ी देर बाद जगन्माता से बातें करते हैं।

माता से वार्तालाप करते हुए एकबार उन्होंने कहा, 'मा, उसे एक कला भर शक्ति क्यों दी?' थोड़ी देर चुप रहने के बाद फिर कहते हैं, 'माँ, समझ गया, एक कला ही पर्याप्त होगी। उसी से तेरा काम हो जायगा—जीवशिक्षण होगा।'

क्या श्रीरामकृष्ण इसी तरह अपने अन्तरंग भक्तों में शक्तिसंचार कर रहे हैं? क्या यह सब तैयारी इसीलिए हो रही है कि आगे चलकर वे जीवों को शिक्षा देंगे?

मास्टर के अतिरिक्त घर में राखाल भी बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण अब भी भावमग्न हैं, राखाल से कहते हैं, 'तू नाराज़ हो गया था? मैंने तुझे क्यों नाराज़ किया, इसका कारण है; दवा अपना ठीक असर करेगी समझकर। पेट में तिल्ली अधिक बढ़ जाने पर मदार के पत्ते आदि लगाने पड़ते हैं।'

कुछ देर बाद कहते हैं, ''हाजरा को देखा, शुष्क काष्ठवत् है। तब यहाँ रहता क्यों है? इसका कारण है, जटिला कुटिला * के रहने से लीला की पुष्टि होती है।

(मास्टर के प्रति) "ईश्वर का रूप मानना पड़ता है। जगद्धात्री रूप का अर्थ जानते हो? जो जगत् को धारण किए हैं—उनके धारण न करने से, उनके पालन न करने से जगत् नष्ट-भ्रष्ट हो जाय। मनरूपी हाथी को जो वश में कर सकता है, उसी के हृदय में जगद्धात्री उदय होती हैं।"

राखाल—मन मतवाला हाथी है।

श्रीरामकृष्ण—सिंहवाहिनी का सिंह इसीलिए हाथी को दबाए हुए है।

संध्या समय ठाकुरद्वारे में आरती हो रही है। श्रीरामकृष्ण भी अपने कमरे में ईश्वर का नाम ले रहे हैं। घर में धूनी दी गई। श्रीरामकृष्ण हाथ बाँधे उस छोटी खाट पर बैठे हैं—माता चिन्तन कर रहे हैं। बेलघरिया के गोविन्द मुकर्जी और उनके कई मित्रों ने आकर उनको प्रणाम किया और जमीन पर बैठे। मास्टर और राखाल भी बैठे हैं।

---

* श्री राधा की सास और ननद—आयान घोष की माता और बहिन।

बाहर चाँद निकला हुआ है। जगत् चुपचाप हँस रहा है। घर के भीतर सब लोग चुपचाप बैठे श्रीरामकृष्ण की शान्त मूर्ति देख रहे हैं। आप भावमग्न हैं। कुछ देर बाद बातें कीं। अब भी भावाविष्ट हैं।

श्यामा रूप उत्तम भक्त। विचार पथ।

श्रीरामकृष्ण (भावमग्न)—तुम लोगों को कोई शंका हो, तो पूछो। मैं समाधान करता हूँ।

गोविन्द तथा अन्यान्य भक्त लोग सोचने लगे।

गोविन्द—महाराज, श्यामा रूप क्यों हुआ ?

श्रीरामकृष्ण—वह तो सिर्फ़ दूर से वैसा दिखता है। पास जाने पर कोई रंग ही नहीं ! तालाब का पानी दूर से काला दिखता है। पास जाकर हाथ से उठाकर देखो, कोई रंग नहीं। आकाश दूर से नीले रंग का दिखता है। पास के आकाश को देखो, कोई रंग नहीं। ईश्वर के जितने ही समीप जाओगे उतनी ही धारणा होगी कि उनका नाम-रूप नहीं। कुछ दूर हट आने से फिर वही 'मेरी श्यामा माता'। जैसे घासफूल का रंग।

"श्यामा पुरुष है या प्रकृति ? किसी भक्त ने पूजन किया था। कोई दर्शन करने आया तो उसने देवी के गले में जनेऊ देखकर कहा, 'तुमने माता के गले में जनेऊ पहनाया है !' भक्त ने कहा, भाई, तुम्हीं ने माता को पहचाना है। मैं अब तक नहीं पहचान सका कि वे पुरुष हैं या प्रकृति ! इसीलिए जनेऊ पहना दिया था।'

"जो श्यामा हैं वे ही ब्रह्म हैं। जिनका रूप है वे ही रूपहीन भी हैं। जो सगुण हैं वे ही निर्गुण हैं। ब्रह्म ही शक्ति है और शक्ति ही ब्रह्म। दोनों में कोई भेद नहीं। एक सच्चिदानन्दमय हैं और दूसरी सच्चिदानन्दमयी।"

गोविन्द—योगमाया क्यों कहते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—योगमाया अर्थात् पुरुष-प्रकृति का योग। जो कुछ देखते हो वह सब पुरुष-प्रकृति का योग है। शिवकाली की मूर्ति में शिव के ऊपर काली खड़ी हैं। शिव शव की भाँति पड़े हैं, काली शिव की ओर देख रही हैं,—यह सब पुरुष-प्रकृति का योग है। पुरुष क्रियाहीन हैं, इसीलिए शिव शव हो रहे हैं। पुरुष के योग से प्रकृति सब काम करती है—सृष्टि, स्थिति, प्रलय करती है। राधाकृष्ण की युगल मूर्ति का भी यही अभिप्राय है। इसी योग के लिए वक्रभाव है। और यही योग दिखाने के लिए श्रीकृष्ण की नाक में मुक्ता और श्रीमती की नाक में नीलम है। श्रीमती का रंग गोरा, मुक्ता जैसा उज्ज्वल है। श्रीकृष्ण का रंग साँवला है, इसीलिए श्रीमती का पत्थर नीला है, फिर श्रीकृष्ण के वस्त्र पीले और श्रीमती के नीले हैं।

"उत्तम भक्त कौन है ? जो ब्रह्मज्ञान के बाद देखता है कि ईश्वर ही जीव, जगत् और चौबीस तत्त्व हुए हैं। पहले 'नेति नेति' (यह नहीं, यह नहीं) करके विचार करते हुए छत पर पहुँचना पड़ता है। फिर वही आदमी देखता है कि छत जिन चीज़ों—ईंट, चूने और सुर्खी—से बनी है, सीढ़ी भी उन्हीं से बनी है। तब वह देखता है कि ब्रह्म ही जीव, जगत् और सब कुछ हैं।

" केवल शुष्क विचार ! राम, राम, मैं उस पर थूकता हूँ । (वे जमीन पर थूकते हैं ।)

" क्यों विचार कर शुष्क बना रहूँगा ! जब तक 'मैं' और 'तुम' है, तब तक प्रार्थना है कि ईश्वर के चरणकमलों में शुद्धाभक्ति बनी रहे ।

(गोविन्द से) " कभी कहता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो और मैं' हो 'तुम' हूँ । फिर कभी ' तुम्हीं तुम हो '—ऐसा हो जाता है ! उस समय अपने अहं को ढूँढ़ नहीं पाता ।

"शक्ति का ही अवतार होता है । एक मत से राम और कृष्ण चिदानन्द समुद्र की दो लहरें हैं ।

" अद्वैतज्ञान के पश्चात् चैतन्य होता है । तब मनुष्य देखता है कि ईश्वर ही चैतन्य-रूप से सब प्राणियों में है । चैतन्य-लाभ के बाद आनन्द होता है ' अद्वैत-चैतन्य-नित्यानन्द ' । *

(मास्टर से) " और तुमसे कहता हूँ—ईश्वर के रूप पर अविश्वास मत करना । यह विश्वास करना कि ईश्वर के रूप हैं, फिर जो रूप तुम्हें पसन्द हो उसीका ध्यान करना ।

(गोविन्द से) "बात यह है कि जब तक भोग-वासना बनी रहती है, तब तक ईश्वर को जानने या उनके दर्शन करने के लिए प्राण व्याकुल नहीं होते । बच्चा खेल में मग्न रहता है । मिठाई देकर बहलाओ

---

* पन्द्रहवीं शताब्दी में नदिया में तीन महापुरुष भी इन्हीं नामों के हुए थे । उनमें श्रीचैतन्य भगवान् के अवतार समझे जाते हैं । शेष दो उनके पार्षद थे ।

तो थोड़ी सी खा लेगा। जब उसे न खेल अच्छा लगता है न मिठाई, तब वह कहता है, माँ के पास जाऊँगा। फिर वह मिठाई नहीं माँगता। अगर कोई आदमी जिसे उसने न कभी देखा है और न पहचानता है, आकर कहे, 'आ, तुझे माँ के पास ले चलूँ,' तो वह उसके साथ चला जायगा। जो कोई उसे गोद में बिठाकर ले जायगा, वह उसी के साथ जायगा।

"संसार के भोग समाप्त हो चुकने के बाद ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होते हैं। उस समय केवल एक ही चिन्ता रहती है कि किस तरह उन्हें पाऊँ। उस समय जो जैसा बताता है, मनुष्य वैसा ही करने लगता है।"

परिच्छेद २७

ज्ञानयोग तथा भक्तियोग

(१)

ईश्वरदर्शन की बात। जीवन का उद्देश्य।

फिर एक दिन १८ अगस्त १८८३ ई० शनिवार को तीसरे पहर श्रीरामकृष्ण बलराम के घर आये हैं। वे अवतार-तत्त्व समझा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—अवतार लोक-शिक्षा के लिए भक्ति और भक्त लेकर रहते हैं। मानो छत पर चढ़कर सीढ़ी से आते-जाते रहना। दूसरे लोग छत पर चढ़ने के लिए भक्तिपथ पर रहेंगे,—जब तक ज्ञान नहीं होता, जब तक सभी वासनाएँ नष्ट नहीं होतीं। सब वासनाएँ मिट जाने पर ही छत पर उठा जाता है। दूकानदार का हिसाब जब तक नहीं मिलता, तब तक वह नहीं सोता। खाते का हिसाब ठीक करके ही सोता है!

(मास्टर के प्रति)—"मनुष्य तभी सफल होगा जब वह डुबकी लगाये। ऐसे मनुष्य के लिए सफलता निश्चय है।

"अच्छा, केशव सेन, शिवनाथ,—ये लोग जो उपासना करते हैं, वह तुम्हें कैसी लगती है?"

मास्टर—जी, आपका कहना ठीक ही है,—वे बगीचे का ही

वर्णन करते हैं, परन्तु बगीचे के मालिक का दर्शन करने की बात बहुत कम कहते हैं। प्रायः बगीचे के वर्णन से ही प्रारम्भ और उसी में समाप्ति हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण—ठीक। बगीचे के मालिक की खोज करना और उनसे बातचीत करना, यही काम है। ईश्वर का दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है। *

बलराम के घर से अब अधर के घर पधारे हैं। सायंकाल के बाद अधर के बैठकघर में नाम-संकीर्तन और नृत्य कर रहे हैं; वैष्णव-चरण कीर्तनकार गाना गा रहे हैं। अधर, मास्टर, राखाल, आदि उपस्थित हैं।

कीर्तन के बाद श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर बैठे हैं, रामलाल से कह रहे हैं, " यहाँ¶ का जल श्रावण मास का जल नहीं है। श्रावण मास का जल काफ़ी तेज़ी के साथ आता है और फिर निकल जाता है। यहाँ पर पाताल से निकले हुए शिव हैं, स्थापित किये हुए शिव नहीं हैं। तू क्रोध में दक्षिणेश्वर से चला आया; मैंने माँ से कहा,—' माँ, इसके अपराध पर ध्यान न देना।"

क्या श्रीरामकृष्ण अवतार हैं ? पाताल से निकले हुए शिव हैं ?

फिर भाव-विभोर होकर अधर से कह रहे हैं—' भैय्या, तुमने जो

---

* आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो, मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः

—बृहदारण्यक ,२। ४। ५

¶ स्वयं को लक्षित कर।

नाम लिया था, उसीका ध्यान करो।' ऐसा कहकर अधर की जिह्वा अपनी उँगली से छूकर उस पर न जाने क्या लिख दिया। क्या यही अधर की दीक्षा हुई ?

(२)

वेदान्तवादियों का मत। माया अथवा दया ?

आज रविवार का दिन है। श्रावण कृष्ण प्रतिपदा, १९ अगस्त, १८८३ ई०। श्रीरामकृष्ण देवी का प्रसाद पाने के बाद कुछ आराम कर रहे थे। विश्राम के बाद—अभी दोपहर का समय ही है—वे अपने कमरे में चौकी पर बैठे हुए हैं। इसी समय मास्टर ने आकर उन्हें प्रणाम किया। थोड़ी देर बाद उनके साथ वेदान्त सम्बन्धी बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—देखो, अष्टावक्र-संहिता में आत्मज्ञान की बातें हैं। आत्मज्ञानी कहते हैं, 'सोऽहम्' अर्थात् मैं ही वह परमात्मा हूँ। यह वेदान्तवादी संन्यासियों का मत है। सांसारिक व्यक्तियों के लिए यह मत ठीक नहीं है। सब कुछ किया जाता है, फिर भी 'मैं ही वह निष्क्रिय परमात्मा हूँ' यह कैसे हो सकता है ? वेदान्तवादी कहते हैं कि आत्मा निर्लिप्त है। सुख-दुःख, पाप-पुण्य—ये सब आत्मा का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते,—लेकिन देहाभिमानी व्यक्तियों को कष्ट दे सकते हैं। धुँआ दीवार को मैला करता है, पर आकाश का कुछ नहीं कर सकता। कृष्णकिशोर ज्ञानियों की तरह कहा करता था कि मैं 'ख' अर्थात् आकाशवत् हूँ। वह परम भक्त था; उसके मुँह से यह बात भले ही शोभा दे, पर सब के मुँह से यह शोभा नहीं देती।

"पर 'मैं मुक्त हूँ' यह अभिमान बड़ा ही अच्छा है। 'मैं मुक्त हूँ' यह कहते रहने से कहनेवाला मुक्त हो जाता है। और 'मैं बद्ध हूँ' कहते रहने से कहनेवाला बद्ध ही रह जाता है। जो केवल यह कहता है कि 'मैं पापी हूँ' वही सचमुच गिरता है। बल्कि कहते यह रहना चाहिए, मैंने उसका नाम लिया है, अब मेरे पाप कहाँ ? मेरा बन्धन कैसा ?

"देखो, मेरा चित्त बड़ा अप्रसन्न हो रहा है। हृदय* ने चिट्ठी लिखी है कि मैं बहुत बीमार हूँ। यह क्या है—माया या दया ?"

मास्टर भी क्या कहें—मौन रह गए।

श्रीरामकृष्ण—माया किसे कहते हैं, पता है ? माता-पिता, भाई-बहिन, स्त्री-पुत्र, भाञ्जे-भाञ्जी, भतीजे-भतीजी आदि आत्मीय जनों के प्रति प्रेम—यही माया है। और प्राणिमात्र से प्रेम का नाम दया है। मुझे यह क्या हुई—माया या दया ? हृदय ने मेरे लिए बहुत कुछ किया था—बड़ी सेवा की थी—अपने हाथों मेरा मैला तक साफ़ किया था, पर अन्त में उसने उतना ही कष्ट भी दिया था। वह इतना अधिक कष्ट देता था, कि एक बार मैं बाँध पर चढ़कर गंगाजी में डूबकर देहत्याग करने तक को तैयार हो गया था। पर फिर भी उसने मेरा बहुत कुछ किया था। इस समय यदि उसे कुछ रुपये मिल जाते, तो मेरा चित्त स्थिर हो जाता। पर मैं किस बाबू से कहूँ ? कौन कहता फिरे ?"

---

* हृदय श्रीपरमहंसदेव के भाञ्जे थे और १८८१ ई० तक कालीमन्दिर में रहकर लगभग २३ वर्ष तक इनकी सेवा की थी। उनका जन्मस्थान हुगली जिले के अन्तर्गत सिहोड़ ग्राम में था। श्रीरामकृष्ण का जन्मस्थान कामारपुकुर, यहाँ से दो कोस दूर है। ६२ वर्ष की अवस्था में हृदय का देहावसान हुआ।

(३)

'मृण्मयी आधार में चिन्मयी देवी।'
विष्णुपुर में मृण्मयी का दर्शन। भक्त का सुख-दुःख।

लगभग दो या तीन बजे होंगे। इसी समय भक्तवीर अधर सेन तथा बलराम आ पहुँचे और भूमिष्ठ हो प्रणाम कर बैठ गये। उन्होंने पूछा, 'आपकी तबीयत कैसी है?' श्रीरामकृष्ण ने कहा, "हाँ, शरीर तो अच्छा ही है, पर मेरे मन में थोड़ी व्यथा हो रही है।" इस अवसर पर हृदय की पीड़ा के सम्बन्ध में कोई बात ही नहीं उठाई। बड़ेबाजार (कलकत्ते) के मल्लिक-घराने की सिंहवाहिनी देवी की चर्चा छिड़ी।

श्रीरामकृष्ण—मैं भी सिंहवाहिनी के दर्शन करने गया था। चासा-धोबीपाड़ा (एक मुहल्ला) के एक मल्लिक-घराने के यहाँ देवी विराजमान थीं। मकान टूटा-फूटा था, क्योंकि मालिक गरीब हो गये थे। कहीं कबूतर की विष्ठा पड़ी थी, तो कहीं काई जम गई थी, और कहीं छत से सुरखी और रेत ही झर-झर कर गिर रही थी। दूसरे मल्लिक-घराने वालों के मकान में जो श्री देखी वह श्री इसमें नहीं थी।

(मास्टर से) "अच्छा, इसका क्या अर्थ है, बतलाओ तो सही।"

मास्टर चुप्पी साधे बैठे रहे।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि जिसके कर्म का जैसा भोग है, उसे वैसा ही भोगना पड़ता है। संस्कार, प्रारब्ध आदि बातें माननी ही पड़ती हैं।

" उस टूटे-फूटे मकान में भी मैंने देखा कि सिंहवाहिनी का चेहरा

जगमगा रहा है। आविर्भाव मानना ही पड़ता है। मैं एक बार विष्णुपुर गया था। वहाँ राजा साहब के अच्छे-अच्छे मन्दिर आदि हैं। वहाँ मृण्मयी नाम की भगवती की एक मूर्ति भी है। मन्दिर के पास ही कृष्णबाँध, लालबाँध नाम के बड़े बड़े तालाब हैं। तालाब में मुझे मसाले की गंध मिली! भला ऐसा क्यों हुआ? मुझे तो मालूम भी नहीं था कि स्त्रियाँ जब मृण्मयी देवी के दर्शनों को जाती हैं तो उन्हें वह सामान चढ़ाती हैं! तालाब के पास मेरी भाव-समाधि हो गई। उस समय तक विग्रह नहीं देखा था—भावावेश में मुझे मृण्मयी देवी के दर्शन हुए—कटि तक।"

इसी बीच में दूसरे भक्त आ जुटे और काबुल के विद्रोह तथा लड़ाई की बातें होने लगीं। किसी एक ने कहा कि याकूब खाँ (काबुल के अमीर) राजसिंहासन से उतार दिये गये हैं। परमहंस देव को सम्बोधन करके उन्होंने कहा कि याकूब खाँ भी ईश्वर का एक बड़ा भक्त है।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि सुख-दुःख देह के धर्म हैं। कवि-कङ्कण-चण्डी में लिखा है कि कालूवीर को कैद की सज़ा हुई थी, उसकी छाती पर पत्थर रखा गया था, पर कालूवीर भगवती का वरपुत्र था; देह धारण करने से ही सुख-दुःख का भोग करना पड़ेगा।

"श्रीमन्त भी तो बड़ा भक्त था। उसकी माँ खुल्लना को भगवती कितना अधिक चाहती थीं, पर देखो, श्रीमन्त पर कितनी विपत्ति पड़ी! यहाँ तक कि वह श्मशान में काट डालने के लिए ले जाया गया।

"एक लकड़हारा परम भक्त था। उसे भगवती के साक्षात् दर्शन हुए, उन्होंने उसे खूब चाहा और उस पर अत्यन्त कृपा की; लेकिन

इतने पर भी उसका लकड़हारे का काम नहीं छूटा ! उसे पहले की तरह लकड़ी काटकर ही रोटी कमानी पड़ी । कारागार में देवकी को चतुर्भुज शङ्ख-चक्र-गदाधारी भगवान् के दर्शन हुए, पर तो भी उनका कारावास नहीं छूटा ।

मास्टर—केवल कारावास ही क्यों ? शरीर ही तो सारे अनर्थ का मूल है । उसीको छूट जाना चाहिए था ।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि प्रारब्ध कर्मों का भोग होता ही है । जब तक वह है, तब तक देह-धारण करना ही पड़ेगा । एक काने आदमी ने गंगा-स्नान किया । उसके सारे पाप तो छूट गये, पर कानापन दूर नहीं हुआ ! (सब हँसे ।) उसे अपना पूर्व जन्म का फल भोगना था, वही वह भोगता रहा ।

मास्टर—जो बाण एक बार छोड़ा जा चुका उस पर फिर किसी तरह का अधिकार नहीं रहता ।

श्रीरामकृष्ण—देह का सुख-दुःख चाहे जो कुछ हो, पर भक्त को ज्ञान-भक्ति का ऐश्वर्य रहता है । वह ऐश्वर्य कभी नष्ट नहीं होता । देखो, पाण्डवों पर कितनी विपत्ति पड़ी, पर इतने पर भी उनका चैतन्य एकबार भी नष्ट नहीं हुआ । उनकी तरह ज्ञानी, उनकी तरह भक्त कहाँ मिल सकते हैं ?

(४)

कप्तान और नरेन्द्र का आगमन । 'समाधि' में ।

इसी समय नरेन्द्र और विश्वनाथ उपाध्याय आए । विश्वनाथ नेपाल राजा के वकील थे—राज-प्रतिनिधि थे । श्रीरामकृष्ण इन्हें कप्तान

कहा करते थे। नरेन्द्र की आयु लगभग इक्कीस वर्ष की थी —इस समय वे बी. ए. में पढ़ते हैं। बीच बीच में, विशेषतः रविवार को दर्शन के लिए आ जाते हैं।

जब वे प्रणाम करके बैठ गए तो परमहंसदेव ने नरेन्द्र से गाना गाने के लिए कहा। घर की पश्चिम ओर एक तम्बूरा लटका हुआ था। यंत्रों का सुर मिलाया जाने लगा। सब लोग एकाग्र होकर गवैए की ओर देखने लगे कि कब गाना आरम्भ होता है।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र से)—देख, यह अब वैसा नहीं बजता।

कप्तान—यह पूर्ण होकर बैठा है, इसीसे इसमें शब्द नहीं होता! (सब हँसे।) पूर्ण कुम्भ है!

श्रीरामकृष्ण (कप्तान से)—पर नारदादि कैसे बोले?

कप्तान—उन्होंने दूसरों के दुःख से कातर होकर उपदेश दिये थे।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, नारद, शुकदेव आदि समाधि के बाद नीचे उतर आये थे। दया के कारण दूसरों के हित की दृष्टि से उन्होंने उपदेश दिये थे।

नरेन्द्र ने गाना शुरू किया। गाने का आशय इस प्रकार था—

"सत्य शिव सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर में चमक रहा है। उसे देख देखकर हम उस रूप के समुद्र में डूब जायेंगे। (वह दिन कब होगा?) हे नाथ, जब अनन्त ज्ञान के रूप में तुम हमारे हृदय में प्रवेश करोगे, तब हमारा अस्थिर मन निर्वाक् होकर तुम्हारे चरणों में शरण लेगा। आनन्द और अमृतत्व के रूप में जब तुम हमारे हृदयाकाश में

उदित होगे, तब चन्द्रोदय में जैसे चकोर उमंग से खेलता फिरता है, वैसे हम भी, नाथ, तुम्हारे प्रकाशित होने पर आनन्द मनायेंगे।" इत्यादि।

'आनन्द और अमृतत्व के रूप में' ये शब्द सुनते ही श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि में मग्न हो गये। आप हाथ बाँधे पूर्व की ओर मुँह किये बैठे हैं। देह सरल और निश्चल है। आनन्दमयी के रूप-समुद्र में आप डूब गये हैं। बाह्यज्ञान बिलकुल नहीं है। साँस बड़े कष्ट से चल रही है। नेत्र पलकहीन हैं। आप चित्रवत् बैठे हैं। मानो इस राज्य को छोड़ कहीं और गये हुए हैं।

(५)

सच्चिदानन्द-लाभ का उपाय। ज्ञानी और भक्त में अन्तर। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं।

समाधि टूटी। इसी बीच में नरेन्द्र उन्हें समाधिस्थ देखकर कमरे से बाहर पूरब वाले बरामदे में चले गये हैं। वहाँ हाजरा महाशय एक कम्बल के आसन पर हरिनाम की माला हाथ में लिये बैठे हैं। नरेन्द्र उनसे बातें कर रहे हैं। इधर कमरा दर्शकों से भरा है। समाधि-भंग के बाद श्रीरामकृष्ण ने भक्तों की ओर दृष्टि डाली तो देखा कि नरेन्द्र वहाँ नहीं हैं। तम्बूरा सूना पड़ा था। सब भक्त उनकी ओर उत्सुक होकर देख रहे थे।

श्रीरामकृष्ण—आग लगा गया है, अब चाहे वह रहे या न रहे!

(कप्तान आदि से)—"चिदानन्द का आरोप करो तो तुम्हें और भी आनन्द मिलेगा। चिदानन्द तो है ही, केवल आवरण और

विक्षेप है, अर्थात् वह ढक गया है और उसकी जगह दूसरी चीज़ आ गई है।" **विषय पर आसक्ति जितनी घटेगी, उतनी ही ईश्वर पर मति बढ़ेगी।**

कप्तान—कलकत्ते के घर की ओर जितना ही बढ़ोगे, काशी से उतनी ही दूर होते जाओगे।

श्रीरामकृष्ण—श्रीमती (राधिका) कृष्ण की ओर जितना बढ़ती थीं उतनी ही कृष्ण की देहगन्ध उन्हें मिलती जाती थी। मनुष्य जितना ही ईश्वर के पास जाता है उतनी ही उसकी उन पर भाव-भक्ति होती जाती है। नदी जितनी ही समुद्र के समीप होती है उतना ही उसमें ज्वार-भाटा होता है। भक्त कभी हँसता, कभी रोता है; कभी नाचता और कभी गाता है। भक्त ईश्वर के साथ मौज करना चाहता है—वह कभी तैरता है, कभी डूबता है और कभी फिर ऊपर आता है—जैसे बर्फ़ का टुकड़ा पानी में कभी ऊपर और कभी नीचे आता जाता रहता है! (हँसी।)

"ज्ञानी ब्रह्म को जानना चाहता है। भक्त के लिए भगवान्—सर्वशक्तिमान्, षड़ैश्वर्यपूर्ण भगवान् हैं। परन्तु वास्तव में ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। जो सच्चिदानन्दमय हैं, वे ही सच्चिदानन्दमयी हैं। जैसे मणि और उसकी ज्योति। मणि की ज्योति कहने से ही मणि का बोध होता है, और मणि कहने से ही उसकी ज्योति का। बिना मणि को सोचे उसकी ज्योति की धारणा नहीं हो सकती, वैसे ही बिना मणि की ज्योति को सोचे मणि की भी। एक ही सच्चिदानन्द का शक्ति के भेद से उपाधि-भेद होता है। इसलिए उनके विविध रूप होते हैं।

"**'तारा, वह तो तुम्हीं हो।' जहाँ कहीं कार्य (सृष्टि, स्थिति, प्रलय) हैं वहीं शक्ति है, परन्तु जल स्थिर रहने पर भी जल है और हिलकोरे,**

बुलबुले आदि होने पर भी जल ही है। सच्चिदानन्द ही आद्याशक्ति हैं— जो सृष्टि, स्थिति, प्रलय करती है। जैसे कप्तान जब कोई काम नहीं करते तब भी वही हैं, जब पूजा करते हैं तब भी वही हैं, और जब वे लाट साहब के पास जाते हैं तब भी वही हैं। केवल उपाधि का भेद है।"

कप्तान—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—मैंने यही बात केशव सेन से कही थी।

कप्तान—केशव सेन भ्रष्टाचार, स्वेच्छाचार हैं; वे बाबू हैं, साधु नहीं।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों से)—कप्तान मुझे केशव सेन के यहाँ जाने को मना करता है।

कप्तान—महाराज, आप तो जायँगे ही, तो उस पर मुझे क्या करना है?

श्रीरामकृष्ण (नाराज़ होकर)—तुम लाट साहब के पास रुपये के लिए जा सकते हो, तो क्या मैं केशव सेन के पास नहीं जा सकता? वह तो ईश्वर-चिन्ता करता है, हरि का नाम लेता है। इधर तुम्हीं तो कहते हो, 'ईश्वर ही अपनी माया से जीव और जगत् हुए हैं।'

(६)

ज्ञानयोग और भक्तियोग का समन्वय।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण एकाएक कमरे से उत्तर-पूर्व वाले बरामदे में चले गए। मास्टर भी साथ गए। कप्तान और अन्य भक्त कमरे में ही बैठे उनकी प्रतीक्षा करने लगे।

बरामदे में नरेन्द्र हाजरा से बातें कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण जानते थे कि हाजरा को शुष्क ज्ञान-विचार बड़ा प्यारा है। वे कहा करते थे— 'जगत स्वप्नवत् है, पूजा और चढ़ावा आदि सब मन का भ्रम है, केवल अपने यथार्थ रूप की चिन्ता करना ही हमारा लक्ष्य है, और मैं ही वह परमात्मा हूँ—सोऽहम्।'

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—तुम लोगों की क्या बातचीत हो रही है?

नरेन्द्र (हँसते हुए)—कितनी लम्बी बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—किन्तु शुद्ध ज्ञान और शुद्धा भक्ति एक ही हैं। शुद्ध ज्ञान जहाँ ले जाता है वहीं शुद्धा भक्ति भी ले जाती है। भक्ति का मार्ग बड़ा सरल है।

नरेन्द्र—ज्ञान-विचार से और प्रयोजन नहीं। माँ, अब मुझे पागल बना दो! (मास्टर से) देखिए, हॅमिल्टन (Hamilton) की एक किताब में मैंने पढ़ा—'A learned ignorance is the end of Philosophy and beginning of Religion.'

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—इसका अर्थ क्या है?

नरेन्द्र—दर्शनशास्त्रों का पठन समाप्त होने पर मनुष्य पण्डितमूर्ख बनता है, तब धर्म का आरम्भ होता है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—थैंक यू, थैंक यू (Thank you, Thank you धन्यवाद, धन्यवाद)। (सब लोग हँसे।)

(७)

सन्ध्याकाल में हरिध्वनि । नरेन्द्र के अनेक गुण ।

थोड़ी देर में सन्ध्या होते देखकर अधिकांश लोग अपने अपने घर लौटे । नरेन्द्र ने भी विदा ली ।

ठाकुरद्वारे में सन्ध्या-आरती का प्रबन्ध होने लगा । श्रीरामकृष्ण भी पश्चिम वाले बरामदे से थोड़ी देर के लिये गंगा-दर्शन करने लगे । सन्ध्या होते ही मन्दिरों में आरती होने लगी । थोड़ी देर में चाँद निकला । चारों ओर चाँदनी फैल गई ।

शाम होते ही श्रीरामकृष्ण जगन्माता को प्रणाम करके तालियाँ बजाते हुए हरिध्वनि करने लगे । कमरे में बहुत से देव देवियों की तस्वीरें थीं—जैसे ध्रुव और प्रह्लाद की, राजाराम की, कालीमाता की, राधाकृष्ण की—उन्होंने सभी देवताओं को उनके नाम ले लेकर प्रणाम किया । फिर कहा, ब्रह्म-आत्मा-भगवान्, भागवत-भक्त-भगवान्, ब्रह्म-शक्ति, शक्ति-ब्रह्म; वेद-पुराण-तंत्र, गीता-गायत्री, मैं शरणागत हूँ, शरणागत हूँ, नाहं नाहं (मैं नहीं, मैं नहीं), तू ही तू ही; मैं यंत्र हूँ, तुम यंत्री हो; इत्यादि ।

नामोच्चारण के पश्चात् श्रीरामकृष्ण हाथ बाँधे जगन्माता की चिन्ता करने लगे । सन्ध्या समय दो-चार भक्त बगीचे में गंगाजी के किनारे टहल रहे थे । आरती के बाद वे एक एक करके श्रीरामकृष्ण के कमरे में इकट्ठे होने लगे ।

परमहंसदेव खाट पर बैठे हैं । मास्टर, अधर, किशोरी आदि नीचे, उनके सामने बैठे हैं ।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल ये सब नित्य-सिद्ध और ईश्वर-कोटि के हैं। इनकी जो शिक्षा होती है वह बिना प्रयोजन के ही होती है। तुम देखते नहीं, नरेन्द्र किसी की परवाह नहीं करता? मेरे साथ वह कप्तान की गाड़ी पर जा रहा था। कप्तान ने उसे अच्छी जगह पर बैठने को कहा,—लेकिन उसने उस तरफ देखा तक नहीं। वह मेरा ही मुँह नहीं ताकता, फिर जितना जानता है उतना प्रकट नहीं करता—कहीं मैं लोगों से कहता न फिरूँ कि नरेन्द्र इतना विद्वान है। उसके माया मोह नहीं है—मानो कोई बन्धन ही नहीं है। बड़ा अच्छा आधार है। एक ही आधार में बहुत से गुण रखता है—गाने-बजाने, लिखने-पढ़ने सब में वह प्रवीण है। इधर जितेन्द्रिय भी है—कहा है, विवाह नहीं करूँगा! नरेन्द्र और भवनाथ इन दोनों में बड़ा मेल है—जैसा स्वामी-स्त्री में होता है। नरेन्द्र यहाँ ज्यादा नहीं आता। यह अच्छा है। ज्यादा आने से मैं विह्वल हो जाता हूँ।

(८)

ब्रह्मदर्शन के लक्षण।

श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे मसहरी के भीतर ध्यान कर रहे हैं। रात के सात-आठ बजे होंगे। मास्टर और उनके एक मित्र हरि बाबू जमीन पर बैठे हैं। आज सोमवार, तारीख २० अगस्त, १८८३ ई० है।

आजकल हाजरा महाशय यहाँ रहते हैं। राखाल भी प्रायः रहा करते हैं—और कभी कभी अधर के यहाँ रहते हैं। नरेन्द्र, भवनाथ, अधर, बलराम, राम, मनमोहन, मास्टर आदि प्रायः प्रति सप्ताह आया करते हैं।

हृदय ने श्रीरामकृष्ण की बड़ी सेवा की थी। वे घर पर बीमार हैं, यह सुनकर श्रीरामकृष्ण बहुत चिन्तित हुए हैं। इसीलिए एक भक्त ने राम चटर्जी के हाथ आज दस रुपये भेजे हैं—हृदय को भेजने के लिए। देने के समय श्रीरामकृष्ण वहाँ उपस्थित नहीं थे। वही भक्त एक लोटा भी लाये हैं। श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था, यहाँ के लिए एक लोटा लाना; भक्त लोग जल पायेंगे।

मास्टर के मित्र हरि बाबू को लगभग ग्यारह वर्ष हुए, पत्नीवियोग हुआ है। फिर उन्होंने विवाह नहीं किया। उनके माता-पिता, भाई-बहिन, सभी हैं। उन पर उनका बड़ा स्नेह है, और उनकी सेवा वे करते हैं। उनकी आयु २८-२९ होगी। भक्तों के आते ही श्रीरामकृष्ण मसहरी से बाहर आए। मास्टर आदि ने उनको भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। मसहरी उठा दी गई। आप छोटी खाट पर बैठकर बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—मसहरी के भीतर ध्यान कर रहा था। फिर सोचा कि यह तो केवल एक रूप की कल्पना ही है; इसीलिए फिर अच्छा न लगा। अच्छा होता यदि ईश्वर बत्ती की चमक की तरह अपने आपको झट से प्रकट करते। फिर मैंने सोचा, कौन ध्यान करनेवाला है, और ध्यान करूँ ही किसका?

मास्टर—जी हाँ। आपने कह दिया है कि ईश्वर ही जीव और जगत् आदि सब कुछ हुए हैं। जो ध्यान कर रहा है वह भी तो ईश्वर ही हैं।

श्रीरामकृष्ण—फिर बिना ईश्वर के कराये तो कुछ होनेवाला नहीं। वे अगर ध्यान करायें, तो ध्यान होगा। इसमें तुम्हारा क्या मत है?

मास्टर—जो, आप के भीतर 'अहं' का भाव नहीं है, इसीलिए ऐसा प्रतीत हो रहा है। जहाँ 'अहं' नहीं रहता वहाँ ऐसा ही हुआ करता है।

श्रीरामकृष्ण—लेकिन 'मैं दास हूँ, सेवक हूँ'—इतना अहंभाव रहना अच्छा है। जहाँ यह बोध रहता है कि मैं ही सब कुछ कर रहा हूँ, वहाँ 'मैं दास हूँ और तुम प्रभु हो'—यह भाव बहुत अच्छा है। जब सभी कुछ किया जा रहा है, तो सेव्य-सेवक भाव से रहना ही अच्छा है।

मास्टर सदा परब्रह्म के स्वरूप की चिन्ता करते हैं। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनको लक्ष्य करके फिर कह रहे हैं—

"ब्रह्म आकाश की तरह है। उनमें कोई विकार नहीं है। जैसे आग का कोई रंग नहीं है। पर हाँ, अपनी शक्ति के द्वारा वे विविध आकार के हुए हैं। सत्व, रजः और तमः—ये तीन गुण शक्ति ही के गुण हैं। आग में यदि सफेद रंग डाल दो, तो वह सफेद दिखेगी। यदि लाल रंग डाल दो, तो वह लाल दिखेगी। यदि काला रंग डाल दो, तो वह काली दिखेगी। ब्रह्म सत्व, रजः और तमः—इन तीनों गुणों से परे हैं। वे यथार्थ में क्या हैं, यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। वे वाक्य से परे हैं। 'नेति नेति' (ब्रह्म यह नहीं, वह नहीं) करके विचार करते हुए जो बाकी रह जाता है, और जहाँ आनन्द है, वही ब्रह्म है।

"एक लड़की का पति आया है। वह अपनी आयु के लड़कों के साथ बाहरवाले कमरे में बैठा है। इधर वह लड़की और उसकी सहेलियाँ जँगले से उसे देख रही हैं। सहेलियाँ उसके पति को नहीं पहचानतीं।

वे उस लड़की से पूछ रही हैं—क्या वह तेरा पति है ? लड़की मुसकराकर कहती है—नहीं ! एक दूसरे नवयुवक को दिखलाकर वे पूछती हैं—क्या वह तेरा पति है ? वह फिर कहती है—नहीं । एक तीसरे लड़के को दिखाकर वे फिर पूछती हैं—क्या वह तेरा पति है ? वह फिर कहती है—नहीं । अन्त में उसके पति की ओर इशारा करके उन्होंने पूछा—क्या वह तेरा पति है ? तब उसने 'हाँ' या 'नहीं' कुछ नहीं कहा; केवल मुसकराई और चुप्पी साध ली ! तब सहेलियों ने समझा कि वही इसका पति है । जहाँ ठीक ब्रह्मज्ञान होता है, वहाँ सब चुप हैं ।"

सत्संग । गृहस्थ के कर्तव्य ।

(मास्टर से)—"अच्छा, मैं बकता क्यों हूँ ?"

मास्टर—जैसा आपने कहा कि पके हुए घी में अगर कच्ची पूड़ी छोड़ दी जाय, तो फिर आवाज़ होने लगती है । आप बोलते हैं भक्तों का चैतन्य कराने के लिए ।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से हाजरा महाशय की चर्चा करते हुए कहते हैं—

"अच्छे मनुष्य का स्वभाव कैसा है, मालूम है ? वह किसी को दुःख नहीं देता—किसी को झमेले में नहीं डालता । किसी किसी का ऐसा स्वभाव है कि कहीं न्यौता खाने गया हो तो शायद कह दिया—मैं अलग बैठूँगा ! ईश्वर पर यथार्थ भक्ति रहने से ताल के विरुद्ध पैर नहीं पड़ते—मनुष्य किसी को झूठमूठ कष्ट नहीं देता ।

" दुष्ट लोगों का संग करना अच्छा नहीं । उनसे अलग रहना

पड़ता है। अपने को उनसे बचाकर चलना पड़ता है। (मास्टर से) तुम्हारा क्या मत है ?"

मास्टर—जी, दुष्टों के संग रहने से मन बहुत गिर जाता है। हाँ, जैसा आपने कहा, वीरों की बात दूसरी है।

श्रीरामकृष्ण—कैसे ?

मास्टर—थोड़ी ही आग में लकड़ी डाल दो तो वह बुझ जाती है। पर धधकती हुई आग में केले का पेड़ भी झोंक देने से आग का कुछ नहीं बिगड़ता। वह पेड़ ही जलकर भस्म हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर के मित्र हरि बाबू की बात पूछ रहे हैं।

मास्टर—ये आपके दर्शनों के लिए आए हैं। ये बहुत दिनों से विपत्नीक हैं।

श्रीरामकृष्ण (हरि बाबू से)—तुम क्या काम करते हो ?

मास्टर ने उनकी ओर से कहा—ऐसा कुछ नहीं करते, अपने माता-पिता, भाई-बहिन आदि की बड़ी सेवा करते हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—यह क्या है ! तुम तो 'कुम्हड़ा काटनेवाले जेठजी' बने ! तुम न संसारी हुए, न तो हरिभक्त। यह अच्छा नहीं। किसी-किसी परिवार में एक पुरुष होता है, जो रात-दिन लड़के-लड़कियों से घिरा रहता है। वह बाहरवाले कमरे में बैठकर खाली तम्बाकू पिया करता है। निकम्मा ही बैठा रहता है। हाँ, कभी-कभी अन्दर जाकर कुम्हड़ा काट देता है ! स्त्रियों के लिए कुम्हड़ा काटना मना है। इसी

लिए वे लड़कों से कहती हैं, 'जेठजी को यहाँ बुला लाओ, वे कुम्हड़ा काट देंगे।' तब वह कुम्हड़े के दो टुकड़े कर देता है! बस, यहीं तक मर्द का व्यवहार है। इसीलिए उसका नाम 'कुम्हड़ा काटनेवाले जेठजी' पड़ा है।

"तुम यह भी करो, वह भी करो। ईश्वर के चरण-कमलों में मन रखकर संसार का काम-काज करो। और जब अकेले रहोगे, तब भक्ति शास्त्र पढ़ोगे—जैसे श्रीमद्भागवत, या चैतन्यचरितामृत आदि।"

रात के लगभग दस बजे हैं। अभी काली-मन्दिर बन्द नहीं हुआ है। मास्टर ने जाकर पहले राधाकान्तजी के मन्दिर में और फिर काली माता के मन्दिर में प्रणाम किया। चाँद निकला था। श्रावण की कृष्ण द्वितीया थी। आँगन और मन्दिरों के शीर्ष बड़े सुन्दर दिखते थे।

श्रीरामकृष्ण के कमरे में लौटकर मास्टर ने देखा कि वे भोजन करने बैठे हैं। वे दक्षिण की ओर मुँह करके बैठे। थोड़ा सूजी का पायस और एक-दो पतली पूड़ियाँ—बस यही भोजन था। थोड़ी देर बाद मास्टर और उनके मित्र ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बिदा ली। वे उसी दिन कलकत्ते लौटना चाहते थे।

(९)

समाधिमग्न श्रीरामकृष्ण तथा जगन्माता के साथ उनका वार्तालाप।

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे की सीढ़ी पर बैठे हैं। साथ में राखाल, मास्टर तथा हाजरा हैं। श्रीरामकृष्ण हँसी-हँसी में बचपन की अनेक बातें कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हैं। सांयकाल हुआ। अपने कमरे में छोटी खटिया पर बैठे जगन्माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। कह रहे हैं, "माँ, तू इतना कष्ट क्यों उठाती है? माँ, क्या मैं वहाँ पर जाऊँ? यदि तू ले जायगी तो जाऊँगा।"

श्रीरामकृष्ण का किसी भक्त के घर पर जाना तय हुआ था। क्या वे इसीलिए जगन्माता की आज्ञा के लिए इस प्रकार कह रहे हैं?

जगन्माता के साथ श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप कर रहे हैं। सम्भव है अब किसी अन्तरंग भक्त के लिए वे प्रार्थना कर रहे हैं। कह रहे हैं,—"माँ, उसे शुद्ध बना दो। अच्छा माँ, उसे एक कला क्यों दी?"

श्रीरामकृष्ण अब चुप हैं। फिर कह रहे हैं, "ओफ्! समझा। इसी से तेरा काम होगा।" सोलह कलाओं में से एक कला शक्ति द्वारा तेरा काम अर्थात् लोकशिक्षा होगी,—क्या श्रीरामकृष्ण यही बात कह रहे हैं?

अब भाव-विभोर स्थिति में मास्टर आदि से आद्याशक्ति तथा अवतार-तत्व के सम्बन्ध में कह रहे हैं।

"जो ब्रह्म हैं, वही शक्ति हैं। उन्हें ही माँ कहकर पुकारता हूँ।

"जब वे निष्क्रिय रहते हैं तब उन्हें ब्रह्म कहते हैं, और जब वे सृष्टि, स्थिति, संहार कार्य करते हैं, तब उन्हें शक्ति कहते हैं। जिस प्रकार स्थिर जल और लहर वाला जल। शक्ति की लीला से ही अवतार होते हैं। अवतार प्रेम भक्ति सिखाने आते हैं। अवतार मानो गाय का स्तन है। दूध स्तन से ही मिलता है। मनुष्य रूप में वे अवतीर्ण होते हैं।"

कोई-कोई भक्त सोच रहे हैं, क्या श्रीरामकृष्ण अवतारी पुरुष हैं, जैसे श्रीकृष्ण चैतन्यदेव, ईसा?

श्रीरामकृष्ण—हमारे यहाँ भी वह मत है।

थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे। अब श्रीरामकृष्ण अपनी ब्रह्मज्ञान-दशा का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—मैंने एक दिन देखा कि एक ही चैतन्य सर्वत्र है—कहीं भेद नहीं है। पहले (ईश्वर ने) दिखाया कि बहुत से मनुष्य और जानवर हैं—उनमें बाबू लोग हैं, अँग्रेज़ और मुसलमान हैं, मैं स्वयं हूँ, मेहतर हैं, कुत्ता है, फिर एक दढ़ियल मुसलमान है—उसके हाथ में एक छोटी थाली है, जिसमें भात है। उस छोटी थाली का भात वह सबके मुँह में थोड़ा-थोड़ा दे गया। मैंने भी थोड़ासा चखा।

"एक दूसरे दिन दिखाया कि विष्ठा-मूत्र, अन्न-व्यंजन, तरह-तरह की खाने की चीज़ें पड़ी हुई हैं। एकाएक भीतर से जीवात्मा ने निकलकर आग की लौ की तरह सब चीज़ों को चखा,—मानो जीभ हिलाते हुए सभी चीज़ों का एक बार स्वाद ले लिया, विष्ठा, मूत्र, सब कुछ चखा। इससे (ईश्वर ने) दिखा दिया कि सब एक हैं—अभेद हैं।

"फिर एक बार दिखाया कि यहाँ के* अनेक भक्त हैं—पार्षद—अपने जन। ज्योंही आरती का शंख और घंटा बज उठता, मैं कोठी की

---

* गुरुभाव से श्रीरामकृष्ण अपने लिए 'मैं' या 'हम' शब्द का प्रयोग साधारण दशा में कदाचित् करते थे। किसी और ढंग से वह भाव सूचित करते थे। जैसे—'मेरे पास' न कहकर 'यहाँ' कहते थे। 'मेरा' न कहकर 'यहाँ का' अथवा अपना शरीर दिखाकर 'इसका' कहते थे। हाँ, जगन्माता के सन्तान-भाव से वे 'मैं' या 'हम' शब्द का व्यवहार करते थे। भावावस्था में गुरुभाव के अर्थ में भी इन शब्दों का प्रयोग वे करते थे।

छत पर चढ़कर व्याकुल हो चिल्लाकर कहता, 'अरे, तुम लोग कान कहाँ हो। आओ, तुम्हें देखने के लिए मेरे प्राण छटपटा रहे हैं।'

"अच्छा, मेरे इन दर्शनों के बारे में तुम्हारी कैसी समझ है?"

मणि—आप ईश्वर के विलास का स्थान हैं। मैंने यही समझा है कि आप यंत्र हैं और वे यंत्री (चलाने वाले) हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, हाजरा कहता है कि ईश्वर के दर्शनों के बाद षड़ैश्वर्य मिलते हैं।

मणि—जो शुद्धा भक्ति चाहते हैं वे ईश्वर के ऐश्वर्य देखने की इच्छा नहीं करते।

श्रीरामकृष्ण—शायद हाजरा पूर्व जन्म में गरीब था, इसीलिए उसे ऐश्वर्य देखने की उतनी तीव्र इच्छा है।

हाल में हाजरा ने कहा है—'क्या मैं रसोइया ब्राह्मणों से बातचीत करता हूँ!' फिर कहता है—'मैं खजाञ्ची से कहकर तुम्हें वे सब चीज़ें दिला दूँगा!' (मणि का उच्च हास्य।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—वह ये सब बातें कहता रहता है और मैं चुप रह जाता हूँ।

मणि—आप तो बहुत बार कह चुके हैं कि शुद्ध भक्त ऐश्वर्य देखना नहीं चाहता। वह ईश्वर को गोपाल-रूप में देखना चाहता है। पहले ईश्वर चुम्बक-पत्थर और भक्त सुई होते हैं; फिर तो भक्त ही चुम्बक-पत्थर और ईश्वर सुई बन जाते हैं। अर्थात् भक्त के पास ईश्वर छोटे हो जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण—जैसे ठीक उदय के समय का सूर्य। अनायास देखा जा सकता है, वह आँखों को झुलसाता नहीं, बल्कि उनको तृप्त कर देता है। भक्त के लिए भगवान् का भाव कोमल हो जाता है—वे अपना ऐश्वर्य छोड़ भक्त के पास आ जाते हैं।

फिर दोनों चुप रहे।

मणि—मैं सोचता हूँ, क्यों ये दर्शन सत्य नहीं होंगे? यदि ये मिथ्या हुए तो यह संसार और भी मिथ्या ठहरा, क्योंकि देखने का साधन, मन तो एक ही है। फिर वे दर्शन शुद्ध मन से होते हैं और सांसारिक पदार्थ इसी अशुद्ध मन से देखे जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण—इस बार देखता हूँ कि तुम्हें खूब अनित्य का बोध हुआ है। अच्छा, कहो, हाजरा कैसा है?

मणि—वह है एक तरह का आदमी। (श्रीरामकृष्ण हँसे।)

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, मुझसे तथा किसी और से कुछ मिलता जुलता है?

मणि—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—किसी परमहंस से?

मणि—जी नहीं। आपकी तुलना नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—तुमने 'अनचीन्हा पेड़' सुना है?

मणि—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—वह है एक प्रकार का पेड़ जिसे कोई देखकर पहचान नहीं सकता।

मणि—जी, आपको भी पहचानना कठिन है। आपको जो जितना समझेगा वह उतना ही उन्नत होगा।

(२)

सच्ची चालाकी कौन सी है ?

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिरवाले अपने कमरे में प्रसन्नतापूर्वक बैठे हुए भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। आपका भोजन हो चुका है, दिन के एक या दो बजे होंगे।

आज रविवार है, ९ सितम्बर, १८८३, भादो की शुक्ला सप्तमी। कमरे में राखाल, मास्टर और रतन आकर बैठे। श्रीयुत रामलाल, राम चटर्जी और हाजरा भी एक एक करके आए और उन्होंने आसन ग्रहण किया। रतन श्रीयुत यदु मल्लिक के बगीचे के संरक्षक और परिदर्शक हैं। श्रीरामकृष्ण की भक्ति करते हैं, कभी कभी उनके दर्शन कर जाया करते हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हींसे बातचीत कर रहे हैं। रतन कह रहे हैं, यदु मल्लिक के कलकत्ते वाले मकान में 'नीलकण्ठ' का नाटक होगा।

रतन—आपको जाना होगा। उन लोगों ने कहला भेजा है, अमुक दिन नाटक होगा।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा है, मेरी भी जाने की इच्छा है। अहा! नीलकण्ठ कैसे भक्तिपूर्वक गाता है!

एक भक्त—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—गाना गाते हुए वह आँसुओं से तर हो जाता है। (रतन से) सोचता हूँ, रात को वहीं रह जाऊँगा।

रतन—अच्छा तो है।

राम चटर्जी आदि ने खड़ाऊ की चोरीवाली बात पूछी।

रतन—यदु बाबू के गृहदेवता की खड़ाऊ चोरी गई हैं। इसके कारण घर में बड़ा हो-हल्ला मचा हुआ है। थाली चलाई जायगी (एक तरह का टोना)। सब बैठे रहेंगे, जिसने लिया है, उसकी ओर थाली चली जायगी!

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—किस तरह थाली चलती है? —अपने आप चलती है?

रतन—नहीं, हाथ से दबाई हुई रहती है।

भक्त—हाथ ही की कोई कारीगरी होगी—हाथ की चालाकी।

श्रीरामकृष्ण—जिस चालाकी से लोग ईश्वर को पाते हैं, वही चालाकी चालाकी है।

(३)

तान्त्रिक साधना और श्रीरामकृष्ण का सन्तान-भाव।

बातचीत हो रही है, इसी समय कुछ बंगाली सज्जन कमरे में आए और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उन्होंने आसन ग्रहण किया। उनमें एक व्यक्ति श्रीरामकृष्ण के पहले के परिचित मित्र हैं। ये लोग तन्त्र के मत से साधना करते हैं—पञ्च-मकार साधन। श्रीरामकृष्ण अन्तर्यामी हैं, उनका सम्पूर्ण भाव समझ गये। उनमें एक आदमी धर्म के नाम से पापाचरण भी करता है, यह बात श्रीरामकृष्ण सुन चुके हैं। उसने किसी

बड़े आदमी के भाई की विधवा के साथ अवैध प्रेम कर लिया है और धर्म का नाम लेकर उसके साथ पञ्च-मकार की साधना करता है, यह भी श्रीरामकृष्ण सुन चुके हैं।

श्रीरामकृष्ण का सन्तान-भाव है। वे हरएक स्त्री को माता समझते हैं—वेश्या को भी; और स्त्रियों को भगवती का एक-एक रूप समझते हैं?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—अचलानन्द कहाँ है? (मास्टर आदि से) अचलानन्द और उसके शिष्यों का और ही भाव है। मेरा सन्तान-भाव है।

आए हुए बाबू लोग चुपचाप बैठे हुए हैं, कुछ बोलते नहीं।

श्रीरामकृष्ण—मेरा सन्तान-भाव है। अचलानन्द यहाँ आकर कभी-कभी रहता था। खूब शराब पीता था। मेरा सन्तान-भाव है, यह सुनकर अन्त में उसने हठ पकड़ा। कहने लगा—'स्त्री को लेकर वीर-भाव की साधना तुम क्यों नहीं मानोगे? शिव की रेख भी नहीं मानोगे? शिव-तन्त्र में लिखा है। उसमें सब भावों की साधना है, वीरभाव की भी है।'

"मैंने कहा,—मैं क्या जानूँ जी, मुझे वह सब अच्छा नहीं लगता—मेरा सन्तान-भाव है।

"अचलानन्द अपने बच्चों की खबर नहीं लेता था। मुझसे कहता था, 'बच्चों को ईश्वर देखेंगे,—यह सब ईश्वर की इच्छा है।' मैं सुनकर चुप हो जाता था। बात यह कि लड़कों की देख-रेख कौन करे? लड़के

वाले, घर-द्वार यह सब छोड़ा तो इससे रुपये कमाने का एक साधन भी तो निकालना चाहिए, क्योंकि, लोग सोचेंगे, इसने तो सब कुछ त्याग कर दिया है, और इस तरह लोग बहुत सा धन देने लगेंगे।

"मुकदमा जीतूँगा, खूब धन होगा, मुकदमा जिता दूँगा, जायदाद दिला दूँगा, क्या इसीलिए साधना है? ये सब बड़ी ही नीच प्रकृति की बातें हैं।

"रुपये से भोजन-पान होता है, रहने की जगह होती है, देवताओं की सेवा होती है, साधुओं का सत्कार होता है, सामने कोई गरीब आ गया तो उसका उपकार हो जाता है, ये सब सदुपयोग रुपये से होते हैं, परन्तु रुपये ऐश्वर्य का भोग करने के लिए नहीं हैं, न देह-सुख के लिए हैं, न लोक-सम्मान के लिए।

"विभूतियों के लिए लोग तन्त्र के मत से पञ्च-मकार की साधना करते हैं। परन्तु उनकी बुद्धि कितनी हीन है। कृष्ण ने अर्जुन से कहा है—'भाई! अष्ट सिद्धियों में किसी एक के रहने पर तुम्हारी शक्ति तो बढ़ सकती है, परन्तु तुम मुझे न पाओगे।' विभूति के रहते माया दूर नहीं होती। माया से फिर अहङ्कार होता है।

"शरीर, रुपया, यह सब अनित्य है। इसके लिए इतना हठ क्यों? हठयोगियों की दशा देखो न! शरीर किसी तरह दीर्घायु हो, बस इसी ओर ध्यान लगा रहता है। ईश्वर की ओर लक्ष्य नहीं है। नेति-धौति, बस पेट साफ कर रहे हैं! नल लगाकर दूध ग्रहण कर रहे हैं।

"एक सोनार था। उसकी जीभ उलटकर तालू पर चढ़ गई थी। तब जड़-समाधि की तरह उसकी अवस्था हो गई।—फिर वह हिलता-

डुलता न था। बहुत दिनों तक उसी अवस्था में रहा। लोग आकर उसकी पूजा करते थे। कई साल बाद एकाएक उसकी जीभ सीधी हो गई। तब उसे पहले की तरह चेतना हो गई। फिर वही सोनार का काम करने लगा! (सब हँसते हैं।)

"वे सब शरीर के कर्म हैं। उनसे प्रायः ईश्वर के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहता। शालग्राम का भाई—(उसका लड़का वंशलोचन का व्यवसाय करता था)—बयासी तरह के आसन जानता था। वह योग-समाधि की भी बहुत सी बातें कहता था। परन्तु भीतर ही भीतर उसका कामिनी और कांचन में मन था। दीवान मदन भट्ट की कितनी हजार रुपयों की एक नोट पड़ी थी, रुपयों के लालच से वह उसे निगल गया। बाद में फिर किसी तरह निकाल लेता। परन्तु नोट उससे वसूल हो गई। अन्त में तीन साल के लिए भेजा गया! मैं सरल भाव से सोचता था, शायद उसकी आध्यात्मिक उन्नति बहुत हो चुकी है, सच कहता हूँ—राम-दुहाई।

श्रीरामकृष्ण तथा कामिनी-कांचन।

"यहाँ सींती का महेन्द्र पाल पाँच रुपए दे गया था, रामलाल के पास। उसके चले जाने पर रामलाल ने मुझसे कहा। मैंने पूछा, क्यों दिया? रामलाल ने कहा, यहाँ के खर्च के लिए दिया है। तब याद आया, दूधवाले को कुछ देना है; हो, न हो, इन्हीं रुपयों से कुछ दे दिया जाय। परन्तु यह क्या आश्चर्य! मैं रात को सोया हुआ था, एकाएक छाती के भीतर बिल्ली की तरह जैसे कोई खरोंचने लगा। तब रामलाल के पास जाकर मैंने कहा, किसे दिया है?—अपनी चाची को?

रामलाल ने कहा, नहीं, आपके लिए। तब मैंने कहा, नहीं, रुपये जाकर अभी फेर दे, नहीं तो मुझे शान्ति न होगी।

"रामलाल सुबह को उठकर जब रुपये फेरकर आया, तब तबीयत ठीक हुई!

"उस देश की भगवतिया तेलिन कर्ता-भजा दल की है। वे सब औरत लेकर साधना किया करते हैं। एक पुरुष के हुए बिना स्त्री की साधना होगी ही नहीं। उस पुरुष को 'रागकृष्ण' कहते हैं। तीन बार स्त्री से पूछा जाता है, तूने कृष्ण को पाया? वह स्त्री तीनों बार कहती है, पाया।

"भगवतिया शूद्र है, तेलिन है, परन्तु सब उसके पास जाकर उसके पैरों की धूल लेते थे, उसे नमस्कार करते थे। तब ज़मींदार को इस पर बड़ा क्रोध आ गया। मैं उसे दिखाता हूँ तमाशा, यह कहकर उसने उसके पास एक बदमाश भेज दिया। उससे वह फँस गई और उसके लड़का हुआ।

"एक दिन एक बड़ा आदमी आया था। मुझसे कहा, महाराज, इस मुकदमे में ऐसा कर दीजिये कि मैं जीत जाऊँ। आपका नाम सुन-कर आया हूँ। मैंने कहा, भाई, वह मैं नहीं हूँ। तुम्हारी भूल हुई। वह अचलानन्द है।

"ईश्वर पर जिसकी सच्ची भक्ति है, वह शरीर, रुपया आदि की थोड़ी भी परवाह नहीं करता। वह सोचता है, देह-सुख के लिए, लोक-सम्मान के लिए, रुपयों के लिए, क्या जप और तप करूँ? ये

सब अनित्य हैं, चार दिन के लिए हैं।"

सब आये हुए बाबू लोग उठे। नमस्कार करके कहा, तो हम चलें। वे चले गये। श्रीरामकृष्ण मुसकरा रहे हैं और मास्टर से कह रहे हैं— "चोर धर्म की बात नहीं सुनते।" (सब हँसते हैं।)

(४)

विश्वास चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (मणि से सहास्य)—अच्छा, नरेन्द्र कैसा है?

मणि—जी, बहुत अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण—देखो, उसकी जैसी विद्या है, वैसी ही बुद्धि भी है। और गाना-बजाना भी जानता है। इधर जितेन्द्रिय भी है; कहता है, विवाह न करूँगा।

मणि—आपने कहा है, जो पाप-पाप सोचता रहता है, वह पापी हो जाता है, फिर वह उठ नहीं सकता। मैं ईश्वर की सन्तान हूँ, यह विश्वास यदि हुआ तो बहुत शीघ्रता से उन्नति होती है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, विश्वास चाहिए।

"कृष्णकिशोर का कैसा विश्वास है! कहता था, 'मैं एक बार उनका नाम ले चुका, अब पाप कहाँ रह गया? मैं शुद्ध और निर्मल हो गया हूँ।' हलधारी ने कहा था, 'अजामिल फिर नारायण की तपस्या करने गया था, तपस्या न करने पर भी क्या उनकी कृपा होती है?— केवल एक बार नारायण कहने से क्या होगा?' यह बात सुनकर कृष्ण-

किशोर को इतना क्रोध आया कि बगीचे में फूल तोड़ने आया था—उसने हलधारी की ओर फिर एक दृष्टि भी नहीं फेरी।

"हलधारी का बाप बड़ा भक्त था। स्नान करते हुए कमर भर पानी में जब वह मंत्र पढ़ता था;—'रक्तवर्णं चतुर्मुखम्' और जब वह ध्यान करता था, तब आँखों से अनर्गल प्रेमाश्रु बह चलते थे।

"एक दिन एँड़ेदा के घाट पर एक साधु आया। बात हुई, हम लोग भी देखने जायँगे। हलधारी ने कहा, उस पञ्चभूतों के गिलाफ को देखकर क्या होगा ? इसके बाद कृष्णकिशोर ने यह बात सुनकर कहा, क्या, साधु के दर्शन से क्या होगा ? ऐसी बात भी तुम्हारे मुँह से निकली ! जो लोग कृष्ण का नाम लेते हैं या राम-नाम का जप करते हैं, उनकी चिन्मय देह होती है और वे सब चिन्मय देखते हैं—'चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम !' उसने कहा था, एकबार कृष्ण या राम का नाम लेने पर सौ बार के सन्ध्या करने का फल होता है। जब उसके एक लड़के की मृत्यु होने लगी तब मरते समय राम का नाम लेकर उसने देह छोड़ी थी। कृष्णकिशोर कहता था, उसने राम का नाम लिया है, उसे अब क्या चिन्ता है ? परन्तु कभी-कभी रो पड़ता था। पुत्र का शोक !

"वृन्दावन में प्यास लगी थी। मोची से उसने कहा, तू शिव का नाम ले। उसने शिव का नाम लेकर पानी भर दिया—उस तरह का आचारी ब्राह्मण होकर भी उसने वह पानी पी लिया ! कितना बड़ा विश्वास है !

"विश्वास नहीं है, और पूजा, जप, सन्ध्यादि कर्म करता है, इससे कुछ नहीं होगा ! क्यों जी ?"

मास्टर—जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—गङ्गा के घाट में नहाने के लिए लोग आते हैं । मैंने देखा है, उस समय दुनिया भर की बातें करते हैं । किसी की विधवा बुआ कह रही हैं—" बहू, मेरे बिना रहे दुर्गा-पूजा नहीं होती । मैं न रहूँ तो ' श्री ' मूर्ति भी सुडौल न हो ! घर में काम-काज हुआ तो सब काम मुझे ही करना पड़ता है, नहीं तो अधूरा रह जाय । फूल-शय्या का बन्दोबस्त, कत्थे के बगीचे की तैयारी (ये सब बङ्गाल के विवाह के लोकाचार हैं), सब मैं ही करती हूँ ।"

मणि—जी, इनका भी क्या दोष—क्या लेकर रहें !

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—छत पर ठाकुरजी के रहने का घर बनाया है । नारायण की पूजा होती है । पूजा का नैवेद्य, चन्दन यह सब तैयार किया जा रहा है, परन्तु ईश्वर की बात कहीं एक भी नहीं होती । क्या पकाना चाहिए,—आज बाजार में कोई अच्छी चीज़ नहीं मिली,—कल अमुक व्यंजन अच्छा बना था; वह लड़का मेरा चचेरा भाई है,—क्यों रे तेरी वह नौकरी है न ?—और मैं अब कैसी हूँ !—मेरा हरि चल बसा ! बस यही सब बातें होती हैं !

" देखो भला, ठाकुरजी की पूजा के समय ये सब दुनिया भर की बातें ! "

मणि—जी, अधिक संख्या ऐसे ही लोगों की है । आप जैसा कहते हैं, ईश्वर पर जिसका अनुराग है, उसे अधिक दिनों तक पूजा और सन्ध्या थोड़े ही करनी पड़ती है !

(१)

चिन्मय रूप। ज्ञान और विज्ञान। 'ईश्वर ही वस्तु है।'

श्रीरामकृष्ण एकान्त में मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं।

मणि—अच्छा, वही अगर सब कुछ हुए हैं, तो इस तरह के अनेक भाव क्यों दीख पड़ते हैं?

श्रीरामकृष्ण—विभु के स्वरूप से वे सर्वभूतों में हैं, परन्तु शक्ति की विशेषता है। कहीं तो उनकी विद्या-शक्ति है और कहीं अविद्याशक्ति, कहीं ज्यादा शक्ति है और कहीं कम शक्ति। देखो न, आदमियों के भीतर ठग-चोर भी हैं और बाघ जैसे भयानक प्रकृति वाले भी हैं। मैं कहता हूँ, ठग नारायण हैं, बाघ-नारायण हैं।

मणि (सहास्य)—जो, उन्हें तो दूर ही से नमस्कार किया जाता है। बाघ-नारायण के पास जाकर अगर कोई उन्हें भर बाँह भेंटने लगे, तब तो वे उसे कलेवा ही कर जायँ।

श्रीरामकृष्ण—वे और उनकी शक्ति,—ब्रह्म और शक्ति—इसके सिवाय और कुछ नहीं है। नारद ने रामचन्द्रजी से स्तव करते हुए कहा—हे राम, शिव तुम्हीं हो, सीता भगवती हैं; तुम ब्रह्मा हो, सीता ब्रह्माणी हैं; तुम इन्द्र हो, सीता इन्द्राणी हैं; तुम नारायण हो, सीता लक्ष्मी; पुरुषवाचक जो कुछ है, सब तुम्हीं हो; स्त्री-वाचक जो कुछ है, सब सीता।

मणि—और चिन्मय रूप?

श्रीरामकृष्ण कुछ देर विचार करने लगे। फिर धीमे स्वर में कहा, "ठीक किस तरह बताऊँ—जैसे पानी का * * *। ये सब बातें साधना करने पर समझ में आती हैं।

"रूप पर विश्वास करना। जब ब्रह्मज्ञान होता है, अभेदता तब होती है। ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति! अग्नि को सोचने पर साथ ही उसकी दाहिका शक्ति को भी सोचना पड़ता है; जैसे दूध और दूध की धवलता, जल और उसकी हिम-शक्ति।

"परन्तु ब्रह्मज्ञान के बाद भी अवस्था है। ज्ञान के बाद विज्ञान है। जिसे ज्ञान है, जिसे बोध हो गया, उसमें अज्ञान भी है। शत पुत्रों के शोक से वशिष्ठ को भी रोना पड़ा था। लक्ष्मण के पूछने पर राम ने कहा, भाई, ज्ञान और अज्ञान के पार जाओ; जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। पैर में अगर काँटा चुभ जाय, तो एक दूसरा काँटा लेकर वह निकाल दिया जाता है; फिर उसके साथ दूसरा काँटा भी फेंक दिया जाता है।

मणि—क्या अज्ञान और ज्ञान दोनों फेंक दिये जाते हैं?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, इसीलिए विज्ञान की आवश्यकता है।

"देखो न, जिसे उजाले का ज्ञान है, उसे अँधेरे का भी है; जिसे सुख का बोध है, उसे दुःख का भी है; जिसे पुण्य का विचार है, उसे पाप का भी है, जिसे भले का स्मरण है, उसे बुरे का भी है; जिसे शुचिता का अनुभव है, उसे अशुचिता का भी है; जिसे 'अहं' का ध्यान है, उसे 'तुम' का भी है!

"विज्ञान—अर्थात् उन्हें विशेष रूप से जानना। लकड़ी में आग है, इस बोध—इस विश्वास का नाम है ज्ञान, और उस आग से खाना पकाना, खाना खाकर हृष्ट-पुष्ट होना, इसका नाम है विज्ञान। ईश्वर हैं, इसका एक आभास मात्र जिसे मिला है, उसके उस आभास का नाम है ज्ञान और उनके साथ वार्तालाप, उन्हें लेकर आनन्द करना—चाहे जिस भाव से हो, दास्य या सख्य या वात्सल्य या मधुर से—इसका नाम है विज्ञान। जीव और यह प्रपञ्च वे ही हुए हैं, इसके दर्शन करने का नाम है विज्ञान। एक विशेष मत के अनुसार कहा जाता है कि दर्शन हो नहीं सकते, कौन किसके दर्शन करे? वह तो अपने ही स्वरूप के दर्शन करता है। काले पानी में जहाज़ जब चला जाता है, तब लौट नहीं सकता, लौटकर खबर नहीं दे सकता।"

मणि—जैसा आप कहते हैं, मानूमेण्ट के ऊपर चढ़ जाने पर फिर नीचे की खबर नहीं रहती कि गाड़ी, घोड़े, मेम, साहब, घरद्वार, दूकानें, आफिस कहाँ हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, आजकल कालीमन्दिर मैं नहीं जाया करता, कुछ अपराध तो न होगा?—नरेन्द्र कहता था, ये अब भी काली-मन्दिर जाया करते हैं?

मणि—जी, आपकी नई-नई अवस्थाएँ हुआ करती हैं! आपका भला अपराध क्या है!

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, हृदय के लिए उन लोगों ने सेन से कहा था,—'हृदय बहुत बीमार है, उसके लिए आप दो धोतियाँ और दो कपड़े लेते आइयेगा, हम लोग उसके पास भेज देंगे।' सेन बस दो ही रुपये लाया! यह भला क्या है? इतना धन है और यह दान! कहो जी—

मणि—जी मेरी समझ में तो यह आता है कि जिसे ईश्वर की जिज्ञासा है—ज्ञानलाभ जिसका उद्देश है, वह कभी ऐसा नहीं कर सकता, उसका दान कभी इस तरह का नहीं हो सकता।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु।

परिच्छेद २१

ईशान आदि भक्तों के संग में

(१)

बालक का विश्वास; अछूत जाति और शंकराचार्य; साधु का हृदय।

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ते में अधर के मकान पर शुभागमन किया है। श्रीरामकृष्ण अधर के बैठक-घर में बैठे हैं। दिन के तीसरे पहर का समय है। राखाल, अधर, मास्टर, ईशान आदि तथा अनेक पड़ोसी भी उपस्थित हैं।

श्री ईशानचन्द्र मुखोपाध्याय को श्रीरामकृष्ण प्यार करते थे। वे अकाउण्टेण्ट जनरल के आफिस में सुपरिण्टेण्डेन्ट थे। पेन्शन लेने के बाद वे दान-ध्यान, धर्म-कर्म करते रहते थे और बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते थे।

मछुआ बाजार स्ट्रीट में उनके मकान पर श्रीरामकृष्ण ने एक दिन आकर नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ आहार किया था और लगभग पूरे दिन रहे थे। उस उपलक्ष्य में ईशान ने अनेक लोगों को भी आमन्त्रित किया था।

श्री नरेन्द्र आनेवाले थे, परन्तु आ न सके। ईशान पेन्शन लेने के बाद श्रीरामकृष्ण के पास दक्षिणेश्वर में सर्वदा जाया करते हैं, और

भाटपाड़ा में गंगातट पर निर्जन में बीच बीच में ईश्वर-चिन्तन करते हैं। सम्प्रति भाटपाड़ा में गायत्री का पुरश्चरण करने की इच्छा थी।

आज शनिवार, २२ सितम्बर १८८३ ई० है।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—अपनी वह कहानी कहो तो—बालक ने पत्र भेजा था।

ईशान (हँसकर)—एक बालक ने सुना कि ईश्वर ने हमें पैदा किया है। इसलिए उसने अपनी प्रार्थना जताने के लिए ईश्वर के नाम पर एक पत्र लिखकर लेटर बक्स में डाल दिया था। पता लिखा था—स्वर्ग! (सभी हँसे)

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—देखा! इसी बालक की तरह विश्वास चाहिए। * तब होता है। (ईशान के प्रति) और वह कर्मत्याग की कहानी सुनाओ तो।

ईशान—भगवान् की प्राप्ति होने पर सन्ध्या आदि कर्मों का त्याग हो जाता है। गंगाजी के तट पर सभी सन्ध्योपासना कर रहे हैं, एक व्यक्ति नहीं कर रहा है। उससे पूछने पर उसने कहा, "मुझे अशौच हुआ है, सन्ध्योपासना † करने की मनाई है। मृताशौच तथा जन्माशौच, दोनों ही हुये हैं। आकांक्षारूपी माता की मृत्यु हुई है, और आत्माराम का जन्म हुआ है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा वह कहानी सुनाना,—जिसमें कहा है कि

---

* "The Kingdom of heaven is revealed unto babes but is hidden from the wise and the prudent."—Bible

आत्मज्ञान होने पर जातिभेद नहीं रह जाता।

ईशान—काशीजी में गंगा-स्नान करके शंकराचार्य घाट की सीढ़ी पर चढ़ रहे थे,—उस समय कुत्ता पालने वाले चाण्डाल को सामने बिलकुल पास ही देखकर बोले, "यह क्या, तूने मुझे छू लिया!" चाण्डाल बोला, "महाराज, तुमने भी मुझे नहीं छुआ और मैंने भी तुम्हें नहीं छुआ। आत्मा सभी के अन्तर्यामी और निर्लिप्त हैं, शराब में पड़ा हुआ सूर्य का प्रतिबिम्ब और गंगा-जल में पड़ा हुआ सूर्य का प्रतिबिम्ब,—क्या इन दोनों में भेद है?

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—और उस समन्वय की कथा कैसी है! सभी मतों से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है।

ईशान (हँसकर)—हरि और हर में एक ही धातु 'हृ' है, केवल प्रत्यय का भेद है। जो हरि हैं, वही हर हैं। विश्वास भर रहना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—अच्छा वह कहानी—साधु का हृदय सब से बड़ा है।

ईशान (हँसकर)—सब से बड़ी है पृथ्वी, उससे बड़ा है समुद्र, उससे बड़ा है आकाश। परन्तु भगवान् विष्णु ने एक पैर से स्वर्ग, मृत्यु,

---

† मृता मोहमयी माता जातो बोधमयः सुतः।
सूतकद्वय संप्राप्तौ कथं सन्ध्यामुपास्महे।
हृदाकाशे चिदादित्यः सदा भासति भासति।
नास्तमेति न चोदेति कथं सन्ध्यामुपास्महे॥

—मैत्रेयी उपनिषद, द्वितीय अध्याय

पाताल—त्रिभुवन सब पर अधिकार कर लिया था। पर उस विष्णु का पद साधु के हृदय में है। इसलिए साधु का हृदय सब से बड़ा है।

इन सब बातों को सुनकर भक्तगण आनन्दित हो रहे हैं।

आद्या शक्ति की उपासना से ही ब्रह्म की उपासना—ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं।

ईशान आड़पाड़ा में गायत्री का पुरश्चरण करेंगे। गायत्री ब्रह्म-मंत्र है। विषय-बुद्धि बिलकुल लुप्त हुए बिना ब्रह्मज्ञान नहीं होता, परन्तु कलियुग में अन्नगत प्राण हैं—विषय-बुद्धि छूटती नहीं। रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श,—मन सदा इन विषयों को लेकर रहता है। इसलिए श्रीरामकृष्ण कहते हैं, 'कलि में वेद का मत नहीं चलता।' जो ब्रह्म हैं, वेही शक्ति हैं। शक्ति की उपासना करने से ही ब्रह्म की उपासना होती है। जिस समय वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हैं, उस समय उन्हें शक्ति कहते हैं। दो अलग अलग नहीं—एक ही हैं।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—क्यों 'नेति नेति' करके भटक रहे हो। ब्रह्म के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। केवल कहा जा सकता है, 'अस्ति मात्रम्'; * 'केवलः रामः।'

"हम जो कुछ देख रहे हैं, सोच रहे हैं, सभी उस आद्याशक्ति का, उस चित्शक्ति का ही ऐश्वर्य है—सृजन, पालन, संहार, जीव, जगत्,—फिर ध्यान, ध्याता, भक्ति, प्रेम,—सब उन्हीं का ऐश्वर्य है।

---

* नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा।
अस्तीत्येवोपलब्धस्य तत्त्वभावः प्रसीदति।

—कठोपनिषद्

"परन्तु ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। लंका से लौटने के बाद हनुमान ने राम की स्तुति की थी। कहा था, 'हे राम, तुम्हीं परब्रह्म हो और सीता तुम्हारी शक्ति हैं, परन्तु तुम दोनों अभिन्न हो, जिस प्रकार सर्प और उसकी टेढ़ी गति,—सांप जैसी गति की चिन्ता करने में सांप की चिन्ता करनी होगी, और सांप को सोचने में सांप की गति का भी चिन्तन हो जाता है। दूध का चिन्तन करने में दूध के रंग का स्मरण अपने आप ही आ जाता है—धवलत्व, दूध की तरह सफेद अर्थात् धवलत्व सोचने में दूध का स्मरण लाना पड़ता है। जल की शीतलता का चिन्तन करते ही जल का स्मरण आता ही है और फिर जल के चिन्तन के साथ ही जल की शीतलता का भी चिन्तन करना पड़ता है।

"इस आद्या-शक्ति या महामाया ने ब्रह्म को छिपा रखा है। आवरण हट जाते ही 'मैं जो था, वही बन गया।' 'मैं ही तुम, तुम ही मैं हूँ!

"जब तक आवरण है, तब तक वेदान्तवादी का 'सोऽहम्' अर्थात् मैं ही वह परब्रह्म हूँ'—यह बात नहीं चलती। जल की ही तरंग है, तरंग का जल नहीं कहलाता। जब तक आवरण है, तब तक माँ माँ कहकर पुकारना अच्छा है। तुम माँ हो, मैं तुम्हारी सन्तान हूँ। तुम प्रभु हो, मैं तुम्हारा दास हूँ। सेव्य-सेवक भाव अच्छा है। इसी दासभाव से फिर सभी भाव आते हैं—शान्त, सख्य आदि। मालिक यदि नौकर से प्यार करता है, तो उसे बुलाकर कहता है, 'आ, मेरे पास बैठ, तू जो है, मैं भी वही हूँ;' परन्तु नौकर यदि अपनी इच्छा से मालिक के पास बैठने जाय तो क्या मालिक नाराज़ न होंगे?

अवतार-लीला। वेद, पुराण एवं तंत्रों का समन्वय।

"अवतार-लीला—ये सब चित् शक्ति के ऐश्वर्य हैं। जो ब्रह्म हैं, वे ही फिर राम, कृष्ण तथा शिव हैं।"

ईशान—हरि और हर, एक ही धातु है, केवल प्रत्यय का भेद है। (सभी हँस पड़े।)

श्रीरामकृष्ण—हाँ, एक के अतिरिक्त दो कुछ भी नहीं हैं। वेद में कहा है—ॐ सच्चिदानन्द ब्रह्म; पुराण में कहा है—ॐ सच्चिदानन्दः कृष्ण; और तंत्र में कहा है—ॐ सच्चिदानन्दः शिवः।

"उस चित् शक्ति ने महामाया के रूप में सभी को अज्ञानी बना रखा है। अध्यात्म रामायण में है, राम का दर्शन करने के लिए जितने ऋषि आये थे सभी एक बात कहते थे,—'हे राम, अपनी भुवनमोहिनी माया द्वारा मुग्ध न करो।'

ईशान—यह माया क्या है?

श्रीरामकृष्ण—जो कुछ देखते हो, सुनते हो, सोचते हो, सभी माया है।* एक बात में कहना हो तो, कामिनी-कांचन ही माया का आवरण है।

"पान खाना, तम्बाकू पीना, तेल मालिश करना—इनमें दोष नहीं है, केवल इन्हींका त्याग करने से क्या होगा? कामिनी-कांचन के त्याग की आवश्यकता है। वही त्याग है। गृहस्थ लोग बीच बीच में

---

* अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः—गीता, ५।१५

निर्जन स्थान में जाकर साधन-भजन कर भक्ति प्राप्त करके मन से त्याग करें। संन्यासी बाहर भीतर दोनों ओर से त्याग करें।

" केशव सेन से मैंने कहा था—' जिस कमरे में जल का घड़ा और इमली का अचार है, उसी कमरे में यदि सन्निपात का रोगी रहे तो भला वह कैसे अच्छा हो सकता है ? बीच बीच में निर्जन स्थान में जाना ही चाहिए।

एक भक्त—महाराज, नवविधान ब्राह्म-समाज किस प्रकार है—मानो खिचड़ी जैसा !

श्रीरामकृष्ण—कोई कोई कहते हैं आधुनिक। मैं सोचता हूँ, क्या ब्राह्म-समाजवालों का ईश्वर दूसरा है ? कहते हैं, नवविधान, नया विधान होगा। जिस प्रकार छः दर्शन हैं, षड्दर्शन, उसी प्रकार एक और कुछ होगा।

" परन्तु निराकारवादियों की भूल क्या है जानते हो ? भूल यह है कि वे कहते हैं, ' ईश्वर निराकार हैं, और बाकी सारे मत गलत हैं। '

" मैं जानता हूँ, वे साकार निराकार दोनों ही है, और भी कितने कुछ बन सकते हैं। वे सब कुछ बन सकते हैं।"

अछूता में ईश्वर।

(ईशान के प्रति) " वही चित् शक्ति, वही महामाया चौबीस तत्व बनी हुई है। मैं ध्यान कर रहा था, ध्यान करते करते मन चला गया रसके के घर में। रसके मेहतर। मन से कहा, ' अरे, रह, वहीं पर रह। '

माँ ने दिखा दिया, उसके घर में जो सभी लोग घूम रहे हैं, वे बाहर का आवरण मात्र हैं, भीतर वही एक कुलकुण्डलिनी, एक षट्चक्र !

" वह आद्या शक्ति स्त्री है या पुरुष ? मैंने उस देश (कामारपुकुर) में देखा, लाहाओं के घर पर कालीपूजा हो रही है । माँ को जनेऊ दिया है । एक व्यक्ति ने पूछा, ' माँ को जनेऊ क्यों है ? ' जिसके घर में पूजा है उसने कहा, ' भाई, तूने माँ को ठीक पहचाना है, परन्तु मैं तो कुछ भी नहीं जानता कि माँ पुरुष हैं या स्त्री ! "

" इस प्रकार कहा जाता है कि महामाया शिव को निगल गई । माँ के भीतर षट्चक्र का ज्ञान होने पर शिव माँ के जांघ में से निकल आये । उस समय शिवतंत्र बनाया गया ।

"उस चित् शक्ति के, उस महामाया के शरणागत होना चाहिए ।"

ईशान— आप कृपा कीजिए ।

श्रीरामकृष्ण—सरल भाव से कहो, ' हे ईश्वर, दर्शन दो ' और रोओ, और कहो, ' हे ईश्वर, कामिनी-कांचन से मन को हटा दो । '

" और डुबकी लगाओ । ऊपर-ऊपर बहने से या तैरने से क्या रत्न मिलता है ? डुबकी लगानी पड़ती है ।

" गुरु से पता लेना चाहिए । एक व्यक्ति बाणलिंग शिव की खोज कर रहा था । किसी ने कह दिया, ' अमुक नदी के किनारे जाओ, वहाँ पर एक वृक्ष देखोगे, उस वृक्ष के पास एक भंवर-जल है, वहाँ पर

डुबकी लगानी होगी, तब बाणलिंग शिव मिलेगा। इसीलिए गुरु से पता जान लेना चाहिए।'

ईशान—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—सच्चिदानन्द ही गुरु के रूप में आते हैं। मनुष्य-गुरु से यदि कोई दीक्षा लेता है, तो उन्हें मनुष्य मानने से कुछ नहीं होगा। उन्हें साक्षात् ईश्वर मानना होगा, तब मंत्र पर विश्वास होगा। विश्वास होने पर ही सब कुछ हो जायगा। शूद्र एकलव्य ने मिट्टी का द्रोण बनाकर बन में बाण चलाना सीखा था। मिट्टी के द्रोण की पूजा करता था,—साक्षात् द्रोणाचार्य मानकर। इससे ही वह धनुर्विद्या में सिद्ध हो गया!

"और तुम ब्राह्मण-पण्डितों को लेकर विशेष झमेला न किया करो। उन्हें चिन्ता है दो पैसे पाने की!

"मैंने देखा है, ब्राह्मण स्वस्त्ययन करने आया है; समझता नहीं है, चण्डीपाठ कर रहा है या और कुछ कर रहा है! आधे पन्ने वैसे ही उलट जाते हैं। (सभी हँस पड़े।)

"अपनी हत्या नाखून काटने की एक छोटी नहरनी से भी हो सकती है। दूसरे को मारने के लिए ढाल तलवार चाहिए।—शास्त्र-ग्रंथादि का यही हेतु है।

"बहुत से शास्त्रों की भी कोई आवश्यकता नहीं है। यदि विवेक न हो तो केवल पाण्डित्य से कुछ नहीं होता, षट्शास्त्र पढ़कर भी कुछ

नहीं होता। निर्जन में, एकान्त में, गुप्त रूप से रो-रोकर उन्हें पुकारो, वे ही सब कुछ कर देंगे।"

श्रीरामकृष्ण ने सुना है, ईशान भाटपाड़ा में पुरश्चरण करने के लिए गंगा के तट पर कुटिया बना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (उत्सुक भाव से ईशान के प्रति)—हाँ जी, क्या कुटिया बन गई? क्या जानते हो, ये सब काम लोगों से जितने छिपे रहें, उतना ही अच्छा है। जो लोग सतोगुणी हैं, वे ध्यान करते हैं मन में, कोने में, बन में, कभी तो मच्छरदानी के भीतर ही बैठे ध्यान करते हैं।

हाजरा महाशय को ईशान बीच बीच में भाटपाड़ा ले जाते हैं, हाजरा महाशय छूत धर्मी की तरह आचरण करते हैं। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें वैसा करने से मना किया था।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—और देखो, अधिक छूत धर्म ठीक नहीं। एक साधु को बड़ी प्यास लगी थी, भिश्ती जल लेकर जा रहा था, साधु को जल देना चाहा। साधु ने कहा, 'क्या तुम्हारी मशक साफ़ है?' भिश्ती बोला, 'महाराज, मेरी मशक खूब साफ़ है, परन्तु आपकी मशक के भीतर मल-मूत्र आदि अनेक प्रकार के मैल हैं। इसलिए कहता हूँ, मेरी मशक से जल पीजिए, इससे दोष न लगेगा।' आपकी मशक अर्थात् आपकी देह, आपका पेट।

"और उनके नाम पर विश्वास रखो। तो फिर तीर्थ आदि की भी आवश्यकता न होगी।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर गाना गा रहे हैं।

(गाना-भावार्थ)

"यदि काली-काली कहकर समय व्यतीत होता हो तो गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची आदि कौन चाहता है ? जो तीनों समय काली का नाम लेता है, वह क्या पूजा-सन्ध्या चाहता है ? सन्ध्या उसकी खोज में रहकर कभी पता नहीं पाती । काली नाम के इतने गुण हैं कि कौन उसका पार पा सकता है, जिसके गुणों को देवादिदेव महादेव पंचमुखों से गाते हैं । दया, व्रत, दान आदि और किसी में भी मन नहीं जाता, मदन का यज्ञ-याग ब्रह्ममयी के पादपद्म में है ।"

ईशान सब सुनकर चुप होकर बैठे हैं ।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—और भी सन्देह हो तो पूछ लो ।

ईशान—जी आपने जो कहा है—विश्वास !

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ठीक विश्वास के द्वारा ही उन्हें प्राप्त किया जा सकता है । और ईश्वर विषयक सब बातों पर विश्वास करने पर और भी शीघ्र प्रगति होती है । गौ यदि चुन-चुन कर खाती है तो दूध कम देती है, सभी प्रकार के घास पत्ते-खाने पर अधिक दूध देती है ।

"रामकृष्ण बैनर्जी ने एक कहानी सुनाई थी कि एक व्यक्ति को आदेश हुआ कि इस मेड़ में ही तू अपना इष्ट जानना । उसने इसी पर विश्वास किया । सर्व भूतों में वे ही विराजमान हैं ।

"गुरु ने भक्त से कह दिया था कि राम ही घट-घट में लेटा है । भक्त का उसी समय विश्वास हो गया ! जब देखा एक कुत्ता मुँह में रोटी

लेकर भाग रहा है, तो भक्त घी का पात्र हाथ में लेकर पीछे पीछे दौड़ रहा है और कह रहा है, राम, थोड़ा ठहरो, रोटी में घी तो लगा दूँ ।

"अहा ! कृष्णकिशोर का क्या ही विश्वास है ! कहा करता था, 'ॐकृष्ण ॐराम' इस मंत्र का उच्चारण करने पर करोड़ों सन्ध्या-वन्दन का फल होता है ।

"फिर मुझे कृष्णकिशोर कान में कहा करता था, 'कहना नहीं किसी से; मुझे सन्ध्या-पूजा अच्छी नहीं लगती ।'

"मुझे भी वैसा ही होता है । माँ दिखा देती हैं कि वे ही सब कुछ बनी हुई हैं । शौच के बाद मैदान से आ रहा हूँ पंचवटी की ओर, देखता हूँ, साथ साथ एक कुत्ता आ रहा है, तब पंचवटी के पास आकर थोड़ी देर के लिए खड़ा रहता हूँ; सोचता हूँ शायद माँ इसके द्वारा कुछ कहलावे !

"इसलिए तुमने जो कहा, ठीक है कि विश्वास से ही सब कुछ मिलता है ।"

ईशान—परन्तु हम तो गृहस्थाश्रम में हैं ।

श्रीरामकृष्ण—क्या हानि है, उनकी कृपा होने पर असम्भव भी सम्भव हो जाता है । रामप्रसाद ने गाना गाया था, यह संसार धोखे की टट्टी है । उसका उत्तर किसी दूसरे ने एक दूसरे गाने में दिया है,—

(संगीत—भावार्थ)

"यह संसार आनन्द की कुटिया है, मैं खाता पीता और आनन्द

करता हूँ। जनक राजा बड़े तेजस्वी थे, उन्हें किस बात की कमी थी, वे तो दोनों ओर दूध की कटोरियाँ रखकर आनंद से दूध पीते थे।"

"परन्तु पहले निर्जन में गुप्त रूप से साधन-भजन करके ईश्वर को प्राप्त करने के बाद संसार में रहने से मनुष्य 'जनक राजा' बन सकता है। नहीं तो कैसे होगा?

"देखो न, कार्तिक, गणेश, लक्ष्मी, सरस्वती सभी विद्यमान हैं, परन्तु शिव कभी समाधिस्थ, तो कभी 'राम राम' कहते हुए नृत्य कर रहे हैं।"

परिच्छेद ३०

राम आदि भक्तों के संग में

(१)

नरेन्द्र के लिए श्रीरामकृष्ण की चिन्ता।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ बैठे हैं। राखाल, मास्टर, राम, हाजरा आदि भक्तगण उपस्थित हैं। हाजरा महाशय बाहर के बरामदे में बैठे हैं। आज रविवार, २३ सितम्बर, १८८३, भाद्रपदी कृष्णा सप्तमी है।

नित्यगोपाल, तारक आदि भक्तगण राम के घर पर रहते हैं। उन्होंने उन्हें आदर-सत्कार के साथ रखा है।

राखाल बीच बीच में श्री अधर सेन के मकान पर जाया करते हैं। नित्यगोपाल सदा ही भाव में विभोर रहते हैं। तारक की भी स्थिति अन्तर्मुखी है। आजकल वे लोगों से विशेष वार्तालाप नहीं करते।

श्रीरामकृष्ण अब नरेन्द्र की बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (एक भक्त के प्रति)—आजकल नरेन्द्र तुम्हें भी नहीं चाहता। (मास्टर के प्रति) अधर के घर पर नरेन्द्र नहीं आया?

"एक साथ ही नरेन्द्र में कितने गुण हैं! गाने-बजाने में, लिखने-पढ़ने में, सभी में प्रवीण है। उस दिन यहाँ से कप्तान की गाड़ी

से जा रहा था। गाड़ी में कप्तान भी बैठे थे। उन्होंने उससे अपने पास बैठने के लिए कितना कहा। पर नरेन्द्र अलग ही जाकर बैठा; कप्तान की ओर ताक कर देखा तक नहीं।

"केवल पाण्डित्य से क्या होगा? साधन-भजन चाहिए, ईन्देश-का गौरी पण्डित विद्वान् था और साधक भी। शक्ति-साधक। माँ के नाम में कभी कभी पागल हो जाता था। बीच बीच में कह उठता था, 'हा रे रे रे, निरालम्बे लम्बोदर-जननि कं यामि शरणम्।' उस समय सब पण्डित निष्प्रभ हो जाते थे। मैं भी भावाविष्ट हो जाता था।

"एक कर्ताभजा सम्प्रदाय के पण्डित ने निराकार की व्याख्या करते हुए कहा, 'निराकार अर्थात् नीर का आकार!' यह व्याख्या सुन-कर गौरी बहुत क्रुद्ध हुआ।

"पहले पहल कट्टर शाक्त था; तुलसी का पत्ता दो लकड़ियों के सहारे उठाता था—छूता न था! (सभी हँसे।)। इसके बाद घर गया। घर से लौट आने के पश्चात् फिर वैसा नहीं करता था।

"मैंने काली-घर के सामने एक तुलसी का पौधा लगाया था। पर कुछ समय में वह सूख गया। कहते हैं, जहाँ पर बकरों की बलि होती है, वहाँ पर तुलसी नहीं रहती।

"गौरी सभी बातों की व्याख्या करता था। रावण के दश शिरों के बारे में कहता था, दस इन्द्रियाँ! तमोगुण को कुम्भकर्ण, रजो-गुण को रावण और सतोगुण को बिभीषण कहता था। इसीलिए बिभी-षण ने राम को प्राप्त किया था।"

श्रीरामकृष्ण मध्याह्न के भोजन के बाद थोड़ी देर विश्राम कर रहे हैं। कलकत्ता से राम, तारक (शिवानन्द) आदि भक्तगण आकर उपस्थित हुए। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर वे जमीन पर बैठ गए। मास्टर भी जमीन पर बैठे हैं। राम कह रहे हैं, "हम लोग मृदंग बजाना सीख रहे हैं।"

श्रीरामकृष्ण (राम के प्रति)—नित्यगोपाल ने भी कुछ सीखा है?

राम—जी नहीं, वह कुछ ऐसा ही मामूली बजा सकता है।

श्रीरामकृष्ण—और तारक?

राम—वह अच्छा बजा सकेगा।

श्रीरामकृष्ण—ठीक है, तो फिर वह अपना मुँह उतना नीचा किए न रहेगा। लेकिन किसी दूसरी ओर मन लगा देने पर फिर ईश्वर पर उतना नहीं रह जाता।

राम—मैं समझता हूँ, मैं जो सीख रहा हूँ, केवल संकीर्तन के लिए।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—सुना है तुमने गाना सीखा है?

मास्टर (हँसकर)—जी नहीं, यों ही अँ आँ करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—तुम वह गाना जानते हो? जानते हो तो गाओ न। 'आर काज नहीं ज्ञानविचारे, दे माँ पागल करे।'

"देखो, यही मेरा असली भाव है।"

हाजरा महाशय कभी कभी किसी के सम्बध में घृणा प्रकट करते थे।

श्रीरामकृष्ण (राम आदि भक्तों के प्रति)—कामारपुकुर में किसी मकान पर मैं अक्सर जाया करता था। उस घर के लड़के मेरी ही आयु के थे, वे लड़के उस दिन यहाँ आए थे और दो-तीन दिन रहे भी। हाजरा की तरह उनकी माँ सब से घृणा करती थी। अन्त में उसके पैर में न जाने क्या हो गया। पैर सड़ने लगा। कमरे में सड़ने से इतनी दुर्गन्ध हुई कि लोग अन्दर तक नहीं जा सकते थे।

" इस बात की चर्चा मैंने हाजरा से भी की और उसे चेतावनी दे दी कि किसी से घृणा-द्वेष न करो। "

दिन के चार बजे का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण मुँह-हाथ धोने के लिए झाऊतल्ला की ओर गए। उनके कमरे के दक्षिणपूर्व वाले बरामदे में दरी बिछाई गई। श्रीरामकृष्ण लौटकर उस पर बैठे। राम आदि उपस्थित हैं। श्री अधर सेन जाति के सुनार हैं। उनके घर पर राखाल ने अन्नग्रहण कर लिया। इसलिए रामबाबू ने कुछ कहा है। अधर परम भक्त हैं। यही बात हो रही थी।

एक भक्त हँसी हँसी में सुनारों में से किसी किसी के स्वभाव का वर्णन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं—स्वयं कोई राय प्रकट नहीं कर रहे हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण की कर्म-त्याग की स्थिति। मातृभाव से साधना।

सायंकाल हुआ। आँगन में उत्तर पश्चिम के कोने में श्रीरामकृष्ण खड़े हैं, वे समाधिस्थ हैं।

काफी देर बाद उनका मन बाह्य जगत् में लौटा। श्रीरामकृष्ण की कैसी अद्भुत स्थिति है। आजकल प्रायः समाधिमग्न रहते हैं। थोड़े से ही उद्दीपन से बाह्यज्ञान-शून्य हो जाते हैं। जब भक्तगण आते हैं, तब थोड़ा वार्तालाप करते हैं; अन्यथा सदा ही अन्तर्मुख रहते हैं। अब पूजा, जप आदि नहीं कर सकते।

समाधि भंग होने के बाद खड़े खड़े ही जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं। कह रहे हैं, "माँ! पूजा गई, जप गया। देखना माँ! कहीं जड़ न बना डालना। सेव्य-सेवक भाव में रखो, जिससे बात कर सकूँ, तुम्हारा नाम-संकीर्तन और गान कर सकूँ। और शरीर में थोड़ा बल दो माँ! जहाँ पर तुम्हारी कथा होती हो, जहाँ पर तुम्हारे भक्तगण हों, उन सब स्थानों में जा सकूँ।"

श्रीरामकृष्ण ने आज प्रातःकाल काली-मन्दिर में जाकर जगन्माता के श्रीचरणकमलों पर पुष्पांजलि अर्पण की है। वे फिर जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "माँ! आज सबेरे तुम्हारे चरणों में दो फूल चढ़ाये। सोचा, अच्छा हुआ, परन्तु फिर बाहर की पूजा की ओर मन जा रहा है। तो माँ, फिर ऐसा क्यों हुआ? फिर जड़ की तरह क्यों बना डाल रही हो?"

भाद्रपद कृष्णा सप्तमी। अभी तक चन्द्रमा का उदय नहीं हुआ। रात्रि तमसाच्छन्न है। श्रीरामकृष्ण अभी भावाविष्ट हैं, इसी स्थिति में अपने कमरे की छोटी खटिया पर बैठे। फिर जगन्माता के साथ बात कर रहे हैं।

अब सम्भवतः भक्तों के सम्बन्ध में माँ से कुछ कह रहे हैं। ईशान मुखोपाध्याय की बात कह रहे हैं। ईशान ने कहा था, 'मैं भाटपाड़ा में जाकर गायत्री का पुरश्चरण करूँगा।' श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था कि कलियुग में वेद मत नहीं चलता। अन्नगत प्राण है, आयु कम है, देहबुद्धि, विषयबुद्धि सम्पूर्ण नष्ट नहीं होती। इसीलिए ईशान को मातृभाव से तन्त्र मत के अनुसार साधना करने का उपदेश दिया था, और ईशान से कहा था, 'जो ब्रह्म हैं, वहीं माँ, वही आद्या-शक्ति हैं।'

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर कह रहे हैं, "फिर गायत्री का पुरश्चरण! इस छत पर से उस छत पर कूदना। किसने उससे ऐसी बात कही है? अपने ही मन से कर रहा है! अच्छा, वह पुरश्चरण करेगा।"

(मास्टर के प्रति) "अच्छा, मुझे यह सब क्या वायु के विकार से होता है अथवा भाव से?"

मास्टर विस्मित होकर देख रहे हैं कि श्रीरामकृष्ण जगन्माता के साथ इस प्रकार बातचीत कर रहे हैं। वे विस्मित होकर देख रहे हैं, ईश्वर हमारे अति निकट, बाहर तथा भीतर हैं। अत्यन्त निकट हुए बिना श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे उनके साथ बातचीत कैसे कर रहे हैं?

परिच्छेद ३१

मास्टर तथा ब्राह्म भक्त के प्रति उपदेश

(१)

पण्डित और साधु में अन्तर। कलियुग में नारदीय भक्ति।

आज बुधवार है; भाद्रपद की कृष्णा दशमी, २६ सितम्बर, १८८३। बुधवार को भक्तों का समागम कम होता है, क्योंकि सब अपने काम में लगे रहते हैं। प्रायः रविवार को अवकाश मिलने पर भक्तगण श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आते हैं। मास्टर को स्कूल से आज डेढ़ बजे छुट्टी मिल गई है। तीन बजे वे दक्षिणेश्वर कालो-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण के पास पहुँचे। इस समय श्रीरामकृष्ण के पास प्रायः राखाल और लाटू रहते हैं। आज दो घण्टे पहले किशोरी आये हुए हैं। कमरे के भीतर श्रीराम-कृष्ण छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने कुशल-प्रश्न पूछकर नरेन्द्र की बात चलाई।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—क्यों जी, क्या नरेन्द्र से भेंट हुई थी? नरेन्द्र ने कहा है, वे अब भी काली-मन्दिर जाया करते हैं। जब ठीक ज्ञान हो जायगा तब फिर काली-मन्दिर उन्हें न जाना होगा।

"कभी कभी वह यहाँ आता है, इसलिए उसके घरवाले बहुत नाराज़ हैं। उस दिन यहाँ गाड़ी पर चढ़कर आया था। गाड़ी का किराया सुरेन्द्र ने दिया था। इस पर नरेन्द्र की बुआ सुरेन्द्र के यहाँ लड़ने गई थी।"

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र की बात कहते हुए उठे। बातचीत करते हुए उत्तर-पूर्व वाले बरामदे में जाकर खड़े हुए। वहाँ हाजरा, किशोरी, राखाल आदि भक्तगण हैं। तीसरे पहर का समय है।

श्रीरामकृष्ण—वाह, तुम तो आज खूब आ गए, क्यों, स्कूल नहीं है क्या ?

मास्टर—आज डेढ़ बजे छुट्टी हो गई थी।

श्रीरामकृष्ण—इतनी जल्दी क्यों ?

मास्टर—विद्यासागर स्कूल देखने गये थे। स्कूल विद्यासागर का है, इसलिए उनके जाने पर लड़कों को आनन्द मनाने के लिए छुट्टी दी जाती है।

श्रीरामकृष्ण—विद्यासागर सच बात क्यों नहीं कहता ?

"सत्य बोलता रहे और पराई स्त्री को माता जाने, इन दो बातों से अगर राम न मिलें, तो तुलसीदास कहते हैं, मेरी बातों को झूठ समझो। सत्यनिष्ठ रहने से ही ईश्वर मिलते हैं। विद्यासागर ने उस दिन कहा था, यहाँ आने के लिए, परन्तु फिर न आया।

"पण्डित और साधु में बड़ा अन्तर है। जो केवल पण्डित है, उसका मन कामिनी-कांचन पर है। साधु का मन श्रीभगवान् के पादपद्मों में रहता है। पण्डित कहता कुछ है और करता कुछ है। साधु की बात जाने दो। जिनका मन ईश्वर के चरणारविन्दों में लगा रहता है, उनके कर्म और उनकी बातें और ही होती हैं। काशी में मैंने एक नानकपन्थी

लड़का-साधु देखा था । उसकी आयु तुम्हारी इतनी होगी । मुझे 'प्रेमी साधु' कहता था । काशी में उनका मठ है । एक दिन मुझे वहाँ न्योता देकर ले गया । महन्त को देखा जैसे एक गृहिणी । उससे मैंने पूछा, उपाय क्या है ? उसने कहा, कलियुग में नारदीय भक्ति चाहिए । पाठ कर रहा था, पाठ के समाप्त होने पर कहा—'जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुः पर्वतमस्तके । सर्वं विष्णुमयं जगत् ।' सब के अन्त में कहा, शान्तिः ! शान्तिः ! प्रशान्तिः !

"एक दिन उसने गीता पाठ किया । हठ और दृढ़ता भी ऐसी के विषयी आदमियों की ओर होकर न पढ़ता था । मेरी ओर होकर उसने पढ़ा । मथुर बाबू भी थे । उसकी ओर पीठ फेरकर पढ़ने लगा । उसी नानकपन्थी साधु ने कहा था, उपाय है नारदीय भक्ति ।"

मास्टर—वे साधु क्या वेदान्तवादी नहीं हैं ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे लोग वेदान्तवादी हैं । परन्तु भक्तिमार्ग भी मानते हैं । बात यह है कि अब कलिकाल में वेदमत नहीं चलता । एक ने कहा था, मैं गायत्री का पुरश्चरण करूँगा । मैंने कहा, 'क्यों ?—कलि के लिए तो तंत्रोक्त मत है । क्या तंत्रोक्त मत से पुरश्चरण नहीं होता ?'

"वैदिक कर्म बड़ा कठिन है । तिस पर फिर दासत्व करना । इस तरह भी लिखा है कि बारह साल या इसी तरह कुछ दिन दासता करते रहने पर मनुष्य दास ही बन जाता है । इतने दिनों तक जिनकी दासता की उन्हीं की सत्ता उसमें आ जाती है । उसका रजः, तमः, जीवहिंसा, विलास, ये सब आ जाते हैं—उनकी सेवा करते हुए । केवल दासता ही नहीं, ऊपर से पेन्शन भी खाता है !

" एक वेदान्ती साधु आया था। मेघ देखकर नाचता था। आँधी और पानी देखकर उसे बड़ा आनन्द मिलता था। उसके ध्यान के समय अगर कोई उसके पास जाता था तो वह बहुत नाराज़ होता था। एक दिन मैं गया। जाने पर वह बहुत ही उकताया। वह सदा विचार करता था, ' ब्रह्म सत्य है, संसार मिथ्या। माया के कारण अनेक रूप दिखाई दे रहे हैं, इसी विचार से वह रोशनी के झाड़ का कलम लिए फिरता था। झाड़ के कलम से देखो तो कितने ही रंग दीख पड़ते हैं, परन्तु वास्तव में रंग कोई भी नहीं है। उसी तरह ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, परन्तु माया और अहंकार के कारण अनेक रूप दिखाई दे रहे हैं। किसी चीज़ को एक बार से अधिक न देखना चाहिए, जिससे कहीं माया न लग जाय। नहाते समय पक्षी को उड़ते हुए देखकर वह विचार करता था। हम दोनों एक साथ जङ्गल जाते थे। उसने जब यह सुना कि तालाब मुसलमानों का है तब उसमें से जल नहीं लिया। हलधारी ने उससे व्याकरण के प्रश्न किए; वह व्याकरण जानता था। व्यंजन वर्णों की बात हुई। तीन दिन यहाँ ठहरा था। एक दिन पोस्ते के किनारे पर शहनाई की आवाज़ सुनकर उसने कहा, जिसे ब्रह्मदर्शन होता है, उसे इसी तरह की आवाज़ सुनकर समाधि हो जाती है।"

(२)

दक्षिणेश्वर में गुरु श्रीरामकृष्ण। परमहंस अवस्था।

श्रीरामकृष्ण साधुओं की बात कहते हुए परमहंस की अवस्था बतलाने लगे। वही बालक की चाल। मुँह पर हँसी जैसे एकदम फूट-फूटकर निकल रही है। कमर में कपड़ा नहीं, दिगम्बर; आँखें आनन्द-

सागर में तैरती हुई । श्रीरामकृष्ण फिर छोटी खाट पर जा बैठे, फिर वही मन को मुग्ध कर देनेवाली बातें होने लगीं ।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—मैंने नांगे (तोतापुरी) से वेदान्त सुना था । 'ब्रह्म सत्य है, संसार मिथ्या है ।' बाजीगर आकर कितने ही तमाशे दिखाते हैं, आम के पौधे में आम भी लग जाता है । परन्तु है यह सब तमाशा । सत्य तमाशा दिखानेवाला ही है ।

मणि—जीवन जैसे एक लम्बी नींद है, इतना ही समझता हूँ, सब ठीक-ठीक नहीं देख रहा हूँ । जिस मन से मैं आकाश को नहीं समझता, उसी मन से संसार को देख रहा हूँ न ? अतएव किस तरह से देखना ठीक होगा ?

श्रीरामकृष्ण—एक तरह और है । आकाश को हम लोग ठीक नहीं देख रहे, जान पड़ता है वह जमीन से मिला हुआ है । अतएव सत्य आदमी कैसे देखे ? भीतर विकार जो है ।

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से गाने लगे ।

"हे शङ्करि ! यह कैसा विकार है ? तुम्हारी कृपा-औषधि मिलने पर ही यह दूर होगा ।" इत्यादि (पृष्ठ २६२ देखिए) ।

"विकार तो है ही । देखो न, संसारी जीव आपस में लड़ते हैं, परन्तु जिस आधार पर लड़ते हैं वह बेजड़ है । लड़ाई भी कैसी, तेरा यह हो, तेरा वह हो । कितनी चिल्लाहट और शोर-गुल !"

मणि—मैंने किशोरी से कहा था, छूँछे सन्दूक में है कुछ भी नहीं, परन्तु आदमी खींचातानी कर रहे हैं, रुपये हैं, यह समझकर ।

"अच्छा, यह देह ही तो कुल अनर्थों का कारण है। यही सब देखकर ज्ञानी सोचते हैं, इस गिलाफ को छोड़ें तो जी बचे।"

श्रीरामकृष्ण—क्यों ? इस संसार को धोखे की टट्टी कहा है तो इसे आनन्द की कुटिया भी तो कहा है। देह रही भी तो क्या ? संसार आनन्द की कुटिया भी तो हो सकता है।

मणि—निरवच्छिन्न आनन्द यहाँ कहाँ है ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह ठीक है।

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर के सामने आये। माता को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। मणि ने भी प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर के सामने नीचे लतखोरे पर बिना किसी आसन के कालीजी की ओर मुँह किये बैठे हुए हैं। केवल लाल धारीदार धोती पहने हैं। उसका कुछ हिस्सा पीठ पर पड़ा है और कुछ कन्धे पर। पीछे नाटमन्दिर का एक खम्भा है। पास ही मणि बैठे हैं।

मणि—यही अगर हुआ तो देह-धारण की फिर क्या आवश्यकता है ? देख तो यह रहा हूँ कि कुछ कर्मों का भोग करने लिए ही देह धारण करना होता है। वह क्या कर रहा है वही जाने। बीच में हम लोग पिस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—चना अगर विष्ठा पर पड़ जाय तो भी उससे चने का ही पेड़ निकलता है।

मणि—फिर भी अष्ट-बन्धन तो हैं ही।

श्रीरामकृष्ण—अष्ट-बन्धन नहीं, अष्ट पाश। हैं तो इससे क्या? उनकी कृपा होने पर एक क्षण में अष्ट पाश छूट सकते हैं, जिस तरह कि हजार साल के अँधेरे कमरे में दीपक ले जाने पर एक क्षण में अँधेरा दूर हो जाता है। थोड़ा थोड़ा करके नहीं जाता। एक तमाशा करके तुमने देखा है? कितनी ही गाठ लगी रस्सी का एक छोर एक आदमी हाथ से पकड़े रहता है। उसने हिलाया नहीं कि सब ग्रँथियाँ एक साथ खुल गईं। परन्तु दूसरा आदमी चाहे लाख उपाय करे, उसे खोल नहीं सकता। श्रीगुरु की कृपा से सब ग्रंथियाँ एक क्षण में ही खुल जाती हैं।

"अच्छा, केशव सेन इतना बदल कैसे गया?—बताओ तो। यहाँ परन्तु खूब आता था। यहाँ से नमस्कार करना सीखा था। एक दिन मैंने कहा, साधुओं को इस तरह से नमस्कार न करना चाहिए। एक दिन ईशान के साथ मैं गाड़ी पर कलकत्ता जा रहा था। उसने केशव सेन की कुल बातें सुनीं। हरीश अच्छा कहता है—यहाँ से सब चेकें पास करा लेनी होंगी तब बैंक में रुपये मिलेंगे।" (सब हँसते हैं।)

मणि निर्वाक् रहकर सब बातें सुन रहे हैं, उन्होंने समझा, गुरु के रूप में सच्चिदानन्द स्वयं चेक पास करते हैं।

श्रीरामकृष्ण—विचार न करना। उन्हें कौन जान सकता है? नांगा कहता था, मैंने सुन रखा है, उन्हींके एक अंश से यह ब्रह्माण्ड बना है।

"हाजरा में बड़ी विचार-बुद्धि है, वह हिसाब करता है, इतने में संसार हुआ और इतना बाकी रह गया! उसका हिसाब सुनकर मेरा माथा ठनकने लगता है। मैं जानता हूँ, मैं कुछ नहीं जानता। कभी तो उन्हें

अच्छा सोचता हूँ और कभी उन्हें बुरा मानता हूँ। उनका मैं कितना अंश समझूँगा ?"

मणि—जी हाँ, कोई उन्हें समझ थोड़े ही सकता है ? जिसकी जैसी बुद्धि है, उतनी ही से वह सोचता है, मैं सब कुछ समझ गया। आप जैसा कहते हैं, एक चीटी चीनी के पहाड़ के पास गई थी, उसका जब एक ही दाने से पेट भर गया तब उसने कहा, अबकी बार आऊँगी तो पहाड़-का-पहाड़ उठा ले जाऊँगी !

क्या ईश्वर को जान सकते हैं ? उपाय—शरणागति।

श्रीरामकृष्ण—उन्हें कौन जान सकता है ? मैं जानने की चेष्टा भी नहीं करता। मैं केवल माँ कहकर पुकारता हूँ। माँ चाहे जो करें। उनकी इच्छा होगी तो वे समझाएंगी और न इच्छा होगी तो न समझाएंगी। इससे क्या है ? मेरा स्वभाव बिल्ली के बच्चे की तरह है। बिल्ली का बच्चा केवल मिउँ-मिउँ करके पुकारता है। इसके बाद उसकी माँ जहाँ रखती है वहीं रहता है। कभी कण्डौरे में रखती है और कभी बाबू साहब के बिस्तरे पर। छोटा बच्चा बस माँ को ही चाहता है। माता का कितना ऐश्वर्य है, वह नहीं जानता। जानना भी नहीं चाहता। वह जानता है, मेरे माँ है। मुझे क्या चिन्ता है ? नौकरानी का लड़का भी जानता है, मेरे माँ है। बाबू के लँड़के के साथ अगर लड़ाई हो जाती है तो वह कहता है, मैं अपनी माँ से कह दूँगा। मेरे माँ है कि नहीं ? मेरा भी सन्तान-भाव है।

श्रीरामकृष्ण अपने को दिखाकर, अपनी छाती में हाथ लगाकर, मणि से कहते हैं—"अच्छा, इसमें कुछ है—तुम क्या कहते हो ?"

वे निर्वाक् भाव से श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं।

(३)

साकार-निराकार। कर्तव्य बुद्धि।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में काली-मन्दिर के सामने चबूतरे पर बैठे हैं। काली-प्रतिमा में जगन्माता के दर्शन कर रहे हैं। पास ही मास्टर आदि भक्तगण बैठे हैं। आज २६ सितम्बर १८८३ ई० है। समय, दिन का तीसरा प्रहर।

थोड़ी देर पहले श्रीरामकृष्ण ने कहा है, "ईश्वर के सम्बन्ध में अनुमान आदि लगाना व्यर्थ है। उसका ऐश्वर्य अनन्त है। बेचारा मनुष्य मुँह से क्या प्रकट कर सकेगा! एक चींटी ने चीनी के पहाड़ के पास जाकर चीनी का एक कण खाया। उसका पेट भर गया। तब वह सोचने लगी, 'अबकी बार आऊँगी तो पूरे पहाड़ को अपने बिल में उठा ले जाऊँगी!'

"उन्हें क्या समझा जा सकता है? इसीलिए मेरा बिल्ली के बच्चे का सा भाव है। माँ जहाँ भी रख दे, मैं कुछ नहीं जानता। छोटे बच्चे नहीं जानते, माँ का कितना ऐश्वर्य है।"

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर के चबूतरे पर बैठे स्तुति कर रहे हैं,— "ओ माँ! ओ माँ ओंकार-रूपिणि! माँ! ये लोग कितना सब वर्णन करते हैं, माँ!—कुछ समझ नहीं सकता! कुछ नहीं जानता हूँ, माँ! शरणागत! शरणागत! केवल यही करो माँ! कि जिससे तुम्हारे श्रीचरण-कमलों में शुद्धा भक्ति हो! माँ! अब और अपनी भुवन-मोहिनी माया में मोहित न करो माँ! शरणागत! शरणागत!"

मन्दिर में आरती होगई। श्रीरामकृष्ण कमरे में छोटी खटिया पर बैठे हैं। महेन्द्र जमीन पर बैठे हैं।

महेन्द्र पहले श्री केशव सेन के ब्राह्मसमाज में हमेशा जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के बाद फिर वहाँ नहीं जाते हैं, वे यह देखकर बड़े विस्मित हुए हैं कि श्रीरामकृष्ण सदा जगन्माता के साथ वार्तालाप करते हैं और उनकी सर्व-धर्म-समन्वय की बात सुनकर तथा ईश्वर के लिए उनकी व्याकुलता को देखकर वे मुग्ध होगए हैं।

महेन्द्र लगभग दो वर्ष से श्रीरामकृष्ण के पास आया-जाया करते हैं और उनका दर्शन तथा कृपा प्राप्त कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें तथा अन्य भक्तों से सदा ही कहते हैं, "ईश्वर निराकार और फिर भी साकार हैं। भक्त के लिए वे देह धारण करते हैं।" जो लोग निराकारवादी हैं उनसे वे कहते हैं, "तुम्हारा जो विश्वास है उसे ही रखो। परन्तु यह जान लेना कि उनके लिए सभी कुछ सम्भव है। साकार और निराकार ही क्या, वे और भी बहुत कुछ बन सकते हैं।"

श्रीरामकृष्ण (महेन्द्र के प्रति)—तुमने तो एक को पकड़ लिया है—निराकार।

महेन्द्र—जी हाँ, परन्तु जैसा कि आप कहते हैं, सभी सम्भव है। साकार भी सम्भव है।

श्रीरामकृष्ण—बहुत अच्छा, और यह भी जानो कि वे चैतन्य रूप में चराचर विश्व में व्याप्त हैं।

महेन्द्र—मैं समझता हूँ, कि वे चेतन के भी चेतयिता हैं।

श्रीरामकृष्ण—अब उसी भाव में रहो। खींचतान करके भाव

बदलने की आवश्यकता नहीं है। धीरे धीरे जान सकोगे कि वह चेतनता उन्हीं की चेतनता है। वे ही चैतन्यस्वरूप हैं।

"अच्छा, तुम्हारा धन-दौलत पर मोह है?"

महेन्द्र—जी नहीं! परन्तु हाँ इतना अवश्य सोचता हूँ कि निश्चिन्त होने के लिए—निश्चिन्त होकर भगवान् की चिन्ता करने के लिए धन की आवश्यकता होती है।

श्रीरामकृष्ण—वह तो होगी ही!

महेन्द्र—क्या यह लोभ है? मैं तो ऐसा नहीं समझता।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ठीक है। नहीं तो तुम्हारे बच्चों को कौन देखेगा?

"यदि तुम्हारा 'अकर्ता-ज्ञान' हो जाय तो फिर तुम्हारे लड़कों का क्या होगा?"

महेन्द्र—सुना है, कर्तव्य का बोध रहते ज्ञान नहीं होता। कर्तव्य मानो प्रखर झुलसानेवाला सूर्य है।

श्रीरामकृष्ण—अब उसी भाव में रहो। इसके बाद जब यह कर्तव्य-बुद्धि स्वयं ही चली जायगी तब की दूसरी बात।

सभी थोड़ी देर चुप रहे।

महेन्द्र—केवल थोड़ा ही ज्ञान-लाभ होने से तो संसार और भी कष्टप्रद है। यह तो ऐसा होता है मानो होश सहित मृत्यु। जैसे—हैजा!

श्रीरामकृष्ण—राम ! राम ! !

सम्भवतः इस कथन से महेन्द्र का तात्पर्य यह है कि मृत्यु के समय होश रहने पर यन्त्रणा का अधिक अनुभव होता है, जैसे हैजे में होता है। थोड़े ज्ञानवाले का सांसारिक जीवन बड़ा दुःखमय होता है; क्योंकि वह यह समझ चुका है कि संसार भ्रमात्मक है। सम्भव है इसलिए श्रीरामकृष्ण 'राम ! राम !' कह रहे हैं !

महेन्द्र—और दूसरी श्रेणी के लोग वे हैं जो पूर्ण अज्ञानी हैं, मानो मियादी बुखार से पीड़ित हैं। वे मृत्यु के समय बेहोश रहते हैं और इससे उन्हें मृत्यु के समय किसी प्रकार की यंत्रणा नहीं होती।

श्रीरामकृष्ण—देखो न, धन रहने से भी क्या ! जयगोपाल सेन कितने धनी हैं परन्तु हैं दुःखी, लड़के उन्हें उतना नहीं मानते।

महेन्द्र—संसार में क्या केवल निर्धनता ही दुःख है ? इसके अतिरिक्त छः रिपु और भी हैं और फिर उनके ऊपर रोग-शोक।

श्रीरामकृष्ण—फिर मान-मर्यादा, लोकमान्य बनने की इच्छा।

"अच्छा—मेरा क्या भाव है ?"

महेन्द्र—नींद खुल जाने पर मनुष्य का जो भाव होता है वही। उसे स्वयं का होश आ जाता है। ईश्वर के साथ सदा योग।

श्रीरामकृष्ण—तुम मुझे स्वप्न में देखते हो ?

महेन्द्र—हाँ, कई बार !

श्रीरामकृष्ण—कैसा ? कुछ उपदेश देते देखते हो ?

महेन्द्र चुप रह गए ।

श्रीरामकृष्ण—जब जब मैं तुम्हें शिक्षा दूँ तो यही समझो कि स्वयं सच्चिदानन्द ही यह कार्य कर रहे हैं ।

इसके बाद महेन्द्र ने स्वप्न में जो कुछ देखा था सभी कह सुनाया । श्रीरामकृष्ण ने मन लगाकर सभी सुना ।

श्रीरामकृष्ण (महेन्द्र के प्रति)—यह सब बहुत अच्छा है । तुम और तर्क-विचार न लाओ ! तुम लोग शाक्त हो !

परिच्छेद ३२

दुर्गापूजा-महोत्सव में श्रीरामकृष्ण

(१)

जगन्माता के साथ वार्तालाप।

श्री अधर के मकान पर नवमी-पूजा के दिन मन्दिर में श्रीराम-कृष्ण खड़े हैं। सन्ध्या के बाद श्रीदुर्गाजी की आरती देख रहे हैं। अधर के घर पर दुर्गापूजा का महोत्सव है। इसलिए वे श्रीरामकृष्ण को निमंत्रित करके लाए हैं।

आज बुधवार है। १० अक्टूबर १८८३ ई०। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ पधारे हैं। उनमें बलराम के पिता तथा अधर के मित्र स्कूल इन्स्पेक्टर शारदा बाबू भी आये हैं। अधर ने पूजा के उपलक्ष्य में पड़ोसी तथा आत्मीय जनों को भी निमंत्रण दिया है। वे भी आये हैं।

श्रीरामकृष्ण संध्या की आरती देखकर भावविभोर होकर मन्दिर में खड़े हैं। भावाविष्ट होकर माँ को गाना सुना रहे हैं।

अधर गृही भक्त हैं। और भी अनेक गृही भक्त उपस्थित हैं। वे सब त्रितापों से तापित हैं। सम्भव है इसीलिए श्रीरामकृष्ण सभी के मंगल के लिए जगन्माता की स्तुति कर रहे हैं।

(संगीत—भावार्थ) "हे तारिणि! मुझे तारो। अबकी बार शीघ्र तारो। हे माँ, जीवगण यम से भयभीत हो गये हैं। हे जगज्जननि! संसार को

पालने वाली ! लोगों को मोहने वाली जगज्जननी ! तुमने यशोदा की कोख में जन्म लेकर हरि की लीला में सहायता की थी, तुम वृन्दावन में राधा बन ब्रजवल्लभ के साथ विहार करती हो। रास रचकर रसमयी तुमने रास-लीला का प्रकाश किया। हे माँ, तुम गिरिजा हो, गोपतनया हो, गोविन्द की मनमोहिनी हो, तुम सद्‌गति देने वाली गंगा हो। हे शिवे ! हे सनातनि ! सदानन्दमयी सर्वस्वरूपिणि ! हे निर्गुणे, हे सगुणे ! हे सदाशिव की प्रिये ! तुम्हारी महिमा को कौन जानता है !"

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान के दुमंज़ले पर बैठक-घर में बैठे हैं। घर पर अनेक आमंत्रित व्यक्ति आये हैं।

बलराम के पिता और शारदा बाबू आदि पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावविभोर हैं। आमंत्रित व्यक्तियों को सम्बोधित कर कह रहे हैं, "मैंने भोजन कर लिया है। अब तुम लोग भी प्रसाद पाओ।"

अधर की पूजा और नैवेद्य को माँ ने ग्रहण किया है। क्या इसी-लिए श्रीरामकृष्ण जगन्माता के आवेश में आकर कह रहे हैं, "मैंने खा लिया है। अब तुम लोग भी प्रसाद पाओ।"

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर जगन्माता से कह रहे हैं, "माँ ! मैं खाऊँ ? कि तुम खाओगी ? माँ, कारणानन्दरूपिणि।"

क्या श्रीरामकृष्ण जगन्माता को और अपने को एक ही देख रहे हैं ? जो माँ हैं, क्या वही स्वयं लोक-शिक्षा के लिए पुत्र के रूप में

अवतीर्ण हुई हैं ? क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण भाव के आवेश में कह रहे हैं, मैंने खाया है ?

इसी प्रकार भाव के आवेश में देह के बीच षट्-चक्र और उसमें माँ को देख रहे हैं। इसलिए फिर भावविभोर होकर गाना गा रहे हैं।

(संगीत—भावार्थ)

"सोचते क्या हो ! सोचते-सोचते प्राणों पर आ बीती। जिसके नाम से काल नष्ट होता है, जिसके चरणों के नीचे महाकाल है, उसका काला रूप क्यों हुआ ? काले रूप अनेक हैं, पर यह बड़ा आश्चर्यजनक काला रंग है जिसे हृदय के बीच में रखने पर हृदयरूपी पद्म आलोकित हो जाता है। रूप में काली है, नाम में काली है, काले से भी अधिक काली है। जिसने इस रूप को देखा है, वह भूल गया है। उसे दूसरा रूप अच्छा नहीं लगता। प्रसाद आश्चर्य के साथ कहता है कि ऐसी लड़की कहाँ थी, जिसे बिना देखे, केवल कान से जिसका नाम सुनकर ही मन जाकर उसमें लिप्त हो गया।"

अभया की शरण में जाने से सभी भय दूर हो जाते हैं, सम्भव है इसीलिए वे भक्तों को अभय दान दे रहे हैं और गाना गा रहे हैं।

फिर संगीत—"मैंने अभय पद में प्राणों को सौंप दिया है" इत्यादि।

श्री शारदाबाबू पुत्रशोक से व्यथित हैं। इसलिए उनके मित्र अधर उन्हें श्रीरामकृष्ण के पास लाए हैं। वे गौरांग के भक्त हैं। उन्हें देखकर श्रीरामकृष्ण का श्री गौरांग का उद्दीपन हुआ है। श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं—

संगीत—"मेरा अंग क्यों गौर हुआ ?" इत्यादि ।

अब श्री गौरांग के भाव में आविष्ट हो गाना गा रहे हैं । कह रहे हैं, शारदा बाबू यह गाना बहुत चाहते हैं ।

(संगीत—भावार्थ)

"भावनिधि गौरांग का भाव होगा नहीं तो क्या ? भाव में हँसते हैं, रोते हैं, नाचते हैं, गाते हैं । बन देखकर वृन्दावन समझते हैं । गंगा देख उसे यमुना मान लेते हैं । (गौरांग) सिसक सिसक कर रो रहे हैं । यद्यपि वे बाहर गौर हैं तथापि भगवान् कृष्ण की श्यामता से भीतर नितान्त श्याम हैं ।"

(संगीत—भावार्थ)

"माँ ! पड़ोसी लोग हल्ला मचाते हैं । मुझे गौर-कलंकिनी कहते हैं । क्या यह कहने की बात है, कहाँ कहूँगी । ओ प्यारी सखि, लज्जा से मरी जाती हूँ । एक दिन श्रीवास के मकान में कीर्तन की धूम मची हुई थी, गौर रूपी चन्द्रमा श्रीवास के आँगन पर लोटपोट हो रहा था, मैं एक कोने में खड़ी थी । एक ओर छिपी हुई थी । मैं बेहोश हो गई । श्रीवास की धर्मपत्नी मुझे होश में लाई । गौर नगर-कीर्तन कर रहे थे, चण्डाल, यवन आदि भी गौर के साथ थे । वे 'हरिबोल' 'हरिबोल' कहते हुए नदिया के बाजारों में से चले जा रहे थे । मैंने उनके साथ जाकर दो लाल चरणों का दर्शन किया था । एक दिन गंगा-तट पर घार में गौरांग प्रभु खड़े थे । मानो चन्द्र और सूर्य दोनों ही गौर के अंग में प्रकट हुये थे । गौर के रूप को देखकर शाक्त और शैव भूल गये । एकाएक मेरा घड़ा गिर पड़ा ! दुष्ट ननदिया ने देख लिया था ।"

बलराम के पिता वैष्णव हैं; सम्भव है इसीलिए अब श्रीरामकृष्ण गोपियों के दिव्य प्रेम का गाना गा रहे हैं।

(संगीत—भावार्थ)

"सखि ! श्याम को पा न सकी, तो फिर किस सुख से घर पर रहूँ। यदि श्याम मेरे सिर के केश होते तो हे सखि, मैं उसमें फूल पिरोकर यत्न के साथ वेणी बाँध लेती। श्याम यदि मेरे हाथ के कंगन होते, तो सदा बाँहों में लगे रहते। सखि ? मैं कंगन हिलाकर, बाँह हिलाकर चली जाती। हे सखि ! मैं श्यामरूपी कंगन को हाथ में पहनकर सड़कों पर से भी चली जाती। जिस समय श्याम अपनी बन्सरी बजाता है, तो मैं यमुना में जल लेने आती हूँ। मैं भटकी हुई हरिणी की तरह इधर उधर ताकती रह जाती हूँ।"

(२)

सर्व-धर्म-समन्वय और श्रीरामकृष्ण।

बलराम के पिता की उड़ीसा प्रान्त में भद्रक आदि कई स्थानों में ज़मींदारी है और वृन्दावन, पुरी, भद्रक आदि अनेक स्थानों में उनकी देव-सेवा और अतिथि-शालायें भी हैं। वे वृद्धावस्था में श्रीवृन्दावन में भगवान् श्यामसुन्दर के कुंज में उनकी सेवा में लगे रहते थे।

बलराम के पिताजी पुराने मत के वैष्णव हैं। अनेक वैष्णव भक्त शाक्त, शैव और वेदान्तवादियों के साथ सहानुभूति नहीं रखते हैं, कोई कोई उनसे द्वेष भी करते हैं। परन्तु श्रीरामकृष्ण इस प्रकार की संकीर्णता पसन्द नहीं करते। उनका कहना है कि व्याकुलता रहने पर सभी पंथों

तथा सभी मतों से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। अनेक वैष्णव भक्त बाहर से तो जप-जाप, पूजा-पाठ आदि करते हैं, परन्तु भगवान् को प्राप्त करने के लिए उनमें व्याकुलता नहीं है। सम्भव है इसलिए श्रीराम-कृष्ण बलराम के पिताजी को उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—सोचा, क्यों एकांगी बनूँ ? मैंने भी वृन्दावन में वैष्णव बैरागी की दीक्षा ली थी तथा उनका भेष ग्रहण किया था। उस भाव में तीन दिन रहा। फिर दक्षिणेश्वर में राम-मंत्र लिया था। लम्बा तिलक, गले में कण्ठी; फिर थोड़े दिनों के बाद सब कुछ हटा दिया।

"एक आदमी के पास एक बर्तन था। लोग उसके पास कपड़ा रंगवाने के लिए जाते थे। बर्तन में रंग तैयार है। परन्तु जिसे जिस रंग की आवश्यकता होती, उस बर्तन में कपड़ा डालने से उसी रंग का हो जाता था। यह देखकर एक व्यक्ति विस्मित होकर रंगवाले से कह रहा है, अभी तुम्हारे बर्तन में जो रंग है वही रंग मुझे दो !"

क्या इस उदाहरण द्वारा श्रीरामकृष्ण यही कह रहे हैं कि सभी धर्मों के लोग उनके पास आयेंगे और आत्मज्ञान प्राप्त करेंगे ?

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, "एक वृक्ष पर एक गिरगिट था ! एक व्यक्ति ने देखा हरा, दूसरे व्यक्ति ने देखा काला और तीसरे ने पीला, इस प्रकार अनेक व्यक्ति अलग अलग रंग देख गए। बाद में वे आपस में कह रहे हैं, वह जानवर हरे रंग का है। दूसरा कह रहा है, नहीं लाल रंग का, कोई कहता है पीला, और इस प्रकार आपस में सब झगड़ रहे हैं। उस समय वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति बैठा था, सब मिलकर उसके पास

गये। उसने कहा, " मैं इस वृक्ष के नीचे रातदिन रहता हूँ, मैं जानता हूँ, यह गिरगिट है। क्षण क्षण में रंग बदलता है, और फिर कभी कभी इसका कोई रंग नहीं रहता।"

क्या श्रीरामकृष्ण यही कह रहे हैं कि ईश्वर सगुण है, वह भिन्न भिन्न रूप धारण करता है ? और फिर निर्गुण है, कोई रूप नहीं। वाक्य, मन से परे है ? और वे स्वयं भक्तियोग, ज्ञानयोग आदि सभी पथों से ईश्वर के माधुर्य का रस पीते हैं ?

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता के प्रति)—और अधिक पुस्तकें न पढ़ो, परन्तु भक्तिशास्त्र का अध्ययन करो, जैसे श्री चैतन्य-चरितामृत।

राधाकृष्ण-लीला का अर्थ। रस और रसिक।

"असल बात यह है कि उनसे प्रेम करना चाहिए, उनके माधुर्य का आस्वादन करना चाहिए। वे रस हैं, रसिक भक्त उस रस का पान करते हैं। वे पद्म हैं और भक्त भौंरा, भक्त पद्म का मधु पीता है।

"भक्त जिस प्रकार भगवान् के बिना नहीं रह सकता, भगवान् भी भक्त के बिना नहीं रह सकते ! उस समय भक्त रस बन जाते हैं और भगवान् बनते हैं रसिक; भक्त बनता है पद्म और भगवान् बनते हैं भौंरा ! वे अपने माधुर्य का आस्वादन करने के लिए दो बने हैं, इसीलिए राधाकृष्ण-लीला हुई।

"तीर्थ, गले में माला, नियम, ये सब पहले-पहल करने पड़ते हैं। वस्तु की प्राप्ति हो जाने पर, भगवान् का दर्शन हो जाने पर बाहर का

आडम्बर धीरे-धीरे कम होता जाता है। उस समय उनका नाम लेकर रहना और स्मरण-मनन।

"सोलह रुपयों के पैसे अनेक होते हैं, परन्तु जब रुपये इकट्ठे किए जाते हैं, तो उतने अधिक नहीं दीखते। फिर उनके बदले में जब गिन्नि* बनाई तो कितना कम हो गया! फिर उसे बदलकर यदि हीरा लाओ तो लोगों को पता तक नहीं लगता।"

गले में माला, नियम आदि न रहने से वैष्णवगण आक्षेप करते हैं। क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं कि ईश्वर-दर्शन के बाद माला-दीक्षा—आदि का बन्धन उतना नहीं रह जाता। वस्तु प्राप्त होने पर बाहर का काम कम हो जाता है।

"कर्ताभजा सम्प्रदायवाले कहते हैं कि भक्त चार प्रकार के होते हैं। प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्ध का सिद्ध। प्रवर्तक तिलक लगाते हैं, गले में माला धारण करते हैं और नियम पालन करते हैं। साधक—इनका उतना बाहर का आडम्बर नहीं रहता। उदाहरणार्थ, बाउल। सिद्ध—जिसका स्थिर विश्वास है कि ईश्वर हैं। सिद्ध के सिद्ध जैसे चैतन्य-देव ने ईश्वर का दर्शन किया है और सदा उनसे वार्तालाप करते हैं। सिद्ध के सिद्ध को ही वे साईं कहते हैं। साईं के बाद और कुछ नहीं रह जाता।

"साधक भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। सात्विक साधना गुप्त रूप से होती है। इस प्रकार का साधक साधन-भजन को छिपाता है। देखने से

---

* उस समय एक गिन्नी का मूल्य सोलह रुपये था।

साधारण लोगों की तरह जान पड़ता है। मच्छरदानी के भीतर बैठा ध्यान करता है।

"राजसिक साधक बाहर का आडम्बर रखता है, गले में जपमाला, भेष, गेरुआ वस्त्र, रेशमी वस्त्र, सोने के दाने वाली जपमाला, मानो साइन-बोर्ड लगा कर बैठना!"

वैष्णव भक्तों की वेदान्तमत पर अथवा शाक्तमत पर उतनी श्रद्धा नहीं है। श्रीरामकृष्ण बलराम के पिता को उस प्रकार के संकीर्ण भाव को त्यागने का उपदेश कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता आदि के प्रति)—जो भी धर्म हो, जो भी मत हो, सभी उसी एक ईश्वर को पुकार रहे हैं। इसलिए किसी धर्म अथवा मत के प्रति अश्रद्धा या घृणा नहीं करनी चाहिए। वेद उन्हें ही कह रहे हैं, सच्चिदानन्द ब्रह्म, भागवत आदि पुराण उन्हें ही कह रहे हैं, सच्चिदानन्द कृष्ण, और तंत्र कह रहे हैं, सच्चिदानन्द शिव। वही एक सच्चिदानन्द हैं।

"वैष्णवों के अनेक सम्प्रदाय हैं। वेद जिन्हें ब्रह्म कहते हैं, वैष्णवों का एक दल उन्हें अलख-निरंजन कहता है। अलख अर्थात् जिन्हें लक्ष्य नहीं किया जा सकता, इन्द्रियों द्वारा देखा नहीं जाता। वे कहते हैं, राधा और कृष्ण अलख के दो बुलबुले हैं।

"वेदान्त मत में अवतार नहीं है। वेदान्तवादी कहते हैं, राम, कृष्ण,—ये सच्चिदानन्दरूपी समुद्र की दो लहरें हैं।

"एक के अतिरिक्त दो तो नहीं हैं, चाहे जिस नाम से कोई ईश्वर को पुकारे उसके पास वह अवश्य ही पहुँचेगा। व्याकुलता रहनी चाहिए।"

श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर भक्तों से ये सब बातें कह रहे हैं। अब प्रकृतिस्थ हुए हैं और कह रहे हैं, "तुम बलराम के पिता हो?"

सभी थोड़ी देर चुपचाप बैठे हैं, बलराम के वृद्ध पिता चुपचाप हरिनाम की माला जप रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि के प्रति)—अच्छा, ये लोग इतना जप करते हैं, इतना तीर्थ करते हैं, फिर भी इनकी प्रगति क्यों नहीं होती? मानो अठारह मास का इनका एक वर्ष होता है।

"हरीश से कहा, 'यदि व्याकुलता न रहे, तो फिर काशी जाने की क्या आवश्यकता? व्याकुलता रहने पर यहीं पर काशी है।'

"इतना तीर्थ, इतना जप करते हैं, फिर भी कुछ क्यों नहीं होता? व्याकुलता नहीं है। व्याकुल होकर उन्हें पुकारने पर वे दर्शन देते हैं।

"नाटक के प्रारम्भ में रंगभूमि पर बड़ी गड़बड़ी मची रहती है। उस समय श्रीकृष्ण का दर्शन नहीं होता। उसके बाद नारद ऋषि जिस समय व्याकुल होकर वृन्दावन में आकर वीणा बजाते हुए पुकारते हैं और कहते हैं, 'प्राण हे गोविन्द मम जीवन'—उस समय कृष्ण और ठहर नहीं सकते, गोपालों के साथ सामने आ जाते हैं।"

परिच्छेद ३३

दक्षिणेश्वर में कार्तिकी पूर्णिमा

(१)

श्रीरामकृष्ण की अद्भुत स्थिति ।

आज मंगलवार, १६ अक्टूबर १८८२ ई० । बलराम के पिता दूसरे भक्तों के साथ उपस्थित हैं। बलराम के पिता परम वैष्णव हैं। हाथ में हरि नाम की माला रहती है, सदा जप करते रहते हैं।

कट्टर वैष्णवगण अन्य सम्प्रदाय के लोगों को उतना पसन्द नहीं करते। बलराम के पिता बीच बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन कर रहे हैं, उनका उन वैष्णवों का सा भाव नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—जिनका उदार भाव है वे सभी देवताओं को मानते हैं,—कृष्ण, काली, शिव, राम आदि।

बलराम के पिता—हाँ, जिस प्रकार एक पति, अलग अलग पोशाक में।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु निष्ठा भक्ति एक चीज़ है। गोपियाँ जब मथुरा में गईं तो पगड़ी पहने हुए कृष्ण को देखकर उन्होंने घूँघट काढ़ लिया और कहा, 'यह कौन है! हमारे पीत वस्त्रधारी, मोहन चूड़ा वाले श्रीकृष्ण कहाँ हैं?'

"हनुमान की भी निष्ठा भक्ति है। द्वापर युग में द्वारका में जब

आए तो कृष्ण ने रुक्मिणी से कहा, 'हनुमान रामरूप न देखने से सन्तुष्ट न होगा।' इसलिए रामरूप में उन्हें दर्शन दिया!

"कौन जाने भाई, मेरी यही एक स्थिति है। मैं केवल नित्य से लीला में उतर आता हूँ और फिर लीला से नित्य में चला जाता हूँ।

"नित्य में पहुँचने का नाम है ब्रह्मज्ञान। बड़ा कठिन है। विषय-बुद्धि एकदम नष्ट हुए बिना कुछ नहीं होता। हिमालय के घर जब भगवती ने जन्म लिया तो पिता को अनेक रूपों में दर्शन दिया। हिमालय ने उनसे कहा, 'मैं ब्रह्मदर्शन की इच्छा करता हूँ।' तब भगवती ने कहा, 'पिताजी, यदि वैसी इच्छा हो तो सत्संग करना पड़ेगा। संसार से अलग होकर बीच-बीच में निर्जन में साधुसंग कीजिए।'

"उसी एक से ही अनेक हुए हैं—नित्य से ही लीला है। एक ऐसी अवस्था है जिसमें 'अनेक' का बोध नहीं रहता और न 'एक' का ही; क्योंकि 'एक' के रहते ही 'अनेक' आ जाता है। वे तो उपमाओं से रहित हैं—उपमा देकर समझाने का उपाय नहीं है! अन्धकार और प्रकाश के मध्य में हैं। हम जिस प्रकाश को देखते हैं, ब्रह्म वह प्रकाश नहीं है—वह ब्रह्म जड़-आलोक नहीं है।*

"फिर जब वे मेरे मन की अवस्था को बदल देते हैं—उस समय लीला में मन को उतार लाते हैं—तब देखता हूँ ईश्वर, माया, जीव, जगत्—वे सब कुछ बने हुए हैं।

---

* यह ब्रह्म जड़-आलोक नहीं है—"तत् ज्योतिषां ज्योतिः," "तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यत् आत्मविदो विदुः"—मुण्डक उपनिषद्, २।२।९

"फिर कभी वे दिखाते हैं कि उन्होंने इस सब जीव-जगत् को बनाया है—जैसे मालिक और उसका बगीचा।

"वे कर्ता हैं और उन्हीं का यह सब जीव-जगत् है, इसीका नाम है ज्ञान। और 'मैं करने वाला हूँ,' 'मैं गुरु हूँ,' 'मैं पिता हूँ,' इसी का नाम है अज्ञान, फिर मेरे हैं ये सब घर-द्वार, परिवार, धन, जन आदि—इसीका नाम है अज्ञान।"

बलराम के पिता—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—जब तक यह बुद्धि नहीं होती कि केवल ईश्वर ही कर्ता है तब तक लौट-लौट कर आना ही होगा, बारम्बार जन्म लेना पड़ेगा। फिर जब यह ज्ञान हो जायगा तब जन्म नहीं होगा।

"जब तक 'तू ही, तू ही' न करोगे तब तक छुटकारा नहीं। आना-जाना, पुनर्जन्म होगा ही—मुक्ति न होगी। और 'मेरा मेरा' कहने से ही क्या होगा? बाबू का मुनीम कहता है, 'यह हमारा बगीचा है, हमारी खाट, हमारी कुर्सी।' परन्तु बाबू जब उसे नौकरी से निकाल देते हैं तो अपनी आम की लकड़ी की छोटी सी सन्दूकची तक ले जाने का उसे अधिकार नहीं रहता।

"'मैं और मेरा' ने सत्य को छिपा रखा है—जानने नहीं देता!

अद्वैत ज्ञान तथा चैतन्य दर्शन।

"अद्वैत का ज्ञान हुए बिना चैतन्य का दर्शन नहीं होता। चैतन्य का दर्शन होने पर तब नित्यानन्द होता है। परमहंस स्थिति में यही नित्यानन्द है।

" वेदान्त मत में अवतार नहीं हैं । इस मत में चैतन्यदेव अद्वैत के एक बुलबुला हैं ।

" चैतन्य का दर्शन कैसा ? दियासलाई जलाने से अन्धेरे कमरे में जिस प्रकार एकाएक रोशनी हो जाती है ।

" भक्ति मत में अवतार मानते हैं । कर्ताभजा सम्प्रदाय की एक स्त्री मेरी स्थिति को देखकर कह गई, 'बाबा, भीतर वस्तु-प्राप्ति हुई है, उतना नाचना-कूदना नहीं, अंगूर के फल को रूई पर यत्न से रखना होता है । पेट में बच्चा होने पर सास अपनी बहू का धीरे-धीरे काम बन्द करा देती है । भगवान् के दर्शन का लक्षण है, धीरे-धीरे कर्मत्याग होना । यह मनुष्य (श्रीरामकृष्ण) 'नर-रत्न' है ।'

" मेरे खाते समय वह कहती थी, 'बाबा, तुम खा रहे हो या किसी को खिला रहे हो' ?

" 'अहं' ज्ञान ने ही आवरण बनाकर रखा है । नरेन्द्र ने कहा था, 'यह 'मैं' जितना जाएगा, 'उनका मैं' उतना ही आएगा ।' केदार कहता है, घड़े के भीतर जितनी ही अधिक मिट्टी रहेगी, अन्दर उतना ही जल कम रहेगा ।

" कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, 'भाई, अष्ट सिद्धियों में से एक भी सिद्धि के रहते तक मुझे न पाओगे । उससे थोड़ी सी शक्ति अवश्य मिल जाती है, पर बस केवल इतना ही । गुटिका-सिद्धि, झाड़-फूँक, दवा देना इत्यादि से लोगों का कुछ थोड़ा बहुत उपकार भर हो जाता है, क्यों, है न यही ?

"इसीलिए माँ से मैंने केवल शुद्धा भक्ति माँगी थी; सिद्धि नहीं माँगी।"

बलराम के पिता, वेणीपाल, मास्टर, मणि मल्लिक आदि से यह बात कहते कहते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गए। बाह्य-ज्ञान-शून्य होकर चित्र की तरह बैठे हैं।

समाधि भंग होने के बाद श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं—

(संगीत—भावार्थ)

"सखि! जिसके लिए पागल बनी उसे कहाँ पा सकी?"

अब उन्होंने श्री रामलाल से गाना गाने के लिए कहा, वे गा रहे हैं। पहले ही गौरांग का संन्यास—

(संगीत—भावार्थ)

"केशव भारती की कुटिया में मैंने क्या देखा—असाधारण ज्योतिवाली श्रीगौरांग की मूर्ति जिसकी दोनों आँखों से शत धाराओं से प्रेमवारि बह रहा है। गौर पागल हाथी की तरह प्रेम के आवेश में आकर नाचते हैं, गाते हैं, और कभी भूमि पर लेटते हैं, आँसू बह रहे हैं। वे रोते हैं और हरिनाम उच्चारण करते हैं, उनका सिंह जैसा उच्च स्वर आकाश को भी भेद रहा है। फिर वे दाँतों में तिनका लेकर हाथ जोड़कर द्वार-द्वार पर दास्यभाव द्वारा मुक्ति की प्रार्थना कर रहे हैं।"

चैतन्य देव के इस 'पागल' प्रेमोन्माद-स्थिति के वर्णन के बाद श्रीरामकृष्ण के कहने पर रामलाल फिर गोपियों की उन्माद स्थिति का गाना गा रहे हैं—

(संगीत—भावार्थ)

"रथ चक्र को न पकड़ो, न पकड़ो, क्या रथ चक्र से चलता है? उस चक्र के चक्री हरि हैं, जिनके चक्र से जगत् चलता है।"

(संगीत—भावार्थ)

"श्याम रूपी चन्द्र का दर्शन कर नवीन बादल की कहाँ गिनती है? हाथ में बंसरी होने पर इसी अपने रूप से जगत् को आलोकित कर रहा है।"

(२)

अछूतों की समस्या—अस्पृश्य जाति की हरिनाम से शुद्धि।

हरिभक्ति होने पर फिर जाति का विचार नहीं रहता। श्रीरामकृष्ण श्री मणि मल्लिक से कह रहे हैं,—"तुम तुलसीदास की वह कहानी कहो तो।"

मणि मल्लिक—चातक को प्यास से छाती फटी जाती है—गंगा, यमुना, सरयू आदि कितनी नदियाँ और तालाब हैं, परन्तु वह कोई भी जल नहीं पिएगा, केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा के जल के लिए ही मुँह खोले रहता है!

श्रीरामकृष्ण—अर्थात् उनके चरण कमलों में भक्ति ही सार है, शेष सब मिथ्या।

मणि मल्लिक—तुलसीदास की एक और बात—स्पर्श-मणि से लगते ही, अष्ट धातु सोना बन जाती है। उसी प्रकार सभी जातियाँ—

चमार, चाण्डाल तक हरिनाम लेने पर शुद्ध हो जाते हैं। और वैसे तो 'बिना हरिनाम चार जात चमार'!

श्रीरामकृष्ण—जिस चमड़े की खाल छूनी भी नहीं चाहिए, उसी को पका लेने के बाद फिर देव-मन्दिर में भी ले जाते हैं!

"ईश्वर के नाम से मनुष्य पवित्र होता है। इसीलिए नाम-कीर्तन का अभ्यास करना चाहिए। मैंने यदु मल्लिक की माँ से कहा था, 'जब मृत्यु आएगी, तब इस संसार की चिन्ता उत्पन्न होगी। परिवार, लड़के-लड़कियों की चिन्ता—मृत्युपत्र की चिन्ता—यही सब बातें आयेंगी; भगवान् की चिन्ता न आएगी। उपाय है उनके नाम का जप करना, नाम-कीर्तन का अभ्यास करना। यदि अभ्यास रहा, तो मृत्यु के समय में उन्हीं का नाम मुँह में आएगा। बिल्ली जब चिड़िया को पकड़ती है, उस समय चिड़िया की 'च्याँ, च्याँ' बोली ही निकलेगी। उस समय वह 'राम-राम, हरे-कृष्ण' न बोलेगी।

"मृत्यु-समय के लिए तैयार होना अच्छा है। अन्तिम दिनों में निर्जन में जाकर केवल ईश्वर का चिन्तन तथा उनका नाम जपना। हाथी को नहला कर यदि हाथीखाने में ले जाया जाय तो फिर वह अपनी देह में मिट्टी-कीचड़ नहीं लगा सकता।"

बलराम के पिता, मणि मल्लिक, वेणीपाल ये अब वृद्ध हो गए हैं; क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनके कल्याण लिए ये सब उपदेश दे रहे हैं?

श्रीरामकृष्ण फिर भक्तों को सम्बोधित करके बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—एकान्त में उनका चिन्तन और नाम स्मरण करने के

लिए क्यों कहता हूँ ? संसार में रातदिन रहने पर अशान्ति होती है। देखो न, एक गज जमीन के लिए भाई-भाई में मारकाट होती है।

"सिक्खों का कहना है कि ज़मीन, स्त्री और धन—इन्हीं तीनों के लिए इतनी गड़बड़ तथा अशान्ति होती है।

"तुम लोग संसार में हो तो इसमें भय क्या है ? राम ने संसार छोड़ने की बात कही, तो दशरथ चिन्तित होकर वशिष्ठ की शरण में गये। वशिष्ठ ने राम से कहा, 'राम, तुम क्यों संसार को छोड़ोगे ? मेरे साथ विचार करो, क्या संसार ईश्वर से अलग है ? क्या छोड़ोगे और क्या ग्रहण करोगे ? उनके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। वे ईश्वर, माया, जीव, जगत् सभी रूप में प्रकट हो रहे हैं।"

बलराम के पिता—बड़ा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण—साधना के समय यह संसार धोखे की टट्टी है, फिर ज्ञान प्राप्त करने के बाद, उनके दर्शन के बाद, वही संसार—"आनन्द की कुटिया" है।

अवतार-पुरुष में ईश्वर का दर्शन। अवतार चैतन्य देव।

"वैष्णव ग्रन्थ में कहा है, 'विश्वास से कृष्ण मिलते हैं, तर्क से बहुत दूर होते हैं।' केवल विश्वास !

"कृष्ण-किशोर का क्या ही विश्वास है ! वृन्दावन में कुएँ से एक नीच जाति के पुरुष ने जल निकाला, उससे कहा, 'बोल शिव', उसके शिवनाम कहते ही उन्होंने जल पी लिया। वह कहता था, 'ईश्वर

का नाम ले लिया है, तो फिर धन आदि खर्च करके प्रायश्चित्त करने में क्या रखा है। कैसी विडम्बना है! '

" कृष्णकिशोर यह देखकर आश्चर्यचकित हो गया कि लोग अपने शारीरिक रोगों से छुटकारा पाने के लिए भगवान् की तुलसीदल से पूजा कर रहे हैं। साधु-दर्शन की बात पर हलधारी ने कहा था, ' अब और क्या देखने जाऊँ—पंचभूतों का पिंजरा! ' कृष्णकिशोर ने क्रुद्ध होकर कहा, ' ऐसी बात हलधारी ने कही है! क्या वह नहीं जानता कि साधुओं की देह चिन्मय होती है! '

" काली-बाड़ी के घाट पर हमसे कहा था, तुम लोग आशीर्वाद दो कि राम राम कहते मेरे दिन कट जायँ!

" मैं कृष्णकिशोर के मकान पर जब जाता हूँ, तब मुझे देखते ही वह नाचने लगता है!

" श्रीरामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा था, ' भाई, जहाँ पर शुद्धा भक्ति देखोगे, जानो कि वहीं पर मैं हूँ। '

" जैसे चैतन्य देव; प्रेम में हँसते हैं, रोते हैं, नाचते हैं, गाते हैं। चैतन्यदेव अवतार—उनके रूप में ईश्वर अवतीर्ण हुए हैं। "

श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं—

(संगीत–भावार्थ)

" भावनिधि श्री गौरांग का भाव तो होगा ही रे! वे भावविभोर होकर हँसते हैं, रोते हैं, नाचते हैं, गाते हैं! (सिसक सिसक कर रोते हैं।)"

(३)

चित्तशुद्धि के पश्चात् ईश्वर-दर्शन ।

बलराम के पिता, मणि मल्लिक, वेणीपाल आदि विदा ले रहे हैं।

सायंकाल के बाद कंसारीपाड़ा की हरिसभा के भक्तगण आये हैं।

उनके साथ श्रीरामकृष्ण मतवाले हाथी की तरह नृत्य कर रहे हैं। नृत्य के बाद भावविभोर होकर कह रहे हैं, "मैं कुछ दूर अपने आप ही जाऊँगा।"

किशोरी भावावस्था में चरण-सेवा करने जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने किसी को छूने नहीं दिया।

सन्ध्या के बाद ईशान आये हैं। श्रीरामकृष्ण बैठे हैं भावविभोर। थोड़ी देर बाद ईशान के साथ बात कर रहे हैं, ईशान की इच्छा, गायत्री का पुरश्चरण करेंगे।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—तुम्हारे मन में जो है, वैसा ही करो, मन में और सन्देह तो नहीं रहा ?

ईशान—मैंने एक प्रकार प्रायश्चित्त की तरह संकल्प किया था।

श्रीरामकृष्ण—इस पथ में (तंत्र-मार्ग में) क्या यह नहीं होता ? जो ब्रह्म है, वही शक्ति काली हैं। 'मैंने काली-ब्रह्म का मर्म जानकर धर्माधर्म सब छोड़ दिया है।'

ईशान—चण्डी-स्तोत्र में है, ब्रह्म ही आद्या शक्ति हैं। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं।

श्रीरामकृष्ण—यह मुँह से कहने से ही नहीं होगा। जब धारणा होगी तब ठीक होगा।

"साधना के बाद चित्तशुद्धि होने पर यथार्थ ज्ञान होगा कि वे ही कर्ता हैं। वे ही मन-प्राण-बुद्धिरूप हैं। मैं केवल यंत्ररूप हूँ! 'तुम कीचड़ में हाथी को फँसा देते हो, लंगड़े से पहाड़ लँघवाते हो!'

"चित्तशुद्धि होने पर समझ में आएगा, पुरश्चरण आदि कर्म वे ही करवाते हैं। 'उनका काम वे ही करते हैं। लोग कहते हैं, मैं करता हूँ।'

"उनका दर्शन होने पर सभी सन्देह मिट जाते हैं। उस समय अनुकूल हवा बहती है। अनुकूल हवा बहने पर जिस प्रकार नाव का माँझी पाल उठाकर पतवार पकड़कर बैठा रहता है और तम्बाकू पीता है, उसी प्रकार भक्त निश्चिन्त हो जाता है।"

ईशान के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ एकान्त में बात कर रहे हैं; पूछ रहे हैं, "नरेन्द्र, राखाल, अधर, हाजरा, ये लोग तुम्हें कैसे लगते हैं, सरल हैं या नहीं? और मैं तुम्हें कैसा लगता हूँ?" मास्टर कह रहे हैं, "आप सरल हैं पर फिर भी गम्भीर! आपको समझना बहुत कठिन है!" श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

परिच्छेद ३४

ब्राह्म भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

सत्य की महिमा। समाधि में।

कार्तिक की कृष्णा एकादशी है, २६ नवम्बर, १८८३। सिन्दूरिया-पट्टी के श्रीयुत मणिलाल मल्लिक के मकान में ब्राह्म-समाज का अधिवेशन हुआ करता है। मकान चितपुर रास्ते पर है। समाज का अधिवेशन राजपथ के पास ही दुमंज़ले के हाल में हुआ करता है। आज समाज की वार्षिकी है; इसीलिए मणिलाल महोत्सव मना रहे हैं।

उपासनागृह आज आनन्दपूर्ण है, बाहर और भीतर हरे-हरे पल्लवों, नाना प्रकार के फूलों और पुष्पमालाओं से सुशोभित हो रहा है। शाम के पहले से ही ब्राह्म-भक्तगण आने लगे हैं। उन्हें आज एक विशेष उत्साह है—वहाँ आज श्रीरामकृष्ण परमहंस का शुभागमन होगा। केशव, विजय, शिवनाथ आदि ब्राह्मसमाज के भक्त नेताओं को परमहंसदेव बहुत प्यार करते थे। यही कारण है कि ब्राह्मभक्तों के वे इतने प्यारे हो गये थे। वे भगवत्प्रेम में मस्त रहते हैं, उनका प्रेम, उनका प्रांजल विश्वास, ईश्वर के साथ बालक की तरह उनकी बातचीत, ईश्वर के लिए व्याकुल होकर रोना, माता मानकर स्त्री-जाति की पूजा, उनका विषय-प्रसंग-वर्जन, तैल-धारावत् सदा ही ईश्वर-प्रसंग करते रहना, उनका सर्व-धर्म-समन्वय और अपर धर्मों के प्रति लेशमात्र भी द्वेष-भाव का न रहना,

भगवद्भक्तों के लिए उनका रोना, इन सब कारणों से ब्राह्मभक्तों का चित्त उनकी ओर आकर्षित हो चुका था; इसीलिए आज कितने ही भक्त बहुत दूर से उनके दर्शनों के लिए आए हुए हैं।

उपासना से पहले श्रीरामकृष्ण, श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी और दूसरे भक्तों के साथ प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं। समाजगृह में दीप जल चुका है, अब शीघ्र ही उपासना शुरू होगी।

परमहंसदेव बोले, "क्योंजी, क्या शिवनाथ न आयेगा?" एक ब्राह्म भक्त ने कहा, "जी नहीं, आज उनको कई काम हैं; आ न सकेंगे।"

श्रीरामकृष्ण—शिवनाथ को देखने से मुझे बड़ा आनन्द होता है। मानो भक्तिरस में डूबा हुआ है। और जिसे बहुत लोग मानते-जानते हैं उसमें ईश्वर की कुछ शक्ति अवश्य रहती है। परन्तु शिवनाथ में एक बहुत बड़ा दोष है—उसकी बात का कोई निश्चय नहीं रहता। मुझसे उसने कहा था, एक बार वहाँ (दक्षिणेश्वर, जहाँ श्रीरामकृष्ण रहते थे) जायेंगे, परन्तु फिर नहीं आया और न कोई खबर ही भेजी, यह अच्छा नहीं है। एक यह भी कहा है कि सत्य बोलना कलिकाल की तपस्या है। दृढ़ता के साथ सत्य को पकड़े रहने से ईश्वर-लाभ होता है। सत्य की दृढ़ता के न रहने से क्रमशः सब नष्ट हो जाता है। यही सोचकर मैं अगर कह डालता हूँ, मुझे शौच को जाना है, और शौच को जाने की आवश्यकता फिर न भी रहे, तो भी एकबार गडुवा लेकर झाऊतल्ले की ओर जाता हूं। यही भय लगा रहता है कि कहीं सत्य की दृढ़ता न खो जाय। इस अवस्था के पश्चात् हाथ में फूल लेकर माँ से मैंने कहा था, 'माँ, यह लो तुम अपना ज्ञान, यह लो अपना अज्ञान, मुझे शुद्धा भक्ति दो माँ;

यह लो अपना भला, यह लो अपना बुरा, मुझे शुद्धा भक्ति दो माँ; यह लो अपना पुण्य, यह लो अपना पाप, मुझे शुद्धा भक्ति दो।' जब यह सब मैंने कहा था, तब यह बात नहीं कह सका कि माँ, यह लो अपना सत्य, यह लो अपना असत्य। माँ को सब कुछ तो दे सका, परन्तु सत्य न दे सका।

ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना होने लगी। आचार्यजी वेदी पर बैठ गए। उद्‌बोधन-मंत्र के पश्चात् आचार्य जी परब्रह्म को लक्ष्य करके वेदोक्त महामंत्रों का उच्चारण करने लगे। ब्राह्म-भक्तगण स्वर मिलाकर पुराने आर्यऋषियों के मुँह से निकले हुए, उनकी पवित्र रसनाओं द्वारा उच्चारित नामों का कीर्तन करने लगे, कहने लगे—"सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म, आनन्दरूपममृतं यद्विभाति, शान्तं शिवमद्वैतम्, शुद्धमपापविद्धम्।" प्रणवसंयुक्त यह ध्वनि भक्तों के हृदयाकाश में प्रतिध्वनित होने लगी। अनेकों के अन्तस्तल में वासना का निर्वाण-सा हो गया। चित्त बहुत कुछ स्थिर और ध्यानोन्मुख होने लगा। सब की आँखें मुँदी हुई हैं,—थोड़ी देर के लिए सब कोई वेदोक्त सगुण ब्रह्म का चिन्तन करने लगे।

परमहंसदेव भावमग्न हैं। निःस्पन्द, स्थिरदृष्टि, निर्वाक्, चित्रपुत्तलिका की तरह बैठे हुए हैं। आत्मा-पक्षी न जाने कहाँ आनन्दपूर्वक विहार कर रहा है, शरीर शून्य मन्दिर-सा पड़ा हुआ है!

समाधि के कुछ काल पश्चात् परमहंसदेव आँखें खोलकर चारों ओर देख रहे हैं। देखा, सभा के सभी मनुष्य आँखें बन्द किए हुए हैं। तब परमहंसदेव 'ब्रह्म' 'ब्रह्म' कहकर एकाएक खड़े हो गए। उपासना के

बाद ब्राह्मभक्त-मण्डली खोल और करताल लेकर संकीर्तन करने लगी। प्रेम और आनन्द में मग्न होकर श्रीरामकृष्ण भी उनके साथ मिल गए और नृत्य करने लगे। सब लोग मुग्ध होकर वह नृत्य देख रहे हैं। विजय और दूसरे भक्त भी उन्हें घेरकर नाच रहे हैं। कितने ही लोग तो यह दृश्य देखकर ही कीर्तन का आनन्द लेते हुए संसार को भूल गए—नामामृत पीकर थोड़ी देर के लिए विषय का आनन्द भूल गए—विषय-सुख का स्वाद कटु जान पड़ने लगा।

कीर्तन हो जाने पर सब ने आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण क्या कहते हैं, यह सुनने के लिए सब लोग उन्हें घेरकर बैठे।

(२)

गृहस्थों के प्रति उपदेश।

ब्राह्म भक्त-मण्डली को सम्बोधित करके श्रीरामकृष्ण ने कहा—"निर्लिप्त होकर संसार में रहना कठिन है। प्रताप ने कहा था, महाराज, हमारा वह मत है जो राजर्षि जनक का था; जनक निर्लिप्त होकर संसार में रहते थे, वैसा ही हमलोग भी करेंगे।" मैंने कहा—सोचने ही से क्या कोई जनक हो सकता है? राजर्षि जनक को कितनी तपस्या करने के बाद ज्ञान-लाभ हुआ था! नतमस्तक और ऊर्ध्वपद होकर तपस्या में कितना काल व्यतीत करने के पश्चात् वे संसार में लौटे थे!

"परन्तु क्या संसारियों के लिए उपाय नहीं है?—हाँ, अवश्य है। कुछ दिन एकान्त में साधना करनी पड़ती है, तब भक्ति होती है, तब ज्ञान होता है; इसके पश्चात् जाकर संसार में रहो, फिर कोई दोष

नहीं । जब निर्जन में साधना करोगे, उस समय संसार से बिलकुल अलग रहो; स्त्री, पुत्र, कन्या, माता, पिता, भाई, बहिन, आत्मीय, कुटुम्ब कोई भी पास न रहे; निर्जन में साधना करते समय सोचो. हमारे कोई नहीं हैं, ईश्वर ही हमारे सर्वस्व हैं । और रो रोकर उनके पास ज्ञान और भक्ति की प्रार्थना करो ।

"यदि कहो, कितने दिन संसार छोड़कर निर्जन में रहें ? तो इसके लिए यदि एक दिन भी इस तरह कर सको तो वह भी अच्छा है; तीन दिन रहो तो और अच्छा है; अथवा बारह दिन, महीने भर, तीन महीने, साल भर,—जो जितने दिन रह सके । ज्ञान-भक्ति प्राप्त करके संसार में रहने से फिर अधिक भय नहीं रहता ।

"हाथों में तेल लगाकर कटहल काटने से फिर हाथों में उसका दूध नहीं चिपकता । छुई-छुऔवल खेलो तो पार छू लेने से फिर डर नहीं रहता । एक बार पारस पत्थर छूकर सोना बन जाओ, फिर हज़ार वर्ष के बाद भी जब मिट्टी से निकाले जाओगे, तो सोना का सोना ही रहोगे ।

"मन दूध की तरह है । उसी मन को अगर संसार-रूपी जल में रखो तो दूध पानी से मिल जायगा; इसीलिए दूध को निर्जन में दही बनाकर उससे मक्खन निकाला जाता है । जब निर्जन में साधना करके मन-रूपी दूध से ज्ञान-भक्तिरूपी मक्खन निकाला गया, तब वह मक्खन अनायास ही संसार-रूपी पानी में रक्खा जा सकता है । वह मक्खन कभी संसार-रूपी जल से मिल नहीं सकता—संसार-जल पर निर्लिप्त होकर उतराता रहता है ।"

(३)

श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी की निर्जन में साधना।

श्रीयुत विजय अभी अभी गया से लौटे हैं। वहाँ बहुत दिनों तक निर्जन में रहकर वे साधुओं से मिलते रहे थे। इस समय उन्होंने भगवा धारण कर लिया है। उनकी अवस्था बड़ी ही सुन्दर है; जान पड़ता है, सदा ही अन्तर्मुख रहते हैं। परमहंसदेव के पास सिर झुकाए हुए हैं, जैसे मग्न होकर कुछ सोचते हों।

विजय को देखते ही परमहंसदेव ने कहा, "विजय, तुमने घर ढूँढ़ लिया!"

"देखो, दो साधु विचरण करते हुए एक शहर में आ पहुँचे। आश्चर्यचकित होकर उनमें से एक शहर, बाजार, दूकानें और इमारतें देख रहा था, इसी समय दूसरे से उसकी भेंट हो गई। तब दूसरे साधु ने कहा, तुम शहर देख रहे हो; तुम्हारा डेरा-डंडा कहाँ है? पहले साधु ने कहा, मैं पहले घर को खोज करके, डेरा-डंडा रख, कुञ्जी लगाकर, निश्चिन्त होकर निकला हूँ, अब शहर का रंग-ढंग देख रहा हूँ; इसीलिए तुमसे मैं पूछ रहा हूँ, क्या तुमने घर ढूँढ़ लिया? (मास्टर आदि से) देखो, इतने दिनों तक विजय का फ़व्वारा दबा हुआ था, अब खुल गया है।

(विजय से) "देखो, शिवनाथ बड़ी उलझन में है। अखबार लिखना पड़ता है, और भी बहुत से काम उसे करने पड़ते हैं। विषय-कर्म करने ही से अशान्ति होती है, कितनी भावनाएँ आ इकट्ठी होती हैं।

"श्रीमद्भागवत में है, अवधूत ने चौबीस गुरुओं में चील को भी एक गुरु बनाया था। एक जगह धीवर मछली मार रहे थे, एक चील झपटकर एक मछली ले गई, परन्तु मछली को देखकर एक हज़ार कौवे उसके पीछे लग गए, और साथ ही काँव-काँव करके बड़ा हल्ला मचाना शुरू कर दिया। मछली को लेकर चील जिस तरफ़ जाती, कौवे भी उसके पीछे-पीछे उसी तरफ़ जाते; जब वह उत्तर की तरफ़ गई तब वे भी उसी ओर गए। इस तरह पूर्व-पश्चिम की ओर चील चक्कर काटने लगी। अन्त में, घबराहट के मारे उसके चक्कर लगाते समय मछली उससे छूटकर ज़मीन पर गिर पड़ी। चील तब निश्चिन्त होकर एक पेड़ की डाल पर जा बैठी। बैठी हुई सोचने लगी, कुल बखेड़े की जड़ यही मछली थी। अब वह मेरे पास नहीं है, इसीलिए मैं निश्चिन्त हूँ।

"अवधूत ने चील से यह शिक्षा प्राप्त की कि जब तक मछली साथ रहेगी अर्थात् वासना रहेगी, तब तक कर्म भी रहेगा, और कर्म के कारण भावना, चिन्ता और अशान्ति भी रहेगी। वासना का त्याग होने से ही कर्मों का क्षय हो जाता है और शान्ति मिलती है।

"परन्तु निष्काम कर्म अच्छा है। उससे अशान्ति नहीं होती। परन्तु कामना कहाँ से निकल पड़ती है, यह समझ में नहीं आता। यदि पहले की साधना अधिक हो तो उसके बल से कोई कोई निष्काम कर्म कर सकते हैं। ईश्वर-दर्शन के पश्चात् निष्काम कर्म अनायास ही किए जा सकते हैं। ईश्वर-दर्शन के पश्चात् प्रायः कर्म छूट जाते हैं। दो-एक मनुष्य (नारदादि) लोक-शिक्षा के लिए कर्म करते हैं।

संन्यासी को संचय न करना चाहिए। प्रेम का फलस्वरूप कर्मत्याग।

"अवधूत की एक आचार्या और थी—मधुमक्खी। मधुमक्खी बड़े परिश्रम से कितने ही दिनों में मधु-संचय करती है, परन्तु उस मधु का भोग वह स्वयं नहीं कर पाती। छत्ता कोई दूसरा ही आकर तोड़ ले जाता है। मधुमक्खी से अवधूत को यह शिक्षा मिली कि संचय न करना चाहिए। साधु-संत सोलहो आने ईश्वर पर अवलम्बित रहते हैं। उन्हें संचय न करना चाहिए।

"यह संसारियों के लिए नहीं है। संसारी को संसार का भरण-पोषण करना पड़ता है। इसीलिए उन्हें संचय की आवश्यकता होती है। पक्षी और संत संचयी नहीं होते, परन्तु, चिड़ियाँ बच्चे देने पर संचय करती हैं—चोंच में दबाकर बच्चे के लिए खाना ले आती हैं।

"'देखो विजय, साधु के साथ अगर बोरिया-बधना रहे—कपड़े की पन्द्रह गिरहवाली बोचकी रहे तो उस पर विश्वास न करना। मैंने बटतल्ले में ऐसे साधु देखे थे। दो-तीन बैठे हुए थे, कोई दाल के कंकड़ चुन रहा था, कोई कपड़ा सी रहा था और कोई बड़े आदमी के घर के भण्डारे की गप्प लड़ा रहा था! कह रहा था, 'अरे उस बाबू ने लाखों रुपये खर्च किये, साधुओं को खूब खिलाया—पूड़ी, जलेबी, पेड़ा, बरफी, मालपुआ, बहुत सी चीजें तैयार कराईं'।' (सब हँसते हैं।)

विजय—जी हाँ, गया में इस तरह के साधु मुझे भी देखने को मिले हैं। गया के साधु लोटावाले होते हैं। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति)—ईश्वर पर जब प्रेम हो जाता है तब कर्म आप ही आप छूट जाते हैं। ईश्वर जिनसे कर्म कराते हैं, वे करते

रहें। अब तुम्हारा समय हो गया है; अब तुम कहो, 'मन ! तू देख और मैं देखूँ, कोई दूसरा जैसे न देखे।'

यह कहकर श्रीरामकृष्ण उस अतुलनीय कण्ठ से माधुरी बरसाते हुए गाने लगे—(गीत का आशय यह है)—

"आदरणीय श्यामा माँ को यत्नपूर्वक हृदय में धारण करो। मन ! तू देख और मैं देखूँ; कोई दूसरा जैसे न देखने पाए। कामादि को धोखा देकर, मन ! आ, निर्जन में उसे देखें, साथ रसना को भी रखेंगे ताकि वह 'माँ-माँ' कहकर पुकारती रहे ! कुमंत्रणाएँ देनेवाली जितनी कुरुचियाँ हैं, उन्हें पास भी न फटकने देना। ज्ञान-नयन को पहरेदार रखो, वह सतर्क रहे।"

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति)—भगवान् की शरण में जाकर अब लज्जा, भय, यह सब छोड़ो। मैं अगर भगवत्कीर्तन में नाचूँ, तो लोग मुझे क्या कहेंगे, यह सब भाव छोड़ो।

"लज्जा, घृणा और भय, इन तीनों में किसी के रहते ईश्वर नहीं मिलते। लज्जा, घृणा, भय, जाति-अभिमान, गुप्त रखने की इच्छा, ये सब पाश हैं। इन सब के चले जाने से जीव की मुक्ति होती है।

"पाशों में जो बँधा हुआ है वह जीव है और उनसे जो मुक्त है वह शिव है। भगवत्प्रेम दुर्लभ वस्तु है। पहले पहल, पति के प्रति पत्नी की जैसी निष्ठा होती है वैसी ही निष्ठा जब ईश्वर के प्रति होगी तभी भक्ति होती है। शुद्धा भक्ति का होना बड़ा कठिन है। भक्ति द्वारा मन और प्राण ईश्वर में लय हो जाते हैं।

"इसके पश्चात् भाव होता है। भाव में मनुष्य निर्वाक् हो जाता है। वायु स्थिर हो जाती है। कुम्भक आप ही आप होता है; जैसे बन्दूक दागते समय गोली चलानेवाला मनुष्य निर्वाक् हो जाता है और उसकी वायु स्थिर हो जाती है।

"प्रेम का होना बड़ी दूर की बात है। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था। ईश्वर पर जब प्रेम होता है, तब बाहर की चीजें भूल जाती हैं। संसार भूल जाता है। अपना शरीर जो इतना प्यारा है, वह भी भूल जाता है।"

यह कहकर परमहंसदेव फिर गाने लगे—(गीत का आशय नीचे दिया जाता है)—

"नहीं मालूम, कब वह दिन होगा जब राम नाम कहते हुए मेरी आँखों से धारा बह चलेगी, संसार-वासना दूर हो जायगी, शरीर पुलकित हो जायगा।"

(४)

भाव, कुम्भक तथा ईश्वरदर्शन।

ऐसी बातचीत हो रही है, ठीक इसी समय कई और निमन्त्रित ब्राह्मभक्त आकर उपस्थित हो गये। उनमें कुछ तो पण्डित थे और कुछ उच्च पदाधिकारी राजकर्मचारी। उनमें एक श्रीयुत रजनीनाथ राय भी थे।

श्रीरामकृष्ण कहते हैं, "भाव के होने पर वायु स्थिर हो जाती है। अर्जुन ने जब लक्ष्य-भेद किया, तब उनकी दृष्टि मछली की आँख पर ही थी—किसी दूसरी ओर नहीं। यहाँ तक कि आँख के सिवाय कोई

दूसरा अङ्ग उन्हें दीख ही नहीं पड़ा। ऐसी अवस्था में वायु स्थिर होती है, कुम्भक होता है।

"ईश्वर-दर्शन का एक लक्षण यह है कि भीतर से महावायु घरघराती हुई सिर की ओर जाती है, तब समाधि होती है, भगवान् के दर्शन होते हैं।

"जो पण्डित मात्र हैं किन्तु ईश्वर पर जिनकी भक्ति नहीं है उनकी बातें उलझनदार होती हैं। सामाध्यायी नाम के एक पण्डित ने कहा था, 'ईश्वर नीरस है, तुमलोग अपनी भक्ति और प्रेम के द्वारा उसे सरस कर लो।' जिन्हें वेदों ने 'रस-स्वरूप' कहा है, उन्हें नीरस बतलाता है! इससे ज्ञान होता है कि वह मनुष्य नहीं जानता ईश्वर कौन सी वस्तु है। उसकी बातें इसीलिए इतनी उलझनदार हैं।

"एक ने कहा था, मेरे मामा के यहाँ घोड़ों का एक बड़ा गोशाला है! उसकी इस बात से समझना चाहिए कि घोड़ा एक भी नहीं है; क्योंकि घोड़े कभी गोशाला में नहीं रहते। (सब हँसते हैं।)

"किसी को ऐश्वर्य का—विभव, सम्मान, पद आदि का अहंकार होता है। यह सब दो दिन के लिए है। साथ कुछ भी न जायगा। एक गीत में है—(गीत का आशय)—

"ऐ मन सोच ले, कोई किसी का नहीं है। तू इस संसार में वृथा ही मारा-मारा फिरता है। मायाजाल में फँसकर दक्षिणाकाली को भूल न जाना। जिसके लिए तू इतना सोचता है, क्या वह तेरे सङ्ग भी आयगा? तेरी वही प्रेयसी, जब तू मर जायगा तब तेरी लाश से अमङ्गल

की शङ्का करके घर में पानी का छिड़काव करेगी। यह सोचना कि मुझे लोग मालिक कहते हैं, सिर्फ दो ही दिन के लिए है। जब कालाकाल के मालिक आ जाते हैं तब पहले के वही मालिक श्मशानघाट में फेंक दिये जाते हैं।"

"और धन का अहंकार भी न करना चाहिए। अगर कहो, मैं धनी हूँ, तो धनी भी एक-एक से बढ़कर हैं। सन्ध्या के बाद जब जुगनू उड़ता है, तब वह सोचता है, इस संसार को प्रकाश मैं दे रहा हूँ। परन्तु तारे ज्यों ही उगते हैं कि उसका अहंकार चला जाता है। तब नक्षत्र सोचने लगे, हमी लोग संसार को प्रकाश देते हैं। कुछ देर बाद चन्द्रोदय हुआ। तब तारे लज्जा से म्लान हो गये। चन्द्रदेव सोचने लगे, मेरे ही आलोक से संसार हँस रहा है, संसार को प्रकाश मैं देता हूँ; देखते ही देखते सूर्य उगे, चन्द्र मलिन होकर ऐसे छिपे कि फिर दीख भी न पड़े।

"धनी मनुष्य अगर यह सब सोचें तो धन का अहंकार न हो।"

उत्सव के कारण मणिलाल ने खान-पान का बहुत बड़ा आयोजन किया था। उन्होंने यत्नपूर्वक श्रीरामकृष्ण और समवेत भक्तमण्डली को भोजन कराया। जब सब लोग घर लौटे, तब रात बहुत हो गई थी, परन्तु किसी को कोई कष्ट नहीं हुआ।

परिच्छेद ३५

केशव सेन के मकान पर

(१)

कमल-कुटीर में श्रीरामकृष्ण और श्री केशवचन्द्र सेन ।

कार्तिक की कृष्ण चतुर्दशी, २८ नवम्बर १८८३, दिन बुधवार है। आज एक भक्त * कमल-कुटीर (Lily Cottage) के पूर्ववाले रास्ते पर टहल रहे हैं, जैसे व्याकुल हो किसी की प्रतीक्षा कर रहे हों ।

कमल-कुटीर के उत्तर की तरफ मङ्गलबाड़ी है । वहाँ बहुत से ब्राह्म-भक्त रहते हैं । केशव भी वहीं रहते हैं । उनकी पीड़ा बढ़ गई है । कितने ही लोग कहते हैं, अबकी बार शायद वे न बचेंगे ।

श्रीरामकृष्ण केशव को बहुत प्यार करते हैं, आज इन्हें देखने के लिए आनेवाले हैं । वे दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर से आ रहे हैं । इसीलिए भक्त उनकी बाट जोह रहे हैं ।

कमल-कुटीर सर्क्यूलर रोड़ के पश्चिम ओर है । इसीलिए भक्त महोदय रास्ते में ही टहल रहे हैं । वे दो बजे दिन से प्रतीक्षा कर रहे हैं । कितने ही लोग जाते हैं, वे उन्हें देख भर लेते हैं ।

शाम हो आई, पाँच बज गए । इसी समय श्रीरामकृष्ण की गाड़ी

---

* ग्रन्थकार स्वयं ।

भी आ पहुँचो। साथ लाटू तथा दो-एक भक्त और भी थे। और राखाल भो आए हैं।

केशव के घर के आदमी आकर श्रीरामकृष्ण को अपने साथ ऊपर ले गए। बैठकखाने के दक्षिण-ओर-वाले बरामदे में एक पलंग पड़ा हुआ था। उसी पर श्रीरामकृष्ण को उन्होंने बैठाया।

(२)

समाधिस्थ श्रीरामकृष्ण। जगन्माता का दर्शन तथा उसके साथ वार्तालाप।

श्रीरामकृष्ण बड़ी देर से बैठे हुए हैं। आप केशव को देखने के लिए अधीर हो रहे हैं। केशव के शिष्यगण विनीत भाव से कह रहे हैं कि वे अभी विश्राम कर रहे हैं, थोड़ी ही देर में आनेवाले हैं।

केशव की पीड़ा इतनी बढ़ी हुई है कि दशा संकटापन्न हो रही है। इसीलिए उनकी शिष्यमण्डली और घरवाले इतनी सावधानी से काम कर रहे हैं। परन्तु श्रीरामकृष्ण केशव को देखने के लिए उत्तरोत्तर अधीर हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केशव के शिष्यों से)—क्यों जी, उनके आने की क्या आवश्यकता है? मैं ही क्यों न भीतर चला जाऊँ?

प्रसन्न (विनयपूर्वक)—अब वे थोड़ी ही देर में आते हैं।

श्रीरामकृष्ण—जाओ, तुम्हीं लोग ऐसा कर रहे हो। मैं भीतर जाता हूँ।

प्रसन्न श्रीरामकृष्ण को बातों में बहलाने के इरादे से केशव की बातें कह रहे हैं।

प्रसन्न—उनकी अवस्था एक दूसरे ही प्रकार की हो गई है। आपकी ही तरह माँ के साथ बातचीत करते हैं। माँ जो कुछ कहती हैं, उसे सुनकर कभी हँसते हैं और कभी रोते हैं।

केशव जगन्माता के साथ बातचीत करते हैं, हँसते हैं, रोते हैं, यह सुनते ही श्रीरामकृष्ण भावावेश में आ गये। देखते ही देखते समाधिस्थ हो गये।

श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हैं। जाड़े का समय है, हरी बनात का कुर्ता पहने हुए हैं। ऊपर से एक ओर शाल डाले हुए हैं। उन्नत देह, दृष्टि स्थिर हो रही है। बिलकुल ही मग्न हैं। बड़ी देर तक यह अवस्था रही। समाधि छूटती ही नहीं।

संध्या हो आई, श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हो गये। पास के बैठकखाने में दीप जलाया जा चुका है। श्रीरामकृष्ण को उसी घर में बिठाने की चेष्टा की जा रही है।

बड़ी कठिनाई से लोग बैठकखाने के घर में उन्हें ले गये।

कमरे में बहुत सी चीज़ें हैं—कोच, टेबिल, कुर्सी, गैसबत्ती आदि। श्रीरामकृष्ण को लोगों ने एक कोच पर ले जाकर बैठाया।

कोच पर बैठते ही श्रीरामकृष्ण फिर बाह्य-ज्ञान-रहित, भावाविष्ट हो गये।

कोच पर दृष्टि डालकर आवेश में मानो कुछ कह रहे हैं,— " पहले इन सब चीज़ों की आवश्यकता थी, अब क्या आवश्यकता है ? " (राखाल को देखकर) " राखाल, तू भी आया है ? "

कहते ही कहते फिर न जाने क्या देख रहे हैं। कहते हैं—" यह लो माँ आ गईं। और अब बनारसी साड़ी पहनकर क्या दिखलाती हो। माँ ! गोलमाल न करो, बैठो—बैठो भी। "

श्रीरामकृष्ण पर महाभाव का नशा चढ़ा हुआ है। घर में प्रकाश भर रहा है। ब्राह्मभक्त चारों ओर से घेरे हुए हैं। लाटू, राखाल, मास्टर आदि पास बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण भावावस्था में आप ही आप कह रहे हैं-

" देह और आत्मा। देह बनी है और बिगड़ भी जायगी; आत्मा अमर है। जैसे सुपारी—पकी सुपारी छिलके से अलग रहती है; कच्ची अवस्था में फल और छिलके को अलग-अलग करना बड़ा कठिन है। उनके दर्शन करने पर, उन्हें प्राप्त करने पर देहबुद्धि दूर हो जाती है। तब समझ में आ जाता है कि आत्मा पृथक् है और देह भी। "

केशव कमरे में आ रहे हैं। पूर्व ओर के द्वार से आ रहे हैं। जिन लोगों ने उन्हें ब्राह्मसमाज-मन्दिर में अथवा टाउन-हाल में देखा था, वे उनकी अस्थि-चर्मावशिष्ट मूर्ति देखकर चकित हो गये। केशव खड़े नहीं हो सकते, दीवार के सहारे आगे बढ़ रहे हैं। बहुत कष्ट करके कोच के सामने आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण इतने ही में कोच से उतरकर नीचे बैठे। केशव श्रीरामकृष्ण के दर्शन पाकर भूमिष्ठ हो बड़ी देर तक उन्हें प्रणाम करते

रहे। प्रणाम करके,उठकर बैठे गये। श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश में हैं। आप ही आप कुछ कह रहे हैं। श्रीरामकृष्ण माता के साथ बातचीत कर रहे हैं।

(३)

ब्रह्म और शक्ति अभेद। नरलीला। सिद्ध और साधक में भेद।

अब केशव ने उच्च स्वर से कहा, मैं आया— मैं आया। यह कहकर उन्होंने श्रीरामकृष्ण का बाँया हाथ पकड़ लिया और उसी हाथ पर अपना हाथ फेरने लगे। श्रीरामकृष्ण भावावेश में पूरे मतवाले हो गये हैं; आप ही आप कितनी ही बातें कर रहे हैं। भक्तगण निर्वाक् होकर सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—जब तक उपाधि है, तभी तक अनेक प्रकार के बोध हो सकते हैं, जैसे केशव, प्रसन्न, अमृत—ये सब। पूर्ण ज्ञान होने पर एकमात्र चैतन्य का ही बोध होता है।

"पूर्ण ज्ञान होने पर मनुष्य देखता है, यह जीव-प्रपञ्च, ये चौबीसों तत्व एकमात्र वही बन गये हैं।

"परन्तु शक्ति की विशेषता पाई जाती है। यह सच है कि सब कुछ वही बने हैं, परन्तु कहीं तो उनकी शक्ति का प्रकाश अधिक है और कहीं कम।

"विद्यासागर ने कहा था, क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति

और किसी को कम शक्ति दी है ? मैंने कहा, अगर ऐसा न होता तो एक आदमी पचास आदमियों को हराता कैसे ?—और तुम्हें ही फिर क्यों हम लोग देखने आते ?

"वे जिस आधार में अपनी लीला का विकास दिखलाते हैं, वहाँ शक्ति की विशेषता रहती है ।

"ज़मींदार सब जगह रहते हैं । परन्तु उन्हें लोग किसी ख़ास बैठकखाने में अक्सर बैटते हुए देखते हैं । ईश्वर का बैठकखाना भक्तों का हृदय है । वहाँ अपनी लीला दिखाना उन्हें अधिक पसन्द है । वहाँ उनको विशेष शक्ति अवतीर्ण होती है ।

"इसका लक्षण क्या है ? जहाँ कार्य की अधिकता है वहाँ शक्ति का विशेष प्रकाश है ।

"यह आद्याशक्ति और परब्रह्म दोनों अभेद हैं । एक को छोड़ दूसरे का चिन्तन नहीं किया जा सकता । जैसे ज्योति और मणि । मणि को छोड़ मणि की ज्योति की चिन्ता नहीं की जा सकती और न ज्योति को अलग करके मणि की ही चिन्तना की जा सकती है—जैसे सर्प और उसकी वक्र गति । न सर्प को छोड़ उसकी तिर्यग्गति सोची जा सकती है और न तिर्यग्गति को छोड़ सर्प की ।

"आद्याशक्ति ने ही इस जीव-प्रपञ्च, इस चतुर्विंशति तत्व का स्वरूप धारण किया है—अनुलोम और विलोम । राखाल, नरेन्द्र तथा और और लड़कों के लिए क्यों मैं इतना सोच-विचार किया करता हूँ ? हाजरा ने कहा, तुम उन लोगों के लिए इतनी चिन्ता कर रहे हो, ईश्वर-चिन्तन फिर कब करोगे ? (केशव तथा दूसरों का मुसकराना ।)

"तब मुझे बड़ी चिन्ता हुई। मैंने कहा, माँ यह क्या हुआ! हाजरा कहता है, उन लोगों के लिए क्यों सोचते रहते हो? फिर मैंने भोलानाथ से पूछा। उसने कहा, इसका उदाहरण महाभारत में है। समाधिस्थ मनुष्य समाधि से उतरकर ठहरे कहाँ? वह इसीलिए सतोगुणी मनुष्यों को लेकर रहता है। महाभारत का यह उदाहरण जब मिला तब जी में जी आया। (सब हँसते हैं।)

"हाजरा का दोष नहीं है। साधक-अवस्था में सम्पूर्ण मन 'नेति' 'नेति' करके उन्हें दे देना पड़ता है। सिद्ध अवस्था की बात दूसरी है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर अनुलोम और विलोम एक से प्रतीत होते हैं? मट्ठा अलग करने पर जब मक्खन मिलता है तब जान पड़ता है कि, मट्ठे का ही मक्खन है और मक्खन का ही मट्ठा। तब ठीक ठीक समझ में आता है कि सब कुछ वही हुए हैं। कहीं उनका अधिक प्रकाश है, कहीं कम।

"भाव-समुद्र के उमड़ने पर स्थल में भी एक बाँस पानी हो जाता है। पहले नदी से होकर समुद्र में जाते समय बहुत कुछ चक्कर लगाकर जाना पड़ता है, और जब बाढ़ आती है तब सूखी जमीन पर भी एक बाँस पानी हो जाता है। तब नाव सीधे चलाकर लोग जगह पर पहुँच जाते हैं। फिर चक्कर मारकर नहीं जाना पड़ता। इसी तरह धान कट जाने पर मेड़ से चक्कर काटकर नहीं आना पड़ता। सीधे एक रास्ते से निकल जाओ।

"'उन्हें प्राप्त कर लेने पर फिर सभी वस्तुओं में उनके दर्शन होते हैं। मनुष्य के भीतर उनका अधिक प्रकाश है। मनुष्यों में सतोगुणी भक्तों में उनका और अधिक प्रकाश रहता है—जिनमें कामिनी

और कांचन के भोग की बिलकुल ही इच्छा नहीं रहती। (सब स्तब्ध हैं।) समाधिस्थ मनुष्य जब उतरता है तब भला वह कहाँ ठहरे?—किस पर अपना मन रमावे? कामिनी और कांचन का त्याग करने वाले सतोगुणी शुद्ध भक्तों की आवश्यकता उन्हें इसीलिए होती है। नहीं तो फिर वे क्या लेकर रहें?

"जो ब्रह्म हैं, वही आद्याशक्ति भी हैं। जब वे निष्क्रिय हैं तब उन्हें ब्रह्म कहते हैं, पुरुष कहते हैं। जब सृष्टि, स्थिति, प्रलय ये सब करते हैं तब उन्हें शक्ति कहते हैं—प्रकृति कहते हैं। पुरुष और प्रकृति। जो पुरुष हैं, वही प्रकृति भी हैं। आनन्दमय और आनन्दमयी।

"जिसे पुरुष-ज्ञान है, उसे स्त्री-ज्ञान भी है। जिसे पिता का बोध है उसे माता का भी बोध है। (केशव हँसते हैं।)

"जिसे अँधेरे का ज्ञान है, उसे उजाले का भी ज्ञान है। जिसे सुख का ज्ञान है, उसे दुःख का भी। यह बात समझे?"

केशव (सहास्य)—जी हाँ, समझा।

श्रीरामकृष्ण—माँ! कौन सी माँ? संसार की माँ—जिन्होंने संसार की सृष्टि की, जो उसका पालन कर रही हैं, जो अपनी सन्तानों की सदा रक्षा करती हैं, और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—जो, जो कुछ चाहता है, उसे वही देती हैं। जो उनकी यथार्थ सन्तान हैं, उसे वे छोड़कर नहीं रह सकतीं। उसकी माता ही सब कुछ जानती हैं। वह तो बस खाता है, खेलता है, और घूमता है। इसके अतिरिक्त वह और कुछ नहीं जानता।

केशव—जी हाँ।

(४)

ब्राह्म समाज और ईश्वर का ऐश्वर्य-वर्णन। त्रिगुणातीत भक्त।

वार्तालाप करते हुए श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हो गये हैं। केशव के साथ हँसते हुए बातचीत कर रहे हैं। कमरे भर के लोग उत्कर्ण होकर उनकी सब बातें सुनते और उन्हें देखते हैं। निर्वाक् इसलिए हैं कि 'तुम कैसे हो' आदि व्यवहारिक बातें तो होती ही नहीं, केवल भगवत्-प्रसग छिड़ा हुआ है।

श्रीरामकृष्ण (केशव से)—ब्राह्मभक्त इतनी महिमा क्यों गाया करते हैं? 'हे ईश्वर, तुमने चन्द्र को सृष्टि की, सूर्य को पैदा किया, नक्षत्र बनाये'—इन सब बातों की क्या आवश्यकता है? बहुत से लोग बगीचे की प्रशंसा करते हैं; पर मालिक से कितने लोग मिलना चाहते हैं? बगीचा बड़ा है या मालिक?

"शराब पी चुकने पर कलवार को दूकान में कितने मन शराब है, इसकी जाँच-पड़ताल से हमारा क्या काम? हमारा तो मतलब एक ही बोतल से निकल जाता है।

"नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) को देखकर मैंने कभी नहीं पूछा, तेरे पिता का क्या नाम है? तेरे पिता की कितनी कोठियाँ हैं?

"कारण जानते हो? मनुष्य स्वयं ऐश्वर्य का आदर करता है, इसलिए वह समझता है कि ईश्वर भी उसका आदर करते हैं। सोचता

है, उनके ऐश्वर्य की प्रशंसा करने पर वे खुश होंगे। शम्भु ने कहा था, अब तो इस समय यही आशीर्वाद दीजिये जिससे यह ऐश्वर्य उनके पाद-पद्मों में अर्पित करके मरूँ। मैंने कहा, यह तुम्हारे लिए ही ऐश्वर्य है, उन्हें तुम क्या दे सकते हो! उनके लिए यह सब काठ और मिट्टी के बराबर है।

"जब विष्णुघर के कुल गहने चुरा लिए गये तब मैं और मथुरबाबू, दोनों श्रीठाकुरजी को देखने के लिए गये। मथुरबाबू ने कहा, चलो महाराज, तुममें कोई शक्ति नहीं है। तुम्हारी देह से कुल गहने निकाल लिए गये और तुम कुछ न कर सके! मैंने उससे कहा, यह तुम्हारी कैसी बात है! तुम जिनके सामने गहने गहने चिल्लाते हो, उनके लिए ये सब मिट्टी के ढेले हैं। लक्ष्मी जिनकी शक्ति हैं, क्या वे तुम्हारे चोरी गये इन कुछ रुपयों के लिए परेशान होंगे! ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए।

"क्या ईश्वर ऐश्वर्य के भी वश हैं? वे तो भक्ति के वश हैं। जानते हो, वे क्या चाहते हैं? वे रुपया नहीं चाहते—भाव, प्रेम, भक्ति, विवेक, वैराग्य, यह सब चाहते हैं।

"जिसका जैसा भाव होता है, वह ईश्वर को वैसा ही देखता है। जो तमोगुणी भक्त है, वह देखता है कि माँ बकरा खाती है, वह बकरे की बलि भी देता है। रजोगुणी भक्त नाना प्रकार के व्यञ्जन और अन्न-पकवान चढ़ाता है। सतोगुणी भक्त की पूजा में आडम्बर नहीं होता। उसकी पूजा लोग समझ भी नहीं पाते। फूल नहीं मिलते तो वह बिल्वपत्र और गङ्गाजल से ही पूजा कर देता है। थोड़े से चावलों या

दो बताशों का ही भोग लगा देता है। कभी कभी खीर पकाकर ही ठाकुरजी को निवेदित कर देता है।

"एक और है—त्रिगुणातीत भक्त। उसका स्वभाव बालकों जैसा होता है। ईश्वर का नाम लेना ही उसकी पूजा है। वह बस उनका नाम ही जपता रहता है।"

(५)

केशव के साथ वार्तालाप। ईश्वर के अस्पताल में आत्मा की रोगचिकित्सा।

श्रीरामकृष्ण (केशव के प्रति सहास्य)—तुम्हें बीमारी हुई इसका अर्थ है : शरीर के भीतर कितने ही भावों का उदयास्त हो चुका है। इसीलिए ऐसा हुआ है। जब भाव होता है, तब कुछ समझ में नहीं आता, बहुत दिनों के बाद शरीर पर झोंका लगता है। मैंने देखा है, बड़ा जहाज़ जब गङ्गा से चला जाता है, तब कुछ भी मालूम नहीं होता, परन्तु थोड़ी ही देर बाद देखा कि कमारों में लहरें ज़ोरों से थपेड़े जमा रही हैं, और पानी में उथल-पुथल मच जाती है। कभी कभी तो कमारों का कुछ अंश भी धँसकर पानी में गिर जाता है।

"किसी कुटिया में घुसकर हाथी उसे हिला-डुलाकर तहस-नहस कर देता है। भावरूपी हाथी जब देह-रूपी घर में घुसता है, तो उसे डाँवाडोल कर देता है।

"इससे क्या होता है, जानते हो ? आग लगने पर कुछ चीज़ों को वह जलाकर ख़ाक कर देती है; एक महा ऊधम मचा देती है।

ज्ञानाग्नि पहले काम, क्रोध आदि रिपुओं को जलाती है, फिर अहंबुद्धि को। इसके बाद एक बहुत बड़ी उथल-पुथल मचा देती है।

"तुम सोचते हो कि बस, सब मामला तय है। परन्तु जब तक रोग की कुछ कसर रहेगी, तब तक वे तुम्हें नहीं छोड़ सकते। अगर तुम अस्पताल में नाम लिखाओगे तो फिर तुम्हें चले आने का अधिकार नहीं है। जब तक रोग में कोई त्रुटि पाई जायगी, तब तक डाक्टर साहब तुम्हें आने नहीं देंगे। तुमने नाम क्यों लिखाया ?" (सब हँसते हैं।)

केशव अस्पताल की बात सुनकर बार बार हँस रहे हैं। हँसी रोक नहीं सकते; रह रहकर फिर हँस रहे हैं। श्रीरामकृष्ण पुनः वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (केशव से)—हृदू (श्रीरामकृष्ण का भाञ्जा) कहता था, न तो मैंने ऐसा भाव देखा है, और न ऐसा रोग! उस समय मैं बहुत बीमार था। क्षण-क्षण में दस्त आते थे और बहुत अधिक मात्रा में। सिर पर जान पड़ता था दो लाख चीटियाँ काट रही हैं। परन्तु ईश्वरीय प्रसंग दिन रात जारी रहता था! नाटागढ़ का राम कविराज देखने के लिए आया। उसने देखा कि मैं बैठा हुआ विचार कर रहा था। तब उसने कहा, 'क्या यह पागल है? दो हाड़ लेकर विचार कर रहा है!'

(केशव से) "उनकी इच्छा। माँ, सब तुम्हारी ही इच्छा है।

"ऐ तारा, तुम इच्छामयी हो, सब तुम्हारी ही इच्छा है। माँ, कर्म तुम्हारे हैं, करती भी तुम्हीं हो, परन्तु मनुष्य कहते हैं, मैं करता हूँ।"

"सर्दी लगाने के उद्देश से माली बसरा-गुलाब को छाँटकर उसकी जड़ खोल देता है। सर्दी लगने से पेड़ अच्छी तरह उगता है। शायद इसीलिए वह तुम्हारी जड़ खोल रही है। (श्रीरामकृष्ण और केशव हँसते हैं।) जान पड़ता है, अगले बार एक बड़ी घटना होनेवाली है।

"जब कभी तुम बीमार पड़ जाते हो तब मुझे बड़ी घबराहट होती है। पहली बार भी जब तुम बीमार पड़े थे, तब रात के पिछले पहर मैं रोया करता था। कहता था, माँ, केशव को अगर कुछ हो गया तो फिर किससे बातचीत करूँगा? तब कलकत्ता आने पर मैंने सिद्धेश्वरी को नारियल और चीनी चढ़ाई थी। माँ के पास मनौती मानी थी जिससे बीमारी अच्छी हो जाय।"

केशव पर श्रीरामकृष्ण के इस अकृत्रिम स्नेह और उनके लिए उनकी व्याकुलता की बात सुनकर लोग निर्वाक् हैं।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु इस बार उतना नहीं हुआ। मैं सच कहूँगा। हाँ, दो तीन दिन कुछ थोड़ा कलेजा मसोसा करता था।

केशव जिस पूर्ववाले द्वार से बैठकखाने में आये थे, उसी द्वार के पास केशव की पूजनीया माता खड़ी हैं। वहीं से उमानाथ ज़रा ऊँचे स्वर से श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं—माँ आपको प्रणाम कर रही हैं।

श्रीरामकृष्ण हँसने लगे। उमानाथ कहते हैं—माँ कह रही हैं, ऐसा आशीर्वाद दीजिये जिससे केशव की बीमारी अच्छी हो जाय। श्रीरामकृष्ण ने कहा, सुभाषिणी माँ! आनन्दमयी को पुकारो, दुःख वही दूर कर सकती हैं। श्रीरामकृष्ण केशव से कहने लगे—

"घर के भीतर इतना न रहा करो। पुत्र-कन्याओं के बीच में रहने से और डूबोगे, ईश्वरीय चर्चा होने पर और अच्छे रहोगे।"

गम्भीर भाव से ये बातें कहकर श्रीरामकृष्ण फिर बालक की तरह हँसने लगे। केशव से कह रहे हैं, देखूँ, तुम्हारा हाथ देखूँ। बालक की तरह हाथ लेकर मानो तौल रहे हैं। अन्त में कहने लगे, नहीं, तुम्हारा हाथ हलका है, खलों का हाथ भारी होता है। (लोग हँसते हैं।)

उमानाथ दरवाज़े से फिर कहने लगे, माँ कह रही हैं—केशव को आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर स्वरों में)—मेरी क्या शक्ति है! वही आशीर्वाद देंगी। 'माँ, अपना काम तुम करती हो, लोग कहते हैं, मैं कर रहा हूँ।'

"ईश्वर दो बार हँसते हैं। एक बार उस समय हँसते हैं जब दो भाई ज़मीन बाँटते हैं, और रस्सी से नापकर कहते हैं, 'इस ओर की मेरी है और उस ओर की तुम्हारी।' ईश्वर यह सोचकर हँसते हैं कि संसार तो है मेरा और ये लोग थोड़ी सी मिट्टी लेकर इस ओर की मेरी—उस ओर की तुम्हारी कर रहे हैं।

"फिर ईश्वर एक बार और हँसते हैं। बच्चे की बीमारी बढ़ी हुई है। उसकी माँ रो रही है। वैद्य आकर कह रहा है, डरने की क्या बात है, माँ! मैं अच्छा कर दूँगा। वैद्य नहीं जानता कि, ईश्वर यदि मारना चाहे तो किसकी शक्ति है जो अच्छा कर सके?" (सब स्तब्ध हो रहे।)

ठीक इसी समय केशव बड़ी देर तक खाँसते रहे। खाँसने की आवाज़ से सब को कष्ट हो रहा है। बड़ी देर तक बहुत कुछ कष्ट झेलते रहने के बाद खाँसी कुछ बन्द हुई। केशव से अब और नहीं रहा जाता। श्रीरामकृष्ण को उन्होंने भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। प्रणाम करके बड़े कष्ट से दीवार टेक टेककर उसी द्वार से अपने कमरे में फिर चले गए।

(६)

ब्राह्म समाज और वेदोल्लिखित देवता। गुरुपन नीच बुद्धि।

श्रीरामकृष्ण कुछ मिष्टान्न ग्रहण करके जाएँगे। केशव के बड़े लड़के उनके पास आकर बैठे।

अमृत ने कहा, "यह केशव का बड़ा लड़का है। आप आशीर्वाद दीजिए। यह क्या! सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दीजिए।"

श्रीरामकृष्ण ने कहा, मुझे आशीर्वाद न देना चाहिए। यह कहकर मुसकराते हुए बच्चे की देह पर हाथ फेरने लगे।

अमृत (हँसते हुए)—अच्छा, तो देह पर हाथ फेरिए। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण अमृत आदि ब्राह्मभक्तों से केशव की बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (अमृत आदि से)—बीमारी अच्छी हो—ये सब बातें

मैं नहीं कह सकता। यह शक्ति मैं माँ से चाहता भी नहीं। मैं माँ से यही कहता हूँ, माँ, मुझे शुद्धाभक्ति दो।

"ये (केशव) क्या कुछ कम आदमी हैं? जो लोग रुपये चाहते हैं, वे भी इन्हें मानते हैं और साधु भी। दयानन्द को देखा, वे बगीचे में ठहरे हुए थे। 'केशव सेन—केशव सेन' कहकर छटपटा रहे थे कि कब केशव आये। उस दिन शायद केशव के वहाँ जाने की बात थी।

"दयानन्द बङ्गला भाषा को कहते थे—'गौड़ाण्ड भाषा।'

"ये (केशव) शायद होम और देवता नहीं मानते थे। इसीलिए वे कहते थे, ईश्वर ने इतनी चीज़ें तो तैयार कीं, और देवता नहीं तैयार कर सके?"

श्रीरामकृष्ण केशव के शिष्यों से केशव की प्रशंसा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—केशव हीनबुद्धि नहीं है। इन्होंने बहुतों से कहा है, 'जो कुछ सन्देह हो, वहाँ (श्रीरामकृष्ण के पास) जाकर पूछ लो।' मेरा भी यही स्वभाव है। मैं कहता हूँ, ये कोटि गुण और बढ़ें। मैं मान लेकर क्या करूँगा?

"ये बड़े आदमी हैं। जो लोग धन चाहते हैं, वे भी इन्हें मानते हैं और साधु भी मानते हैं।"

श्रीरामकृष्ण कुछ मिष्टान्न ग्रहण करके अब गाड़ी पर चढ़नेवाले हैं। ब्राह्म भक्त उन्हें चढ़ाने के लिए जा रहे हैं।

ज़ीने से उतरते समय श्रीरामकृष्ण ने देखा, नीचे उजाला नहीं है। तब अमृत आदि भक्तों से उन्होंने कहा, इन सब स्थानों में अच्छा प्रकाश चाहिए, नहीं तो गरीबी आ घेरती है। ऐसा अब फिर कभी न हो।

श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तों को साथ लेकर उसी रात को काली-मन्दिर चले गए।

परिच्छेद ३६

गृहस्थाश्रम और श्रीरामकृष्ण

(१)

श्रीयुत जयगोपाल सेन के घर में शुभागमन ।

२८ नवम्बर, १८८३, दिन का तीसरा पहर, ४–५ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण केशव सेन के कमल-कुटीर नामक मकान में गये थे। केशव बीमार हैं, शीघ्र ही मृत्युलोक छोड़नेवाले हैं। केशव को देखकर रात में सात बजे के बाद माथाघसा गली में श्रीयुत जयगोपाल के घर पर कई भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण आये हुए हैं।

भक्तगण न जाने क्या क्या सोच रहे हैं। वे सोच रहे हैं, श्रीराम-कृष्ण दिनरात ईश्वर-प्रेम में मस्त रहते हैं। विवाह तो किया है, परन्तु धर्मपत्नी से सांसारिक कोई सम्बन्ध नहीं रखते; बल्कि उनपर भक्ति रखते हैं, उनकी पूजा करते हैं, उनके साथ केवल ईश्वरीय प्रसंग किया करते हैं, सदा भगवद्गीत गाते, परमात्मा की पूजा करते तथा ध्यान करते हैं; किसीसे कोई मायिक सम्बन्ध रखते ही नहीं। ईश्वर ही यथार्थ वस्तु हैं और शेष सब उनके लिये असार पदार्थ। रुपया, धातुद्रव्य, लोटा, कटोरा यह कुछ छू भी नहीं सकते। स्त्रियों को भी नहीं छू सकते। अगर कभी छू लेते हैं तो जहाँ छू जाता है वहाँ सीङ्गी मछली के काँटे के चुभ जाने के समान पीड़ा होने लगती है। रुपया या सोना अगर हाथ पर रख दिया जाता है तो कलाई मुरक जाती है, उनकी अवस्था विकृत

हो जाती है, साँस रुक जाती है। जब वह धातु हटा ली जाती है, तब वे अपनी सच्ची अवस्था को प्राप्त होते हैं—तब उनकी साँस फिर चलने लगती है।

भक्तगण इसी प्रकार की कल्पनाएँ कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण जयगोपाल के बैठकखाने में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं, सामने जयगोपाल, उनके आत्मीय तथा पड़ोसी आदि हैं। एक पड़ोसी वार्तालाप करने के लिए पहले ही से तैयार थे। वही अग्रणी होकर कुछ पूछने लगे। जयगोपाल के भाई वैकुण्ठ भी हैं।

वैकुण्ठ—हम संसारी मनुष्य हैं, हमारे लिए कुछ कहिये।

श्रीरामकृष्ण—उन्हें जानकर,—एक हाथ उनके पैरों पर रखकर दूसरे हाथ से संसार का काम करो।

वैकुण्ठ—महाराज, संसार क्या मिथ्या है?

श्रीरामकृष्ण—जब तक उनका ज्ञान नहीं होता, तब तक सब मिथ्या है। तब मनुष्य उन्हें भूलकर 'मेरा मेरा' करता रहता है—माया में फँसकर, कामिनी-कांचन में मुग्ध होकर और भी डूब जाता है। माया में मनुष्य ऐसा अज्ञानी हो जाता है कि भागने का रास्ता रहने पर भी नहीं भाग सकता। एक गाना है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गीत का मर्म:—

"महामाया की कैसी विचित्र माया है। कैसे भ्रम में उन्होंने डाल रक्खा है! उनकी माया में ब्रह्मा और विष्णु भी अचेत हो रहे हैं, तो

जीव बेचारा भला क्या जान सकता है ? मछली जाल में पकड़ जाती है, परन्तु आने-जाने की राह रहने पर भी वह उससे भाग नहीं सकती । रेशम के कीड़े रेशम की गोटियाँ बनाते हैं; वे चाहें तो उसे काटकर उससे निकल सकते हैं, परन्तु महामाया के प्रभाव से वे इस तरह बद्ध हैं कि अपनी बनाई हुई गोटियों में ही अपनी जान दे देते हैं ।

"तुम लोग तो स्वयं भी देख रहे हो कि संसार अनित्य है । देखो न, कितने आदमी आए और गए । कितने पैदा हुए और कितनों ने देह छोड़ी । संसार अभी अभी तो है और थोड़ी ही देर में नहीं ! अनित्य ! जिन्हें लेकर इतना 'मेरा' 'मेरा' कर रहे हो, आँखें बन्द करते ही कहीं कुछ नहीं है । है कोई नहीं, फिर भी नाती की बाँह पकड़े बैठे हैं—उसके लिए काशी नहीं जा सकते ! कहते हैं—मेरे लाल का क्या होगा ! आने जाने की राह है, फिर भी मछली भाग नहीं सकती । रेशम के कीड़े अपनी बनाई गोटियों में ही अपनी जान दे देते हैं । इस प्रकार का संसार मिथ्या है, अनित्य है ।"

पड़ोसी—महाराज, एक हाथ ईश्वर में और दूसरा संसार में क्यों रखें ? अगर संसार अनित्य है, तो एक भी हाथ संसार में क्यों रखें ?

श्रीरामकृष्ण—उन्हें जानकर संसार में रहने से संसार अनित्य नहीं रह जाता । एक गाना सुनो । (गीत का मर्म)

" ऐ मन ! तू खेती का काम नहीं जानता । ऐसी मनुष्य-देह-रूपी जमीन पड़ी ही रह गई ! अगर तू काश्तकारी करता तो इसमें सोना फल सकता था । पहले तू उसमें काली-नाम का घेरा लगा दे, इस तरह

फ़सल नष्ट न हो सकेगी । वह मुक्तकेशी का बड़ा ही दृढ़ घेरा है, उसके पास यम की भी हिम्मत नहीं जो कदम बढ़ा सके । आज या शताब्दी भर के बाद यह जमीन बेदखल हो जायगी, क्या यह तू नहीं जानता ? अतएव अब तू लगन लगाकर उसे जोतकर फ़सल क्यों नहीं तैयार कर लेता ? गुरु-प्रदत्त बीज डालकर भक्तिवारि से खेत सींचता जा । अगर तू अकेला यह काम न कर सके तो रामप्रसाद को भी अपने साथ ले ले । ”

(२)

गृहस्थाश्रम में ईश्वरलाभ । उपाय ।

श्रीरामकृष्ण—गाना सुना ? काली-नाम का घेरा लगा दो, इससे फ़सल नष्ट न होगी । ईश्वर की शरण में जाओ । वह मुक्तकेशी माँ का बड़ा ही मज़बूत अहाता है, उसके अन्दर यमराज पैर नहीं बढ़ा सकते । बड़ा ही मज़बूत अहाता है । उन्हें अगर प्राप्त कर सको तो फिर संसार असार न प्रतीत होगा । जिसने उन्हें जान लिया है, वह देखता है, जीव जगत् सब वही बन रहे हैं ! बच्चों को खिलाओगे तो यह जान पड़ेगा कि गोपाल को खिला रहे हो । पिता और माता को ईश्वर और ईश्वरी देखोगे और उनकी सेवा करोगे । उन्हें जानकर संसार में रहने से ब्याही हुई स्त्री से फिर सांसारिक सम्बन्ध न रह जायगा । दोनों ही भक्त हो जायँगे, केवल ईश्वरीय बातचीत करेंगे, ईश्वरीय प्रसंग लेकर रहेंगे तथा भक्तों की सेवा करेंगे । सर्वभूतों में वे हैं, अतएव दोनों उन्हीं की सेवा करते रहेंगे ।

पड़ोसी—महाराज, ऐसे स्त्री-पुरुष दीख क्यों नहीं पड़ते ?

श्रीरामकृष्ण—दीख पड़ते हैं, परन्तु बहुत कम । विषयी मनुष्य

उन्हें पहचान नहीं पाते। परन्तु ऐसा तभी होता है, जब दोनों ही भले हों। जब दोनों ही ईश्वर-प्रेम-प्राप्त हों तभी ऐसा हो सकता है। इसके लिए परमात्मा की विशेष कृपा चाहिए; नहीं तो सदा ही अनमेल रहता है। एक को अलग हो जाना पड़ता है। अगर मेल न हुआ तो बड़ा कष्ट होता है। स्त्री दिन रात कोसती रहती है—'बाबू जी ने क्यों यहाँ मेरा विवाह किया? न मुझे ही कुछ खाने को मिला, न बच्चों को ही—न मुझे ही कुछ पहनने को मिला, न बच्चों को ही मैं कुछ पहना सकी। एक गहना भी तो नहीं है! तुमने मुझे क्या सुख में रखा है? आँखें मूँदकर ईश्वर-ईश्वर कर रहे हैं! यह सब पागलपन छोड़ो।'

भक्त—ये सब बाधाएँ तो हैं ही, ऊपर से कभी कभी यह भी होता है कि लड़के कहना ही नहीं मानते। इस पर और भी कितनी ही आपदाएँ हैं। महाराज, तो फिर उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण—संसार में रहकर साधना करना बड़ा कठिन है। बड़ी बाधाएँ हैं। ये सब तुम्हें बतलाने की ज़रूरत नहीं है—रोग, शोक, दारिद्य, उस पर पत्नी से अनबन, लड़के अबाध्य, मूर्ख और गँवार।

"परन्तु उपाय है। कभी कभी एकान्त में जाकर उनसे प्रार्थना करनी पड़ती है, उन्हें पाने के लिए चेष्टा करनी पड़ती है।"

पड़ोसी—घर से निकल जाना होगा?

श्रीरामकृष्ण—बिलकुल नहीं। जब अवकाश हो तब निर्जन में जाकर दो-एक दिन रहो—परन्तु संसार से कोई सम्बन्ध न रहे, जिससे

किसी विषयी मनुष्य के साथ किसी सांसारिक विषय की चर्चा न करनी पड़े। या तो निर्जन में रहो या सत्संग करो।

पड़ोसी—सत्संग के लिए साधु-महात्मा की पहचान कैसे हो?

श्रीरामकृष्ण—जिनका मन, जिनका जीवन, जिनकी अन्तरात्मा ईश्वर में लीन हो गई है, वही महात्मा हैं। जिन्होंने कामिनी और कांचन का त्याग कर दिया है, वही महात्मा हैं। जो महात्मा हैं, वे स्त्रियों को संसार की दृष्टि से नहीं देखते, वे सदा उनके अन्तर में रहते हैं। यदि स्त्रियों के पास वे कभी जाते हैं तो उन्हें मातृवत् देखते और उनकी पूजा करते हैं। साधु-महात्मा सदा ईश्वर का ही चिन्तन करते हैं, ईश्वरीय प्रसंग के सिवाय और कोई बात उनके मुँह से नहीं निकलती। और सर्वभूतों में ईश्वर का ही वास है, यह जानकर वे सबकी सेवा करते हैं। संक्षेप में यही साधुओं के लक्षण हैं?

पड़ोसी—क्या बराबर एकान्त में ही रहना होगा?

श्रीरामकृष्ण—फुटपाथ के पेड़ तुमने देखे हैं? जब तक वे पौधे रहते हैं तब तक चारों ओर से उन्हें घेर रखना पड़ता है। नहीं तो बकरे और चौपाये उन्हें चर जाते हैं। जब पेड़ मोटे हो जाते हैं तब उन्हें घेरने की ज़रूरत नहीं रहती। तब हाथी बाँध देने पर भी पेड़ नहीं टूट सकता। तैयार पेड़ अगर बना ले सको तो फिर क्या चिन्ता है—क्या भय है? विवेक-लाभ करने की चेष्टा पहले करो। तेल लगाकर कटहल काटो। उससे दूध नहीं चिपक सकता।

पड़ोसी—विवेक किसे कहते हैं?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर सत् है और सब असत्—इस विचार का नाम विवेक है। सत् का अर्थ नित्य, और असत् अनित्य है। जिसे विवेक हो

गया है, वह जानता है, ईश्वर ही वस्तु हैं, और सब अवस्तु है। विवेक के उदय होने पर ईश्वर को जानने की इच्छा होती है। असत् को प्यार करने पर—जैसे देह-सुख, लोकसम्मान, धन, इन्हें प्यार करने पर—सत्स्वरूप ईश्वर को जानने की इच्छा नहीं होती। सत्-असत् विचार के आने पर ईश्वर की ढूँढ़-तलाश की ओर मन जाता है।

"सुनो, यह एक गाना सुनो। (गीत का आशय नीचे दिया जाता है।)

"मन! आ, घूमने चलेगा? काली-कल्पतरु के नीचे, ऐ मन, चारों फल तुझे पड़े हुए मिलेंगे। प्रवृत्ति और निवृत्ति उसकी स्त्रियाँ हैं; इनमें से निवृत्ति को अपने साथ लेना। उसके आत्मज विवेक से तत्त्व की बातें पूछ लेना। शुचि-अशुचि को लेकर दिव्य घर में तू कब सोयेगा? उन दोनों सौतों में जब प्रीति होगी, तभी तू श्यामा माँ को पायेगा। तेरे पिता-माता ये जो अहंकार और अविद्या हैं, इन्हें दूर कर देना। अगर कभी मोहगर्त में तू खिंचकर गिर जाय तो धैर्य का खूँटा पकड़े रहना। धर्मा-धर्म-रूपी दोनों बकरों को एक तुच्छ खूँटे में बाँध रखना। अगर ये निषेध न मानें तो ज्ञान-खड्ग लेकर इनकी बलि दे देना। पहली पत्नी की सन्तान को दूर से समझा देना। अगर यह तेरे प्रबोध-वाक्यों पर ध्यान न दे तो उसे ज्ञान-सिन्धु में डुबा देना। प्रसाद कहता है, इस तरह का जब तू बन जायगा, तभी तू काल के पास उत्तर दे सकता है और ऐ प्यारे, तभी तू सच्चा मन बन सकेगा।"

श्रीरामकृष्ण—मन में निवृत्ति के आने पर विवेक होता है। विवेक के होने पर ही तत्त्व की बात हृदय में पैदा होती है। तभी

काली-कल्पतरु के नीचे हवाखोरी के लिए मन जाना चाहता है। उसी पेड़ के नीचे जाने पर, ईश्वर के पास जाने पर, चारों फल—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—पड़े हुए मिलेंगे, अनायास मिल जायँगे। उन्हें पा जाने पर, धर्म, अर्थ, काम, जो कुछ संसारियों को चाहिए, वह भी मिलता है—अगर कोई चाहे।

पड़ोसी—तो फिर संसार को माया क्यों कहते हैं?

विशिष्टाद्वैतवाद और श्रीरामकृष्ण। 'मामेकं शरणं व्रज।'

श्रीरामकृष्ण—जब तक ईश्वर नहीं मिलते तब तक 'नेति' 'नेति' करके त्याग करना पड़ता है, उन्हें जिन लोगों ने पा लिया है, वे जानते हैं कि वही सब कुछ हुए हैं। तब बोध हो जाता है—ईश्वर ही माया और जीव-जगत् हैं। जीव-जगत् भी वही हैं। अगर किसी बेल का खोपड़ा, गूदा और बीज अलग कर दिये जायँ, और कोई कहे, देखो तो ज़रा बेल तौल में कितना था, तो क्या तुम खोपड़ा और बीज अलग करके सिर्फ गूदा तौल पर रखोगे या तौलते समय खोपड़ा और बीज भी साथ ले लोगे? एक साथ लेने पर ही तुम कह सकोगे, बेल तौल में इतना था। खोपड़ा मानो संसार है, और बीज मानो जीव। विचार के समय तुमने जीव और संसार को अनात्मा कहा था, अवस्तु कहा था। विचार करते समय गूदा ही सार, खोपड़ा और बीज असार जान पड़े थे। विचार हो जाने पर, सब मिलकर एक जान पड़ता है। और यह भासित होता है कि जिस सत्ता का गूदा है, उसीसे बेल का खोपड़ा और गूदा भी तैयार हुआ है। बेल को समझने चलो तो सब कुछ समझ में आ जाता है।

" अनुलोम और विलोम । मट्ठे ही का मक्खन है, और मक्खन ही का मट्ठा । अगर मट्ठा तैयार हो गया हो तो मक्खन भी हो गया है । यदि मक्खन हो गया हो तो मट्ठा भी हो गया है । आत्मा अगर रहे तो अनात्मा भी है ।

" जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्हींकी है । जिनकी लीला है, उन्हींकी नित्यता भी है । जो ईश्वर के रूप से प्रकट होते हैं, वही जीव-जगत् भी हुए हैं । जिसने जान लिया है, वही देखता है कि वही सब कुछ हुए हैं । बाप, माँ, बच्चा, पड़ोसी, जीव-जन्तु, भला-बुरा, शुद्ध-अशुद्ध सब कुछ । "

पाप बोध ।

पड़ोसी—तो पाप-पुण्य नहीं है ?

श्रीरामकृष्ण—है भी और नहीं भी है । वे अगर अहं-तत्व रख देते तो भेदबुद्धि भी रख देते हैं, पाप-पुण्य का ज्ञान भी रख देते हैं । वे दो-एक मनुष्यों का अहंकार बिलकुल पोंछ डालते हैं—वे पाप-पुण्य, भले-बुरे के परे चले जाते हैं । ईश्वर-दर्शन जब तक नहीं होता तब तक भेदबुद्धि और भले-बुरे का ज्ञान रहता ही है । तुम मुँह से कह सकते हो—' हमारे लिए पाप और पुण्य बराबर हैं, वे जैसा कराते हैं वैसा ही करता हूँ, परन्तु हृदय से यही जानते हो कि यह सब एक कहावत मात्र है । बुरा काम करने से ही छाती धड़कने लगेगी । ईश्वर-दर्शन के बाद भी अगर उसकी इच्छा होती है तो वे ' दास मैं ' रख देते हैं । उस अवस्था में भक्त कहता है, मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो । ईश्वरीय प्रसंग, ईश्वरीय कर्म, ये सब उस भक्त को रुचिकर होते हैं; ईश्वर-विमुख मनुष्य

उसे अच्छा नहीं लगता। उसको ईश्वरीय कर्मों के सिवा दूसरे कार्य नहीं सुहाते। इतने ही से बात सिद्ध हो जाती है कि ऐसे भक्तों में भी वे भेद-बुद्धि रख छोड़ते हैं।

पड़ोसी—महाराज, आप कहते हैं, ईश्वर को जानकर संसार करो। क्या उन्हें कोई जान सकता है?

श्रीरामकृष्ण—उन्हें इन्द्रियों द्वारा अथवा इस मन के द्वारा कोई जान नहीं सकता। जिस मन में विषय-वासना नहीं उस शुद्ध मन के द्वारा ही मनुष्य उन्हें जान सकता है।

पड़ोसी—ईश्वर को कौन जान सकता है?

श्रीरामकृष्ण—ठीक ठीक उन्हें कौन जान सकता है? हमारे लिए जितना जानने की ज़रूरत है, उतना होने ही से हो गया। हमें कुएँ भर पानी की क्या ज़रूरत है? हमारे लिए तो लोटा भर पानी ही पर्याप्त है। एक चीटी चीनी के पहाड़ के पास गई थी। सब पहाड़ लेकर भला क्या करेगी? उसके छकने के लिए तो दो-एक दाने ही बहुत हैं।

पड़ोसी—हमें जैसा विकार है, इससे लोटा भर पानी से क्या होता है? इच्छा होती है, ईश्वर को सोलहो आने समझ लें।

श्रीरामकृष्ण—यह ठीक है; परन्तु विकार की दवा भी तो है।

पड़ोसी—महाराज, वह कौन सी दवा है?

श्रीरामकृष्ण—साधुओं का संग, उनका नाम-गुण-कीर्तन, उनसे सर्वदा प्रार्थना करना। मैंने कहा था— माँ, मैं ज्ञान नहीं चाहता; यह

लो अपना ज्ञान और यह लो अपना अज्ञान; माँ ! मुझे अपने चरण-कमलों में केवल शुद्धा भक्ति दो। मैं और कुछ नहीं चाहता।

"जैसा रोग होता है, उसकी दवा भी वैसी ही होती है। गीता में उन्होंने कहा है, 'हे अर्जुन, तुम मेरी शरण लो, तुम्हें मैं सब तरह के पापों से मुक्त कर दूँगा।' उनकी शरण में जाओ। वे सुबुद्धि देंगे, वे सब भार ले लेंगे। तब सब तरह के विकार दूर हट जायँगे। इस बुद्धि से क्या कोई उन्हें समझ सकता है? सेर भर के लोटे में क्या कभी चार सेर दूध रह सकता है? और बिना उनके समझाए क्या उन्हें कोई समझ सकता है? इसीलिए कहता हूँ, उनकी शरण में जाओ—उनकी जो इच्छा हो, वे करें। वे इच्छामय हैं। मनुष्य की क्या शक्ति है?"

परिच्छेद ३७

भक्तियोग तथा समाधितत्व

(१)

भक्तियोग, समाधि-तत्त्व और महाप्रभु की अवस्थाएँ।
हठयोग और राजयोग।

९ दिसम्बर १८८३, रविवार, अगहन शुक्ला दशमी, दिन के दो बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण अपने घर की उसी छोटी चारपाई पर बैठे हुए भक्तों के साथ भगवच्चर्चा कर रहे हैं। अधर, मनोमोहन, ठनठनिया के शिबिचन्द्र, राखाल, मास्टर, हरीश आदि कितने ही भक्त बैठे हुए हैं। हाजरा भी उस समय वहीं रहते थे। श्रीरामकृष्ण महाप्रभु की अवस्था वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—चैतन्यदेव को तीन अवस्थाएँ होती थीं। बाह्य-दशा,—तब स्थूल और सूक्ष्म में उनका मन रहता था। अर्धबाह्य-दशा,—तब कारण शरीर में—कारणानन्द में मन चला जाता था। अन्तर्दशा,—तब महाकारण में मन लीन हो जाता था।

"वेदान्त के पंचकोष के साथ इसका खासा मेल है। स्थूल-शरीर अर्थात् अन्नमय और प्राणमय कोष। सूक्ष्म-शरीर अर्थात् मनोमय और विज्ञानमय कोष। कारण-शरीर अर्थात् आनन्दमय कोष—महाकारण पंचकोषों से परे है। महाकारण में जब मन लीन होता था तब वे समाधि-मग्न हो जाते थे। इसी का नाम निर्विकल्प अथवा जड-समाधि है।

"" चैतन्यदेव को जब बाह्य-दशा होती थी तब वे नाम-कीर्तन करते थे। अर्धबाह्य दशा में भक्तों के साथ नृत्य करते थे। अन्तर्दशा में समाधिस्थ हो जाते थे।

" श्रीचैतन्य भक्ति के अवतार थे। वे जीवों को भक्ति की शिक्षा देने के लिए आये थे। उन पर भक्ति हुई तो सब कुछ हो गया। फिर हठयोग की कोई जरूरत नहीं। "

एक भक्त—जी, हठयोग कैसा है?

श्रीरामकृष्ण—हठयोग में शरीर की ओर ज्यादा मन देना पड़ता है। अन्तर-प्रक्षालन के लिए हठयोगी बाँस की नली पर गुदा-स्थापन करता है। लिङ्ग के द्वारा दूध-घी खींचता रहता है। जिह्वा-सिद्धि का अभ्यास करता है। आसन साधकर कभी कभी शून्य पर चढ़ जाता है। ये सब कार्य वायु के हैं। तमाशा दिखाते हुए किसीने तालु के अन्दर जीभ घुसेड़ दी थी। बस, उसका शरीर स्थिर हो गया; लोगों ने सोचा, यह मर गया। कितने ही वर्ष वह मिट्टी के नीचे पड़ा रहा। कालान्तर में वह कब्र धस गई। तब एकाएक उसे चेत हुआ। चेतना के होते ही वह चिल्ला उठा—यह देखो कलाबाजी! यह देखो गिरहबाजी! (सब हँसते हैं।) यह सब साँस की करामात है।

" वेदान्तवादी हठयोग नहीं मानते।

" हठयोग और राजयोग। राजयोग में मन के द्वारा योग होता है। भक्ति के द्वारा भी योग होता है! यही योग अच्छा है। हठयोग अच्छा नहीं, क्योंकि कलि में प्राण अन्न के अधीन हैं। "

(२)

श्रीरामकृष्ण की तपस्या । श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त और भविष्यत् महातीर्थ । मूर्तिदर्शन ।

श्रीरामकृष्ण नौबतखाने की बगलवाली राह पर खड़े हुए देख रहे हैं—मणि नौबतखाने के बरामदे में एक ओर बैठे हुए घेरे की आड़ में किसी गहन चिन्ता में डूबे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर गये थे। मुँह धोकर वहीं जाकर खड़े हुए।

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, यहाँ बैठे हुए हो! तुम्हारा काम जल्दी होगा। कुछ ही दिन करने से कोई कहेगा—'यही है—यही है।'

चौंककर वे श्रीरामकृष्ण की ओर ताकते रह गये। अभी तक आसन भी नहीं छोड़ा।

श्रीरामकृष्ण—तुम्हारा समय हो आया है। जब तक अण्डों के फोड़ने का समय नहीं होता, तब तक चिड़िया अण्डे नहीं फोड़ती। जो मार्ग तुम्हें बतलाया गया है, वही तुम्हारे लिए ठीक है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने फिर से मार्ग बतला दिया।

"यह नहीं कि सभी को तपस्या ज्यादा करनी पड़े। परन्तु मुझे तो बड़ा ही कष्ट उठाना पड़ा था। मिट्टी के टीले पर सिर रखकर पड़ा रहता था। न जाने कहाँ दिन पार हो जाता था। केवल माँ-माँ कहकर पुकारता था और रोता था।"

मणि श्रीरामकृष्ण के पास लगभग दो साल से आ रहे हैं। वे

अंग्रेज़ी पढ़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कभी कभी उन्हें इङ्गलिशमैन कहकर पुकारते थे। उन्होंने कालेज में अध्ययन किया है। विवाह भी किया है।

केशव और दूसरे पण्डितों के व्याख्यान सुनने और अंग्रेज़ी दर्शन और विज्ञान पढ़ने में उनका खूब जी लगता है। परन्तु जब से वे श्रीरामकृष्ण के पास आए, तब से यूरोपीय पण्डितों के ग्रन्थ और अंग्रेज़ी अथवा दूसरी भाषाओं के व्याख्यान उन्हें अलोने जान पड़ने लगे। अब दिन-रात केवल श्रीरामकृष्ण को देखते और उन्हीं की बातें सुनना चाहते हैं।

आजकल श्रीरामकृष्ण की एक बात वे सदा सोचते रहते हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा है, साधना करने से मनुष्य ईश्वर को देख सकता है। उन्होंने यह भी कहा है, ईश्वर-दर्शन ही मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है।

श्रीरामकृष्ण—कुछ दिन करने से ही कोई कहेगा—यही है, यही है। तुम एकादशी का व्रत करना। तुम लोग अपने आदमी हो, आत्मीय हो। नहीं तो तुम इतना क्यों आओगे? कीर्तन सुनते-सुनते राखाल को मैंने देखा था, वह व्रज-मण्डल के भीतर था। नरेन्द्र का स्थान बहुत ऊँचा है। और हीरानन्द। उसका कैसा बालकों का सा भाव है। उसका भाव कैसा मधुर है! उसे भी देखने को जी चाहता है।

"मैंने श्रीगौरांग के साङ्गोपाङ्गों को देखा था; भाव में नहीं, इन्हीं आँखों से! पहले ऐसी अवस्था थी कि सादी दृष्टि से सब दर्शन होते थे! अब भाव में होते हैं।

"सादी दृष्टि से श्रीगौरांग के सब साङ्गोपाङ्गों को देखा था। उसमें शायद तुम्हें भी देखा था। और शायद बलराम को भी।

" किसीको देखकर झट उठकर क्यों खड़ा हो जाता हूँ, जानते हो ? आत्मीयों को दीर्घकाल के बाद देखने से ऐसा ही होता है।

" माँ से रो-रोकर कहता था, माँ, भक्तों के लिए मेरा जी निकल रहा है। उन्हें शीघ्र मेरे पास ला दे। जो कुछ मैं सोचता था, वही होता था।

" पञ्चवटी में मैंने तुलसी-कानन बनाया था, जप-ध्यान करने के लिये। बड़ी इच्छा हुई कि चारों ओर से बाँस की कमानियों का घेरा लगा दूँ। इसके बाद ही देखा, ज्वार में बहकर कुछ कमानियों का गट्ठा और कुछ रस्सी ठीक पञ्चवटी के सामने आकर लग गई है। ठाकुरबाड़ी में एक कहार रहता था। आनन्द से नाचते हुए उसने आकर यह खबर सुनाई।

" जब यह अवस्था हुई तब और पूजा न कर सका। कहा, माँ, मुझे कौन देखेगा ? माँ, मुझमें ऐसी शक्ति नहीं है कि अपना भार खुद ले सकूँ। और तुम्हारी बात सुनने को जी चाहता है; भक्तों को खिलाने की इच्छा होती है; सामने पड़ जाने पर किसी को कुछ देने की भी इच्छा होती है। माँ, यह सब किस तरह होगा ? माँ, तुम एक बड़ा आदमी मेरी सहायता के लिए भेज दो। इसीलिए तो मथुरबाबू ने इतनी सेवा की !

" और भी कहा था, माँ, मेरे तो अब सन्तान होगी नहीं, परन्तु इच्छा होती है कि एक शुद्ध भक्त बालक सदा मेरे साथ रहे। इसी तरह का एक बालक मुझे दो। इसीलिए तो राखाल आया। जो जो आत्मीय हैं, उनमें कोई अंश है और कोई कला। "

श्रीरामकृष्ण फिर पञ्चवटी की ओर जा रहे हैं। मास्टर साथ हैं। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक उनसे वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—देखो, मैंने एक दिन काली-घर से पञ्चवटी तक एक अद्भुत मूर्ति देखी ! इस पर तुम्हारा विश्वास होता है ?

मास्टर आश्चर्य में आकर निर्वाक् हो रहे।

वे पञ्चवटी की शाखा से दो-चार पत्ते तोड़कर अपनी जेब में रख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—यह डाल गिर गई है, देखते हो ? मैं इसके नीचे बैठता था।

मास्टर—मैं इसकी एक छोटी सी डाल तोड़ ले गया हूँ। उसे घर में रख दिया है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—क्यों ?

मास्टर—देखने से आनन्द होता है। सब समाप्त हो जाने पर यही जगह महातीर्थ होगी।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—किस तरह का तीर्थ ? क्या पानिहाटी की तरह का ?

पानिहाटी में बड़े समारोह के साथ राघव पण्डित का महोत्सव होता है। श्रीरामकृष्ण प्रायः हर साल यह महोत्सव देखने जाया करते हैं और संकीर्तन के बीच में प्रेम और आनन्द से नृत्य किया करते हैं,

मानो भक्तों की पुकार सुनकर श्रीगौराङ्ग स्थिर नहीं रह सकते—संकीर्तन में स्वयं जाकर अपनी प्रेम-मूर्ति के दर्शन कराते हैं।

(३)

हरिकथा प्रसंग।

सन्ध्या हो गई। श्रीरामकृष्ण अपने घर की उसी छोटी खाट पर बैठे हुए जगन्माता का चिन्तन कर रहे हैं। क्रमशः ठाकुर-बाड़ी में देवताओं की आरती होने लगी। शङ्ख और घंटे बजने लगे। मास्टर आज रात को यहीं रहेंगे।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से भक्तमाल पढ़कर सुनाने के लिए कहा। मास्टर पढ़ रहे हैं।

(यह बंगला का भक्तमाल है। छन्दोबद्ध है। इसका हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जाता है—)

"जयमल नाम के एक शुद्धचित्त राजा थे। श्रीकृष्ण भगवान् पर उनकी अचल प्रीति थी। नवधा भक्ति के यजन में वे इतने दृढ़निष्ठ थे कि पत्थर पर खिंची हुई रेखा की तरह उसका ह्रास न हो पाता था। वे जिस विग्रह का पूजन करते थे उसका नाम श्यामल-सुन्दर था। श्यामल-सुन्दर को छोड़ वे और अन्य किसी देवी-देवता को मानो जानते ही न थे। उन्हीं पर उनका चित्त लगा रहता था। सदा दृढ़ नियमों से वे दस दण्ड दिन चढ़ते तक उस मूर्ति की पूजा किया करते थे। अपने पूजन में वे इतने दृढ़-निश्चय थे कि चाहे राज्य और धन का नाश हो

जाय —चाहे वज्रपात हो, तथापि पूजा के समय किसी दूसरी ओर ध्यान न देते थे।

इस बात की खबर उनके एक दूसरे प्रतिस्पर्धी राजा के पास पहुँची। उसने सोचा, यह तो शत्रु के पराजित करने का एक उत्तम उपाय हाथ आया। जिस समय ये पूजन के लिए बैठें उसी समय इनका दुर्ग घेर लिया जाय और युद्ध की घोषणा कर दी जाय। राजा की आज्ञा बिना सेना युद्ध नहीं कर सकती। जब मैं युद्ध घोषणा करूँगा तब इनकी सेना इनकी आज्ञा की राह देखती रहेगी, ये पूजन में पड़े रहेंगे, तब तक मैं मैदान मार लूँगा। यह सोचकर उसने यथा-समय अपनी सेना बढ़ाकर इनका किला घेर लिया। इन्होंने उस समय युद्ध की ओर ध्यान ही नहीं दिया, निरुद्वेग होकर पूजन करने लगे। इनकी माता सिर पटकती हुई पास आकर उच्च स्वर से रोदन करने लगी। विलाप करते हुए उसने कहा कि अब जल्दी उठो, नहीं तो सब कुछ चला जायेगा तुम तो ऐसे हो कि तुम्हारा इधर ध्यान ही नहीं है—शत्रु चढ़ आया—अब किला तोड़ना ही चाहता है। महाराज जयमल ने कहा—'माता! तुम क्यों दुःख कर रही हो? जिसने यह राज-पाट दिया है, वह अगर छीन ले तो हमारा इसमें क्या? और अगर वह हमारी रक्षा करे, तो वह शक्ति किसमें है जो हमसे ले सके? अतएव हम लोगों का उद्यम तो व्यर्थ ही है।'

इधर श्यामल-सुन्दर ने घोड़े पर सवार हो अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध की तैयारी कर दी। अकेले ही भक्त के शत्रुओं का संहार करके घोड़े को अपने मन्दिर के पास बाँधकर श्यामल-सुन्दर जहाँ-के-तहाँ हो रहे।...'

पाठ समाप्त होने के बाद श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण —इन बातों पर तुम्हारा विश्वास होता है ?—घोड़े पर सवार होकर उन्होंने सेना-नाश किया था; इन सब बातों पर ?

मास्टर—भक्त ने व्याकुल होकर उन्हें पुकारा था। श्रीभगवान् को उसने ठीक ठीक सवारी करते देखा था या नहीं, यह सब समझ में नहीं आता। वे सवार होकर आ सकते हैं, परन्तु उन लोगों ने उन्हें ठीक ठीक देखा था या नहीं, इस पर विश्वास नहीं जमता।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—पुस्तक में भक्तों की अच्छी कथाएँ लिखी हैं, परन्तु हैं सब एक ही ढर्रे की। जिनका दूसरा मत है, उनकी निन्दा लिखी है।

दूसरे दिन सुबह को बगीचे में खड़े हुए श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं। मणि कहते हैं, तो मैं यहाँ आकर रहूँगा।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम लोग जो इतना आया करते हो, इसके क्या मानी है ! साधु को ज्यादा से ज्यादा लोग एक बार आकर देख जाते हैं। तुम इतना आते हो—इसके क्या मानी है !

मणि तो चकित हो गये। श्रीरामकृष्ण स्वयं ही इस प्रश्न का उत्तर देने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—अन्तरंग न होते तो क्या आते ! अन्तरंग अर्थात् आत्मीय, अपना आदमी—जैसे, पिता-पुत्र, भाई-बहन। सब बातें मैं नहीं कहता। नहीं तो फिर कैसे आओगे ?

" शुकदेव ब्रह्मज्ञान पाने के लिए जनक के पास गये थे। जनक ने कहा, पहले दक्षिणा दो। शुकदेव ने कहा, जब तक उपदेश नहीं मिल जाता, तब तक कैसे दक्षिणा दूँ? जनक ने हँसते हुए कहा, तुम्हें ब्रह्मज्ञान हो जाने पर फिर गुरु और शिष्य का भेद थोड़े ही रह जायगा? इसी लिए हमने दक्षिणा की बात कही। "

परिच्छेद ३८

त्याग तथा प्रारब्ध

(१)

अध्यात्मरामायण ।

आज अगहन की पूर्णिमा और संक्रान्ति है। दिन शुक्रवार, १४ दिसम्बर, १८८३। दिन के नौ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण अपने घर के दरवाजे के पासवाले दक्षिण-पूर्व के बरामदे में खड़े हुए हैं। पास ही रामलाल खड़े हैं। राखाल और लाटू भी कहीं इधर-उधर पास ही थे। मणि ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, "आ गए, अच्छा हुआ, आज दिन भी अच्छा है।" मणि कुछ दिन श्रीरामकृष्ण के पास रहेंगे। साधना करेंगे। श्रीरामकृष्ण ने कहा है, "यदि एक साधक थोड़ी भी साधना शुरू कर देता है तो उसे कोई न कोई सहायक अवश्य मिल जाता है।"

श्रीरामकृष्ण ने इनसे कहा था, यहाँ अतिथि-शाला का अन्न तुम्हारे लिए रोज खाना उचित नहीं। यह साधुओं और कंगालों के लिए है। तुम अपना भोजन पकाने के लिए एक आदमी ले आना।' इसीलिए उनके साथ एक आदमी भी आया है।

उनका भोजन कहाँ पकाया जायगा, इसके सम्बन्ध में बन्दोबस्त कर देने के लिए श्रीरामकृष्ण ने रामलाल से कह दिया। वे दूध पियेंगे, इसके लिए भी अहीर से कह देने को कहा।

श्रीयुत रामलाल अध्यात्म-रामायण पढ़ रहे हैं और श्रीरामकृष्ण सुन रहे हैं। मणि भी बैठे हुए सुन रहे हैं—

"श्रीरामचन्द्रजी सीताजी से विवाह करके अयोध्या लौट रहे हैं। रास्ते में परशुराम से भेंट हुई। श्रीरामचन्द्रजी ने धनुष तोड़ डाला है, यह सुनकर परशुराम रास्ते में बड़ा गुलगपाड़ा मचाने लगे। मारे भय के दशरथजी के होश ही उड़ गये। परशुराम ने एक दूसरा धनुष राम को देकर उस पर उन्हें गुण चढ़ा देने के लिए कहा। राम ने कुछ मुसकराकर बायें हाथ से धनुष लेकर गुण चढ़ाकर उसमें टंकार किया। शरासन में शर-योजना करके परशुराम से उन्होंने कहा, अब यह बाण कहाँ छोड़ूँ—कहो। परशुराम का दर्प चूर्ण हो गया। वे श्रीरामचन्द्र को परब्रह्म कहकर उनकी स्तुति करने लगे।"

परशुराम की स्तुति सुनते ही श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। रह-रहकर, 'राम-राम' मधुर नाम का उच्चारण कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (रामलाल से)—ज़रा गुह-निषाद की कथा तो सुनाओ। रामलाल भक्तमाल से सुनाने रहे—

"श्रीरामचन्द्रजी जब पिता की सत्यरक्षा के लिए वन गए थे, तब उन्हें देखकर निषाद-राज को बड़ा आश्चर्य हुआ। धीरे धीरे उन्होंने श्रीरामचन्द्रजी के पास जाकर कहा, आप हमारे घर चलें। श्रीरामचन्द्र जी उन्हें मित्र कहकर भर बाँह भेंटे। निषाद ने कहा, आप मेरे मित्र हुए तो मैं भी आपको अपने प्राणों के साथ अपनी देह समर्पित करता हूँ। श्रीरामचन्द्रजी चौदह साल वन में रहेंगे और जटा-वल्कल धारण करेंगे। यह सुनकर निषाद-राज ने भी जटा-वल्कल

धारण कर लिया। फल-मूल छोड़कर अन्य कोई भोजन उन्होंने नहीं किया। चौदह साल के बाद भी श्रीरामचन्द्रजी नहीं आ रहे हैं यह देखकर गुह अग्नि-प्रवेश करने जा रहे थे। इसी समय हनुमानजी ने आकर संवाद दिया। संवाद पाकर गुह आनन्द-सागर में मग्न हो गये। श्रीरामचन्द्रजी और श्रीसीताजी पुष्पक रथ पर आकर उपस्थित हो गये।"

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण थोड़ा आराम कर रहे हैं। मास्टर पास बैठे हुए हैं। इसी समय श्याम डाक्टर तथा और भी कई आदमी आये। श्रीरामकृष्ण उठकर बैठ गये और बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—बात यह नहीं कि कर्म बराबर करते ही जाना पड़े। ईश्वर-लाभ हो जाने पर कर्म फिर नहीं रह जाते। फल होने पर फूल आप ही झड़ जाते हैं।

"जिसे ईश्वर-प्राप्ति हो जाती है उसके लिए सन्ध्यादि कर्म नहीं रह जाते। सन्ध्या गायत्री में लीन हो जाती है; तब गायत्री जपने से ही काम हो जाता है। और गायत्री का लय ओंकार में हो जाता है; तब गायत्री जपने की भी आवश्यकता नहीं रह जाती। तब केवल 'ॐ' कहने से ही हो जाता है। सन्ध्यादि कर्म कब तक हैं?—जब तक हरिनाम या रामनाम में पुलक न हो, अश्रुधारा न बहे। धन के लिए या मुकदमा जीतने के लिए पूजा आदि कर्म करना अच्छा नहीं।"

एक भक्त—धन की चेष्टा तो, मैं देखता हूँ, सभी करते हैं। केशव सेन को ही देखिये, किस तरह महाराजा के साथ उन्होंने अपनी लड़की का विवाह किया।

श्रीरामकृष्ण—केशव की बात दूसरी है। जो यथार्थ भक्त है वह अगर चेष्टा न भी करे तो भी ईश्वर उसके लिए सब कुछ जुटा देते हैं। जो ठीक ठीक राजा का लड़का है वह मुजरा पाता है। वकील एवं उन्हींके समान लोगों की बात मैं नहीं कहता—जो मेहनत करके, दूसरों की दासता करके, रुपया कमाते हैं। मैं कहता हूँ, वह ठीक राजा का लड़का है। जिसे कोई कामना नहीं है वह रुपया-पैसा नहीं चाहता। रुपया उसके पास आप ही आता है। गीता में है—यदृच्छालाभ।

"जो सद्ब्राह्मण है, जिसे कोई कामना नहीं है, वह चमार के यहाँ का भी सीधा ले सकता है। 'यदृच्छालाभ'। वह कामना नहीं करता, उसके पास प्राप्ति आप ही आती है।"

एक भक्त—अच्छा महाराज, संसार में किस तरह रहना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—पाँकाल मछली की तरह रहना चाहिए। संसार से दूर निर्जन में जाकर कभी कभी ईश्वर-चिन्तन करने पर उनमें भक्ति होती है। तब निर्लिप्त होकर संसार में रह सकोगे। पाँकाल मछली कीच के भीतर रहती है, फिर भी कीच उसकी देह में नहीं लगता। इस तरह का आदमी अनासक्त होकर संसार में रहता है।

श्रीरामकृष्ण देख रहे हैं, मणि एकाग्र चित्त से उनकी सब बातें सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि को देखकर)—तीव्र वैराग्य होने से लोग ईश्वर को पाते हैं। जिसे तीव्र वैराग्य होता है, उसे जान पड़ता है, संसार दावाग्नि की तरह है—जल रहा है! वह स्त्री और पुत्र को कुएँ के सदृश देखता है। इस तरह का वैराग्य जब होता है, तब घर-द्वार आप

छूट जाता है। अनासक्त होकर संसार में रहना उसके लिए पर्याप्त नहीं है। कामिनी-कांचन यही माया है। माया को अगर पहचान सको तो वह आप लज्जा से भाग खड़ी होगी। एक आदमी बाघ की खाल ओढ़कर भय दिखा रहा है। जिसे भय दिखा रहा है उसने कहा, मैं तुझे पहचानता हूँ, तू तो 'हिरुआ' है। तब वह हँसकर चला गया—और किसी दूसरे को भय दिखाने लगा। जितनी स्त्रियाँ हैं सब शक्तिरूपिणी हैं। वही आदि-शक्ति स्त्री का रूप धारण किये हुए है। अध्यात्म-रामायण में है—राम का नारदादि स्तव करते हैं, 'हे राम, जितने पुरुष हैं सब आप हैं और प्रकृति के जितने रूप हैं सब सीता हैं। तुम इन्द्र हो, सीता इन्द्राणी; तुम शिव हो, सीता शिवानी; तुम नर हो सीता नारी; अधिक और क्या कहूँ—जहाँ पुरुष हैं वहाँ तुम हो, जहाँ स्त्रियाँ हैं, वहाँ सीता।'

त्याग और प्रारब्ध। श्रीरामकृष्ण द्वारा वामाचार-साधन का निषध।

(भक्तों से)—"मन में लाने से ही त्याग नहीं किया जा सकता। प्रारब्ध, संस्कार, ये सभी हैं। एक राजा से किसी योगी ने कहा, तुम मेरे पास बैठकर परमात्मा का चिन्तन करो। राजा ने उत्तर दिया, 'महाराज, यह मुझसे न होगा। मैं यहाँ रह सकता हूँ; परन्तु मुझे अब भी भोग करना है। इस वन में अगर रहूँगा तो आश्चर्य नहीं कि इस वन में भी एक राज्य हो जाय! मेरा भोग अभी बाक़ी है।'

"नटवर पाँजा जब बच्चा था, इस बगीचे में जानवर चराता था। परन्तु उसके लिए बहुत बड़ा भोग था; इसीलिए तो इस समय अण्डी का कारखाना खोलकर इतना रुपया इकट्ठा किया है। आलमबाजार में अण्डी का रोजगार खूब चला रहा है।

"एक मत में है, स्त्री लेकर साधना करना। 'कर्ताभजा' सम्प्रदाय की स्त्रियों के बीच में एक बार एक आदमी मुझे ले गया था। वे सब मेरे पास आकर बैठ गईं। मैं जब उन्हें 'माँ-माँ' कहने लगा तब वे आपस में कहने लगीं, ये प्रवर्तक हैं, अभी 'घाट' की पहचान इनको नहीं हुई! उन लोगों के मत में कच्ची अवस्था को प्रवर्तक कहते हैं, उसके बाद साधक, उसके बाद सिद्ध, और फिर सिद्ध का सिद्ध।

"एक स्त्री वैष्णवचरण के पास जाकर बैठी। वैष्णवचरण से पूछने पर उन्होंने कहा, इसका बालिका-भाव है।

"स्त्री-भाव से पतन होता है। मातृभाव शुद्ध भाव है।"

काँसारीपाड़ा के भक्तगण उठ पड़े। कहा, तो अब हम लोग चलें; काली माई तथा और और देवों के दर्शन करेंगे।

(२)

श्रीरामकृष्ण और प्रतिमापूजा। व्याकुलता और ईश्वरलाभ।

पिछला पहर है, साढ़े तीन बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण के कमरे में मणि फिर आकर बैठे हैं। एक शिक्षक कई छात्रों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के दर्शनों के लिए आए हुए हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे वार्तालाप कर रहे हैं। शिक्षक महाशय बीच-बीच में एक एक प्रश्न कर रहे हैं। बातचीत मूर्तिपूजन के सम्बन्ध में हो रही है।

श्रीरामकृष्ण (शिक्षक से)—मूर्ति-पूजन में दोष क्या है? वेदान्त में है, जहाँ 'अस्ति, भाति और प्रिय' है, वहीं उनका प्रकाश है, इसलिए उनके सिवाय और किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है।

" और देखो, छोटी छोटी लड़कियाँ कितने दिन खेलती हैं ?— जब तक विवाह नहीं होता और जितने दिन तक वे पति-सहवास नहीं करतीं। विवाह हो जाने पर गुड़ियाँ-गुड्डों को उठाकर सन्दूक में रख देती हैं। ईश्वर-लाभ हो जाने पर फिर मूर्ति-पूजन की क्या आवश्यकता है ?"

मणि की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कहते हैं—" अनुराग होने पर ईश्वर मिलते हैं। खूब व्याकुलता होनी चाहिए। खूब व्याकुलता होने पर सम्पूर्ण मन उन्हें अर्पित हो जाता है।

" एक आदमी के एक लड़की थी। बहुत कम आयु में लड़की विधवा हो गई थी। पति का मुख उसने कभी न देखा था। दूसरी स्त्रियों के पतियों को आते-जाते वह देखती थी। उसने एक दिन कहा, पिता जी, मेरा पति कहाँ है ? उसके पिता ने कहा, गोविन्दजी तेरे पति हैं। उन्हें पुकारने पर वे तुझे दर्शन देंगे। यह सुनकर वह लड़की द्वार बन्द करके गोविन्द को पुकारती और रोती थी। वह कहती थी— 'गोविन्द ! तुम आओ, मुझे दर्शन दो, तुम क्यों नहीं आते ?' छोटी लड़की का यह रोना सुनकर गोविन्दजी स्थिर न रह सके। उसे उन्होंने दर्शन दिए।

" बालक जैसा विश्वास। बालक माँ को देखने के लिए जिस तरह व्याकुल होता है, वैसी व्याकुलता चाहिए। इस व्याकुलता के होने पर समझना चाहिए कि अरुणोदय हुआ। इसके पश्चात् सूर्योदय होगा ही। इस व्याकुलता के बाद ही ईश्वर-दर्शन होते हैं।

"'जटिल बालक की बात लिखी है। वह पाठशाला जाता था। कुछ जंगल की राह से पाठशाला जाना पड़ता था; इसलिए वह डरता था।

उसने अपनी माँ से कहा। माता ने कहा, डर क्या है? तू मधुसूदन को पुकारना। बच्चे ने पूछा, मधुसूदन कौन है? माता ने कहा, मधुसूदन तेरे दादा होते हैं। जब अकेले में जाते समय वह डरा, तब एक आवाज़ लगाई—मधुसूदन दादा! कहीं कोई न आया। तब वह, 'कहाँ हो मधुसूदन दादा! जल्दी आओ, मुझे बड़ा डर लग रहा है' कहकर ज़ोर ज़ोर से पुकारने लगा? मधुसूदन न रह सके। आकर कहा, यह क्या हैं हम, तुझे भय क्या है? यह कहकर उसे साथ लेकर वे पाठशाला के रास्ते तक छोड़ आए, और कहा तू जब बुलायेगा तभी मैं दौड़ा आऊँगा, भय क्या है! यह बालक का विश्वास है—यह व्याकुलता है।

"एक ब्राह्मण के यहाँ भगवान् की सेवा थी। एक दिन किसी काम से उसे किसी दूसरी जगह जाना पड़ा। वह अपने छोटे बच्चे से कह गया, आज श्रीठाकुरजी का भोग लगाना, उन्हें खिलाना। बच्चे ने ठाकुरजी का भोग लगाया, परन्तु ठाकुरजी चुपचाप बैठे ही रहे। न बोले और न कुछ खाया ही। बच्चे ने बड़ी देर तक बैठे बैठे देखा कि ठाकुरजी नहीं उठते। उसे दृढ़ विश्वास था कि ठाकुरजी आकर आसन पर बैठकर भोजन करेंगे। वह बार बार कहने लगा, 'ठाकुर जी, आओ, भोग पा लो, बड़ी देर हो गई; अब और मुझसे बैठा नहीं जाता।' ठाकुर जी क्यों उत्तर देने लगे? तब बच्चे ने रोना शुरू कर दिया, कहने लगा, 'ठाकुर जी, पिता जी तुम्हें खिलाने के लिए कह गए हैं, तुम क्यों नहीं आओगे? क्यों मेरे पास नहीं खाओगे?' व्याकुल होकर ज्योंही कुछ देर तक वह रोया कि ठाकुरजी हँसते हँसते आकर हाज़िर हो गए और आसन पर बैठकर भोग पाने लगे। ठाकुरजी को खिलाकर जब वह ठाकुर-घर से गया, तब घरवालों ने कहा, भोग हो गया हो तो वह सब उतार के

आ। बच्चे ने कहा, हाँ, हो गया; ठाकुरजी ने सब भोग खा लिया! उन लोगों ने कहा, अरे यह तू क्या कहता है! बच्चे ने सरलता-पूर्वक कहा, क्यों, खा तो गये हैं ठाकुर जी सब। घरवालों ने ठाकुर-घर में जाकर देखा तो छक्के छूट गये।"

शाम होने को अभी देर है। श्रीरामकृष्ण नौबत-खाने के दक्षिण ओर खड़े हुए मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं। सामने गङ्गा है। जाड़े का समय है। श्रीरामकृष्ण ऊनी कपड़ा पहने हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण—पञ्चवटी-वाले घर में सोओगे?

मणि—क्या ये लोग नौबत-खाने के ऊपर का कमरा न देंगे?

श्रीरामकृष्ण खजांची से मणि की बात कहेंगे। रहने के लिए एक घर ठीक कर देंगे। मणि को नौबतखाने के ऊपर का कमरा पसन्द आया है। वे हैं भी कविता-प्रिय मनुष्य। नौबतखाने से आकाश, गङ्गा, चाँदनी, फूलों के पेड़, ये सब दीख पड़ते हैं।

श्रीरामकृष्ण—देंगे क्यों नहीं? मैं पंचवटी-वाला घर इसलिए कह रहा हूँ कि वहाँ बहुत राम-नाम और ईश्वर-चिन्तन किया गया है।

(३)

ईश्वर से प्रेम करो।

श्रीरामकृष्ण के घर में धूप दिया गया है। उसी छोटी खाट पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हुए हैं। राखाल, लाटू, रामलाल ये भी कमरे के अन्दर हैं।

श्रीरामकृष्ण मणि से कह रहे हैं, बात है उन पर भक्ति करना— उन्हें प्यार करना। फिर उन्होंने रामलाल से गाने के लिए कहा। रामलाल मधुर कण्ठ से गाने लगे। श्रीरामकृष्ण हर गाने का पहला चरण कह दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण के कहने पर रामलाल पहले श्रीगौरांग का संन्यास गा रहे हैं। गीत का आशय नीचे दिया जाता है—

"केशव भारती के कुटीर में मैंने कैसी अपूर्व-ज्योति गौरांगमूर्ति देखी! उनके दोनों नेत्रों में शत धाराओं से होकर प्रेम बह रहा है। मत्त मातंग के सदृश श्रीगौरांग कभी तो प्रेमावेश में नाचते हुए गाते हैं, कभी धूल में लोटते हैं, कभी आँसुओं में बहते हैं। वे रोते हुए हरिनाम-कीर्तन कर रहे हैं। उनके कीर्तन का उच्च स्वर स्वर्ग और मर्त्य-लोक को भी हिला रहा है। कभी वे दाँतों में तृण दबाकर, हाथ जोड़, बार बार दासता से मुक्त कर देने के लिए परमात्मा से प्रार्थना कर रहे हैं। अपने घूँघरवाले बालों को मुड़ाकर उन्होंने योगी का वेश धारण किया है। उनकी भक्ति और प्रेमावेश को देखकर जी रो उठता है। जीवों के दुःख से दुःखी होकर, सर्वस्व तक का त्याग करके वे प्रेम प्रदान करने के लिए आए हैं।"

रामलाल ने एक गाना फिर गाया। इसमें श्रीगौरांगदेव की माता का विलाप है। इसके पश्चात् एक गाना और हुआ। श्रीरामकृष्ण राम-लाल से फिर गाने के लिए कह रहे हैं। इस बार रामलाल के साथ श्रीरामकृष्ण भी गा रहे हैं। गीत का भावार्थ—

"हे प्रभु श्रीगौरांग और नित्यानन्द, तुम दोनों भाई बड़े ही दयालु

हो ! यही सुनकर मैं यहाँ आया हूँ । मैं काशी गया था । वहाँ विश्वेश्वरजी ने मुझसे कहा है, वे परब्रह्म इस समय शची देवी के घर में हैं । हे परब्रह्म ! मैंने तुम्हें पहचान लिया है । मैं कितनी ही जगह गया, परन्तु इस तरह के दयासागर और कहीं मेरी दृष्टि में नहीं पड़े । तुम दोनों व्रज-मण्डल में कृष्ण-बलराम थे । अब नदिया में आकर श्रीगौरांग और नित्यानन्द हुए हो । तुम्हारी व्रज की क्रीड़ा थी दौड़-धूप और अब यहाँ नदिया में तुम्हारी क्रीड़ा है धूल में लोटपोट हो जाना । व्रज में तुम्हारी क्रीड़ा ज़ोर ज़ोर की किलकारियाँ थीं और आज नदिया में तुम्हारी क्रीड़ा है नाम-कीर्तन । तुम्हारे सब और और अङ्ग तो छिप गये हैं, परन्तु दोनों बंकिम नेत्र अब भी हैं । तुम्हारा पतित-पावन नाम सुनकर मेरे हृदय में बहुत बड़ा भरोसा हो गया है । मैं बड़ी आशा से यहाँ दौड़ा हुआ आया हूँ । तुम अपने चरणों की शीतल छाया में मुझे स्थान दो । जगाई और मधाई जैसे पाखंडी भी तर गये हैं; प्रभो, यही भरोसा मुझे भी है । मैंने सुना है, तुम दोनों चाण्डालों को भी हृदय से लगा लेते हो, हृदय से लगाकर नाम-कीर्तन करते हो ।"

परिच्छेद ३९

जीवनोद्देश्य—ईश्वरदर्शन

(१)

प्रह्लाद-चरित्र श्रवण तथा भावावेश। स्त्री-संग निन्दा। निष्काम कर्म।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में उसी पूर्व-परिचित कमरे में जमीन पर बैठे हुए प्रह्लाद-चरित्र सुन रहे हैं। दिन के आठ बजे होंगे। श्रीयुत रामलाल भक्तमाल-ग्रन्थ से प्रह्लाद-चरित्र पढ़ रहे हैं।

आज शनिवार, अगहन की कृष्ण प्रतिपदा है, १५ दिसम्बर, १८८३। मणि दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण की पदच्छाया में ही रहते हैं। वे भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए प्रह्लाद-चरित्र सुन रहे हैं। कमरे में श्रीयुत राखाल, लाटू, हरीश भी हैं,—कोई बैठे हुए सुन रहे हैं, कोई आना-जाना कर रहे हैं। हाजरा बरामदे में हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रह्लाद-चरित्र की कथा सुनते सुनते भावावेश में आ रहे हैं। जब हिरण्यकशिपु का वध हो गया, तब नृसिंह की रुद्र मूर्ति देख और उनका सिंहनाद सुनकर ब्रह्मादि देवताओं ने प्रलय की आशंका से प्रह्लाद को ही उनके पास भेजा। प्रह्लाद बालक की तरह स्तव कर रहे हैं! 'अहा! भक्त का कैसा प्यार है' कहकर श्रीरामकृष्ण भाव-समाधि में लीन हो गये। देह निःस्पन्द हो गई है, आँखों की कोरों में प्रेमाश्रु दिखाई पड़ रहे हैं। भाव का उपशम हो जाने पर श्रीरामकृष्ण

उसी छोटी खाट पर जा बैठे। मणि जमीन पर बैठे। श्रीरामकृष्ण उनसे बातचीत कर रहे हैं। ईश्वर के मार्ग पर रहकर जो लोग स्त्री-संग करते हैं, उनके प्रति श्रीरामकृष्ण घृणा और क्रोध प्रगट कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—लाज भी नहीं आती,— लड़के हो गये और स्त्री-संग ! घृणा भी नहीं होती,—पशुओं का सा व्यवहार ! थूक, खून, मल, मूत्र—इन पर घृणा भी नहीं होती ! जो ईश्वर के पादपद्मों की चिन्ता करता है, उसके निकट परम सुन्दरी स्त्री भी चिता-भस्म के समान जान पड़ती है। जो शरीर नहीं रहेगा —जिसके भीतर कृमि, क्लेद, श्लेष्मा— सब तरह की नापाक चीज़ें भरी हुई हैं, उसी को लेकर आनन्द ! लज्जा भी नहीं आती !

मणि चुपचाप सिर झुकाये हुए हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे—

श्रीरामकृष्ण—उनके प्रेम का एक बिन्दु भी यदि किसी को मिल गया तो कामिनी-कांचन अत्यन्त तुच्छ जान पड़ते हैं। जब मिस्री का शरबत मिल जाता है, तब शीरे का शरबत नहीं सुहाता। व्याकुल होकर उनसे प्रार्थना करने पर, उनके नाम-गुण का सदा कीर्तन करने पर, क्रमशः उन पर वैसा ही प्यार हो जाता है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त हो कमरे के भीतर नाचते हुए टहलने और गाने लगे।

दस के करीब बजे होंगे। श्रीयुत रामलाल ने काली-मन्दिर की नित्य पूजा समाप्त कर दी है। श्रीरामकृष्ण माता के दर्शन करने के लिए काली-मन्दिर जा रहे हैं। साथ मणि भी हैं। मन्दिर में प्रवेश कर श्रीराम-

कृष्ण आसन पर बैठ गये। माता के चरणों पर दो-एक फूल उन्होंने अर्पित किये। अपने मस्तक पर फूल रखकर ध्यान कर रहे हैं। अब गीत गाकर माता की स्तुति करने लगे।

"हे शंकरि, मैंने सुना है तुम्हारा नाम भवहरा भी है। इसीलिए, माँ, मैंने तुम्हें अपना भार दे दिया है,—तुम तारो चाहे न तारो।"

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर से लौटकर अपने कमरे के दक्षिण-पूर्व-वाले बरामदे में बैठे। दिन के दस बजे का समय होगा। अब भी देवताओं का भोग या भोग-आरती नहीं हुई। माता काली और श्रीराधा-कान्त के प्रसादी फल-मूल-आदि से कुछ लेकर श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा जल-पान किया। राखाल-आदि भक्तों को भी थोड़ा-थोड़ा प्रसाद मिल चुका है।

श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए राखाल Smile's Self-Help पढ़ रहे हैं—Lord Erskine के सम्बन्ध में।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—इसमें क्या लिखा है?

मास्टर—साहब फल की आकांक्षा न करके कर्तव्य-कर्म करते थे—यही लिखा है। निष्काम कर्म।

श्रीरामकृष्ण—तब तो अच्छा है। परन्तु पूर्ण ज्ञान का लक्षण है कि एक भी पुस्तक साथ न रहेगी। जैसे शुकदेव—उनका सब कुछ जिह्वा पर।

"पुस्तकों और शास्त्रों में शक्कर के साथ बालू भी मिली हुई है। साधु शक्कर भर का हिस्सा ले लेता है, बालू छोड़ देता है। साधु सार पदार्थ लेता है।"

वैष्णवचरण कीर्तनियाँ (कीर्तन गाने वाले) आये हुए हैं; उन्होंने 'सुबोल-मिलन' नाम का कीर्तन गाकर सुनाया।

कुछ देर बाद श्रीयुत रामलाल ने थाली में श्रीरामकृष्ण के लिए प्रसाद ला दिया। प्रसाद पाकर श्रीरामकृष्ण कुछ विश्राम करने लगे।

रात में मणि नौबत-खाने में सोएँगे। श्री माताजी जब श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए आती थीं तब इसी नौबत-खाने में रहती थीं। कई मास हुए वे कामारपुकुर गई हैं।

(२)

ब्रह्मज्ञान का एकमात्र मार्ग। योगभ्रष्ट।

श्रीरामकृष्ण मणि के साथ पश्चिमवाले गोल बरामदे में आए हैं। सामने दक्षिण-वाहिनी भागीरथी है। पास ही कनेर, बेला, जूही, गुलाब, कृष्णचूड़ा आदि अनेक प्रकार के फूले हुए पेड़ हैं। दिन के दस बजे होंगे।

आज रविवार, अगहन की कृष्ण द्वितीया है—१६ दिसम्बर, १८८३।

श्रीरामकृष्ण मणि को देख रहे हैं और गा रहे हैं—(भाव)

"माँ तारा, मुझे तारना होगा, मैं शरणागत हूँ। पिंजड़े के पक्षी जैसी मेरी दशा हो रही है।......"

"क्यों?—पिंजड़े की चिड़िया की तरह क्यों होगे? छिः!"

कहते ही कहते भावावेश में आ गए। शरीर, मन, सब स्थिर है; आँखों से धारा बह चली है।

कुछ देर बाद कह रहे हैं, माँ, सीता की तरह कर दो। बिलकुल सब भूल जाऊँ—देह, स्त्री-पुरुष-भेद—हाथ—पैर—स्तन—किसी तरह का होश नहीं! एकमात्र चिन्ता—'राम कहाँ!'

किस तरह व्याकुल होने पर ईश्वर-लाभ होता है, मणि को इसकी शिक्षा देने के लिए ही मानो श्रीरामकृष्ण के मन में सीता का उद्दीपन हुआ था। सीता राममय-जीविता थीं,—श्रीरामचन्द्र की चिन्ता में ही वे पागल हो रही थीं,—इतनी प्रिय वस्तु जो देह है उसे भी वे भूल गई थीं।

दिन के तीसरे प्रहर के चार बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उसी कमरे में बैठे हुए हैं। जनाई के एक मुखर्जी बाबू आये हुए हैं,—ये श्रीयुत प्राणकृष्ण के आत्मीय हैं। उनके साथ एक शास्त्रज्ञ ब्राह्मण मित्र हैं। मणि, राखाल, लाटू, हरीश, योगीन्द्र आदि भक्त भी हैं।

योगीन्द्र दक्षिणेश्वर के सावर्ण चौधरियों के यहाँ के हैं। ये आजकल प्रायः रोज दिन ढलने पर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आते हैं और रात को चले जाते हैं। योगीन्द्र ने अभी विवाह नहीं किया।

मुखर्जी (प्रणाम करके)—आपके दर्शनों से बड़ा आनन्द हुआ।

श्रीरामकृष्ण—वे सभी के भीतर हैं, वही सोना सब के भीतर है, कहीं प्रकाश ज्यादा है। संसार में उस पर बहुत मिट्टी पड़ी रहती है।

मुखर्जी (सहास्य)—महाराज, ऐहिक और पारमार्थिक में अन्तर क्या है?

श्रीरामकृष्ण—साधना के समय 'नेति' 'नेति' करके त्याग करना पड़ता है। उन्हें पा लेने पर समझ में आता है, सब कुछ वही हुए हैं।

"जब श्रीरामचन्द्र को वैराग्य हुआ, तब दशरथ को बड़ी चिन्ता हुई; वे वशिष्ठजी की शरण में गये, जिससे राम संसार का त्याग न करें। वशिष्ठजी ने श्रीरामचन्द्र के पास जाकर देखा, वे वीतराग हुए बैठे थे—अन्तर तीव्र वैराग्य से भरा हुआ था। वशिष्ठजी ने कहा, राम तुम संसार का त्याग क्यों करोगे? संसार क्या कोई उनसे अलग वस्तु है? मेरे साथ विचार करो। राम ने देखा, संसार भी उसी परब्रह्म से हुआ है, इसलिए चुपचाप बैठे रहे।

"जैसे जिस चीज़ से मट्ठा होता है, उसी से मक्खन भी होता है। अतएव मट्ठे का ही मक्खन और मक्खन का ही मट्ठा कहना चाहिए। बड़ी कठिनाइयों से मक्खन उठा लेने पर (अर्थात् ब्रह्मज्ञान होने पर) देखोगे, मक्खन रहने से मट्ठा भी है। जहाँ मक्खन है वहीं मट्ठा है। ब्रह्म हैं, इस ज्ञान के रहने से जीव, जगत्, चतुर्विंशति तत्त्व भी हैं।

"ब्रह्म क्या वस्तु है, यह कोई मुँह से नहीं कह सकता। सब वस्तुएँ जूठी हो गई हैं, परन्तु ब्रह्म क्या है, यह कोई मुँह से नहीं कह सका, इसीलिए यह जूठा नहीं हुआ। यह बात मैंने विद्यासागर से कही थी। विद्यासागर सुनकर बड़े प्रसन्न हुए।

"विषय-बुद्धि का लेशमात्र रहते भी यह ब्रह्मज्ञान नहीं होता। कामिनी-कांचन का भाव जब मन में बिलकुल न रहेगा, तब होगा। पार्वतीजी ने पर्वत-राज से कहा, 'पिताजी, अगर आप ब्रह्मज्ञान चाहते हैं तो साधुओं का संग कीजिए।"

श्रीरामकृष्ण फिर मुखर्जी से कह रहे हैं—

"तुम्हारे धन-सम्पत्ति भी है और ईश्वर को भी पुकारते जाते हो, यह बहुत अच्छा है। गीता में है—जो लोग योगभ्रष्ट हो जाते हैं वही भक्त होकर धनी के घर जन्म लेते हैं।"

मुखर्जी (अपने मित्र से, सहास्य)—"शुचीनां श्रीमतां गेहे योग-भ्रष्टोऽभिजायते !"

श्रीरामकृष्ण—वे चाहें तो ज्ञानी को संसार में भी रख सकते हैं। उन्हीं की इच्छा से यह जीव-प्रपंच हुआ है। वे इच्छामय हैं।

मुखर्जी (सहास्य)—उनकी फिर कैसी इच्छा। क्या उन्हें भी कोई अभाव है ?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—इसमें दोष ही क्या है ? पानी स्थिर रहे तो भी वह पानी है और तरंगें उठने पर भी वह पानी ही है।

"साँप चुपचाप कुण्डली बाँधकर बैठा रहे, तो भी वह साँप है और तिर्यग्-गति हो टेढ़ा-मेढ़ा रेंगने से भी वह साँप ही है।

"बाबू जब चुपचाप बैठे रहते हैं, तब वे जो मनुष्य हैं, वही मनुष्य वे उस समय भी हैं जब वे काम करते हैं।

"जीव-प्रपंच को अलग कैसे कर सकते हो ? इस तरह वजन तो घट जायगा ! बेल के बीज और खोपड़ा निकाल देने से कुल बेल का वज़न ठीक नहीं उतरता।

"ब्रह्म निर्लिप्त हैं। सुगन्ध और दुर्गन्ध वायु से मिलती है, परन्तु वायु निर्लिप्त है। ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। उसी आद्याशक्ति से जीव-प्रपंच बना है।"

मुखर्जी—योगभ्रष्ट क्यों होते हैं?

श्रीरामकृष्ण—'जब मैं गर्भ में था तब योग में था, पृथ्वी पर गिरते ही मिट्टी खाई। धाई ने तो मेरा नार काटा; पर यह माया की बेड़ी कैसे काटूँ!'

"कामिनी-कांचन ही माया है। मन से इन दोनों के जाते ही योग होता हैं। आत्मा—परमात्मा चुम्बक-पत्थर है, जीवात्मा एक सुई है—उनके खींच लेने ही से योग हो गया; परन्तु सुई में अगर मिट्टी लगी हुई हो, तो चुम्बक उसे नहीं खींचता—मिट्टी साफ कर देने से फिर खींचता है।

"कामिनी-कांचन मिट्टी है, इसे साफ करना चाहिए।"

मुखर्जी—यह किस तरह साफ हो?

श्रीरामकृष्ण—उनके लिए व्याकुल होकर रोओ। वही जल मिट्टी पर गिरने से मिट्टी धुल जायगी। जब खूब साफ हो जायगी तब चुम्बक खींच लेगा। योग तभी होगा।

मुखर्जी—अहा! कैसी बात है!

श्रीरामकृष्ण—उनके लिए रो सकने पर उनके दर्शन भी होंगे और समाधि भी होगी। योग में सिद्ध होने से ही समाधि होती है। रोने से कुम्भक आप ही आप होता है।—उसके बाद समाधि।

"एक उपाय और है—ध्यान। सहस्रार (मस्तक) में विशेष रूप से शिव का अधिष्ठान है—उसका ध्यान। शरीर आधार है और मन-बुद्धि जल। इस पानी पर उस सच्चिदानन्द सूर्य का बिम्ब गिरता है! उसी बिम्ब-सूर्य का ध्यान करते करते उनकी कृपा से यथार्थ सूर्य के भी दर्शन होते हैं।

साधुसंग करो और आम-मुखत्यारी दे दो।

"परन्तु संसारी मनुष्यों के लिए तो सदा ही साधुसंग की आवश्यकता है। यह सब के लिए है, संन्यासियों के लिए भी; परन्तु संसारियों के लिए तो विशेष कर यह आवश्यक है। रोग लगा ही हुआ है—कामिनी-कांचन में सदा ही रहना पड़ना है।

मुखर्जी—जी हाँ, रोग लगा ही हुआ है।

श्रीरामकृष्ण—उन्हें आम-मुखत्यारी दे दो—वे जो चाहें सो करें। तुम बिल्ली के बच्चे की तरह उन्हें पुकारते भर रहो—व्याकुल होकर। उसकी माँ उसे चाहे जहाँ रक्खे—वह कुछ भी नहीं जानता,—कभी बिस्तर पर रखती—कभी भुसौरे में!

मुखर्जी—गीता आदि शास्त्र पढ़ना अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण—केवल पढ़ने-सुनने से क्या होगा? किसी ने दूध का नाम मात्र सुना है, किसी ने दूध देखा है और किसी ने दूध पिया है। लोग ईश्वर के दर्शन करते हैं और उनसे वार्तालाप भी करते हैं।

"पहले प्रवर्तक है। वह पढ़ता सुनता है। इसके बाद साधक है, उन्हें पुकारता है, ध्यान-चिन्तन और नाम-गुण-कीर्तन करता है। इसके

बाद सिद्ध—उसे उनका आभास मिला है, उनके दर्शन हुए हैं। इसके बाद है सिद्ध का सिद्ध, जैसे चैतन्यदेव की अवस्था—कभी वात्सल्य और कभी मधुर भाव।"

मणि, राखाल, योगीन्द्र, लाटू आदि भक्तगण—ये सब देवदुर्लभ तत्त्व-कथाएँ आश्चर्यचकित होकर सुन रहे हैं।

अब मुखर्जी और उनके साथवाले विदा होंगे। वे सब प्रणाम करके खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण भी, शायद उन्हें सम्मान दिखाने के उद्देश्य से खड़े हो गये।

मुखर्जी (सहास्य)—आपके लिए उठना और बैठना!

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—उठने और बैठने में हानि ही क्या है! पानी स्थिर होने पर भी पानी है और हिलने-डुलने पर भी पानी ही है। आँधी में जूठा पत्ता, हवा चाहे जिस ओर उड़ा ले जाय। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं।

(३)

श्रीरामकृष्ण का दर्शन और वेदान्त-तत्त्वों की गूढ़ व्याख्या। अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद। क्या जगत् मिथ्या है?

जनाई के मुखर्जी चले गए। मणि सोच रहे हैं, वेदान्त दर्शन के मत से सब स्वप्नवत् है। तो क्या जीव, जगत्, मैं, यह सब मिथ्या है!

कुछ देर बाद ही श्रीरामकृष्ण मणि के साथ अकेले पश्चिमवाले गोल बरामदे में बातचीत कर रहे हैं।

मणि—क्या संसार मिथ्या है ?

श्रीरामकृष्ण—मिथ्या क्यों है ?—वह सब विचार की बात है ।

"पहले पहल 'नेति' 'नेति' विचार करते समय, वे न जीव हैं, न जगत् हैं, न चौबीसों तत्त्व हैं, ऐसा हो जाता है,—यह सब स्वप्नवत् हो जाता है । इसके बाद अनुलोम विलोम होता है, तब वही जीव-जगत् हुए हैं, यह ज्ञान हो जाता है ।

"तुम एक-एक करके सीढ़ियों से छत पर गये । परन्तु जब तक तुम्हें छत का ज्ञान है, तब तक सीढ़ियों का ज्ञान भी है । जिसे ऊँचे का ज्ञान है उसे नीचे का भी ज्ञान है ।

"फिर छत पर चढ़कर तुमने देखा, जिस चीज़ से छत बनी हुई है—ईंट, चूना, मसाला—उसी चीज़ से सीढ़ियाँ भी बनी हैं ।

"और जैसे बेल की बात कही थी ?

"जिसका 'अटल' है, उसका 'टल' भी है ।

'मैं' नहीं जाने का । 'मैं-घट' जब तक है, तब तक जीवप्रपंच भी है । उन्हें प्राप्त कर लेने पर देखा जाता है, जीव-प्रपंच वही हुए हैं ।—केवल विचार से नहीं होता ।

"शिव की दो अवस्थाएँ हैं । जब वे समाधिस्थ हैं—महायोग में बैठे हुए हैं—तब आत्माराम हैं । फिर जब उस अवस्था से उतर आते हैं—थोड़ा-सा 'मैं' रहता है, तब 'राम-राम' कहकर नृत्य करते हैं ।"

शाम हो गई है। श्रीरामकृष्ण जगन्माता का नाम और उनका चिन्तन कर रहे हैं। भक्तगण भी निर्जन में जाकर अपना-अपना ध्यान-जप करने लगे। इधर श्रीठाकुरवाड़ी में, कालीजी के मन्दिर में, श्रीराधा-कान्तजी के मन्दिर में और बारहों शिवालयों में आरती होने लगी।

आज कृष्णपक्ष की द्वितीया है। सन्ध्या के कुछ समय बाद चन्द्रोदय हुआ। वह चाँदनी, मन्दिर-शीर्ष चारों ओर के पेड़-पौधों और मन्दिर के पश्चिम ओर भागीरथी के वक्षःस्थल पर पड़कर अपूर्व शोभा धारण कर रही है। इस समय उसी पूर्वपरिचित कमरे में श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। जमीन पर मणि बैठे हुए हैं। शाम होते-होते वेदान्त के सम्बन्ध की जो बात मणि ने उठाई थी उसी के बारे में श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—संसार मिथ्या क्यों होने लगा। यह सब विचार की बात है। उनके दर्शन हो जाने पर ही समझ में आता है कि जीव-प्रपंच सब वही हुए हैं।

"मुझे माँ ने काली-मन्दिर में दिखलाया कि माँ ही सब कुछ हुई हैं। दिखाया, सब चिन्मय है। प्रतिमा चिन्मय है! संगमर्मर पत्थर—सब कुछ चिन्मय है!

"मन्दिर के भीतर मैंने देखा, सब मानो रस से भरपूर है—सच्चिदानन्द-रस से। भीतर उनकी शक्ति जलजलाती हुई देखी!

"इसलिए तो मैंने बिल्ली को उनके भोग की पूड़ियाँ खिलाई थीं। देखा, माँ ही सब कुछ हुई हैं—बिल्ली भी। तब खजानची ने मथुरबाबू

को लिखा कि भट्टाचार्य महाशय भोग की पूड़ियाँ बिल्लियों को खिलाते हैं। मथुरबाबू मेरी अवस्था समझते थे। चिट्ठी के उत्तर में उन्होंने लिखा, वे जो कुछ करें, उसमें कुछ बाधा न देना।

"उन्हें पा जाने पर यह सब ठीक-ठीक दीख पड़ता है; वही जीव, जगत्, चौबीसों तत्त्व—यह सब हुए हैं।

"परन्तु, यदि वे 'मैं' को बिलकुल मिटा दें, तो तब क्या होता है, यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। जैसा रामप्रसाद ने कहा है—'तब तुम अच्छी हो या मैं अच्छा हूँ यह तुम्हीं समझना।'

"वह अवस्था भी मुझे कभी-कभी होती है।

"विचार करने से एक तरह का दर्शन होता है और जब वे दिखा देते हैं तब एक दूसरे तरह का।"

(४)

जीवनोद्देश्य—ईश्वरदर्शन। उपाय—प्रेम।

दूसरे दिन सोमवार, १७ दिसम्बर, १८८३। सबेरे आठ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण उसी कमरे में बैठे हुए हैं। राखाल, लाटू आदि भक्त भी हैं। मणि जमीन पर बैठे हैं। श्रीयुत मधु डाक्टर भी आये हुए हैं। वे श्रीरामकृष्ण के पास उसी छोटी खाट पर बैठे हैं। मधु डाक्टर वयोवृद्ध हैं—श्रीरामकृष्ण को कोई बीमारी होने पर प्रायः ये आकर देख जाया करते हैं। स्वभाव के बड़े रसिक हैं।

श्रीरामकृष्ण—बात है सच्चिदानन्द पर प्रेम। कैसा प्रेम!—

ईश्वर को किस तरह प्यार करना चाहिए ? गौरी पण्डित कहता था, राम को जानना हो तो सीता की तरह होना चाहिए; भगवान् को जानने के लिए भगवती की तरह होना चाहिए। भगवती ने शिव के लिए जैसी कठोर तपस्या की थी, वैसी ही तपस्या करनी चाहिए। पुरुष को जानने का अभिप्राय हो तो प्रकृति-भाव का आश्रय लेना पड़ता है—सखीभाव, दासीभाव, मातृभाव।

"मैंने सीतामूर्ति के दर्शन किये थे। देखा, सब मन राम में ही लगा हुआ है। योनि, हाथ, पैर, कपड़े-लत्ते, किसी पर दृष्टि नहीं है। मानो जीवन ही राममय है—राम के बिना रहे, राम को बिना पाए, जी नहीं सकती।"

मणि—जी हाँ, जैसे पागलनी !

श्रीरामकृष्ण—उन्मादिनी !—अहा ! ईश्वर को प्राप्त करना हो तो पागल होना पड़ता है।

"कामिनी-कांचन पर मन के रहने से नहीं होता। कामिनी के साथ रमण—इसमें क्या सुख है ?—ईश्वर-दर्शन होने पर रमण-सुख का करोड़ गुना आनन्द होता है। गौरी कहता था, महाभाव होने पर शरीर के सब छिद्र—रोमकूप भी—महायोनि हो जाते हैं। एक-एक छिद्र में आत्मा के साथ आत्मा का रमणसुख होता है !

"व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। गुरु के श्रीमुख से सुन लेना चाहिए कि वे क्या करने से मिलेंगे।

"गुरु तभी मार्ग बतला सकेंगे जब वे स्वयं पूर्णज्ञानी होंगे।

" पूर्णज्ञान होने पर वासना चली जाती है। पाँच वर्ष के बालक का सा स्वभाव हो जाता है। दत्तात्रेय और जड़-भरत, ये बाल-स्वभाव के थे।"

मणि—जी हाँ, और भी कितने ही ज्ञानी इनकी तरह के हो गये हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ज्ञानी की सब वासना चली जाती है।—जो कुछ रह जाती है, उसमें कोई हानि नहीं होती। पारस पत्थर के छू जाने पर तलवार सोने की हो जाती है, फिर उस तलवार से हिंसा का काम नहीं होता। इसी तरह ज्ञानी में काम-क्रोध की छाया मात्र रहती है, नाम मात्र—उससे कोई अनर्थ नहीं होता।

मणि—आप जैसा कहा करते हैं, ज्ञानी तीनों गुणों से परे हो जाता है। सत्त्व, रजः और तमः—किसी गुण के वश में वह नहीं रहता।

श्रीरामकृष्ण—इस बात की धारणा करनी चाहिए।

मणि—पूर्णज्ञानी संसार में शायद तीन चार मनुष्यों से अधिक न होंगे।

श्रीरामकृष्ण—क्यों ! पश्चिम के मठों में तो बहुत से साधुसंन्यासी दीख पड़ते हैं।

मणि—जी, इस तरह का संन्यासी तो मैं भी हो जाऊँ !

इस बात से श्रीरामकृष्ण कुछ देर तक मणि की ओर देखते रहे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—क्या, क्या सब त्याग कर !

मणि—माया के बिना गये क्या होगा ? माया को जीत न पाया तो केवल संन्यासी होकर क्या होगा ?

सब लोग कुछ समय तक चुप रहे ।

त्रिगुणातीत भक्त बालक के समान ।

मणि—अच्छा, त्रिगुणातीत भक्ति किसे कहते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—उस भक्ति के होने पर भक्त सब चिन्मय देखता है । चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम—भक्त भी चिन्मय—सब चिन्मय ! ऐसी भक्ति कम लोगों को होती है ।

डाक्टर मधु (सहास्य)—त्रिगुणातीत भक्ति, अर्थात् भक्त किसी गुण के वश में नहीं ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—यह जैसे पाँच साल का लड़का—किसी गुण के वश नहीं ।

दोपहर को, भोजन के पश्चात्, [illegible] श्राम कर रहे हैं । श्रीयुत मणिलाल मल्लिक ने आकर प्रणाम किया; फिर जमीन पर बैठ गये । मणि भी जमीन पर बैठे हुए हैं । श्रीरामकृष्ण लेटे लेटे ही मणि मल्लिक के साथ बीच-बीच में एक-एक बात कह रहे हैं ।

मणि मल्लिक—आप केशव सेन को देखने गये थे ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ । अब वे कैसे हैं ?

मणि मल्लिक—रोग कुछ घटता हुआ नहीं दीख पड़ता ।

श्रीरामकृष्ण—मैंने देखा, बड़ा राजसिक है,—मुझे बड़ी देर तक बैठा रक्खा, तब भेंट हुई।

श्रीरामकृष्ण उठकर बैठ गये। भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—मैं 'राम राम' कहकर पागल हो गया था। संन्यासी के देवता रामलाला को लेकर घूमता फिरता था—उसे नहलाता था, खिलाता था, सुलाता था। जहाँ कहीं जाता, साथ ले जाता था। 'रामलाला' 'रामलाला' कहकर पागल हो गया था।

परिच्छेद ४०

समाधि-तत्व

(१)

श्रीकृष्ण-भक्ति ।

श्रीरामकृष्ण सदा ही समाधिमग्न रहते हैं; केवल राखाल आदि भक्तों की शिक्षा के लिए उन्हें लेकर व्यस्त रहते हैं—जिससे उन्हें चैतन्य प्राप्त हो ।

वे अपने कमरे के पश्चिम वाले बरामदे में बैठे हैं । प्रातःकाल का समय, मंगलवार, १८ दिसम्बर १८८३ ई० । स्वर्गीय देवेन्द्रनाथ ठाकुर की भक्ति और वैराग्य की बात पर वे उनकी प्रशंसा कर रहे हैं । राखाल आदि बालक भक्तों को देखकर कह रहे हैं, " वे भले पुरुष हैं । परन्तु जो लोग गृहस्थाश्रम में प्रवेश न कर लड़कपन से ही शुकदेव आदि की तरह दिनरात ईश्वर का चिन्तन करते हैं, कौमार अवस्था में वैराग्यवान् हैं, वे धन्य हैं ।

" गृहस्थ की कोई न कोई कामना-वासना रहती ही है, यद्यपि उसमें कभी-कभी भक्ति—अच्छी भक्ति—दिखाई देती है । मथुर बाबू न जाने किस एक मुकदमे में फँस गये थे—मन्दिर में माँ काली के पास आकर मुझसे कहते हैं, ' बाबा, माँ को यह अर्घ्य दीजिए न ! '—मैंने उदार मन से दिया । परन्तु कैसा विश्वास है कि मेरे देने से ही ठीक होगा ।

" रति की माँ की इधर कितनी भक्ति है। अक्सर आकर कितनी सेवा-टहल-करती है। रति की माँ वैष्णव है। कुछ दिनों के बाद ज्योंही देखा कि मैं माँ काली का प्रसाद खाता हूँ—त्योंही उन्होंने आना बन्द कर दिया। कैसा एकांगी दृष्टिकोण है! लोगों को देखने से पहले पहल पहचाना नहीं जाता।"

श्रीरामकृष्ण कमरे के भीतर पूर्व की ओर के दरवाजे के पास बैठे हैं। जाड़े का समय। बदन पर एक ऊनी चद्दर है। एकाएक सूर्य देखते ही समाधिमग्न हो गये। आँखें स्थिर! बाहर का कुछ भी ज्ञान नहीं।

क्या यही गायत्री मन्त्र की सार्थकता है— 'तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।'

बहुत देर बाद समाधि भंग हुई। राखाल, हाजरा, मास्टर आदि पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हाजरा के प्रति)—समाधि-अवस्था की प्रेरणा भाव से ही होती है। श्याम बाजार में नटवर गोस्वामी के मकान पर कीर्तन हो रहा था—श्रीकृष्ण और गोपियों का दर्शन कर मैं समाधिमग्न हो गया! ऐसा लगा कि मेरा लिंग शरीर (सूक्ष्मशरीर) श्रीकृष्ण के पैरों के पीछे पीछे जा रहा है।

" जोड़ासाँकू हरिसभा में उसी प्रकार कीर्तन के समय समाधिस्थ होकर बाह्यशून्य हो गया था। उस दिन देहत्याग की सम्भावना थी!"

श्रीरामकृष्ण स्नान करने गये। स्नान के बाद उसी गोपी-प्रेम की

ही बात कर रहे हैं। (मणि आदि के प्रति) गोपियों के केवल उस आकर्षण को लेना चाहिए। इस प्रकार के गाने गाओ।

(संगीत—भावार्थ)

"सखि, वह वन कितनी दूर है, जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं। (मैं तो और चल नहीं सकती।) जिस घर में कृष्ण नाम लेना कठिन है उस घर में तो मैं किसी भी तरह नहीं जाऊँगी!"

(२)

यदु मल्लिक के प्रति उपदेश।

श्रीरामकृष्ण ने राखाल के लिए सिद्धेश्वरी के नाम पर कच्चे नारियल और चीनी की मन्नत की है। मणि से कह रहे हैं, 'तुम नारियल और चीनी का दाम दोगे!'

दोपहर के बाद श्रीरामकृष्ण राखाल, मणि आदि के साथ कलकत्ते के श्रीसिद्धेश्वरी-मन्दिर की ओर गाड़ी पर सवार होकर आ रहे है। रास्ते में सिमुलिया बाजा रसे कच्चा नारियल और चीनी खरीदी गई।

मन्दिर में आकर भक्तों से कह रहे हैं, 'एक नारियल काटकर चीनी मिलाकर माँ को अर्पण करो।'

जिस समय मन्दिर में आ पहुँचे, उस समय पुजारी लोग मित्रों के साथ माँ काली के सामने ताश खेल रहे थे। यह देखकर श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं। देखा, ऐसे स्थानों में भी ताश! यहाँ पर तो ईश्वर का चिन्तन करना चाहिए!

अब श्रीरामकृष्ण यदु मल्लिक के घर पर पधारे हैं। उनके साथ अनेक बाबू लोग आये हैं।

यदु बाबू कह रहे हैं, "पधारिए, पधारिए।" आपस में कुशल प्रश्न के बाद श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—तुम इतने चापलूसों को क्यों रखते हो?

यदु (हँसते हुए)—इसलिए कि आप उनका उद्धार करें। (सभी हँसने लगे।)

श्रीरामकृष्ण—चापलूस लोग समझते हैं कि बाबू उन्हें खुले हाथ धन दे देंगे; परन्तु बाबू से धन निकालना बड़ा कठिन काम है। एक सियार एक बैल को देख उसका फिर साथ न छोड़े। बैल घूमता फिरता है, सियार भी साथ साथ है। सियार ने समझा कि बैल का जो अण्डकोष लटक रहा है, वह कभी न कभी गिरेगा और उसे वह खायेगा! बैल कभी सोता है तो वह भी उसके पास ही लेटकर सो जाता है और जब बैल उठकर घूम फिर कर चरता है तो वह भी साथ साथ रहता है। कितने ही दिन इसी प्रकार बीते, परन्तु वह कोष न गिरा, तब सियार निराश होकर चला गया! (सभी हँसने लगे।) इन चापलूसों की ऐसी ही दशा है!

यदु बाबू और उनकी माँ ने श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों को जल-पान कराया।

(३)

निराकार साधना।

श्रीरामकृष्ण बेल के पेड़ के पास खड़े हुए मणि से बातचीत कर रहे हैं। दिन के नौ बजे होंगे।

आज बुधवार है, १९ दिसम्बर, अगहन की कृष्ण पञ्चमी।

इस बेल के पेड़ के नीचे श्रीरामकृष्ण ने तपस्या की थी। यह स्थान अत्यन्त निर्जन है। इसके उत्तर तरफ बारूदखाना और चारदीवार है, पश्चिम तरफ झाऊ के पेड़, जो हवा के झोकों से हृदय में उदासीनता भर देनेवाली सनसनाहट पैदा करते हैं। आगे हैं भागीरथी। दक्षिण की ओर पञ्चवटी दिखाई पड़ रही है। चारों ओर इतने पेड़-पत्ते हैं कि देवालय पूर्ण तरह से दिखाई नहीं आते।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—कामिनी-कांचन का त्याग किए बिना कुछ होने का नहीं।

मणि—क्यों ? वशिष्ठदेव ने तो श्रीरामचन्द्र से कहा था—राम, संसार अगर ईश्वर से अलग हो तो संसार का त्याग कर सकते हो।

श्रीरामकृष्ण (ज़रा हँसकर)—वह रावण-वध के लिए कहा था; इसीलिए राम को संसार में रहना पड़ा और विवाह भी करना पड़ा।

मणि काठ की मूर्ति की तरह चुपचाप खड़े रहे।

श्रीरामकृष्ण यह कहकर अपने कमरे में लौट जाने के लिए पञ्चवटी की ओर जाने लगे। पञ्चवटी के नीचे आप मणि से फिर वार्तालाप करने लगे। दस बजे का समय होगा।

मणि—अच्छा, क्या निराकार की साधना नहीं होती ?

श्रीरामकृष्ण—होती क्यों नहीं ? वह रास्ता बड़ा कठिन है। पहले के ऋषि कठिन तपस्या करके तब कहीं उसका अनुभव मात्र कर पाते थे। ऋषियों को कितनी मेहनत करनी पड़ती थी !—अपनी कुटिया से सुबह को निकल जाते थे। दिन भर तपस्या करके सन्ध्या के बाद लौटते थे। तब आकर कुछ फल-मूल खाते थे।

"'इस साधना में विषय-बुद्धि का लेशमात्र रहते सफलता न होगी। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श—ये सब विषय मन में जब बिलकुल न रह जायँ, तब मन शुद्ध होता है। वह शुद्ध मन जो कुछ है, शुद्ध आत्मा भी वही चीज़ है,—मन में कामिनी-कांचन जब बिलकुल न रह जायँ।

"तब एक और अवस्था होती है—'ईश्वर ही कर्ता है, मैं अकर्ता हूँ।' मेरे बिना काम नहीं चल सकता, ऐसे भाव जब बिलकुल नष्ट हो जायँ—सुख में भी और दुःख में भी।

"'किसी मठ के साधु को दुष्टों ने मारा था। मार खाने से बेहोश हो गया। चेतना आने पर जब उससे पूछा गया—तुम्हें कौन दूध पिला रहा है ? तब उसने कहा था, जिन्होंने मुझे मारा था वही मुझे अब दूध पिला रहे हैं।"

मणि—जी हाँ, यह जानता हूँ।

स्थित-समाधि और उन्मना-समाधि।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, सिर्फ जानने से ही न होगा,—धारणा भी होनी चाहिए।

"एक बार विषय-बुद्धि का त्याग होने पर स्थित-समाधि हो जाती है। मेरी देह स्थित-समाधि में छूट सकती है, परन्तु मुझमें भक्ति और भक्तों के साथ कुछ रहने की वासना है, इसीलिए देह पर भी कुछ दृष्टि है।

"एक और है—उन्मना-समाधि। फैले हुए मन को एकाएक समेट लेना। यह तुम समझे?"

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—फैले हुए मन को एकाएक समेट लेना, यह समाधि देर तक नहीं रहती। विषय-वासनाएँ आकर समाधि-भंग कर देती हैं—योगी योगभ्रष्ट हो जाता है।

"उस देश में दीवार के भीतर एक बिल में न्योला रहता है। बिल में जब रहता है, खूब आराम से रहता है। कोई-कोई उसकी पूँछ में कंकड़ बाँध देते हैं; तब कंकड़ के कारण बिल से निकल पड़ता है। जब-जब वह बिल के भीतर आकर आराम से बैठने की चेष्टा करता है, तब-तब कंकड़ के प्रभाव से बिल से निकल आना पड़ता है। विषयवासना भी ऐसी ही है, योगी को योगभ्रष्ट कर देती है।

"विषयी मनुष्यों को कभी-कभी समाधि की अवस्था हो सकती है। सूर्योदय होने पर कमल खिल जाता है, परन्तु सूर्य मेघों से ढक जाने पर फिर वह मुंद जाता है। विषय मेघ हैं।"

मणि—साधना करने पर क्या ज्ञान और भक्ति दोनों ही नहीं हो सकते?

श्रीरामकृष्ण—भक्ति लेकर रहने पर दोनों ही होते हैं। ज़रूरत होने पर वही ब्रह्मज्ञान देते हैं। खूब ऊँचा आधार हुआ तो एक साथ दोनों हो सकते हैं। हाँ, ईश्वर-कोटियों का होता है, जैसे चैतन्य देव का। जीव-कोटियों की अलग बात है।

"आलोक (ज्योतिः) पाँच प्रकार के हैं। दीपक का प्रकाश, भिन्न-भिन्न प्रकार की अग्नि का प्रकाश, चन्द्रमा का प्रकाश, सूर्य का प्रकाश तथा चन्द्र और सूर्य का सम्मिलित प्रकाश। भक्ति है चन्द्रमा और ज्ञान है सूर्य।

'कभी कभी आकाश में सूर्यास्त होने से पहले ही चन्द्र का उदय हो जाता है, अवतार आदि में भक्तिरूपी चन्द्रमा तथा ज्ञानरूपी सूर्य एकाधार में देखे जाते हैं।

"क्या इच्छा करने से ही सभी को एक ही समय ज्ञान और भक्ति दोनों प्राप्त होते हैं? और आधारों की भी विशेषता होती है। कोई बाँस अधिक पोला रहता है और कोई कम पोला। और फिर सभी में ईश्वर की धारणा थोड़े ही होती है। सेर भर के लोटे में क्या दो सेर दूध आ सकता है?

मणि—क्यों, उनकी कृपा से? यदि वे कृपा करें तब तो सूई के बीच में से ऊँट भी पार हो सकता है!

श्रीरामकृष्ण—परन्तु कृपा क्या यों ही होती है? भिखारी यदि एक पैसा माँगे तो दिया जा सकता है। परन्तु एकदम यदि रेल का सारा भाड़ा माँग बैठे तो?

मणि चुपचाप खड़े हैं, श्रीरामकृष्ण भी चुप हैं। एकाएक बोल उठे, 'हाँ, अवश्य, किसी-किसी पर उनकी कृपा होने से हो सकता है, दोनों बातें हो सकती हैं। सब कुछ हो सकता है।'

प्रणाम करके मणि बेलतला की ओर जा रहे हैं।

बेलतला से लौटने में दोपहर हो गया। विलम्ब देखकर श्रीरामकृष्ण बेलतला की ओर आ रहे हैं। मणि दरी, आसन, जल का लोटा लेकर लौट रहे हैं, पंचवटी के पास श्रीरामकृष्ण के साथ साक्षात्कार हुआ। उन्होंने उसी समय भूमि पर लोटकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (मणि के प्रति)—मैं जा रहा था, तुम्हें खोजने के लिए। सोचा इतना दिन चढ़ आया, कहीं दीवार फाँदकर भाग तो नहीं गया, तुम्हारी आँखें उस समय जिस प्रकार देखी थीं,—उससे सोचा, कहीं नारायण शास्त्री की तरह भाग तो नहीं गया। उसके बाद फिर सोचा, नहीं वह भागेगा नहीं। वह काफी सोच-समझकर काम करता है।

(४)

भीष्मदेव की कथा। योग कब सिद्ध होता है।

फिर रात को श्रीरामकृष्ण मणि के साथ बातें कर रहे हैं। राखाल, लाटू, हरीश आदि हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि के प्रति)—अच्छा कोई कोई कृष्ण-लीला की आध्यात्मिक व्याख्या करते हैं। तुम्हारी क्या राय है?

मणि—विभिन्न मतों के रहने से भी क्या हानि है? भीष्मदेव

की कहानी आपने कही है—शरशय्या पर देह-त्याग के समय उन्होंने कहा था, मैं रो क्यों रहा हूँ ? वेदना के लिए नहीं; जब सोचता हूँ कि साक्षात् नारायण अर्जुन के सारथी बने थे, परन्तु फिर भी पाण्डवों को इतनी विपत्तियाँ झेलनी पड़ीं, तो उनकी लीला कुछ भी समझ नहीं सका; इसीलिए रो रहा हूँ ।

"फिर हनुमान की कथा आपने सुनाई है । हनुमान कहा करते थे 'मैं वार, तिथि, नक्षत्र आदि कुछ भी नहीं जानता, मैं केवल एक राम का चिन्तन करता हूँ ।'

"आपने तो कहा है, दो चीज़ों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, ब्रह्म और शक्ति । और आपने यह भी कहा है, ज्ञान (ब्रह्मज्ञान) होने पर वे दोनों एक ही जान पड़ते हैं । 'एकमेवाद्वितीयम् ।'

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ठीक ! वस्तु प्राप्त करना है सो काँटेदार जंगल में से जाकर लो या अच्छे रास्ते से जाकर लो ।

"अनेकानेक मत अवश्य हैं । नागा (तोतापुरी) कहा करता था, मत-मतान्तर के कारण साधु-सेवा न हुई । एक स्थान पर भण्डारा हो रहा था । अनेक साधु-सम्प्रदाय थे ! सभी कहते हैं मेरी सेवा पहले हो, उसके बाद दूसरे सम्प्रदायों की । कुछ भी निश्चय न हो सका । अन्त में सभी चले गये और वेश्याओं को खिलाया गया ।"

मणि—तोतापुरी महान् व्यक्ति थे ।

श्रीरामकृष्ण—हाजरा कहते हैं मामूली । नहीं भाई, वाद-विवाद से कोई काम नहीं, सभी कहते हैं, 'मेरी घड़ी ठीक चल रही है ।'

"देखो, नारायण शास्त्री को तो प्रबल वैराग्य हुआ था। उतने बड़े विद्वान्—स्त्री को छोड़कर लापता हो गये। मन से कामिनी-कांचन का सम्पूर्ण त्याग करने से तब योग सिद्ध होता है। किसी-किसी में योगी के लक्षण दिखते हैं।

"तुम्हें षट्चक्र के बारे में कुछ बता दूँ। योगी षट्चक्र को भेद कर उनकी कृपा से उनका दर्शन करते हैं। षट्चक्र सुना है न ?"

मणि—वेदान्त मत में सप्तभूमि।

श्रीरामकृष्ण—वेदान्त मत नहीं, वेद-मत ! षट्चक्र क्या है जानते हो ? सूक्ष्म देह के भीतर सब पद्म हैं—योगीगण उन्हें देख सकते हैं। जैसे मोम के बने वृक्ष के फल, पत्ते।

मणि—जी हाँ, योगीगण देख सकते हैं। एक पुस्तक में लिखा है—एक प्रकार की काँच होती है, जिसके भीतर से देखने पर बहुत छोटी चीज़ें भी बड़ी दिखती हैं। इसी प्रकार योग-द्वारा वे सब सूक्ष्म पद्म देखे जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण ने पंचवटी के कमरे में रहने के लिए कहा है। मणि उसी कमरे में रात बिताते हैं। प्रातःकाल उस कमरे में अकेले गा रहे हैं—

(संगीत—भावार्थ)

"हे गौर, मैं साधन-भजन से हीन हूँ। मैं हीन-दीन हूँ, मुझे छूकर पवित्र कर दो ! हे गौर, तुम्हारे श्रीचरणों का लाभ होगा, इसी आशा में मेरे दिन बीत गये। (हे गौर, तुम्हारे श्रीचरण तो अभी तक नहीं पा सका !)

एकाएक खिड़की की ओर ताककर देखते हैं, श्रीरामकृष्ण खड़े हैं। "मुझे छूकर पवित्र करो, मैं दीन-हीन हूँ," यह वाक्य सुनकर श्रीरामकृष्ण की आँखों में आँसू आ गए।

फिर दूसरा गाना हो रहा है।

(संगीत—भावार्थ)

"मैं शंख का कुण्डल पहनकर गेरुआ वस्त्र पहनूँगी। मैं योगिनी के वेष में उसी देश में जाऊँगी जहाँ मेरे निर्दय हरि हैं।"

श्रीरामकृष्ण राखाल के साथ घूम रहे हैं।

परिच्छेद ४१

अवतार-तत्व

(१)

' डुबकी लगाओ ' ।

दूसरे दिन शुक्रवार २१ दिसम्बर को प्रातःकाल श्रीरामकृष्ण अकेले बेल के पेड़ के नीचे मणि के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। साधना के सम्बन्ध में अनेक गुप्त बातें तथा कामिनी-कांचन के त्याग की बातें हो रही हैं। फिर कभी कभी मन ही गुरु बन जाता है—ये सब बातें बता रहे हैं।

भोजन के बाद पंचवटी में आये हैं—वे सुन्दर पीताम्बर धारण किए हुए हैं। पंचवटी में दो-तीन वैष्णव बाबाजी आये हैं—उनमें एक बालक हैं।

तीसरे पहर एक नानकपन्थी साधु आए हैं। हरीश, राखाल भी हैं। साधु निराकारवादी! श्रीरामकृष्ण उन्हें साकार का भी चिन्तन करने के लिए कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण साधु से कह रहे हैं, "डुबकी लगाओ; ऊपर ऊपर तैरने से रत्न नहीं मिलते। और ईश्वर निराकार हैं तथा साकार भी; साकार का चिन्तन करने से शीघ्र भक्ति प्राप्त होती है। फिर निराकार का चिन्तन—जिस प्रकार चिट्ठी को पढ़कर फेंक देते हैं, और उसके बाद उसमें लिखे अनुसार काम करते हैं।

(२)

' बढ़े आओ । ' अवतार-तत्व ।

शनिवार, २२ दिसम्बर १८८३ ई०, नौ बजे सबेरे का समय होगा । बलराम के पिता आये हैं । राखाल, हरीश, मास्टर, लाटू, यहाँ पर निवास कर रहे हैं । श्यामपुकुर के देवेन्द्र घोष आये हैं । श्रीरामकृष्ण दक्षिणपूर्ववाले बरामदे में भक्तों के साथ बैठे हैं ।

एक भक्त पूछ रहे हैं—भक्ति कैसे हो ?

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता आदि भक्तों के प्रति)—बढ़े जाओ । सात फाटकों के बाद राजा विराजमान हैं । सब फाटक पार हो जाने पर ही तो राजा को देख सकोगे ।

" मैंने अन्नपूर्णा की स्थापना के समय द्वारकाबाबू से कहा था, बड़े तालाब में बड़ी बड़ी मछलियाँ हैं—गंभीर जल में । बन्सी में लगाकर खुराक डालो, उसकी सुगन्ध से बड़ी बड़ी मछलियाँ आ जाएँगी । कभी कभी उछल–कूद भी करेंगी । प्रेम-भक्ति-रूपी खुराक !

" ईश्वर नर-लीला करते हैं । मनुष्यरूप में वे अवतीर्ण होते हैं, जिस प्रकार श्रीकृष्ण, श्रीरामचन्द्र, श्रीचैतन्य देव । मैंने केशव सेन से कहा था कि मनुष्य में ईश्वर का अधिक प्रकाश है । मैदान में छोटे-छोटे गड्ढे रहते हैं । उन्हें कहते हैं ' घूँटी'; घूँटी के भीतर मछली, केंकड़े रहते हैं । मछली, केंकड़े खोजना हो तो उन घूँटियों के भीतर खोजना होता है । ईश्वर को खोजना हो तो अवतारों के भीतर खोजना चाहिए ।

" उस साढ़े तीन हाथ के मानव-देह में जगन्माता प्रकट होती है। कहा हैं :—

(संगीत—भावार्थ)

" श्यामा माँ ने कैसी कल बनाई है। साढ़े तीन हाथ के कल के भीतर कितने ही तमाशे दिखा रही है। स्वयं कल के भीतर रहकर रस्सी पकड़कर उसे घुमाती है। कल कहती है कि 'मैं' अपने आप ही घूम रही हूँ।' वह नहीं जानती कि उसे कौन घुमा रहा है। "

" परन्तु ईश्वर को जानना हो, अवतार को पहचानना हो तो साधना की आवश्यकता है। तालाब में बड़ी बड़ी मछलियाँ हैं, उनके लिए खुराक डालनी पड़ती है। दूध में मक्खन है, मन्थन करना पड़ता है। राई में तेल है, उसे पेरना पड़ता है। मेहदी से हाथ लाल होता है, उसे पीसना पड़ता है। "

भक्त (श्रीरामकृष्ण के प्रति)—अच्छा, वे साकार हैं या निराकार?

श्रीरामकृष्ण—ठहरो, पहले कलकत्ता तो जाओ, तभी तो जानोगे कि कहाँ है किले का मैदान, कहाँ एशियाटिक सोसायटी है और कहाँ बंगाल बैंक है।

" खड़दा ब्राह्मण-मुहल्ले में जाने के लिए पहले तो खड़दा पहुँचना ही होगा!

" निराकार साधना होगी क्यों नहीं? परन्तु बड़ी कठिन है। कामिनी-कांचन का त्याग हुए बिना नहीं होता! बाहर त्याग, फिर भीतर त्याग! विषय-बुद्धि का लवलेश रहते काम नहीं बनेगा।

"साकार की साधना सरल है—परन्तु उतनी सरल भी नहीं है।

"निराकार साधना तथा ज्ञानयोग की साधना की चर्चा भक्तों के पास नहीं करनी चाहिए। बड़ी कठिनाई से उसे थोड़ी सी भक्ति प्राप्त हो रही है; उसके पास यह कहने से कि सब कुछ स्वप्न-तुल्य है, उसकी भक्ति की हानि होती है।

"कबीरदास निराकारवादी थे। शिव, काली, कृष्ण को नहीं मानते थे। वे कहते थे, काली चाँवल-केला खाती है, कृष्ण गोपियों के हथेली बजाने पर बन्दर की तरह नाचते थे।' (सभी हँस पड़े।)

"निराकार साधक मानो पहले दशभुजा का, उसके बाद चतुर्भुज का, उसके बाद द्विभुज गोपाल का और अन्त में अखण्ड ज्योति का दर्शन कर उसी में लीन होते हैं!

"कहा जाता है, दत्तात्रेय, जड़भरत ब्रह्मदर्शन के बाद नहीं लौटे।

"कहते हैं कि, शुकदेव ने उस ब्रह्मसमुद्र के एक बूँद मात्र का आस्वादन किया था। समुद्र की उछल-कूद का दर्शन किया था, परन्तु समुद्र में डूबे न थे।

"एक ब्रह्मचारी ने कहा था, बद्रीकेदार के उस पार जाने से शरीर नहीं रहता। उसी प्रकार ब्रह्मज्ञान के बाद फिर शरीर नहीं रहता। इक्कीस दिनों में मृत्यु।

"दीवाल के उस पार अनन्त मैदान है। चार मित्रों ने दीवाल के उस पार क्या है, यह देखने की चेष्टा की। एक एक व्यक्ति दीवाल पर

चढ़ता है; उस मैदान को देखकर 'हो हो' करके हँसता हुआ दूसरी ओर कूद जाता है। तीन व्यक्तियों ने कोई खबर न दी। सिर्फ एक ने खबर दी। ब्रह्मज्ञान के बाद भी उसका शरीर रहा, लोक-शिक्षा के लिए—जैसे अवतार आदि का।

हिमालय के घर में पार्वती ने जन्म ग्रहण किया, और अपने अनेक रूप पिता को दिखाने लगीं। हिमालय ने कहा, 'ये सब रूप तो देखे! परन्तु तुम्हारा एक ब्रह्म-स्वरूप है—उसे एक बार दिखा दो।' पार्वती ने कहा, 'पिताजी, यदि तुम ब्रह्म-ज्ञान चाहते हो, तो संसार छोड़कर सत्संग करना पड़ेगा।'

"पर हिमालय किसी भी तरह संसार नहीं छोड़ते थे। तब पार्वती जी ने एक बार दिखाया। देखते ही गिरिराज एकदम मूर्च्छित हो गए।"

भक्तियोग।

श्रीरामकृष्ण—यह जो कुछ कहा, सब तर्क-विचार की बातें हैं। 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' यही विचार है। सब स्वप्न की तरह है! बड़ा कठिन मार्ग है। इस पथ में उनकी लीला स्वप्न जैसी मिथ्या बन जाती है। फिर 'मैं' भी उड़ जाता है। इस पथ में साधक अवतार भी नहीं मानते, बड़ा कठिन है। ये सब विचार की बातें भक्तों को अधिक सुनना नहीं चाहिए।

"इसीलिए ईश्वर अवतीर्ण होकर भक्ति का उपदेश देते हैं—शरणागत होने के लिए कहते हैं। भक्ति से उनकी कृपा से सभी कुछ हो जाता है—ज्ञान, विज्ञान सब कुछ होता है।

"वे लीला कर रहे हैं—वे भक्त के आधीन हैं। माँ भक्त की भक्ति-रूपी रस्सी से स्वयं बँधी हुई हैं।

"ईश्वर कभी चुम्बक बनते हैं, भक्त सूई होता है। फिर कभी भक्त चुम्बक और वे सूई होते हैं। भक्त उन्हें खींच लेते हैं—वे भक्त-वत्सल, भक्ताधीन हैं।

"एक मत यह है कि यशोदा तथा अन्य गोपीगण पूर्व जन्म में निराकारवादी थे। उससे उनकी तृप्ति न हुई, इसीलिए वृन्दावन-लीला में श्रीकृष्ण को लेकर आनन्द किया। श्रीकृष्ण ने एक दिन कहा, 'तुम्हें नित्यधाम का दर्शन कराऊँगा, चलो, यमुना में स्नान करने चलें!' ज्योंही उन्होंने डुबकी लगाई—एकदम गो-लोक का दर्शन! फिर उसके बाद अखण्ड ज्योति का दर्शन! तब यशोदा बोलीं, 'कृष्ण, ये सब और अधिक देखना नहीं चाहती, अब तेरे उसी मानव रूप का दर्शन करूँगी, तुझे गोदी में लूँगी, खिलाऊँगी!!'

"इसीलिए अवतार में उनका अधिक प्रकाश है। अवतार का शरीर रहते उनकी पूजा-सेवा करनी चाहिए।"

(संगीत—भावार्थ)

"वह जो कोठरी के भीतर चोर-कोठरी है, भोर होते ही वह उसमें छिप जायगा रे।"

"अवतार को सभी लोग नहीं पहचान सकते। देह धारण करने पर रोग, शोक, क्षुधा, तृष्णा, सभी कुछ होता है, ऐसा लगता है मानो

वह हमारी ही तरह है ! राम सीता के शोक में रोये थे—'पंच भूत के फन्दे में पड़कर ब्रह्म रोते हैं।'

"पुराण में कहा है, हिरण्याक्ष-वध के बाद कहते हैं वराह-अवतार बच्चों को लेकर रहने लगे—उन्हें स्तनपान करा रहे थे। (सभी हँसे।) स्वधाम में जाने का नाम तक नहीं। अन्त में शिव ने आकर त्रिशूल द्वारा उनके शरीर का विनाश किया, फिर वे दोनों हँसते हुये स्वधाम में पधारे।"

(३)

गोपियों का प्रेम।

तीसरा प्रहर है। भवनाथ आये हैं। कमरे में राखाल, मास्टर, हरीश आदि हैं। शनिवार, २२ दिसम्बर १८८३ ई०।

श्रीरामकृष्ण (भवनाथ के प्रति)—अवतार पर प्रेम होने से ही हो गया। अहा, गोपियों का कैसा प्रेम था ! यह कहकर गाना गा रहे हैं—गोपियों के भाव में—

(संगीत–भावार्थ)

(१) 'श्याम तुम प्राणों के प्राण हो !' इत्यादि

(२) 'सखि, मैं घर बिलकुल नहीं जाऊँगी !' इत्यादि

(३) 'उस दिन, जिस समय तुम बन जा रहे थे, मैं द्वार पर खड़ी थी। (प्रिय, इच्छा होती है, गोपाल बनकर तुम्हारा भार अपने सिर पर उठा लूँ !)'

"रास के बीच में जिस समय श्रीकृष्ण छिप गये, गोपिकाएँ एकदम पागल बन गईं। एक वृक्ष को देखकर कहती हैं, तुम कोई तपस्वी होगे! श्रीकृष्ण को तुमने अवश्य ही देखा होगा। नहीं तो निश्चल समाधिमग्न होकर क्यों खड़े हो?' तृणों से ढकी हुई पृथ्वी को देखकर कहती हैं, 'हे पृथ्वी, तुमने अवश्य ही उनका दर्शन किया है; नहीं तो तुम्हारे रोंगटे क्यों खड़े हुए हैं? अवश्य ही तुमने उनके स्पर्श-सुख का भोग किया होगा।' फिर माधवी लता को देखकर कहती हैं, 'हे माधवी, मुझे माधव ला दे!' गोपियों का कैसा प्रेमोन्माद है!

"जब अक्रूर आए और श्रीकृष्ण तथा बलराम मथुरा जाने के लिए रथ पर बैठे, तो गोपीगण रथ के पहिए पकड़कर कहने लगीं, जाने नहीं देंगे।"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं—

(संगीत—भावार्थ)

"रथचक्र को न पकड़ो, न पकड़ो, क्या रथ चक्र से चलता है? इस चक्र के चक्री हरि हैं, जिनके चक्र से जगत् चलता है।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—'क्या रथ चक्र से चलता है'—ये बातें मुझे बहुत ही अच्छी लगती हैं। 'जिस चक्र से ब्रह्माण्ड घूमता है!' 'रथी की आज्ञा से सारथी रथ चलाता है!'

परिच्छेद ४२

श्रीरामकृष्ण की परमहंस अवस्था

(१)

समाधि में । परमहंस अवस्था कब होती है ।

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में राखाल, लाटू, मणि, हरीश आदि भक्तों के साथ बैठे हुए हैं । दिन के नौ बजे का समय होगा । रविवार, अगहन की कृष्णा नवमी है । २३ दिसम्बर, १८८३ ।

मणि को गुरुदेव के यहाँ रहते आज दस दिन पूरे हो जायँगे ।

श्रीयुत मनोमोहन कोन्नगर से आज सुबह आये हैं । श्रीरामकृष्ण के दर्शन और कुछ विश्राम करके आप कलकत्ता जायँगे । हाजरा भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं । नीलकण्ठ के देश के एक वैष्णव आज श्रीरामकृष्ण को गाना सुना रहे हैं । वैष्णव ने पहले नीलकण्ठ का गाना गाया । (भाव)—

" श्रीगौरांग की देह तप्त-कांचन के समान है । वे नव-नटवर ही हो रहे हैं । परन्तु वे इस बार दूसरे ही स्वरूप से, अपने पहले के चिह्नों को छिपाकर नदिया में अवतीर्ण हुए हैं । कलिकाल का घोर अंधकार दूर करने के लिए तथा उन्नत और उज्ज्वल प्रेमरस के लिए तुम इस बार श्रीकृष्णावतार की नीली देह को महाभाव-स्वरूपिणी श्रीराधा की तप्त-कांचन

जैसी उज्ज्वल देह से ढककर आए हो। तुम महाभाव में समारूढ़ हो, सात्विकादि तुममें लीन हो जाते हैं। उस भावास्वादन के लिए तुम जंगलों में रोते फिरते हो। इससे प्रेम की बाढ़ हो आती है। तुम नवीन संन्यासी हो, अच्छे-अच्छे तीर्थों की खोज में रहते हो, कभी तुम नीलाचल और कभी काशी जाते हो, अयाचकों को भी तुम प्रेम का दान करते हो, तुम्हारे इस कार्य में जातिभेद नहीं है।"

एक दूसरा गाना उन्होंने मानस-पूजा के सम्बन्ध में गाया।

श्रीरामकृष्ण (हाजरा के प्रति)—यह गाना कैसा लगा ?

हाजरा—यह साधक का नहीं है,—ज्ञान-दीपक, ज्ञान-प्रतिभा !

श्रीरामकृष्ण—मुझे तो कैसा-कैसा लगा !

"पहले का गाना बहुत ठीक है। पञ्चवटी में नागा (तोतापुरी) के पास मैंने एक गाना गाया था —'जीवन-संग्राम के लिए तू तैयार हो जा, लड़ाई का सामान लेकर काल तेरे घर में प्रवेश कर रहा है।' एक और गाना—ऐ श्यामा, दोष किसी का नहीं है, मैं अपने ही हाथों द्वारा खोदे हुए गढ़े के पानी में डूबता हूँ।'

"नागा इतना ज्ञानी है, परन्तु इनका अर्थ बिना समझे ही रोने लगा था।

"इन सब गानों में कैसी यथार्थ बातें हैं—

"नरकान्तकारी श्रीकान्त की चिन्ता करो, फिर तुम्हें भयंकर काल का भी भय न रह जायगा।"

"पद्मलोचन मेरे मुँह से रामप्रसाद का गाना सुनकर रोने लगा। पर था वह कितना विद्वान्!"

भोजन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण कुछ विश्राम कर रहे हैं। जमीन पर मणि बैठे हुए हैं। नौबतखाने में रोशनचौकी का वाद्य सुनते हुए श्रीरामकृष्ण आनन्द कर रहे हैं।

फिर मणि को समझाने लगे, ब्रह्म ही जीव-जगत् हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण—किसी ने कहा, अमुक स्थान पर हरिनाम नहीं है। उसके कहते ही मैंने देखा, वही सब जीव हुए हैं। मानो पानी के असंख्य बुलबुले—असंख्य जलबिम्ब!

"कामारपुकुर से बर्दवान आते-आते दौड़कर एक बार मैदान की ओर चला गया,—यह देखने के लिए कि यहाँ के जीव किस तरह खाते हैं और रहते हैं!—जाकर देखा, मैदान में चीटियाँ रेंग रही थीं! सभी जगह चैतन्यमय हैं!"

हाजरा घर में आकर जमीन पर बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण—अनेक प्रकार के फूल—तह के तह पंखुड़ियाँ—यह भी देखा है!—छोटा बिम्ब और बड़ा बिम्ब।

ईश्वरीय रूप-दर्शन की ये सब बातें कहते कहते श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो रहे हैं। कह रहे हैं, 'मैं हुआ हूँ!'—'मैं आया हूँ!'

यह बात कहकर ही एकदम समाधिमग्न हो गये। सब कुछ स्थिर हो गया।

बड़ी देर तक समाधि-भोग कर लेने पर कुछ होश आ रहा है। अब बालक की तरह हँस रहे हैं, हँस-हँस कर कमरे में टहल रहे हैं।

अद्भुत दर्शन के पश्चात् आँखों से जैसे आनन्द-ज्योति निकलती है, श्रीरामकृष्ण की आँखों का भाव वैसा ही हो गया। सहास्य मुख, शून्य दृष्टि।

श्रीरामकृष्ण टहलते हुए कह रहे हैं—

"बटतल्ले के परमहंस को देखा था, इस तरह हँसकर चल रहा था!—वही स्वरूप मेरा भी हो गया क्या?"

इस तरह टहलकर श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर जा बैठे और जगन्माता से बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—"खैर मैं जानना भी नहीं चाहता! माँ, तुम्हारे पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति बनी रहे।

(मणि से)—"क्षोभ और वासना के जाने से ही यह अवस्था होती है।"

फिर माँ से कहने लगे—"माँ, पूजा तो तुमने उठा दी, परन्तु देखो, मेरी सब वासनाएँ जैसे चली न जाएँ!—माँ! परमहंस तो बालक है—बालक को माँ चाहिए या नहीं? इसलिए तुम मेरी माँ हो, मैं तुम्हारा बच्चा। माँ का बच्चा माँ को छोड़कर कैसे रहे?"

श्रीरामकृष्ण इस स्वर से बातचीत कर रहे हैं कि पत्थर भी पिघल जाय। फिर माँ से कह रहे हैं—"केवल अद्वैत-ज्ञान! थू थू! जब

तक 'मैं' रहता है, तब तक 'तुम' हो। परमहंस तो बालक है; बालक को माँ चाहिए या नहीं?"

हाजरा श्रीरामकृष्ण की यह अवस्था देख हाथ जोड़कर कहने लगे—"धन्य है—धन्य है।"

श्रीरामकृष्ण हाजरा से कह रहे हैं—"तुम्हें विश्वास कहाँ है? तुम तो यहाँ उसी तरह हो जैसे जटिला और कुटिला ब्रज में थीं,—लीला की पुष्टि के लिए।"

तोतापुरी का श्रीरामकृष्ण को ब्रह्मज्ञान के सम्बन्ध में उपदेश।

दूसरे दिन झाऊतल्ले में श्रीरामकृष्ण मणि के साथ अकेले में बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है।

"नागा उपदेश देता था, सच्चिदानन्द ब्रह्म कैसे हैं—जैसे अनन्त सागर हैं, ऊपर-नीचे, दाहिने-बायें पानी-ही-पानी है। वह कारण है—स्थिर पानी है। कार्य के होने पर उसमें तरंगें उठने लगीं। सृष्टि, स्थिति और प्रलय, यही कार्य है।

"फिर कहता था, विचार जहाँ पहुँचकर रुक जाय, वही ब्रह्म है। जैसे कपूर जलाने पर उसका सर्वांश जल जाता है, ज़रा भी राख नहीं रह जाती।

"ब्रह्म मन और वचन के परे है। नमक का पुतला समुद्र

की थाह लेने गया था। लौटकर उसने खबर नहीं दी। समुद्र में गल गया।

"ऋषियों ने श्रीराम से कहा था,—'राम, भरद्वाजादि तुम्हें अवतार कह सकते हैं, परन्तु हम लोग नहीं कहते। हम लोग शब्दब्रह्म की उपासना करते हैं। हम मनुष्य-स्वरूप को नहीं चाहते।' राम कुछ हँसकर प्रसन्न हो उनकी पूजा लेकर चले गये।

"परन्तु नित्यता जिनकी है, लीला भी उन्हीं की है। जैसे छत और सीढ़ियाँ।

"ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, जगत्-लीला। नर-लीला में ही अवतार होता है। नर-लीला कैसी है, जानते हो? जैसे बड़ी छत का पानी नल से ज़ोर-शोर से गिर रहा हो। वही सच्चिदानन्द हैं—उन्हीं की शक्ति एक रास्ते से—नल के भीतर से आ रही है। केवल भरद्वाजादि बारह ऋषियों ने ही राम को पहचाना था कि ये अवतारीपुरुष हैं। अवतारीपुरुषों को सभी नहीं पहचान सकते।"

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—वे अवतीर्ण होकर भक्ति की शिक्षा देते हैं। अच्छा, मुझे तुम क्या समझते हो?

"मेरे पिता गया गये थे। वहाँ रघुवीर ने स्वप्न दिखलाया, मैं तेरा पुत्र बनकर जन्म लूँगा। पिता ने स्वप्न देखकर कहा, देव, मैं दरिद्र ब्राह्मण हूँ, मैं तुम्हारी सेवा कैसे करूँगा? रघुवीर ने कहा, सेवा हो जायगी।

"दीदी—हृदय की माँ—पुष्प-चन्दन लेकर मेरे पैर पूजती थी। एकदिन उसके सिर पर पैर रखकर (माता ने) कहा, तेरी काशी में मृत्यु होगी।

" मथुरबाबू ने कहा, 'बाबा, तुम्हारे भीतर और कुछ नहीं है, वही ईश्वर हैं। देह तो आवरण मात्र है, जैसे बाहर कद्दू का आकार है, परन्तु भीतर गूदा, बीज, कुछ भी नहीं है। तुम्हें देखा, मानो घूँघट डालकर कोई चला जा रहा है।'

"पहले ही से मुझे सब दिखा दिया जाता है। बटतल्ले में मैंने गौरांग के संकीर्तन का दल देखा था। (यह दर्शन श्रीरामकृष्ण ने भावराज्य में किया था।) उसमें शायद बलराम को देखा था और तुम्हें भी शायद देखा है।

" मैंने गौरांग का भाव जानना चाहा था। उसने दिखाया उस देश में—श्यामबाजार में, पेड़ पर और चारदीवार पर आदमी-ही आदमी—दिन-रात साथ-साथ आदमी। सात दिन शौच के लिए जाना भी मुश्किल हो गया ! तब मैंने कहा, माँ ! बस, अब रहने दो।

" इसीलिए अब भाव शान्त है। एक बार और आना होगा। इसीलिए पार्षदों को सब ज्ञान मैं नहीं देता। (हँसते हुए) तुम्हें अगर सब ज्ञान दे दें, तो फिर तुम लोग सहज ही मेरे पास क्यों आओगे ?

" तुम्हें मैं पहचान गया, तुम्हारा चैतन्य-भागवत पढ़ना सुनकर। तुम अपने आदमी हो। एक ही सत्ता है, जैसे पिता और पुत्र। यहाँ सब आ रहे हैं, जैसे कल्मी की बेल,—एक जगह पकड़कर खींचने से सब आ जाता है। परस्पर सब आत्मीय हैं, जैसे भाई-भाई। राखाल, हरीश आदि जगन्नाथ-दर्शन के लिए पुरी गए हैं, और तुम भी गए हो, तो क्या कभी ठहराव अलग अलग हो सकता है ?

"जब तक यहाँ तुम नहीं आए तब तक तुम भूले हुए थे, अब अपने को पहचान सकोगे। वे गुरु के रूप में आकर जना देते हैं।

"नागे ने बाघ और बकरी की कहानी कही थी। एक बाघिन बकरियों के झुण्ड पर टूट पड़ी। किसी बहेलिये ने दूर से उसे देखकर मार डाला। उसके पेट में बच्चा था, वह पैदा हो गया। वह बच्चा बकरियों के बीच में बढ़ने लगा। पहले बच्चा बकरियों का दूध पीता था। इसके बाद जब कुछ बड़ा हुआ तब घास चरने लगा। कोई जानवर जब उस पर आक्रमण करता, तब बकरों की तरह डरकर भागता! एक दिन एक भयंकर बाघ बकरों पर टूट पड़ा। उसने आश्चर्य में आकर देखा, उनमें एक बाघ भी घास चर रहा है और उसे देखकर बकरियों के साथ-साथ वह भी दौड़कर भागा। तब बकरियों से कुछ छेड़छाड़ न करके घास-चरनेवाले उस बाघ के बच्चे को ही उसने पकड़ा। वह 'में-में' करने लगा और भागने की कोशिश करता गया। तब बाघ उसे पानी के किनारे खींचकर ले गया और उससे कहा, 'इस पानी में अपना मुँह देख। हण्डी की तरह मेरा मुँह जितना बड़ा है, उतना ही बड़ा तेरा भी है।' फिर उसके मुँह में थोड़ा सा मांस खोंस दिया। पहले वह किसी तरह खाता ही न था, फिर कुछ स्वाद पाकर खाने लगा। तब बाघ ने कहा, तू बकरियों के बीच में था और उन्हींकी तरह घास खाता था! धिक्कार है तुझे! तब उसे बड़ी लज्जा हुई।

"घास खाना है कामिनी-कांचन लेकर रहना। बकरियों की तरह 'में-में' करके बोलना और भागना,—सामान्य जीवों की तरह आचरण करना। बाघ के साथ जाना—गुरु, जिन्होंने ज्ञान की आँखें खोल दीं, उनकी शरणागत होना है—उन्हें ही आत्मीय समझना है। अपना सच्चा

मुँह देखना है—अपने स्वरूप को पहचानना ।”

श्रीरामकृष्ण खड़े हो गये । चारों ओर सन्नाटा है । सिर्फ झाऊ के पेड़ों की सनसनाहट और गंगाजी की कल-कल-ध्वनि सुन पड़ रही है । वे रेलिंग पार करके पञ्चवटी के भीतर से अपने कमरे की ओर मणि से बातचीत करते हुए जा रहे हैं । मणि मंत्रमुग्ध की तरह पीछे-पीछे जा रहे हैं ।

पञ्चवटी में आकर, जहाँ उसकी एक डाल टूटी पड़ी है, वहीं खड़े होकर, पूर्वास्य हो, बरगद के मूल पर बँधे हुए चबूतरे पर सिर टेककर प्रणाम किया ।

नौबतखाने के पास आकर हाजरा को देखा । श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं—“अधिक न खाते जाना और बाह्य शुद्धि की ओर इतना ध्यान देना छोड़ दो । जिन्हें बेकार यह धुन सवार रहती है उन्हें ज्ञान नहीं होता । आचार उतना ही चाहिए जितने की ज़रूरत है । बहुत चख-बढ़ी अच्छी नहीं ।” श्रीरामकृष्ण ने अपने कमरे में पहुँचकर आसन ग्रहण किया ।

(३)

प्रेमाभक्ति और श्रीवृन्दावन-लीला । अवतार तथा नरलीला ।

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण ज़रा विश्राम कर रहे हैं । आज २४ दिसम्बर है । बड़े दिन की छुट्टी हो गई है । कलकत्ते से सुरेन्द्र, राम आदि भक्तगण धीरे धीरे आ रहे हैं ।

दिन के एक बजे का समय होगा । मणि अकेले झाऊतल्ले में टहल रहे हैं । इसी समय रेलिंग के पास खड़े होकर हरीश उच्च स्वर से मणि को पुकारकर कह रहे हैं—आपको बुलाते हैं, शिवसंहिता आकर पढ़िये ।

शिवसंहिता में योग की बातें हैं—षट्चक्रों की बात है। मणि श्रीरामकृष्ण के कमरे में आकर प्रणाम करके बैठे। श्रीरामकृष्ण चारपाई पर तथा भक्तगण जमीन पर बैठे हुए हैं। इस समय शिवसंहिता का पाठ नहीं हुआ। श्रीरामकृष्ण स्वयं ही बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—गोपियों की प्रेमाभक्ति थी। प्रेमाभक्ति में दो बातें रहती हैं।—' अहंता ' और ' ममता '। यदि मैं श्रीकृष्ण की सेवा न करूँ तो उनकी तबीयत बिगड़ जायगी—यह अहंता है, इसमें ईश्वरबोध नहीं रहता।

" ममता है ' मेरा-मेरा ' करना। गोपियों की ममता इतनी बढ़ी हुई थी कि कहीं पैरों में ज़रा सी चोट न लग जाय, इसलिए उनका सूक्ष्म-शरीर श्रीकृष्ण के श्रीचरणों के नीचे रहता था।

" यशोदा ने कहा, तुम्हारे चिन्तामणि श्रीकृष्ण को मैं नहीं जानती।—मेरा तो वह गोपाल ही है। उधर गोपियाँ भी कहती हैं—'कहाँ हैं मेरे प्राणवल्लभ—हृदयवल्लभ !'—ईश्वर-बोध उनमें था ही नहीं।

" जैसे छोटे छोटे लड़के, मैंने देखा है, कहते हैं, ' मेरे बाबा; यदि कोई कहता है, नहीं तेरे बाबा नहीं हैं, तो वे कहते हैं—क्यों नहीं—मेरे बाबा तो हैं।

" नरलीला करते समय अवतारी-पुरुषों को ठीक आदमी की तरह आचरण करना पड़ता है,—इसीलिए उन्हें पहचानना मुश्किल हो जाता है। नर-रूप धारण किया है तो प्राकृत नरों की तरह ही आचरण करेंगे; वही भूख-प्यास, रोग-शोक, वही भय—सब प्राकृत मनुष्यों की तरह।

श्रीरामचन्द्र सीताजी के वियोग में रोये थे। गोपाल ने नन्द की जूतियाँ सिर पर ढोई थीं—पीढ़ा ढोया था।'

"थिएटर में साधु बनते हैं तो साधुओं का सा ही व्यवहार करते हैं। जो राजा बनता है, उसकी तरह व्यवहार नहीं करते। जो कुछ बनते हैं, वैसा ही अभिनय भी करते हैं।

"कोई बहुरूपिया साधु बना था—त्यागी साधु। स्वांग उसने ठीक बनाकर दिखलाया था, इसलिए बाबुओं ने उसे एक रुपया देना चाहा। उसने न लिया, ऊँहूँ कहकर चला गया। देह और हाथ-पैर धोकर अपने सहज स्वरूप में जब आया तब उसने रुपया माँगा। बाबुओं ने कहा, अभी तो तुमने कहा, रुपया न लेंगे। और चले गए, अब रुपया लेने कैसे आए? उसने कहा, तब मैं साधु बना हुआ था, उस समय रुपया कैसे ले सकता था!

"इसी तरह ईश्वर जब मनुष्य बनते हैं, तब ठीक मनुष्य की तरह व्यवहार करते हैं।

"वृन्दावन जाने पर कितने ही लीला के स्थान दीख पड़ते हैं।"

सुरेन्द्र—हम लोग छुट्टी में गए थे। वहाँ मँगते इतने हैं कि 'पैसा दीजिए', 'पैसा दीजिए' की रट लगा देते हैं। दीजिए-दीजिए करने लगे—पण्डे भी और दूसरे भी। उनसे मैंने कहा, हम कल कलकत्ता जायेंगे;—यह कहकर उसी दिन वहाँ से नौ-दो ग्यारह!

श्रीरामकृष्ण—यह क्या है? कल जायेंगे कहकर आज ही भागना! छिः!

सुरेन्द्र (लज्जित होकर)—उन लोगों में भी कहीं कहीं साधुओं को देखा था। निर्जन में बैठे हुए साधन-भजन कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण—साधुओं को कुछ दिया ?

सुरेन्द्र—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—यह अच्छा काम नहीं किया। साधु-भक्तों को कुछ दिया जाता है। जिनके पास धन है, उन्हें उस तरह के आदमी को सामने पड़ने पर कुछ देना चाहिए।

" मैं भी वृन्दावन गया था, मथुरबाबू के साथ। ज्यों ही मथुरा का ध्रुव घाट मैंने देखा, कि उसी समय दर्शन हुआ, वसुदेव श्रीकृष्ण को गोद में लेकर यमुना पार कर रहे हैं।

" फिर शाम को यमुना के तट पर टहल रहा था। बालू पर छोटे-छोटे झोपड़े थे, बेर के पेड़ बहुत हैं। गोधूलि का समय था, गौएँ चरागाह से लौट रही थीं। देखा, उतरकर यमुना पार कर रही हैं; इसके बाद कुछ चरवाहे गौओं को लेकर पार होने लगे। ज्योंही यह देखा कि ' कृष्ण कहाँ हैं ! ' कहकर बेहोश हो गया।

" श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के दर्शन करने की इच्छा हुई थी। पालकी पर मुझे मथुरबाबू ने भेज दिया। बहुत दूर रास्ता है। पालकी के भीतर पूड़ियाँ और जलेबियाँ रख दी गई थीं। मैदान पार करते समय यह सोचकर रोने लगा, ' वे सब स्थान तो हैं—कृष्ण, तू ही नहीं है !—यह वही भूमि है जहाँ तू गौएँ चराता था। '

" हृदय रास्ते में साथ साथ पीछे आ रहा था। मेरी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। कहारों को खड़े होने के लिए भी न कह सका।

" श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड में जाकर देखा, साधुओं ने एक एक झोपड़ी सी बना रक्खी है,—उसीके भीतर पीठ फेरकर साधन-भजन कर रहे हैं। पीठ इसलिए फेरे बैठे हैं कि कहीं लोगों पर उनकी दृष्टि न जाय। द्वादश वन देखने लायक हैं।

" बांकेबिहारी को देखकर मुझे भाव हो गया था; मैं उन्हें पकड़ने चला था। गोविन्दजी को दुबारा देखने की इच्छा नहीं हुई। मथुरा में जाकर राखाल-कृष्ण का स्वप्न देखा था। हृदय और मथुरबाबू ने भी देखा था।"

श्रीरामकृष्ण (सुरेन्द्र से)—तुम्हारे योग भी है और भोग भी है।

" ब्रह्मर्षि, देवर्षि, और राजर्षि। ब्रह्मर्षि जैसे शुकदेव—एक भी पुस्तक पास नहीं है। देवर्षि जैसे नारद। राजर्षि जैसे जनक—निष्काम कर्म करते हैं।

" देवीभक्त धर्म और मोक्ष दोनों पाता है तथा अर्थ और काम का भी भोग करता है।

" तुम्हें एक दिन मैंने देवी-पुत्र देखा था। तुम्हारे दोनों हैं, योग और भोग। नहीं तो तुम्हारा चेहरा सूखा हुआ होता।

"सर्वत्यागी का चेहरा सूखा हुआ होता है। एक देवीभक्त को

घाट पर मैंने देखा था। भोजन करते हुए ही वह देवी-पूजा कर रहा था। उसका सन्तान-भाव था।

"परन्तु अधिक धन होना अच्छा नहीं। यदु मल्लिक को इस समय देखा, डूब गया है। अधिक धन हो गया है न!

"नवीन नियोगी के भी योग-भोग दोनों हैं। दुर्गापूजा के समय मैंने देखा, पिता-पुत्र दोनों चँवर डुला रहे थे।"

सुरेन्द्र—अच्छा महाराज, ध्यान क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण—स्मरण-मनन तो है न?

सुरेन्द्र—जी हाँ, माँ-माँ कहता हुआ सो जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—बहुत अच्छा है,स्मरण मनन रहने से ही हुआ।

(४)

श्रीरामकृष्ण और योगशिक्षा। शिव-संहिता।

सन्ध्या के बाद श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। मणि भी भक्तों के साथ जमीन पर बैठे हैं। योग के सम्बन्ध में, षट्चक्रों के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है। ये सब बातें शिव-संहिता में हैं।

श्रीरामकृष्ण—इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के भीतर सब पद्म हैं—सभी चिन्मय। जैसे मोम का पेड़,—डाल, पत्ते, फल,—सब मोम के। मूलाधार पद्म में कुण्डलिनी-शक्ति है। वह पद्म चतुर्दल है जो आद्या-शक्ति हैं, वही कुण्डलिनी के रूप में सब के देह में विराजमान हैं—जैसे

सोता हुआ साँप कुण्डलाकार पड़ा रहता है। 'प्रसुप्त-भुजगाकारा आधार-पद्म-वासिनी।' (मणि से) भक्ति-योग से कुल-कुण्डलिनी शीघ्र जाग्रत होती है। इसके बिना जाग्रत हुए ईश्वर के दर्शन नहीं होते। एकाग्रता के साथ निर्जन में गाना चाहिए—

'जागो माँ कुल-कुण्डलिनी !
तू नित्यानन्द-स्वरूपिणि !
प्रसुप्त-भुजगाकारा आधार-पद्म-वासिनी !'

यह गाकर ही रामप्रसाद सिद्ध हुए थे। व्याकुल होकर गाने पर ईश्वर-दर्शन होते हैं।"

मणि—जी हाँ, यह सब एक बार करने से ही मन का खेद मिट जाता है।

श्रीरामकृष्ण—अहा ! खेद मिट जाता है—सत्य है।

"योग के सम्बन्ध की दो चार बातें तुम्हें बतला देना चाहिए।

"बात यह है कि अण्डे के भीतर बच्चा जब तक बड़ा नहीं हो जाता तब तक चिड़िया उसे नहीं फोड़ती है।

"परन्तु कुछ साधना करनी चाहिए। गुरु ही सब कुछ करते हैं, परन्तु अन्त में कुछ साधना करा भी लेते हैं। बड़े पेड़ को काटते समय जब लगभग काटना समाप्त हो जाता है तो कुछ हटकर खड़ा हुआ जाता है। पेड़ फिर आप ही हरहराकर टूट जाता है।

"जब नाली काटकर पानी लाया जाता है, और जब वह समय आता है कि थोड़ा सा ही काटने से नहर के साथ नाली का योग हो जाय, तब नाली काटकर कुछ हटकर खड़ा हुआ जाता है। तब मिट्टी भींग कर धँस जाती है और नहर का पानी हरहराकर नाली में घुस पड़ता है।

" अहंकार, उपाधि, इन सब का त्याग होने के साथ ही ईश्वर के दर्शन होते हैं। मैं पण्डित हूँ, मैं अमुक का पुत्र हूँ, मैं धनी हूँ, मैं मानी हूँ, इन सब उपाधियों को त्याग देने से ही ईश्वर के दर्शन होते हैं।

" ईश्वर ही सत्य हैं और सब अनित्य—संसार अनित्य है,—इसे विवेक कहते हैं। विवेक के हुए बिना उपदेशों का ग्रहण नहीं होता।

" साधना करते करते ही उनकी कृपा से लोग सिद्ध होते हैं। कुछ परिश्रम भी करना चाहिए। इसके बाद दर्शन और आनन्द।

" अमुक स्थान पर सोने का घड़ा गड़ा हुआ है, यह सुनते ही मनुष्य दौड़ पड़ता है और खोदने लग जाता है। खोदते खोदते सिर से पसीना निकल आता है। बहुत देर तक खोदने के बाद कहीं कुदार में ठनकार आई। तब कुदार फेंककर वह देखने लगा कि घड़ा निकला या नहीं? घड़ा अगर दीख पड़ा तब तो उसके आनन्द का पारावार नहीं रह जाता—वह नाचने लगता है।

" घड़ा बाहर लाकर उसमें से मोहरें निकालकर वह गिनता है। तब कितना आनन्द होता है! दर्शन, स्पर्श और संभोग—क्यों?"

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप हो रहे। फिर कहने लगे—

" जो मेरे अपने आदमी हैं, उन्हें बकने पर भी वे आयेंगे ।

" अहा ! नरेन्द्र का कैसा स्वभाव है । माँ-काली को पहले उसके जी में जो आता था वही कहता था । मैंने चिढ़कर एक दिन कहा था, ' अब यहाँ न आना । '

" जो अपना आदमी है, उसको तिरस्कार करने पर भी उसे इसका दुःख नहीं होता—क्यों ? "

मणि—जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण—नरेन्द्र स्वतःसिद्ध है । निराकार पर उसकी निष्ठा है ।

मणि (सहास्य)—जब आता है तब एक महाभारत रच लाता है !

दूसरे दिन मंगलवार, २५ दिसम्बर, कृष्णपक्ष की एकादशी है । दिन के ग्यारह बजे का समय होगा । श्रीरामकृष्ण ने अभी भोजन नहीं किया । मणि और राखाल आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में बैठे हुए हैं ।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—एकादशी करना अच्छा है । इससे मन बहुत पवित्र होता है और ईश्वर पर भक्ति होती है, क्यों ?

मणि—जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण—धान की लाही और दूध, यही खाओगे, क्यों ?

परिच्छेद ४३

धर्मशिक्षा

(१)

साधु से वार्तालाप ।

आज बुधवार, २६ दिसम्बर, १८८३ ई० । श्रीरामकृष्ण रामचन्द्र बाबू का नया बगीचा देखने जा रहे हैं ।

राम श्रीरामकृष्ण को साक्षात् अवतार जानकर उनकी पूजा करते हैं। वे अक्सर दक्षिणेश्वर में आते हैं और श्रीरामकृष्ण का दर्शन तथा उनकी पूजा करते हैं । सुरेन्द्र के बगीचे के पास उन्होंने नया बगीचा तैयार किया है । इसी बगीचे को देखने के लिए श्रीरामकृष्ण जा रहे हैं ।

गाड़ी में मणिलाल मल्लिक, मास्टर तथा अन्य दो एक भक्त हैं। मणिलाल मल्लिक ब्राह्म समाज के हैं। ब्राह्म भक्तगण अवतार नहीं मानते हैं ।

श्रीरामकृष्ण (मणिलाल के प्रति)—उनका ध्यान करना हो तो पहले उनके उपाधिशून्य स्वरूप का ध्यान करने की चेष्टा करनी चाहिए। वे उपाधियों से शून्य, वाक्य और मन से परे हैं। परन्तु इस ध्यान द्वारा सिद्धि प्राप्त करना बहुत ही कठिन है।

"वे मनुष्य में अवतीर्ण होते हैं, उस समय ध्यान करने की विशेष सुविधा होती है। मनुष्य के बीच में नारायण हैं। देह आवरण है,

मानो लालटेन के भीतर बत्ती जल रही है।"

गाड़ी से उतरकर श्रीरामकृष्ण बगीचे में पहुँचे। राम तथा अन्य भक्तों के साथ पहले तुलसी-कानन देखने के लिए जा रहे हैं।

तुलसी-कानन देखकर श्रीरामकृष्ण खड़े होकर कह रहे हैं, "वाह, सुन्दर स्थान है यह, यहाँ पर ईश्वर का चिन्तन अच्छा होता है!"

श्रीरामकृष्ण अब तालाब के दक्षिणवाले कमरे में आकर बैठे। रामबाबू ने थाली में अनार, सन्तरा तथा कुछ मिठाई लाकर उन्हें दी। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आनन्द करते हुए फल आदि ग्रहण कर रहे हैं।

कुछ देर बाद सारे बगीचे में घूम रहे हैं।

अब पास ही सुरेन्द्र के बगीचे में जा रहे हैं। थोड़ी देर पैदल जाकर गाड़ी में बैठेंगे। गाड़ी से सुरेन्द्र के बगीचे में जाएँगे।

भक्तों के साथ पैदल जाते हुए श्रीरामकृष्ण ने देखा कि पास वाले बगीचे में एक वृक्ष के नीचे एक साधु अकेले खटिया पर बैठे हैं। देखते ही वे साधु के पास पहुँचे और आनन्द के साथ उनसे हिन्दी में वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (साधु के प्रति)—आप किस सम्प्रदाय के हैं—गिरि या पुरी, कोई उपाधि है क्या?

साधु—लोग मुझे परमहंस कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, अच्छा। शिवोऽहम्—यह अच्छा है।

परन्तु एक बात है। यह सृष्टि, स्थिति और प्रलय सभी कुछ हो रहा है, उन्हीं की शक्ति से। यह आद्याशक्ति और ब्रह्म अभिन्न हैं। ब्रह्म को छोड़कर शक्ति नहीं होती। जिस प्रकार जल को छोड़कर लहर नहीं होती, वाद्य को छोड़कर वादन नहीं होता।

"जब तक उन्होंने इस लीला में रखा है, तब तक द्वैत ज्ञान होता है।

"शक्ति को मानने से ही ब्रह्म को मानना पड़ता है; जिस प्रकार रात्रि का ज्ञान रहने से ही दिन का ज्ञान होता है! ज्ञान को समझ रहने से ही अज्ञान की समझ होती है।

"और एक स्थिति में वे दिखाते हैं कि ब्रह्म ज्ञान तथा अज्ञान से परे है, मुँह से कुछ कहा नहीं जाता। जो हैं सो हैं।"

इस प्रकार कुछ वार्तालाप होने के बाद श्रीरामकृष्ण गाड़ी की ओर जा रहे हैं। साधु भी उन्हें गाड़ी तक पहुँचा देने के लिए साथ साथ आ रहे हैं। मानो श्रीरामकृष्ण उनके कितने दिनों के परिचित हैं, साधु के बाँह में बाँह डालकर वे गाड़ी की ओर जा रहे हैं।

साधु उन्हें गाड़ी पर चढ़ाकर अपने स्थान पर आ गए।

अब श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के बगीचे में आए हैं। भक्तों के साथ बैठकर साधु की ही बात शुरू की।

श्रीरामकृष्ण—यह साधु अच्छे हैं, (राम के प्रति) जब तुम आओगे तो इस साधु को दक्षिणेश्वर के बगीचे में ले आना।

"यह साधु बहुत अच्छे हैं। एक गाने में कहा है—सरल हुए बिना सरल को पहचाना नहीं जाता।"

"निराकारवादी—अच्छा ही है। वे निराकार साकार हो रहे हैं,—और भी कितने ही कुछ हैं; जिनका नित्य है, उन्हीं की लीला है। वही जो वाणी व मन से परे हैं, नाना रूप धारण करके अवतीर्ण होकर काम कर रहे हैं। उसी 'ॐ' से 'ॐ शिव' 'ॐ काली' व 'ॐ कृष्ण' हुए हैं। निमंत्रण करने के लिए मालकिन ने एक छोटे लड़के को भेज दिया है—उसका कितना मान है, क्योंकि वह अमुक का नाती या पोता है।"

सुरेन्द्र के बगीचे में भी कुछ जलपान करके श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर की ओर भक्तों के साथ जा रहे हैं।

(२)

कर्मयोग। क्या चिरकाल तक कर्म करना पड़ेगा?

दक्षिणेश्वर-कालीमन्दिर में आरती का मधुर शब्द सुनाई दे रहा है। उसी के साथ प्रभाती-राग से मन्दिर के बाजे बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उठकर मधुर स्वर से नामोच्चारण कर रहे हैं। कमरे में जिन जिन देवियों और देवताओं के चित्र टंगे हुए थे, एक-एक करके उन्हें प्रणाम किया। भक्तों में भी कोई-कोई वहाँ हैं। उन लोगों ने प्रातःकृत्य समाप्त करके क्रमशः श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया।

राखाल श्रीरामकृष्ण के साथ इस समय यहीं हैं। बाबूराम पिछली रात को आ गये हैं। मणि श्रीरामकृष्ण के पास आज चौदह दिन से हैं।

आज बृहस्पतिवार है, अगहन की कृष्ण त्रयोदशी, २७ दिसम्बर १८८३। आज सबेरे ही स्नानादि समाप्त करके श्रीरामकृष्ण कलकत्ता जाने का उद्योग कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने मणि को बुलाकर कहा, "आज ईशान के यहाँ जाने के लिए कह गये हैं। बाबूराम जायगा और तुम भी हमारे साथ चलना।" मणि जाने के लिए तैयार होने लगे।

जाड़े का समय है। दिन के आठ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण को ले जाने के लिए नौबतखाने के पास गाड़ी आकर खड़ी हुई। चारों ओर फूल के पेड़ हैं, सामने भागीरथी। सब दिशाएँ प्रसन्न जान पड़ती हैं। श्रीरामकृष्ण ने देवताओं के चित्रों के पास खड़े होकर प्रणाम किया। फिर माता का नाम लेते हुए यात्रा करने के लिए गाड़ी पर बैठ गये। साथ बाबूराम और मणि हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण की बनात, बनात की बनी हुई कान मूँदनेवाली टोपी और मसाले की थैली साथ ले ली है, क्योंकि जाड़े का समय है। सन्ध्या होने पर श्रीरामकृष्ण बनात ओढ़ेंगे।

श्रीरामकृष्ण का मुखमण्डल प्रसन्न है। सब रास्ता आनन्द से पार कर रहे हैं। दिन के नौ बजे होंगे। गाड़ी कलकत्ते में घुसकर श्यामबाजार से होकर मछुआ-बाजार में आकर खड़ी हुई। मणि ईशान का घर जानते थे। चौराहे पर गाड़ी फिराकर ईशान के घर के सामने खड़ी करने के लिए कहा।

ईशान आत्मीयों के साथ आदरपूर्वक सहास्यमुख श्रीरामकृष्ण की अभ्यर्थना कर उन्हें नीचेवाले बैठकखाने में ले गए। श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ आसन ग्रहण किया।

कुशल-प्रश्न हो जाने के बाद श्रीरामकृष्ण ईशान के पुत्र श्रीश के साथ बातचीत करने लगे। श्रीश एम० ए०, बी० एल० पास करके अलीपुर में वकालत कर रहे हैं। एन्ट्रेंस और एफ० ए० की परीक्षाओं में विश्वविद्यालय में उनका प्रथम स्थान आया था। इस समय उनकी आयु तीस वर्ष की होगी। जैसा पाण्डित्य है, वैसा ही विनय भी है। लोग उन्हें देखकर यह समझ लेते हैं कि ये कुछ नहीं जानते। हाथ जोड़कर श्रीश ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। मणि ने श्रीरामकृष्ण को उनका परिचय दिया और कहा, ऐसी शान्त प्रकृति का मनुष्य दीख नहीं पड़ता।

श्रीरामकृष्ण (श्रीश के प्रति)—क्यों जी, तुम क्या करते हो?

श्रीश—मैं अलीपुर जा रहा हूँ, वकालत करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—ऐसा आदमी और वकालत!

(श्रीश से)—"अच्छा, तुमसे कुछ पूछना है?—संसार में अनासक्त होकर रहना, क्यों?"

श्रीश—परन्तु कार्य के निर्वाह के लिए संसार में कितने ही अन्याय किए जाते हैं। कोई पापकर्म कर रहा है, कोई पुण्यकर्म। यह सब क्या पहले के कर्मों का फल है? क्या यही करते रहना होगा?

श्रीरामकृष्ण— कर्म कब तक हैं?—जब तक उन्हें प्राप्त न कर सको। उन्हें प्राप्त कर लेने पर सब चले जाते हैं। तब पाप-पुण्य के पार जाया जाता है।

"फल आ जाने पर फूल चला जाता है। फूल दीख पड़ता है फल होने के लिए।

"सन्ध्यादि कर्म कितने दिन के लिए?—जितने दिन तक ईश्वर का नाम स्मरण करते हुए रोमांच न हो आए, आँखों में आँसू न आ जायँ। ये सब अवस्थाएँ ईश्वर-प्राप्ति के लक्षण हैं, ईश्वर पर शुद्धा-भक्ति प्राप्त करने के लक्षण हैं।

"उन्हें जान लेने पर मनुष्य पाप और पुण्य दोनों के पार चला जाता है। रामप्रसाद ने कहा है, भुक्ति और मुक्ति को मैं मस्तक पर धारण करता हूँ; और काली ब्रह्म हैं, यह मर्म जानकर धर्माधर्म को मैंने छोड़ ही दिया है।

"उनकी ओर जितना बढ़ोगे, उतना ही वे कर्म घटा देंगे। गृहस्थ की बहू गर्भवती होने पर उसकी सास उसका काम घटा देती है। जब दसवाँ महीना होता है, तब बिलकुल काम घटा दिया जाता है। बच्चा हो जाने पर वह उसीको लेकर रहती है, उसीको लेकर आनन्द करती है।"

श्रीश—संसार में रहते हुए उनकी ओर जाना बड़ा कठिन है।

अभ्यास-योग, संसार और निर्जन में साधना।

श्रीरामकृष्ण—क्यों? अभ्यास-योग है। उस देश में (कामारपुकुर में) बढ़ई की औरतें चिउड़ा बेचती हैं। वे कितनी ओर ध्यान देकर कितने काम सम्हालती हैं, सुनो। एक तो ढेंकी चल रही है; हाथ से वह धान सरका रही है, और एक हाथ से बच्चे को गोद में लेकर दूध पिला रही है। ऊपर के जो खरीददार आते हैं, उनसे मोल-तोल करती है, इधर ढेंकी का काम भी देख रही है। खरीददार से कहती है 'तो तुम्हारे ऊपर जो बाकी पैसे हैं, वे सब दे जाना तब और चीज़ ले जाना।' देखो, लड़के को दूध पिलाना, ढेंकी चल रही है उसमें धान सरकाना और कूटे

हुए धान निकालना, और इधर खरीददार के साथ बातचीत करना, ये सब एक साथ कर रही है। इसे ही अभ्यास-योग कहते हैं; परन्तु उसका पन्द्रह आना मन ढेंकी पर लगा हुआ है, क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि ढेंकी हाथ पर गिर जाय; और एक आना मन लड़के को दूध पिलाने और खरीददार से बातचीत करने में है। इसी तरह जो लोग संसार में हैं उन्हें पन्द्रह आना मन ईश्वर को देना चाहिए। न देने से सर्वनाश हो जायगा,—काल के हाथ पड़ना होगा। और एक आने से दूसरे काम करो।

" ज्ञान हो जाने पर संसार में रहा जा सकता है, परन्तु पहले तो ज्ञान लाभ करना चाहिए। संसार-रूपी जल में मन-रूपी दूध रखने पर दोनों मिल जायँगे। इसलिए मन-रूपी दूध का दही बनाकर निर्जन में उसे मथकर, उससे मक्खन निकालकर, तब उसे संसार-रूपी पानी में रखना चाहिए। ऐसा हुआ तो काम ठीक है, और इससे यह स्पष्ट है कि साधना चाहिए। पहली अवस्था में निर्जन में रहना ज़रूरी है। पीपल का पेड़ जब छोटा रहता है, तब उसके चारों ओर घेरा लगाना पड़ता है; नहीं तो बकरे और गौएँ उसे चर जाती हैं। परन्तु उसकी पेड़ी मोटी हो जाने पर घेरा खोल दिया जाता है। तब तो हाथी बाँध देने पर भी वह उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

" इसीलिए प्रथम अवस्था में कभी-कभी निर्जन में जाना पड़ता है। साधना की ज़रूरत है। भात खाओगे—बैठे बैठे कहते रहो, काठ (लकड़ी) में आग है और उसी आग से चावल पकाये जाते हैं। इस तरह करने से ही क्या भात तैयार हो जायगा ? एक और काठ ले आकर काठ रगड़ना चाहिए ; आग तभी तैयार होगी।

" भंग खाने से नशा होता है, आनन्द होता है। न तुमने खाया,

न कुछ किया—बैठे बैठे केवल ' भंग-भंग ' कर रहे हो। क्या इससे कभी नशा या आनन्द होता है ?

मनुष्य-जीवन का उद्देश्य। ' दूध पीओ।'

" पढ़ना-लिखना चाहे लाख सीखो, ईश्वर पर बिना भक्ति हुए—उन्हें प्राप्त करने की इच्छा बिना हुए—सब मिथ्या है। केवल पण्डित है, परन्तु यदि विवेक-वैराग्य नहीं है, तो उसकी दृष्टि कामिनी-कांचन पर अवश्य रहेगी। गीध ऊँचे उड़ते हैं, परन्तु उनकी दृष्टि मरघट पर ही रहती है।

" जिस विद्या के प्राप्त करने पर मनुष्य उन्हें पा सकता है, वही यथार्थ विद्या है, और सब मिथ्या है। अच्छा, ईश्वर के सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है ? "

श्रीश—जी, बोध यह हुआ है कि कोई एक ज्ञानमय पुरुष हैं। उनकी सृष्टि देखने पर उनके ज्ञान का परिचय मिलता है। एक बात कहता हूँ—जिन देशों में जाड़ा ज्यादा होता है, वहाँ मछलियों और दूसरे जल-जन्तुओं को बचा रखने के लिए ईश्वर ने यह कुशलता दिखाई है कि जितना ही अधिक जाड़ा पड़ता है उतना ही पानी सिमटता जाता है, परन्तु आश्चर्य यह है कि बर्फ बनने से पहले ही पानी कुछ हलका हो जाता है, और उस समय पानी का फैलाव ज्यादा हो जाता है। तालाब के पानी में वहाँ जाड़े में मछलियाँ अनायास ही रह सकती हैं। पानी के ऊपरी हिस्से में बर्फ जम गई है, परन्तु नीचे के हिस्से में ज्यों का त्यों पानी बना रहता है। अगर खूब ठण्डी हवा चलती है, तो वह हवा बर्फ पर ही लगती है; नीचे का पानी गरम रहता है।

श्रीरामकृष्ण—वे हैं यह बात संसार देखने से ही मालूम हो जाती है। परन्तु उनके सम्बन्ध में कुछ सुनना एक बात है, उन्हें देखना और बात, और उनसे वार्तालाप करना और बात है। किसी ने दूध की बात सुनी है, किसी ने दूध देखा है, और किसी ने दूध पिया है! आनन्द तो देखने से होगा, पर पीने से देह सबल होगी, तभी तो लोग हृष्टपुष्ट होंगे। ईश्वर के दर्शन जब होंगे, तभी तो शक्ति होगी। जब उनसे वार्तालाप होगा, तभी तो आनन्द होगा और शक्ति बढ़ेगी।

श्रीश—उन्हें पुकारने का अवसर मिलता ही नहीं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—यह ठीक है; समय बिना हुए कुछ नहीं होता। किसी लड़के ने सोने के पहले अपनी माँ से कहा था, माँ, जब मुझे टट्टी की इच्छा हो, तब उठा देना। उसकी माँ ने कहा, बेटा, टट्टी की इच्छा तुम्हें स्वयं उठायेगी, मुझे उठाना न होगा।

" जिसे जो कुछ देना चाहिए, यह उनका पहले से ही ठीक किया हुआ है। घर की एक पुरखिन अपनी बहुओं को एक बर्तन से नापकर चावल बनाने के लिए देती थी, पर उतना चावल उन लोगों के लिए कम पड़ता था। एक दिन वह नापने वाला बर्तन फूट गया; इससे बहुएँ बहुत खुश हुईं। पर उस पुरखिन ने कहा, 'हुँ, तुम्हारे नाचने कूदने या खुशी मनाने से क्या हुआ, बर्तन टूट गया टूट जाने दो, मैं चावल अपनी मुट्ठी से नाप सकती हूँ, मुझे अन्दाज़ मालूम है।'

(श्रीश से)—" क्या करोगे, पूछते हो? उनके श्रीचरणों में सब कुछ समर्पित कर दो, उन्हें आम मुख़्त्यारी दे दो! वे जो कुछ अच्छा

समझें, करें। बड़े आदमी पर अगर भार दे दिया जाय, तो वह कभी बुराई नहीं कर सकता।

"साधना की भी आवश्यकता है। परन्तु साधक दो तरह के होते हैं। एक तरह के साधकों का स्वभाव बन्दर के बच्चे जैसा होता है, दूसरे तरह के साधक का बिल्ली के बच्चे जैसा। बन्दर का बच्चा किसी तरह खुद अपनी माँ को पकड़े रहता है। इसी तरह कोई साधक सोचते हैं, हमें इतना जप करना चाहिए, इतनी देर तक ध्यान करना चाहिए, इतनी तपस्या करनी होगी, तब कहीं ईश्वर मिलेंगे। इस तरह के साधक अपने प्रयत्न से ईश्वर-प्राप्ति की आशा रखते हैं।

"परन्तु बिल्ली का बच्चा खुद अपनी माँ को नहीं पकड़कर रहता। वह पड़ा हुआ बस 'मीऊँ-मीऊँ' करके पुकारता है। उसकी माँ चाहे जो करे। उसकी माँ कभी उसे बिस्तर पर ले जाती है, कभी छत पर लकड़ी की आड़ में रख देती है, और कभी उसे मुँह में दबाकर यहाँ-वहाँ रखती फिरती है। वह स्वयं अपनी माँ को पकड़ना नहीं जानता। इसी तरह कोई-कोई साधक स्वयं हिसाब करके साधन-भजन नहीं कर सकते कि इतना जप करूँगा, इतना ध्यान करूँगा। वह केवल व्याकुल होकर रो-रोकर उन्हें पुकारता है। वे उसका रोना सुनकर फिर रह नहीं सकते। आकर दर्शन देते हैं।"

(३)

ईश्वर कर्ता, तथापि जीवों का कर्मों के सम्बन्ध में उत्तरदायित्व। नाम-माहात्म्य।

दिन खूब चढ़ आया है। घर के मालिक ने भोजन के लिए घर

में कच्ची रसोई का सामान तैयार कराया है। वे बड़ी उत्सुकता के साथ घर के भीतर गए। वहाँ जाकर भोजन का प्रबन्ध कराने लगे।

दिन बहुत हो गया है, इसलिए श्रीरामकृष्ण भोजन के लिए जल्दी कर रहे हैं। वे उसी कमरे में टहल रहे हैं। मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। कभी-कभी केशव कीर्तनिया से वार्तालाप कर रहे हैं।

केशव कीर्तनिया—वही करण और वही कारण हैं। दुर्योधन ने कहा था, 'त्वया हृषीकेश हृदिस्थितेन, यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।'

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हाँ, वही सब कराते हैं; यह ठीक है। कर्ता वही हैं, मनुष्य तो यन्त्र-स्वरूप है।

"और यह भी ठीक है कि कर्मफल भी है। मिर्चा और मिर्च खाने पर पेट जलता रहेगा। पाप करने से उसका फल अवश्य भोगना होगा।

"जिसे सिद्धि हो गई है, जिसने ईश्वर को पा लिया है, वह फिर पाप नहीं कर सकता। उसके पैर बेताला नहीं पड़ते। जिसका सधा हुआ गला है, उसके स्वर में सा रे ग म बिगड़ने नहीं पाता।"

भोजन तैयार है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ मकान के भीतर गए और उन्होंने आसन ग्रहण किया। ब्राह्मण का मकान है; व्यंजन कई तरह के तैयार कराए गए हैं, ऊपर से अनेक प्रकार की मिठाइयाँ भी लाई गई हैं।

दिन के तीन बजे का समय होगा। भोजन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण

ईशान के बैठकखाने में आकर बैठे। पास में श्रीश और मास्टर आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण श्रीश के साथ फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—तुम्हारा क्या भाव है? सोऽहं या सेव्य-सेवक?

"संसारियों के लिए सेव्य-सेवक का भाव बहुत अच्छा है। सब सांसारिक काम तो कर रहे हैं, ऐसी अवस्था में 'मैं वही हूँ' यह भाव कैसे आ सकता है? जो कहता है, 'मैं वही हूँ', उसके लिए तो संसार स्वप्नवत् है। उसका अपना शरीर और मन भी स्वप्नवत् है, उसका 'मैं' भी स्वप्नवत् है; अतएव संसार का काम वह नहीं कर सकता; इसीलिए सेव्य-सेवक भाव, दास-भाव बहुत अच्छा है।

"दास-भाव हनुमान का था। श्रीराम से हनुमान ने कहा था, 'राम, कभी तो मैं सोचता हूँ, तुम पूर्ण हो—मैं अंश हूँ, तुम प्रभु हो—मैं दास हूँ और जब तत्व का ज्ञान हो जाता है, तब देखता हूँ, मैं ही तुम हूँ, और तुम्हीं मैं हो।'

"तत्व-ज्ञान के समय सोऽहम् हो सकता है, परन्तु वह दूर की बात है।"

श्रीश—जी हाँ, दास-भाव से आदमी निश्चिन्त हो सकता है। प्रभु पर सब कुछ निर्भर है। कुत्ता बड़ा स्वामिभक्त है, इसीलिए स्वामी पर सब भार देकर वह निश्चिन्त रहता है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम्हें साकार ज्यादा पसन्द है या निराकार? बात यह है कि जो निराकार है, वही साकार भी है। भक्त की आँखों को वे साकार-रूप से दर्शन देते हैं। जैसे अनन्त जलराशि, महा-

समुद्र, जिसका न ओर है न छोर; उसी जल में कहीं कहीं बर्फ जम गई है; ज्यादा ठंडक पहुँचने पर पानी जमकर बर्फ हो जाता है। उसी तरह भक्ति-हिम द्वारा साकार रूप के दर्शन होते हैं। फिर जिस तरह सूर्य उगने पर बर्फ गल जाती है—ज्यों का त्यों पानी हो जाता है, उसी तरह ज्ञान-मार्ग या विचार-मार्ग से होकर जाने पर साकार रूप के दर्शन नहीं होते, फिर तो सब निराकार ही निराकार दीख पड़ता है। ज्ञान-सूर्य उगने पर साकार बर्फ गल जाती है।

" परन्तु देखो, जिसकी निराकार सत्ता है, उसी की साकार भी है।"

शाम होने को है। श्रीरामकृष्ण उठे। दक्षिणेश्वर को लौटने वाले हैं। बैठकखाने के दक्षिण ओर जो बरामदा है, उसी पर खड़े होकर ईशान से बातचीत कर रहे हैं। वहीं कोई कह रहे हैं, ' यह तो मैं नहीं देखता कि ईश्वर का नाम लेने से प्रत्येक समय फल होता है।'

ईशान ने कहा, 'यह क्या! बट के बीज कितने छोटे होते हैं, परन्तु उसके भीतर बड़े-बड़े पेड़ छिपे रहते हैं। वे देर से देखने में आते हैं।'

श्रीरामकृष्ण—हाँ-हाँ, फल देर से होता है।

ईशान का मकान उनके श्वशुर स्वर्गीय श्रीयुत क्षेत्रनाथ चटर्जी के मकान के पूर्व ओर है। दोनों मकानों में आने-जाने का रास्ता है।

श्रीरामकृष्ण चटर्जी महाशय के मकान के फाटक के पास आकर खड़े हुए। ईशान अपने बन्धु-बान्धवों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण को गाड़ी पर चढ़ाने के लिए आए हैं।

श्रीरामकृष्ण ईशान से कह रहे हैं, "तुम संसार में ठीक पाँकाल मछली की तरह हो। वह रहती तो है तालाब के बीच में, पर उसकी देह में कीच छू नहीं जाती।

"माया के इस संसार में विद्या और अविद्या दोनों ही हैं। परमहंस वह है, जो हंस की तरह दूध और पानी के एक साथ रहने पर भी पानी छोड़कर दूध निकाल लेता है, चींटी की तरह बालू और चीनी के मिले होने पर भी बालू में से चीनी निकाल ले सकता है।"

(४)

समन्वय और निष्ठा भक्ति। अपराध तथा ईश्वर-कोटि।

शाम हो गई है। श्रीरामकृष्ण भक्त श्रीयुत रामचन्द्र के घर आये हुए हैं। यहाँ से होकर दक्षिणेश्वर जायँगे।

रामचन्द्र के बैठकखाने को प्रकाशपूर्ण करके भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। श्रीयुत महेन्द्र गोस्वामी से बातचीत कर रहे हैं। गोस्वामीजी उसी मुहल्ले में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण इन्हें प्यार करते हैं। जब श्रीरामकृष्ण रामचन्द्र के यहाँ आते हैं, तब गोस्वामीजी आकर इनसे मिल जाया करते हैं।

श्रीरामकृष्ण—वैष्णव, शाक्त सबके पहुँचने की जगह एक है; परन्तु मार्ग और और हैं। जो सच्चे वैष्णव हैं, वे शक्ति की निन्दा नहीं करते।

गोस्वामी (सहास्य)—हर-पार्वती हमारे माँ बाप हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—Thank you—माँ बाप हैं।

गोस्वामी—इसके सिवाय किसी की निन्दा करने से, खास कर

वैष्णवों की निन्दा से, अपराध होता है—वैष्णवापराध। सब अपराधों की माफ़ी है, परन्तु वैष्णवापराध की माफ़ी नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—अपराध सबको नहीं होता। जो ईश्वर-कोटि हैं, उनको अपराध नहीं होता। जैसे श्रीचैतन्य सदृश अवतारी पुरुषों को।

" बच्चा अगर बाप का हाथ पकड़कर चलता हो, तो वह गड्ढे में गिर सकता है, परन्तु अगर बाप बच्चे का हाथ पकड़े हुए हो, तो बच्चा कभी नहीं गिर सकता।

" सुनो, मैंने माँ से शुद्धा-भक्ति की प्रार्थना की थी। माँ से कहा था, 'यह लो अपना धर्म, यह लो अपना अधर्म; मुझे शुद्धा-भक्ति दो। यह लो अपनी शुचि, यह लो अपनी अशुचि, मुझे शुद्धा-भक्ति दो। माँ, यह लो अपना पाप, यह लो अपना पुण्य, मुझे शुद्धा भक्ति दो। "

गोस्वामी—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—सब भक्तों को नमस्कार करना। परन्तु ' निष्ठा-भक्ति' भी है। सबको प्रणाम तो करना, परन्तु हृदय का उमड़ता हुआ प्यार एक ही पर हो। इसी का नाम निष्ठा है।

" राम-रूप के सिवाय और कोई रूप हनुमान को न भाता था।
" गोपियों की इतनी निष्ठा थी कि उन्होंने द्वारका में पगड़ीवाले श्रीकृष्ण को देखना ही न चाहा।

" पत्नी अपने देवर-जेठ आदि की सेवा, पैर धोने के लिए पानी और बैठने को आसन आदि भी देती है; परन्तु पति की जैसी सेवा करती

है, वैसी वह किसी दूसरे की नहीं करती। पति के साथ उसका सम्बन्ध कुछ दूसरा है।"

रामचन्द्र ने कुछ मिठाइयाँ देकर श्रीरामकृष्ण की पूजा की। अब वे दक्षिणेश्वर जाने वाले हैं। मणि से उन्होंने बनात लेकर शरीर ढक लिया और टोपी पहन ली। अब भक्तों के साथ वे गाड़ी पर चढ़ने लगे। रामचन्द्र आदि भक्त उन्हें चढ़ा रहे हैं। मणि भी गाड़ी पर बैठे, वे भी दक्षिणेश्वर जायँगे।

(५)

ब्रह्मज्ञान के सम्बन्ध में वार्तालाप।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठ गए। श्रीकाली जी के दर्शनों के लिए कालीघाट जायँगे। श्रीयुत अधर सेन के घर होकर जायँगे। वहाँ से अधर भी साथ जायँगे। आज शनिवार, अमावस्या, दिन के एक बजे का समय होगा।

गाड़ी उनके घर के उत्तर तरफ के बरामदे के पास आकर खड़ी हुई। मणि गाड़ी के द्वार के पास आकर खड़े हुए।

मणि (श्रीरामकृष्ण से)—क्या मैं भी चलूँ!

श्रीरामकृष्ण—क्यों ?

मणि—एक बार कलकत्ते के मकान से होकर आता।

श्रीरामकृष्ण (चिन्ता करके)—जाओगे क्यों ? यहाँ अच्छे तो हो।

मणि घर लौटेंगे, कुछ घंटों के लिए; परन्तु श्रीरामकृष्ण की इसके लिए सम्मति नहीं है।

आज रविवार, ३० दिसम्बर, पूस की शुक्ल प्रतिपदा है। दिन के तीन बजे होंगे। मणि पेड़ के नीचे अकेले टहल रहे हैं। एक भक्त ने आकर कहा, प्रभु बुलाते हैं। कमरे में श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। मणि ने जाकर प्रणाम किया और जमीन पर भक्तों के बीच में बैठ गये।

कलकत्ते से राम, केदार आदि भक्त आये हुए हैं। उनके साथ एक वेदान्तवादी साधु भी आये हैं। श्रीरामकृष्ण जिस दिन रामचन्द्र का बगीचा देखने गये थे, उसी दिन उस साधु से भेंट हुई थी। साधु पास-वाले बगीचे में एक पेड़ के नीचे अकेले एक चारपाई पर बैठे हुए थे। राम आज श्रीरामकृष्ण की आज्ञा से उस साधु को अपने साथ लेते आये हैं। साधु ने भी श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की थी।

श्रीरामकृष्ण उस साधु के साथ आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं। उन्होंने अपने पास छोटे तख्त पर साधु को बैठाया है। बातचीत हिन्दी में हो रही है।

श्रीरामकृष्ण—यह सब तुम्हें कैसा जान पड़ता है?

साधु—यह सब स्वप्नवत् है।

श्रीरामकृष्ण—ब्रह्म सत्य और संसार मिथ्या, यही न? अच्छा जी, ब्रह्म कैसा है?

साधु—शब्द ही ब्रह्म है। अनाहत शब्द।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु शब्द का प्रतिपाद्य भी तो एक है। क्यों?

साधु—वही वाच्य है और वही वाचक भी है।

यह सब सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये। स्थिर-चित्र की

तरह बैठे हुए हैं। साधु और भक्तगण निर्वाक् होकर श्रीरामकृष्ण की यह समाधि अवस्था देख रहे हैं। केदार साधु से कह रहे हैं, यह देखिये, इसे समाधि कहते हैं।

साधु ने ग्रन्थों में ही समाधि की बात पढ़ी थी। समाधि कैसे होती है, यह उन्होंने कभी नहीं देखा था।

श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे अपनी प्राकृत अवस्था में आ रहे हैं। अभी जगन्माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। कहते हैं—'माँ, अच्छा हो जाऊँ, बेहोश न कर देना, साधु के साथ सच्चिदानन्द की बातें करूँगा।'

साधु निर्वाक होकर देख रहे हैं और ये सब बातें सुन रहे हैं। अब श्रीरामकृष्ण अपनी सहज अवस्था में आ गये, साधु से बातचीत करने लगे। कहते हैं—आप 'सोऽहम' उड़ा दीजिए। अब 'हम' और 'तुम' विलास करें।

जब तक 'हम' और 'तुम' यह भाव है, तब तक माँ भी है। आओ उन्हें लेकर आनन्द किया जाय। श्रीरामकृष्ण के कथन का शायद यही मर्म है।

कुछ देर इस तरह बातचीत हो जाने के पश्चात् श्रीरामकृष्ण पञ्चवटी में टहलने चले गए। राम, केदार, मास्टर आदि उनके साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—साधु को तुमने कैसा देखा?

केदार—उसका शुष्क ज्ञान है। अभी उसने हंडी चढ़ाई भर है—अभी चाँवल नहीं चढ़ाये गये।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह ठीक है, परन्तु है त्यागी। जिसने संसार को त्याग दिया है, वह बहुत कुछ आगे बढ़ गया है।

"साधु अभी प्रवर्तक है। उन्हें अगर कोई प्राप्त न कर सका, तो उसका कुछ भी नहीं हुआ। जब उनके प्रेम में मस्त हुआ जाता है, तब

और कुछ नहीं सुहाता। तब तो—"आदरिणी श्यामा माँ को बड़े यत्न से हृदय में धारण किये रहो। मन ! तू देख और मैं देखूँ, और कोई जैसे न देखने पाये।"

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में लौट आये हैं। चार बजे का समय है—कालीजी का मंदिर खुल गया है। श्रीरामकृष्ण साधु को साथ लेकर काली मंदिर जा रहे हैं। मणि भी साथ हैं।

काली मंदिर में प्रवेश कर श्रीरामकृष्ण भक्ति-पूर्वक माता को प्रणाम कर रहे हैं। साधु भी हाथ जोड़कर सिर झुका माता को बारम्बार प्रणाम कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, दर्शन कैसे हुए ?

साधु (भक्ति भाव से)—काली प्रधाना है।

श्रीरामकृष्ण—काली और ब्रह्म, दोनों अभेद हैं। क्यों जी ?

साधु—जब तक बहिर्मुख है तब तक काली को मानना होगा। जब तक बहिर्मुख है तब तक भले बुरे दोनों भाव हैं—तब तक एक प्रिय और दूसरा त्याज्य, यह भाव है ही।

"देखिये न, नाम और रूप, ये सब तो मिथ्या ही हैं, परन्तु जब तक बहिर्मुख है तब तक स्त्रियों को उसे त्याज्य समझना चाहिए; और उपदेश के लिए यह अच्छा है, यह बुरा है, यह भाव रखना चाहिए, नहीं तो भ्रष्टाचार फैलेगा।"

श्रीरामकृष्ण साधु के साथ बातचीत करते हुए कमरे में लौटे।

श्रीरामकृष्ण—देखा, साधु ने काली-मन्दिर में प्रणाम किया।

मणि—जी हाँ।

दूसरे दिन सोमवार, ३१ दिसम्बर है। दिन का तीसरा पहर, चार बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ कमरे में बैठे हुए हैं।

बलराम, मणि, राखाल, लाटू, हरीश आदि भक्त भी हैं। श्रीरामकृष्ण मणि और बलराम से कह रहे हैं—

हलधारी का ज्ञानियों जैसा भाव था। वह अध्यात्म रामायण, उपनिषद् यही सब दिन-रात पढ़ता था और इधर साकार की बातों से मुँह फेरता था। मैंने जब कंगालों के भोजन कर जाने पर उनकी पत्तलों से थोड़ा थोड़ा अन्न लेकर खाया, तब उसने कहा, 'तेरे लड़कों का विवाह कैसे होगा ?' मैंने कहा; 'क्यों रे शाला, मेरे लड़के बच्चे भी होंगे ? आग लगे तेरे गीता और वेदान्त पढ़ने में।' देखो न, इधर तो कहता है— संसार मिथ्या है ; और फिर विष्णु-मन्दिर में नाक सिकोड़कर ध्यान !"

शाम हो गई है। बलराम आदि भक्त कलकत्ते चले गए हैं। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में बैठे हुए माता का चिन्तन कर रहे हैं। कुछ देर बाद ठाकुर-मन्दिर में आरती का मधुर शब्द सुनाई पड़ने लगा।

रात के आठ बज चुके हैं। श्रीरामकृष्ण भाव में आकर मधुर स्वर से माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से नामोच्चारण कर रहे हैं—हरि ॐ ! हरि ॐ ! ॐ !

माँ से कह रहे हैं—माँ ! ब्रह्मज्ञान देकर मुझे बेहोश न कर रखना। मैं ब्रह्म-ज्ञान नहीं चाहता—माँ ! मैं आनन्द करूँगा, विलास करूँगा।

"फिर कहते हैं—माँ ! मैं वेदान्त नहीं जानता,—जानना भी नहीं चाहता। माँ !—माँ, तुझे पाने पर वेद-वेदान्त कितने नीचे पड़े रहते हैं !

" अरे कृष्ण ! मैं तुझे कहूँगा, यह ले — खा ले —बच्चे ! कृष्ण ! कहूँगा, तू मेरे ही लिए देह धारण करके आया है।"

हमारे प्रकाशन

हिन्दी विभाग

१-३. **श्रीरामकृष्णवचनामृत**—तीन भागों में—अनु० पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'; प्रथम भाग (तृतीय संस्करण) —मूल्य ६); द्वितीय भाग—मूल्य ६); तृतीय भाग—मूल्य ७॥)

४-५. **श्रीरामकृष्णलीलामृत**—(विस्तृत जीवनी) — (तृतीय संस्करण)-दो भागों में, प्रत्येक भाग का मूल्य ... ... ५)

६. **विवेकानन्द चरित**-(विस्तृत जीवनी)—सत्येन्द्रनाथ मजूमदार, मूल्य ६)

७. **विवेकानन्दजी के संग में**-(वार्तालाप)—शिष्य शरच्चन्द्र, द्वि.सं. मूल्य ५।)

८. **परमार्थ-प्रसंग**—स्वामी विरजानन्द, (आर्ट पेपर पर छपी हुई)
कपड़े की जिल्द, मूल्य ३॥।)
कार्डबोर्ड की जिल्द, ,, ३।)

स्वामी विवेकानन्द कृत पुस्तकें

९. **भारत में विवेकानन्द** ५)
१०. **ज्ञानयोग** (प्र. सं.) ३)
११. **पत्रावली** (प्रथम भाग) (प्र. सं.) २=)
१२. ,, (द्वितीय भाग) (प्र. सं.) २=)
१३. **धर्मविज्ञान** (द्वि. सं) १॥=)
१४. **कर्मयोग** (द्वि. सं.) १॥=)
१५. **हिन्दू धर्म** (द्वि. सं.) १॥)
१६. **प्रेमयोग** (तृ. सं.) १।=)
१७. **भक्तियोग** (तृ. सं.) १।=)
१८. **आत्मानुभूति तथा उसके मार्ग** (तृ. सं.) १।)
१९. **परिव्राजक** (च. सं.) १।)
२०. **प्राच्य और पाश्चात्य** (च. सं.) १।)
२१. **महापुरुषों की जीवन-गाथायें** (प्र. सं.) १।)
२२. **राजयोग** (प्र. सं.) १=)
२३. **स्वाधीन भारत ! जय हो !** (प्र. सं.) १=)
२४. **धर्मरहस्य** (प्र. सं.) १)
२५. **भारतीय नारी** (प्र. सं.) ।॥)
२६. **शिक्षा** (प्र. सं.) ॥=)
२७. **शक्तिदायी विचार** ॥=)
२८. **शिकागो वक्तृता** (पं. सं.) ॥=)
२९. **हिन्दू धर्म के पक्ष में** (द्वि. सं.) ॥=)

३०. मेरे गुरुदेव (च. सं.) ||=)
३१. कवितावली (प्र. सं.) ||=)
३२. वर्तमान भारत (तृ. सं.) ||)
३३. मेरा जीवन तथा ध्येय (द्वि. सं.) ||)
३४. मरणोत्तर जीवन (द्वि. सं.) ||)
३५. मन की शक्तियाँ तथा जीवनगठन की साधनायें (प्र. सं.) ||)
३६. सरल राजयोग (प्र. सं.) ||)
३७. मेरी समर–नीति (प्र. सं.) |≠)
३८. पवहारी बाबा (द्वि. स.) ||)
३९. ईशदूत ईसा (प्र. सं.) |=)

---

४०. वेदान्त-सिद्धान्त और व्यवहार–स्वामी शारदानन्द, (प्र. सं.) |=)
४१. विवेकानन्दजी की कथायें (प्र. सं) १|)
४२. विवेकानन्दजी से वार्तालाप (प्र. सं.) १|=)
४३. भगवान् रामकृष्ण धर्म तथा संघ ||=)
४४. श्रीरामकृष्ण-उपदेश (प्र. सं.) ||=)

मराठी विभाग

१–२. श्रीरामकृष्ण-चरित्र—प्रथम भाग (तिसरी आवृत्ति) ४|)
द्वितीय भाग (दुसरी आवृत्ति) ४|=)
३. श्रीरामकृष्ण–वाक्सुधा— (दुसरी आवृत्ति) |||=)
४. शिकागो-व्याख्यानें–स्वामी विवेकानंद (दुसरी आवृत्ति) ||=)
५. माझे गुरुदेव—स्वामी विवेकानंद (दुसरी आवृत्ति) ||=)
६. हिंदु-धर्माचें नव-जागरण—स्वामी विवेकानंद ||–)
७. पवहारी बाबा—स्वामी विवेकानंद ||)
८. साधु नागमहाशय-चरित्र-(भगवान श्रीरामकृष्णांचे सुप्रसिद्ध शिष्य)- (दुसरी आवृत्ति) २)
९. कर्मयोग—स्वामी विवेकानंद १||=)

श्रीरामकृष्ण आश्रम, धन्तोली, नागपुर–१, मध्यप्रदेश